Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पंत-काव्य में बिम्ब-योजना

डॉ. एन. पी. कुट्टन पिल्लै

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

लेखक

नडुवत्तरकिज्नकेतिल् पद्मनाभ पिल्लै कुट्टन पिल्लै

जन्म : २९ अगस्त १९३५ ई.

जन्म-स्थान : केरल

शिक्षा : पी-एच. डी. (हिन्दी)

अभिरुचि : साहित्य-समीक्षा, काव्यानुशीलन और अनुवाद।

कार्यक्षेत्र : अध्यापन और लेखन; भारतीय अन्तर्प्रान्तीय एकता के लिए साहित्यिक प्रयास।

प्रमुख रचनाएँ: तुलनात्मक व्याकरण (हिन्दी व मलयालम)

सरल हिन्दी व्याकरण

प्रबन्ध प्रदीप

प्रसाद और कामायनी

हमारे कलाकार

काव्य-दीपिका

प्रभात रीडर, भाग-१&२

हिन्दी साहित्य का सुगम इतिहास

हिन्दी साहित्य का इतिहास (प्रश्नोत्तरी)

पंत : छायावादी व्यक्तित्व और कृतित्व

हिन्दी निबन्ध

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पंत-काव्य में बिम्ब-योजना

★

डॉ० एन० पी० कुट्टन पिल्लै

★

दक्षिण प्रकाशन
२१-८-६२, गांधी बाजार, हैदराबाद—५०००२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पंत-काव्य में बिम्ब-योजना

© डॉ. एन. पी. कुट्टन पिल्लै

प्रकाशक :

दक्षिण प्रकाशन
२१-७-६२, गांधी बाज़ार
हैदराबाद-५०००0२

*

मुद्रक :

रंगनाथ प्रेस
नामपल्ली स्टेशन रोड,
हैदराबाद-५०००0१
फोन : ४४९१०

प्रथम संस्करण : १९७४ ई.

मूल्य : ५०-००

PANT KAVYA MEIN BIMB-YOJANA
by Dr. N. P. Kuttan Pillai
Price Rs. **50-00**

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

दो शब्द

नूतन युग-बोध एवं नूतन काव्यालोचन के संदर्भ में बिम्ब-योजना का न केवल अभिव्यंजनागत महत्व है, अपितु अनुभूति के क्षेत्र में भी बिम्ब ने अपना गंभीर प्रभाव स्थापित कर लिया है। अब किसी भी कवि की महत्ता का सम्यक् आकलन बिम्ब-योजना के आधार पर ही किया जाता है और बिम्ब काव्यालोचन का एक ऐसा अनिवार्य तत्व बनता चला जा रहा है, जैसा कि भारतीय काव्यालोचन में रस, वक्रोक्ति, ध्वनि, रीति, अलंकार आदि की महत्ता रही है। आज बिम्ब-योजना के आधार पर ही किसी कवि की सर्जनात्मक अनुभूति की सफलता एवं असफलता का आकलन होता है और इसी के आधार पर किसी कवि की शिल्प-विधि का मूल्यांकन किया जाता है। इस दृष्टि से विचार करने पर डॉ. एन. पी. कुट्टन पिल्लै द्वारा प्रस्तुत शोध-प्रबंध 'पन्त-काव्य में बिम्ब-योजना' आधुनिक काव्यालोचन के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण शोध-उपलब्धि है। विद्वान् लेखक ने पूर्ण निष्ठा, गहन अध्ययन एवं सतत परिश्रम से पन्त-काव्य का गहन अनुशीलन करके पन्त-काव्य में विद्यमान विविध प्रकार के बिम्बों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण अत्यन्त उदार एवं व्यापक दृष्टिकोण के आधार पर किया है।

इस शोध-प्रबध की सबसे बड़ी उपलब्धि यह है कि इसमें भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यालोचन के आलोक में ही काव्य-बिम्ब सम्बन्धी मान्यताओं को आधार बनाया गया है। यहाँ न केवल पाश्चात्य बिम्बवाद के आधार पर पंत की विम्ब-योजना का हठात् विश्लेषण किया गया है और न केवल भारतीय रसवाद का सहारा लेकर पंत-काव्य के बिम्बों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण किया गया है, अपितु संतुलित दृष्टि से दोनों विचारधाराओं के आलोक में पंत-काव्य में विद्यमान बिम्बों की विवेचना की गई है। साथ ही, यहाँ कबीर से लेकर अद्यतन युग तक हिन्दी में बिम्ब-योजना के क्षेत्र में जो कुछ कार्य हुआ है उसका क्रमिक विकास दिखाने का भी स्तुत्य प्रयास हुआ है। इस शोध-प्रबंध का महत्व इसलिए और भी बढ़ जाता है, क्योंकि लेखक ने पंतजी के अद्यतन काव्यों को भी अपने अध्ययन का आधार बनाकर पंत-काव्य के क्रमिक विकास, उनके चिन्तन-स्रोत, उनके दार्शनिक विचार, उनकी संवेदना, उनकी कल्पना, उनकी रचना-प्रक्रिया आदि से भी पाठकों को अवगत कराने का उलेखनीय कार्य किया है।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इसके साथ ही अपने प्रिय शिष्य डॉ० कुट्टन पिल्लै को मैं किन शब्दों में आशीर्वाद दूं, क्योंकि एक अहिन्दी भाषी हो कर भी आपने हिन्दी साहित्य के मूर्धन्य कवि पंत के काव्य-बिम्ब का इस प्रकार गहन अध्ययन एवं अनुशीलन करके न केवल हिन्दी साहित्य को गौरवान्वित किया है, अपितु काव्यालोचन एवं अनुसंधान के क्षेत्र में एक अभूतपूर्व कार्य करके हिन्दी काव्यालोचन तथा हिन्दी-अनुसंधान को भी महत्ता प्रदान की है। निस्संदेह, डॉ० कुट्टन पिल्लै का यह शोध-प्रबंध काव्य-बिम्ब का शास्त्रीय एवं वैज्ञानिक अध्ययन ही प्रस्तुत नहीं करता, अपितु, पंत और अन्य समसामयिक कवियों की बिम्ब-योजना का तुलनात्मक अध्ययन भी प्रस्तुत करता है। यही कारण है कि यह शोध-प्रबंध हिन्दी साहित्य का महत्वपूर्ण ग्रंथ है और भारत की भावात्मक एकता का प्रतीक है। आशा है, हिन्दी तथा अहिन्दी प्रान्तों के सभी विद्वान् इसे आदर एव प्रतिष्ठा प्रदान करेंगे।

डॉ० द्वारिकाप्रसाद सक्सेना
एम. ए. (हिन्दी, संस्कृत), पी-एच.डी., डी. लिट्.
रीडर तथा अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग
एन. आर. ई. सी. कालेज
खुरजा (उ. प्र.)
(मेरठ विश्वविद्यालय)

दि २०-९-१९७४.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्राक्कथन

पाश्चात्य आलोचना के क्षेत्र में बिम्ब का इतना महत्व है कि वह काव्यालोचन का मानदण्ड बन गया है। वहाँ काव्य-बिम्ब को लेकर अनेक स्वतंत्र-ग्रंथों का निर्माण हुआ है। बिम्ब को काव्य का प्राण-तत्व स्वीकार करनेवाले आलोचकों की भी कमी नहीं है। भारतीय आलोचना में भी काव्यालोचन के प्रसंग में बिम्ब सम्बन्धी मान्यताएँ प्रकट होने लगी हैं। बिम्ब को आधार मानकर हिन्दी में आलोचनात्मक ग्रन्थ भी प्रकाशित हुए हैं। भारतीय पण्डितों ने काव्य के अन्तर्जगत् में पहुँचकर जिस रसवाद की प्रतिष्ठा की उसके कारण काव्य-बिम्ब ने विद्वानों का ध्यान यथेष्ट रूप से आकर्षित नहीं किया, फिर भी मेरा विश्वास है, काव्य के रूप-तत्व के निर्माण में बिम्ब का महत्वपूर्ण हाथ है और बिम्ब की दृष्टि से कवियों का अध्ययन रोचक सिद्ध हो सकता है।

आधुनिक हिन्दी कविता के क्षेत्र में कविवर सुमित्रानन्दन पन्त का विशिष्ट स्थान है। मैं समय-समय पर उनके काव्य का आस्वादन लेता रहा हूँ। पन्तजी की बिम्ब-योजना का स्वतंत्र अध्ययन अत्यन्त उपादेय सिद्ध हो सकता है। पन्तजी पर कई आलोचनात्मक ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं, किन्तु बिम्ब की दृष्टि से पन्त के व्यापक अध्ययन के अभाव ने मुझे इस दिशा में प्रेरित किया। इसीलिए मैंने शोध-कार्य के लिए 'पन्त-काव्य में बिम्ब-योजना' शीर्षक विषय चुना।

प्रस्तुत प्रबन्ध आठ अध्यायों में विभक्त है, जिनमें से प्रथम दो को पूर्व-पीठिका माना जा सकता है। प्रथम अध्याय में बिम्ब का सैद्धान्तिक विवेचन है। इस अध्याय में पाश्चात्य तथा भारतीय दृष्टि से बिम्ब का स्वरूप-निर्धारण किया गया है। मैं यहाँ यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि मैंने बिम्ब संबंधी पाश्चात्य अतिवाद को प्रश्रय न देकर उसका वही रूप ग्रहण किया है, जो भारतीय काव्य-शास्त्र की परंपरा के अनुकूल हो सकता है। इसी उद्देश्य से प्रेरित होकर बिम्ब-निर्माण की प्रक्रिया, काव्य-बिम्ब और मनोवैज्ञानिक बिम्ब

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

में भेद तथा काव्य-बिम्ब के कल्पना-तत्व, प्रतीक, अलंकार एवं भाषा के साथ संबंध पर विस्तार से विचार किया गया है। अंत में बिम्ब का वर्गीकरण करते हुए उसके ऐन्द्रिय बिम्ब, वस्तुगत बिम्ब, भाव-बिम्ब एवं दार्शनिक बिम्ब – ये चार प्रकार निश्चित किये गये।

द्वितीय अध्याय में पन्तजी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर अपेक्षाकृत संक्षिप्त रूप से प्रकाश डाला गया है। मेरी दृष्टि में कवि के बिम्ब की विषय-सामग्री का चयन उसके व्यक्तित्व पर आधारित है और उसके व्यक्तित्व का परिचय पाते ही उसके बिम्बों का भी परिचय मिल जाता है। कवि के व्यक्तित्व एवं बिम्ब का घनिष्ठ संबंध है। उसके व्यक्तित्व को समझे बिना बिम्ब संबंधी अध्ययन संभव नहीं है। कवि के काव्य-विकास को तीन उप-शीर्षकों में विभक्त कर प्रत्येक समय की काव्य-प्रवृत्ति का मूल्यांकन प्रस्तुत किया गया है।

अगले अध्यायों में मेरे अध्ययन का व्यावहारिक पक्ष है। मेरी यह मान्यता है कि बिम्ब का संबंध केवल वस्तु से ही नहीं, उसकी कलात्मकता से भी है। वस्तु जहाँ कलात्मक ढाँचे में है, वहाँ प्रभावकारी बिम्ब बनता है। उसके बिना बिम्ब निष्प्राण एवं निर्जीव ही रहेगा।

तृतीय अध्याय में पन्त के काव्य में उपलब्ध ऐन्द्रिय बिम्बों का स्वरूपगत एवं कलात्मक अध्ययन प्रस्तुत है। ऐन्द्रिय तत्व बिम्ब का मौलिक गुण है और यही वह तत्व है जो बिम्ब को अलंकार या मात्र शब्द-चित्र की कोटि से पृथक् करता है। ऐन्द्रियता के इस विशेष गुण को दृष्टि में रखते हुए ऐन्द्रिय-बिम्बों की एक पृथक् श्रेणी निर्धारित करना उचित समझा गया, अन्यथा सभी बिम्बों में ऐन्द्रिय-तत्व अपने आप आ जाता है।

चतुर्थ एवं पंचम अध्याय में वस्तुगत बिम्बों पर प्रकाश डाला गया है। वस्तुगत बिम्बों के प्रसंग में दो अध्यायों की आवश्यकता इसलिए अनुभव हुई कि उसके भीतर पन्त-काव्य में उपलब्ध मानव एवं प्रकृति संबंधी सभी बिम्बों का अन्तर्भाव हो जाता है। इस श्रेणी के बिम्ब मात्रा में इतने अधिक हैं कि एक ही अध्याय में सन्निविष्ट करने से यह अध्याय अपेक्षाकृत अधिक विस्तृत हो जाता। अतः अध्यायों में एक प्रकार का संतुलन लाने की दृष्टि से यह उचित समझा गया कि मानव-बिम्ब तथा प्रकृति-बिम्ब के पृथक् अध्याय हों। चतुर्थ अध्याय में आधुनिक काल में प्राप्त मानववादी विचारधारा पर प्रकाश डालते हुए रूप-सौन्दर्यात्मक, सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, साहित्यिक आदि विविध परिवेशों में मानव-बिम्बों का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत करते हुए पन्तजी के मानव-बिम्बों की विशेषताओं पर प्रकाश डाला गया है।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पंचम अध्याय में प्रकृति-बिम्बों का दिग्दर्शन कराया गया है। प्रकृति संबंधी दार्शनिक एवं साहित्यिक मान्यताओं का दिग्दर्शन कराने के बाद जड़ प्रकृति-बिम्ब, मानवीकृत बिम्ब, मनुष्येतर चेतन प्रकृति-बिम्ब तथा प्रतीकात्मक बिम्ब—इन चार उपशीर्षकों में उनका अध्ययन हुआ है। मनुष्येतर चेतन प्रकृति के अंतर्गत पार्थिव एवं अपार्थिव बिम्बों को लिया गया है। अप्सरा, भूत-प्रेत आदि की कल्पना मानव के परम्परागत संस्कार में चिर प्रतिष्ठा प्राप्त कर चुकी है और ऐसे बिम्ब काव्य की चिर-संपत्ति हैं, जो सभी कालों और सभी देशों में प्राप्त होते हैं। कल्पनाश्रित इन तत्वों को अपार्थिव चेतन प्रकृति के अन्तर्गत स्थान दिया गया है।

षष्ठ अध्याय में भाव-बिम्बों का अध्ययन है। पन्त-काव्य में इसके दो रूप देखे जा सकते हैं —भाव-सौन्दर्य के बिम्ब और शुद्ध भावों के बिम्बायित रूप। पन्त के इन बिम्बों में अमूर्त भावों की मूर्त एवं अमूर्त उपादान तत्वों के सहारे मूर्तीकरण-कला का अद्‌भुत परिचय मिलता है।

सप्तम अध्याय में पन्त-काव्य में प्राप्त होनेवाले दार्शनिक बिम्बों की परीक्षा की गयी है। पन्त के काव्य में वैदिक चिन्तनधारा तथा अरविन्द-चिंतन पर केन्द्रित बिम्बों की महत्ता है। इसलिए सर्वप्रथम इन धाराओं की रूप-रेखा दी गयी है और फिर दोनों चिंतन-धाराओं पर आश्रित बिम्बों के स्वरूप तथा विशेषताओं पर विचार किया गया है।

अन्तिम अध्याय में हिन्दी काव्य में बिम्ब-योजना का विकास दिखाते हुए पन्त का स्थान-निर्धारण करने का प्रयास किया गया है। हिन्दी काव्य में बिम्ब-योजना का विकास अपने में एक स्वतन्त्र शोध-विषय है और यह अपने आप में इतना व्यापक है कि मैं अपने प्रयास में विभिन्न कालों की बिम्ब-योजना सम्बन्धी मुख्य प्रवृत्ति की ओर संकेत मात्र कर पाया हूँ। फिर भी अपनी सीमा का ध्यान रखते हुए मैंने छायावादी बिम्ब-विधान का परिचय दिया है। छायावादी मुख्य कवियों के साथ पंत की तुलना करते हुए उनका स्थान-निर्धारण किया गया है।

अन्त में तीन परिशिष्ट जोडकर रचनाक्रम के अनुसार पन्त की कृतियों की तालिका, सहायक ग्रन्थों की सूची तथा विषयक्रम दिया गया है।

इस शोध-प्रबन्ध की रचना में मुझे अनेक महानुभावों से सहायता एवं सहयोग प्राप्त हुआ है। निर्देशक डॉ० श्रीराम शर्मा, एम० ए०, पी-एच० डी०, डी० लिट्० ने अपने व्यस्त साहित्यिक जीवन से समय निकालकर मेरा मार्गदर्शन

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

किया। यह ग्रंथ आचार्यजी के आशीर्वाद एवं निष्ठापूर्ण निर्देशन का परिणत फल है। वैसे ही मेरे गुरुवर डॉ. द्वारिकाप्रसाद सक्सेना, एम. ए., पी-एच. डी., डी. लिट्; डॉ. प्रेमशंकर, एम. ए., पी-एच. डी. तथा डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय एम. ए., पी-एच. डी., डी. लिट्, ने भी सयय–समय पर अपने अमूल्य सुझाव देकर मुझे अनुगृहीत किया है। श्रद्धेय आचार्य डॉ. द्वारिकाप्रसाद सक्सेना ने भूमिका के रूप में 'दो शब्द' लिखकर तथा डॉ. आनन्दप्रकाश दीक्षितजी ने अपना अभिमत व्यक्त करके इस ग्रंथ का गौरव बढ़ाने की अनुकंपा दिखाई है। एतदर्थ मैं इन आचार्यों के प्रति श्रद्धावनत हूँ। मैं डॉ. भीमसेन 'निर्मल', डॉ. वेदप्रकाश शास्त्री, श्री विजयवीर विद्यालंकार, एम. ए. तथा श्री कीर्तिकुमार 'करुण', एम. ओ. एल. को भी विस्मृत नहीं कर सकता। उनकी सद्भावना एवं सहयोग मुझे आद्यन्त प्राप्त होता रहा। मैं ने प्रबन्ध में जिन लेखकों की कृतियों से लाभ उठाया है, उनके प्रति भी मैं आभारी हूँ। अन्त में रंगनाथ प्रेस के व्यवस्थापक श्री जॉन रोज़ तथा कार्यकर्ता श्री रुद्रदत्त मिश्र भी साधुवाद के पात्र हैं, जिन्होंने अल्पसमय में इस ग्रंथ को सुन्दर साज-सज्जा के साथ मुद्रित करने में पूर्ण सहयोग दिया।

—एन० पी० कुट्टन पिल्लै

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

संकेताक्षर

अ	:	अतिमा
उ	:	उत्तरा
क. बू. चाँ	:	कला और बूढ़ा चाँद
का	:	कामायनी
गुं	:	गुंजन
ग्रा	:	ग्राम्या
प	:	पल्लव
पौ	:	पौ फटने से पहिले
र. शि.	:	रजत शिखर
लो	:	लोकायतन
वी. ग्रं.	:	वीणा-ग्रंथि

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अनुक्रम

प्रथम अध्याय : काव्य-बिम्ब 1-51

काव्य और बिम्ब १, हिन्दी आलोचना और बिम्ब ३, बिम्बवाद ७, काव्य-बिम्ब का स्वरूप ९, बिम्ब के गुण १८, मनोविज्ञान में बिम्ब १९, काव्य-बिम्ब और मनोवैज्ञानिक बिम्ब में अन्तर २१, काव्य-बिम्ब और चित्र २२, बिम्ब-निर्माण की प्रक्रिया २२, काव्यालोचन के प्रतिमान-रूप में बिम्ब २५, कल्पना और बिम्ब २८, प्रतीक और बिम्ब ३३, अलंकार और बिम्ब ३७, भाषा और बिम्ब ४१, बिम्बों का वर्गीकरण ४४.

द्वितीय अध्याय : सुमित्रानन्दन पन्त : व्यक्तित्व और कृतित्व ५३–७४

प्रकृति-साहचर्य ५३, धार्मिक एवं साहित्यिक वातावरण ५४, सांस्कृतिक संस्थाएँ ५६, रामतीर्थ, रवीन्द्र, अरविन्द, गांधी एवं मार्क्स ५७, पन्तजी का व्यक्तित्व ५९, कृतित्व ६४, पन्त का काव्य-विकास ६५ : अ) छायावादी काव्य-धारा ६६, आ) प्रगतिवादी काव्य-धारा ६८, इ) अध्यात्मवादी काव्य-धारा ७१.

तृतीय अध्याय : पन्त–काव्य में ऐन्द्रिय बिम्ब ७५–१२४

चाक्षुष बिम्ब ७७: अ) स्थिर बिम्ब ७७– रूप-आकार संबंधी बिम्ब ७८, वर्णाश्रित बिम्ब ८५, वर्णमिश्रित बिम्ब ८८, वर्ण परिवर्तन पर आधारित बिम्ब ९१, आ) गत्यात्मक बिम्ब ९३; श्रव्य बिम्ब १०१: अ) मानव संबंधी श्रव्यबिम्ब १०३, आ) मानवेतर प्राणी से संबंधित श्रव्य बिम्ब १०६, इ) जड़ प्रकृति पर आधारित श्रव्य-बिम्ब १०९; स्पृश्य बिम्ब ११२; घ्रातव्य बिम्ब ११५; आस्वाद्य बिम्ब ११९; मिश्रित बिम्ब १२२.

चतुर्थ अध्याय : पन्त-काव्य में वस्तुगत बिम्ब–मानव-बिम्ब १२५–२१४

मानव-बिम्ब १२५: रूप-सौन्दर्य बिम्ब १३०, अमूर्त वस्तुओं के रूप-बिम्ब १३९; सामाजिक बिम्ब १५०; राजनैतिक बिम्ब १६१; ऐतिहासिक बिम्ब १६७; पौराणिक बिम्ब १७१; सांस्कृतिक बिम्ब

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

१८६; साहित्यिक बिम्ब १९६; आर्थिक बिम्ब १९९; व्यावसायिक बिम्ब २०३; यौन-बिम्ब २०७; वैज्ञानिक बिम्ब २०९; निष्कर्ष २१३

पंचम अध्याय : पन्त-काव्य में वस्तुगत बिम्ब—प्रकृति-बिम्ब २१५–२७९

प्रकृति संबंधी दार्शनिक दृष्टिकोण २१५; प्रकृति के प्रति कवि का दृष्टिकोण २१६; पन्त और प्रकृति २२२; प्रकृति-बिम्ब २२४: १) जड़ प्रकृति-बिम्ब २२५– पार्वतीय सौन्दर्य २२५, प्रभात-संध्या-रजनी के वातावरण २२७, ऋतुएँ २३७, तूफान २३८, वीचि २३८, परिवर्तन २३९; उपलक्षित बिम्ब २३९; २) मानवीकृत बिम्ब २४१- पृथ्वी-पर्वत-वृक्ष-लतादि २४२, किरण, धूप, तम, छाया २४९, सर-सरिता-सागर २५२, आकाशीय वस्तुएँ २५३, समय और ऋतुएँ २५७; ३) मनुष्येतर चेतन प्रकृति के बिम्ब २६३– पार्थिव चेतन प्रकृति के बिम्ब २६३, अपार्थिव बिम्ब २६९; ४) प्रतीकात्मक बिम्ब २७२.

षष्ठ अध्याय : पन्त-काव्य में भाव-बिम्ब २८१–३०४

१) भाव-सौन्दर्य के बिम्ब २८१; २) शुद्ध भाव के बिम्ब २८९: प्रेम और ममता २८९, सेवा, क्षमा, श्रद्धा, भक्ति २९०, इच्छा, वाँछा, अभिलाषा, स्पृहा, तृष्णा, लालसा २९३, आशा, आकांक्षा, कामना, सुख २९६, निराशा, व्यथा, वेदना, उच्छ्वास २९८, भ्रांति, संदेह, लोभ २९९, प्रेरणा, प्रतीति, लज्जा, वासना ३००, अहंता, दर्प, घृणा, द्वेष, ईर्ष्या ३०१, स्वार्थ, हिंसा, प्रतिहिंसा ३०२, स्मृति, स्वप्न, तन्द्रा, निद्रा ३०२, निष्कर्ष ३०४.

सप्तम अध्याय : पन्त-काव्य में दार्शनिक बिम्ब ३०५–३४२

दर्शन ३०५; भारतीय दर्शन एवं पन्त ३०५; वैदिक दर्शन ३०६; अरविन्द-दर्शन ३०७; दार्शनिक बिम्ब ३०९– १) वैदिक दर्शन से संबंधित बिम्ब ३०९: ब्रह्म ३०९, अवतारवाद या सगुण ब्रह्म ३१५, जीवात्मा ३१६, जीवन और जगत् ३१७, संसार की क्षणिकता एवं नश्वरता ३२२, सुख-दुःख ३२३, जन्म-मरण ३२४, माया ३२६, नियति ३२७, काल ३२७, निष्कर्ष ३२८; २) अरविन्द-दर्शन से संबंधित बिम्ब ३२८: दिव्य-चेतना ३२८, मातृशक्ति ३२९, सृजन वह्नि ३३०, परात्पर ज्योति ३३०, दिव्यानुभूति ३३१, आध्यामिक आनन्द ३३१, अन्तर्मानस ३३२, निश्चेतन मन ३३२, इन्द्रिय आत्मिक जीवन ३३४, नवचेतना ३३६, द्विधामूलक गति ३३७, भू-स्वर्ग ३३९, नवयुग का मानव ३४०; ३) फुटकर बिम्ब ३४१.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अष्टम अध्याय : **हिन्दी काव्य में बिम्ब-योजना और पन्त** ३४३–३९२

निर्गुण संप्रदाय के काव्य-बिम्ब ३४३, सगुण भक्तों के काव्य में बिम्ब ३४७, शृंगारी कवियों के बिम्ब ३५२, आधुनिक काल ३५५, भारतेन्दु युग और बिम्ब ३५६, द्विवेदीकालीन कविता में बिम्ब ३५९, छायावादी काव्य में बिम्ब-योजना ३६६: ऐन्द्रिय बिम्ब ३६७, मानव-बिम्ब ३७०, प्रकृति-बिम्ब ३७५, भाव-बिम्ब ३७९, दार्शनिक-बिम्ब ३८१, पन्त और इतर छायावादी कवियों के बिम्बों की तुलना ३८३, छायावादोत्तर कविता में बिम्ब ३८६, छायावादोत्तर बिम्ब और पन्त ३९२.

परिशिष्ट :

१) सुमित्रानन्दन पन्त की कालक्रमानुसार काव्य-कृतियाँ ३९३,
२) संदर्भ एवं सहायक ग्रन्थों की सूची ३९५,
३) विषयक्रम ४०७.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

काव्य-बिम्ब

काव्य और बिम्ब

पौर्वात्य एवं पाश्चात्य विद्वान् प्राचीन काल से काव्य को परिभाषा में परिसीमित करने का प्रयत्न करते आ रहे हैं, तो भी आजतक कोई ऐसी सर्व-मान्य परिभाषा नहीं बन सकी, जो काव्य के सभी तत्वों को अपने में आत्मसात कर सके। बात यह है कि कवि प्रकृति और मानव से सम्बन्धित अपनी अनुभूति को रसमय एवं अतिशय मंगलमयी मनोहरा वाणी में अभिव्यक्त कर श्रोता एवं पाठक को अवाच्यानन्दानुभूति में निमज्जित कर देता है। अर्थात् कवि-कर्म में ज्ञान, इच्छा और क्रिया का सामंजस्य है। इच्छा भावस्वरूप है और क्रिया बिम्ब-रचना का ही नाम है। अतः वस्तु-ज्ञान से प्राप्त भाव क्रियान्वित या बिम्बात्मक स्वरूप को अपना कर काव्य में परिणत हो जाता है। तभी वह सहृदय के भावों को उद्वेलित करने की क्षमता प्राप्त करता है। प्रकारान्तर से यही बात मलयालम के महाकवि जी. शंकर कुरुप कहते हैं—"कलाकार की आत्मा और प्रकृति के सामजस्य से 'विगलित वेद्यान्तर' अनुभूति का जन्म होता है। उसके फलस्वरूप उद्भूत सजीव संकल्प ही कला-बीज है। कला के अलौकिक सौन्दर्य में सर्गात्मक आत्मा तथा उसके संकल्प के लिए विधेयक प्रकृति की छाया अविच्छिन्न रूप से सम्मिलित रहती है।"[1] साथ ही वे यह भी मानकर चलते हैं कि सूक्ष्म और अतीन्द्रिय अनुभूति को कलारूप प्राप्त करने के निमित्त किसी स्थूल इन्द्रिय ग्राह्य जड पदार्थ में उसका समावेश होना अनुपेक्षणीय है।[2] अतः काव्य मानव तथा प्रकृति का बिम्ब है।[3]

काव्य के बिम्ब-धर्म या चित्रमयता को सभी आलोचकों ने स्वीकार किया है। विश्वनाथ ने 'वाक्यं रसात्मकं काव्यं'[4] कहकर काव्य के चित्र-धर्म की ओर संकेत किया है, क्योंकि कवि की अव्यक्त एवं अमूर्त भावना जब मूर्त रूप से अभि-व्यक्त होती है तभी सहृदय पाठक उसका आस्वादन कर पाते हैं। इसीलिए आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने यह स्वीकार किया है कि काव्य में अर्थ-ग्रहण मात्र से काम नहीं चलता, बिम्ब-ग्रहण अपेक्षित होता है। यह बिम्ब-ग्रहण निर्दिष्ट, गोचर

---

१. जी. शंकर कुरुप—गद्योपहारम् (मलयालम), पृ. २६–२७

२. वही, पृ. २७

३. वर्ड्सवर्थ—इंग्लिश क्रिटिकल ऐसेस, पृ. १४

४. विश्वनाथ—साहित्य दर्पण, प्रथम परिच्छेद सूत्र ३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

और मूर्त विषय का ही हो सकता है।[१] पण्डितराज जगन्नाथ के 'रमणीयार्थ प्रतिपादकः शब्दः काव्यम्'[२] में रमणीयार्थ में रीति, वक्रोक्ति, अलङ्कार, रस, औचित्य, ध्वनि आदि के साथ ही साथ बिम्ब-धर्म का भी अन्तर्भाव है।

"काव्य तो मानव-अनुभूतियों का नैसर्गिक, कल्पना के सहारे, ऐसा सौन्दर्यमय चित्रण है जो मनुष्य मात्र में स्वभावतः अनुरूप भावोच्छ्वास और सौन्दर्य-संवेदन उत्पन्न करता है।"[३] नन्ददुलारे वाजपेयी ने काव्य-सम्बन्धी अपनी इस परिभाषा में काव्य-प्रक्रिया तथा रसास्वादन की प्रक्रिया को दृष्टि में रखा है। काव्य का आधार मानव-अनुभूति है और उस अनुभूति को सौन्दर्यात्मक अभिव्यक्ति प्रदान करने के लिए कवि को नैसर्गिक कल्पना का सहारा लेना पड़ता है। यहीं नैसर्गिक शब्द कल्पना की सीमा निश्चित करता है। कल्पना ऐसी हो जो स्वाभाविक हो। इस प्रकार कवि अपनी अनुभूति को स्वाभाविक कल्पना के द्वारा सौन्दर्यमय अभिव्यक्ति प्रदान करता है, ताकि मनुष्य-मात्र में वैसा ही भाव और संवेदन उत्पन्न हो जैसा कि काव्य में अभिव्यक्त हुआ है। अर्थात् कवि की भावना श्रोता, दर्शक या पाठक की भावना बन जाए। तात्पर्य यह है कि कवि की सौन्दर्य-भावना का साधारणीकरण हो जाता है और उसका सहायक तत्व है—नैसर्गिक कल्पना। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि अनुभूति की कल्पनात्मक अभिव्यक्ति ही काव्य है। और कल्पनात्मक अभिव्यक्ति का एक ही अर्थ है—बिम्बों द्वारा मूर्तीकरण।[४]

कवि अपनी कारयित्री प्रतिभा के द्वारा अपनी मानसिक अनुभूति को शब्दों में प्रस्फुटित करता है। शब्दार्थ इस अभिव्यक्ति का माध्यम है और शब्दार्थ की सौन्दर्य-दृष्टि भाव को रूप देने, अमूर्त को मूर्त बनाने में ही है। इसके लिए कवि छन्द, लय, संगीत, बिम्ब आदि तत्वों को अपनाता है। तभी तो कहा जा सकता है कि कविता मानव-मन की भावनात्मक एवं संगीतात्मक भाषा में चित्रात्मक एवं कलात्मक अभिव्यक्ति है।[५] इस चित्रात्मक एवं कलात्मक अभिव्यक्ति के मुख्य साधन छन्द और बिम्ब हैं। अतः छन्द और बिम्ब कविता की अभिव्यंजना के अनिवार्य तत्व हैं।[६] छन्द के कारण कवि को एक विशेष प्रकार की भाषा का प्रयोग करना पड़ता है और छन्द विषय को सम करके सन्तुलित ही नहीं करता, अपितु आनन्द भी प्रदान करता है। किन्तु

१. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल—रस-मीमांसा, पृ. १६७
२. पण्डितराज जगन्नाथ—रस गंगाधर, प्रथम आनन, पृ. ४
३. पं० नन्ददुलारे वाजपेयी—नया साहित्य : नये प्रश्न, पृ. १८
४. डॉ० नगेन्द्र—आलोचक की आस्था, पृ. १५
५. एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका, भाग १८, पृ. १०६
६. डॉ० नगेन्द्र—आलोचक की आस्था, पृ. १५-१६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

बिम्ब कवि के अरूप संवेदन को तथा अमूर्त अनुभूति को रूप-चित्रों के रूप में प्रस्तुत करता है। "कहानी में जो स्थान मनोविज्ञान का है, कविता में वही स्थान चित्र को दिया जाता है और यह ठीक भी है क्यों कि चित्रमयता ही कविता को विज्ञान से अलग करती है। दार्शनिक और इतिहासकार जिस ज्ञान को सूचना के भंडार में जमा करते हैं, कवि उसी ज्ञान को चित्र बनाकर लोगों की आँखों के आगे तैरा देता है। जो ज्ञान चित्र में परिवर्तित नहीं किया जा सकता, वह कविता के लिए बोझ बन जाता है। इसलिए जिस कविता में जितने अधिक चित्र उठते हैं, उसकी सुन्दरता भी उतनी ही अधिक बढ़ जाती है।"[१] इसलिए चित्र-धर्म कविता का एकमात्र शाश्वत गुण है और उसकी सफलता और सुन्दरता का आधार है।[२] तभी तो डॉ० गोविन्द त्रिगुणायत बिम्ब-परम्परा को काव्य की संज्ञा देते हैं।[३] अतः कविता में बिम्ब एक शाश्वत तत्व है और प्रत्येक कविता एक बिम्ब है।[४]

सारांश यह कि कविता में बिम्ब का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है और वह कवि की हृद्गत भावनाओं को प्रभावोत्पादक एवं सरस ढंग से संप्रेषित करने का साधन है। जो कविता जितने ही अधिक बिम्बों से पुष्ट हो उसकी प्रेषणीयता उतनी ही बढ़ जाती है। अतः काव्य में बिम्ब को एक अपरिहार्य तत्व के रूप में स्वीकार करना चाहिए। जयशंकर प्रसाद जी ने ठीक ही कहा है—"कवित्व वर्णमय चित्र है, जो स्वर्गीय भावपूर्ण संगीत गाया करता है।"[५] महादेवी वर्मा का यही विचार है, "कलाओं में चित्र ही काव्य का अधिक विश्वस्त सहयोगी होने की क्षमता रखता है।"[६] अतः काव्य में बिम्ब का स्थान स्वयं-सिद्ध है।

हिन्दी आलोचना और बिम्ब

बहुधा यह समझा जाता है कि भारतीय काव्यालोचन में 'बिम्ब' शब्द अंग्रेजी 'बिम्बवाद' के प्रभाव का परिणाम है। हाँ, इतना तो मानना ही पड़ेगा कि

---

१. दिनकर—काव्य की भूमिका, पृ. ९

२. वही, पृ. १०१ और 'चक्रवाल' की भूमिका, पृ. ७२

३. जीवन और जगत् की गत्यात्मक क्रियाओं और प्रतिक्रियाओं के परिणाम-स्वरूप हृदय में परिनिष्ठित प्रत्ययों को कवि जब औचित्यपूर्ण ढंग से काट-छाँट कर सहृदयाह्लादी बिम्बों के रूप में प्रस्तुत करने लगता है, तब उस बिम्ब-परम्परा को काव्य की संज्ञा दी जाती है।—समीक्षालोक (रस सिद्धान्त विशेषांक) जुलाई-अगस्त १९७०, पृ. ८३

४. सी. डी. लुवीस—दि पोयटिक इमेज, पृ. १७

५. जयशंकर प्रसाद—स्कंदगुप्त, प्रथम अंक, पृ २१

६. महादेवी वर्मा—दीपशिखा, पृ. ६०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

बिम्ब काव्यालोचना के प्रतिमान के रूप में भारतीय काव्य-शास्त्र में कभी स्वीकृत नहीं हुआ है। लेकिन भारतीय कवियों के काव्यों में बिम्बों का अक्षय भण्डार है और संस्कृत में वाल्मीकि, कालिदास एवं माघ बिम्ब-योजना के अत्यन्त सफल कवि हुए हैं। हिन्दी में जायसी अपने बिम्ब-विधान की सफलता के कारण प्रथम कोटि में बैठने के अधिकारी हैं। "चित्रकारी केवल अंग्रेजी के इमेजिस्ट कवियों की ही थाती नहीं, उसका अतुल भण्डार बिहारी और पद्माकर के भी पास है, प्रत्युत, यह कहना चाहिए कि रीतिकाल के हर एक कवि के पास यह दौलत किसी न किसी मात्रा में मौजूद है।"[१] और इसको कविता का अन्यतम गुण माना जाए तो यह मानने में तनिक भी कठिनाई नहीं रह जाती कि रीतिकाल हिन्दी कविता का अन्यतम काल था।[२] आधुनिक काल में छायावादी काव्य अपने रंगीन चित्र, मनोमुग्धकारी सौन्दर्य एवं घनी कल्पना के लिए प्रसिद्ध है। उसमें कवियों के अन्तर्मन में पड़ने वाली मानस-छवियों को रूप देने तथा उनमें प्राण-प्रतिष्ठा करने का जो प्रयास हुआ है, वह अभूतपूर्व है। फलतः छायावादी बिम्ब अपनी सजीवता, ताजगी एवं सघनता के कारण हिन्दी काव्य की नयी उपलब्धि है। "मानव चेतना के उच्च एवं सूक्ष्म संवेदनों को अपने अन्तरिम उन्मेष के प्रकाश में नये बिम्बों तथा प्रतीकों एवं नयी कथावस्तु के रूप में वाणी देने की कृच्छ्र प्रसव-वेदना छायावाद के उत्कट साहस की द्योतक एक महत् युग-कर्म तथा सृजन-साधना की उपलब्धि एवं भाव-योग की सिद्धि रही है, जिसके चतुर्दिक घिरे बाष्पों में, निस्संदेह, अनेक चित्रमयी, अभिव्यंजना के इन्द्रधनुष स्वतः अपने कला-स्पर्श से स्फुरित हो उठे।"[३]

दर्शन के क्षेत्र में भी बिम्ब-सम्बन्धी कल्पना प्रचुर मात्रा में देखी जा सकती है। यह रहस्यमय अनुभूतियों को स्पष्ट करने या सर्वजन-सुलभ बनाने का माध्यम है। आध्यात्मिक विचारों एवं अनुभूतियों को मूर्त रूप देने में प्रतीकात्मक बिम्ब सहायक हैं और धार्मिक ग्रन्थों में अध्यात्म की अभिव्यक्ति बिम्बों में की गयी है। इसमें ध्यान रखा जाता है कि अगम, अगोचर एवं अव्यक्त अध्यात्म को ऐसे मूर्त बिम्बों में प्रकट किया जाए कि सामान्य जनता को ग्राह्य हो।[४] संसार के विभिन्न धर्मावलंबियों के धार्मिक एवं दार्शनिक ग्रन्थों में अनेक कथाएँ ऐसी आई हैं, जो प्रतीकात्मक बिम्ब की कोटि की हैं। अध्यात्म और आध्यात्मिक घटनाओं को लोक-जीवन में अनुभवगम्य पात्रों,

---

१. रामधारीसिंह दिनकर—काव्य की भूमिका, पृ. १४

२. वही, पृ. २५

३. सुमित्रानन्दन पन्त—छायावाद : पुनर्मूल्यांकन, पृ. ४०

४. रोज़मोण्ड तुव—एलीज़बेथन एण्ड मेटाफिसिकल इमेजरी, पृ. २१८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

और घटनाओं का रूप दिया गया है, जिससे सामान्य जनता भी निगूढ़ भावों को हृदयगम्य बना सके। भारतीय साहित्य एवं धार्मिक ग्रन्थों में प्राप्त ईश्वर का अवतार या सगुण-लीला आध्यात्मिक बिम्ब ही है। रामायण के राम, सीता या ऐसे अन्य पात्र बिम्बात्मक हैं।

हिन्दी के भक्तिकाल में राम और कृष्ण के जो सगुण लीला-गान हुए हैं, वे भी मूलत: अगम, अगोचर, सच्चिदानन्दमय, अलौकिक ब्रह्म की अलौकिक गाथाएँ हैं। आधुनिक काल में कामायनीकार प्रसाद ने भी अपने आनन्दवाद की प्रतिष्ठा करने के लिए मनु, श्रद्धा, इडा जैसे मानवीय पात्रों का सहारा लिया है। भारतीय दार्शनिक ग्रन्थों में भी ईश्वर को बिम्ब और विश्व को प्रतिबिम्ब या संपूर्ण प्रकृति को ब्रह्म का व्यक्त रूप कहा गया है। जैसे "ऋतं पिबन्तौ सुकृतस्य लोके, गुहां प्रविष्ठौ परमे परार्धे, छायातपौ ब्रह्मविदो वदन्ति।"[1]

भारतीय साहित्यशास्त्र में संभवत: प्रथम बार दृष्टान्तालंकार की परिभाषा देते हुए बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव का उल्लेख हुआ है,[2] जिसका आधुनिक 'बिम्ब' से उतना सम्बन्ध नहीं है। यहाँ बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव का प्रयोग प्रभाव-साम्य या भाव-साम्य के अर्थ में हुआ है। फिर भी यहाँ अप्रस्तुत-विधान निश्चय ही प्रस्तुत भाव या विचार का बिम्ब उपस्थित करता है।[3] यहाँ 'बिम्ब' शब्द प्रस्तुत के लिए तथा 'प्रतिबिम्ब' शब्द उपमान के लिए प्रयुक्त हुआ है। अर्थात् वर्तमान बिम्ब के अर्थ में हमारे काव्य-शास्त्रों में 'प्रतिबिम्ब' शब्द का प्रयोग मिलता है। 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' के निम्नलिखित श्लोक का उद्धरण देते हुए अभिनवगुप्ताचार्य ने भाषा की मूर्तता के सम्बन्ध में लिखा है कि उससे 'मानसी साक्षात्कारात्मिका प्रतीति' होती है और इसी भाषा-गुण को उन्होंने विभावन व्यापार कहा है—

ग्रीवा भङ्गाभिरामं मुहुरनुपतति स्यन्दने बद्धदृष्टि:
पश्चार्धेन प्रविष्ट: शरपतनभयाद् भूयसा पूर्वकायम्।
दर्भैरर्धावलीढै: श्रमविवृतमुखभ्रंशिभि: कीर्णवर्त्मा
पश्योदग्रप्लुतत्वाद्वियति बहुतरं स्तोकमुर्व्यां प्रयाति।[4]

---

१. कठोपनिषद्, तृतीया वल्ली, श्लोक १

२. (अ) चेद्बिम्ब प्रतिबिम्बत्वं दृष्टान्तस्तदलंकृति:, अप्पयदीक्षित—कुवलयानन्द, ५२

(आ) दृष्टान्तस्तु सधर्मस्य वस्तुन: प्रतिबिम्बनम्, विश्वनाथ—साहित्य-दर्पण, १०/५१

३ डॉ० नगेन्द्र—काव्य-बिम्ब, पृ. ४०

४. कालिदास—अभिज्ञान शाकुन्तलम्, प्रथम अंक, श्लोक ७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

"अभिनवगुप्त के समकालीन भट्टनायक का 'भावकत्व व्यापार' संभवतः इसी विभावन व्यापार का पूर्व रूप है।"[१] आधुनिक युग में इसी 'विभावन व्यापार' को आचार्य शुक्ल ने 'मूर्तिमत्ता' और 'बिम्ब-ग्रहण' नाम दिये हैं। "काव्य में अर्थग्रहण मात्र से काम नहीं चलता, बिम्ब-ग्रहण अपेक्षित होता है। यह बिम्ब-ग्रहण निर्दिष्ट, गोचर और मूर्त विषय का ही हो सकता है।"[२] फिर भी शुक्लजी ने बिम्ब-विधान को काव्यालोचन का आधार नहीं माना, क्यों कि वे रसवादी आचार्य थे और काव्य की श्रेष्ठता का आधार वे रस को मानते थे। यही कारण है कि उन्होंने अनावश्यक एवं अनर्गल अप्रस्तुतों की निन्दा की तथा यह स्पष्ट घोषणा की कि केवल मूर्ति-विधान भाव-संचार में सक्षम नहीं हो सकता। उनका कथन है कि किसी प्रसंग के अन्तर्गत कैसा भी विचित्र मूर्ति-विधान हो, यदि उसमें उपर्युक्त भाव-संचार की क्षमता न हो तो वह काव्य के अन्तर्गत न होगा।[३] काव्य के मूल्यांकन के प्रतिमान के रूप में 'बिम्ब' को प्रतिष्ठित करने का प्रस्ताव सर्वप्रथम डॉ० केदारनाथ सिंह ने किया। 'उसे आलोचना के स्तर पर निश्चित पदों में विवक्षित करके केदारनाथ सिंह ने ऐतिहासिक महत्व का काम किया।'[४]

बिम्ब का स्वरूप, उसके प्रकार तथा बिम्ब-निर्माण की प्रक्रिया समझाने का कार्य डॉ० नगेन्द्र ने 'काव्य-बिम्ब' पुस्तक लिखकर किया है।[५] आलोचना के क्षेत्र में प्रसंगवश बिम्ब की चर्चा कई विद्वानों ने की, किन्तु उसी को काव्यालोचन का प्रतिमान मानते हुए काव्य या साहित्य की आलोचना करने का श्रेय विभिन्न विश्वविद्यालयों की पी-एच. डी. उपाधि के अनुसंधाताओं को प्राप्त है, जिनमें डॉ० सुधा सक्सेना, डॉ० केदारनाथसिंह तथा डॉ० रामयतनसिंह 'भ्रमर' मुख्य हैं। डॉ० सुधा सक्सेना ने 'जायसी की बिम्ब-योजना'[६] शीर्षक अपने शोध-प्रबन्ध में बिम्ब का सैद्धान्तिक निरूपण प्रस्तुत कर जायसी के काव्य में उपलब्ध विविध प्रकार के बिम्बों की साहित्यिक आलोचना की है। किन्तु लेखिका ने बिम्ब-सम्बन्धी अपनी मान्यताएँ पाश्चात्य आलोचकों से ग्रहण की हैं और उन्हीं का पालन किया है। डॉ० केदारनाथ सिंह ने अपने शोध प्रबन्ध 'आधुनिक हिन्दी कविता में बिम्ब-विधान'[७] में बिम्ब का भाषाशास्त्रीय एवं मनोवैज्ञानिक अध्ययन

---

१. डॉ० नामवरसिंह --कविता के नये प्रतिमान, पृ. १२२
२. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल—चिन्तामणि, भाग १, पृ. १४५
३. वही, पृ. १६२
४. डॉ० नामवरसिंह—कविता के नये प्रतिमान, पृ १२५
५. डॉ० नगेन्द्र–काव्य-बिम्ब, प्रकाशक–नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, १९६७
६. प्रकाशक – अशोक प्रकाशन, दिल्ली, १९६६
७. प्रकाशक—भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, जुलाई १९७१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रस्तुत करके हिन्दी काव्य में बिम्ब विकास पर अपनी मौलिक उद्भावनाएँ प्रस्तुत कीं। उनसे भी पूर्व डॉ० रामयतनसिंह 'भ्रमर' ने 'आधुनिक हिन्दी कविता में रूप-विधान' पर शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किया था जो कि 'आधुनिक हिन्दी कविता में चित्र-विधान'[1] शीर्षक से पुस्तकाकार प्रकाशित हो चुका है।

इस प्रसंग में डॉ० सुरेन्द्र माथुर की रचना 'काव्य-बिम्ब और छायावाद'[2] का उल्लेख उचित होगा। लेखक ने प्रस्तुत पुस्तक में बिम्ब का स्वरूप-विश्लेषण पाश्चात्य विद्वानों की बिम्ब-सम्बन्धी मान्यताओं को दृष्टि में रखकर किया है। उन्हीं मान्यताओं को अपनी आलोचना का आधार बनाकर छायावाद के प्रसिद्ध कवि प्रसाद, निराला, पंत, महादेवी और रामकुमार वर्मा के काव्य में उपलब्ध मुख्य बिम्बों पर विचार किया गया। प्रस्तुत पुस्तक की महत्ता यह है कि उसमें छायावादी बिम्ब-विधान पर एक स्वतंत्र अध्ययन है।

सारांश में हम इसी निष्कर्ष पर पहुचते हैं कि भारतीय आलोचना में बिम्ब को महत्व दिया जाने लगा है। पूर्व के ग्रन्थों में बिम्ब सम्बन्धी कुछ अस्पष्ट संकेत मात्र ही प्राप्त होते हैं। बिम्ब को आलोचना के मानदंड के रूप में पहले स्वीकृत नहीं किया गया था।

बिम्बवाद

'काव्य-बिम्ब' बीसवीं शताब्दी की एक मुख्य काव्य-प्रवृत्ति है और इसका आरम्भ उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में हुआ था। इसके प्रेरणासूत्र प्रभाववादी चित्रकला में जन्मे थे, जिसका सूत्रपात फ्रांस के चित्रकारों द्वारा हुआ था। इस बिम्बवाद का थोड़ा-सा संकेत फ्रांस में सन् १८८४ में वाट्स डंटन की 'एन्-साइक्लोपीडिया' में कविता की परिभाषा के प्रसंग में मिलता है। उसके अनुसार कविता मानव-मन की मूर्त एवं कलात्मक अभिव्यंजना है, जिसकी भाषा भावात्मक एवं संगीतात्मक होती है।[3] किन्तु 'बिम्ब' को एक साहित्यिक वाद का रूप अंग्रेजी साहित्य में बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में मिला और यह रोमान्टिक काव्य की अतीन्द्रिय सौन्दर्यानुभूति, आध्यात्मिक प्रेम एवं रहस्यात्मक अनुभूति की प्रतिक्रिया के रूप में काव्य के वस्तुनिष्ठ एवं स्थूल रूप को महत्व प्रदान करता अवतरित हुआ। यह वाद काव्य में सूक्ष्म एवं अमूर्त के स्थान पर मूर्त की प्रतिष्ठा करता है।

बिम्बवाद के प्रवर्तक टी. ई. ह्यूम और एफ. एस. फ्लिन्ट थे। सन् १९०८ में ह्यूम ने एक निबन्ध में बिम्बवाद सम्बन्धी अपने विचारों की घोषणा की जिसके अनुसार कविता के निम्नलिखित गुण होने चाहिएँ—

---

१. प्रकाशक—नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, १९६५
२. प्रकाशक—ज्ञान भारती प्रकाशन, दिल्ली, १९६९
३. रामचन्द्र शुक्ल से उद्धृत—रस-मीमांसा, पृ. ३२७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(१) कविता चाक्षुष संमूर्त्तन की भाषा में लिखी जाती है।
(२) उसकी भाषा दर्शक के सामने मूर्तवस्तु खड़ी कर देती है।
(३) वह नूतन अलंकारों को इसलिए अपनाती है कि प्राचीन अलंकार अपनी संमूर्त्तन शक्ति खो चुके हैं।
(४) चाक्षुष ज्ञान-प्रदान करने में रूपक समर्थ साधन है।
(५) काव्य-बिम्ब केवल रूप-सज्जा नहीं, किन्तु भाषा का सारतत्व है।[1]

ह्यूम लघु कविता का समर्थन करते थे क्योंकि लम्बी कविता में बिम्ब बिखर जाते हैं, लघु कविता बिम्बों का प्रभाव अपेक्षाकृत अधिक डाल सकती है। ह्यूम का समर्थन करते हुए फ्लिन्ट ने सन् १९१३ में 'इमेजिसम्' शीर्षक अपनी आलोचनात्मक टिप्पणी प्रकाशित की जिसमें उन्होंने बिम्ब सम्बन्धी अपने तीन सिद्धान्त किए।[2]

(१) चाहे विषय हो या विषयी, उसका प्रत्यक्ष या मूर्त चित्रण करना।
(२) अनावश्यक शब्दों का बहिष्कार करके मूर्त रूप खड़ा कर सकने वाले शब्दों का प्रयोग करना।
(३) छन्दोबद्धता पर ध्यान न देकर संगीत को ध्यान में रखकर काव्य-रचना करना।

फ्लिन्ट ने वर्णनात्मक एवं विचारात्मक कविता का विरोध किया और ह्यूम का समर्थन करते हुए लघु कविता का विशेष आग्रह किया। ऊपर के सिद्धान्तों से यह स्पष्ट हो जाता है कि कविता में संमूर्तन ही सब कुछ है। कविता में प्रयुक्त शब्दों में मूर्तिविधायिनी शक्ति का होना आवश्यक है। वे संगीतात्मकता को अपरिहार्य गुण मानते थे।

सन् १९१२ में एज़रा पाँड ने रिपोस्टे की भूमिका में बिम्बवाद का समर्थन किया और बिम्बवादी रचना का 'इमेज' नामकरण किया। उन्होंने अपने घोषणा-पत्र में काव्य के रूप-पक्ष को सर्वोपरि सिद्ध किया तथा संक्षिप्त कविताओं को प्रश्रय दिया। वे विषयों के चुनाव में कवि की स्वतंत्रता तथा काव्य में नित्य नवीन बिम्बों के प्रबल समर्थक थे। सन् १९१४ में अमोलेवल ने इमेज की स्पष्ट व्याख्या की और इसी वर्ष एज़रा पाँड के सम्पादकत्व में 'सम इमेजिस्ट्स' नाम से ग्यारह कवियों का एक संकलन प्रकाशित हुआ।

बिम्बवादियों की उपलब्धियों पर प्रकाश डालते हुए डॉ० केदारनाथसिंह ने लिखा है—"सैद्धान्तिक दृष्टि से बिम्बवादियों की दो उपलब्धियाँ मानी जा सकती हैं। उन्होंने पहली बार काव्य की मूर्तिमत्ता (बिम्ब) पर बल देकर कविता को यथार्थ के जीवन-धरातल पर लाने का प्रयास किया। इससे भी

१. फ्रॉंक कर्मोड से उद्धृत, रोमान्टिक इमेज, पृ. १२७
२. शिप्ली—डिक्शनरी ऑफ वर्ल्ड लिटरेचर, पृ. ३०५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

महत्वपूर्ण उनकी देन यह थी कि उन्होंने सामान्य (रोमान्टिक कविता की सौन्दर्य और सत्य सम्बन्धी सार्वभौम अनुभूतियों) के विरुद्ध काव्य के क्षेत्र में पुनः 'विशेष' (जीवन और जगत् की देशकालबद्ध विशिष्ट अनुभूतियों) के महत्व का प्रतिपादन किया।"[1] इस प्रकार बिम्बवादियों की पहली स्थापना कि काव्य बिम्बात्मक होता है, अत्यन्त समयानुकूल थी। उन्होंने काव्य को रोमानी कल्पना की ऊँची उड़ान एवं अतीन्द्रिय सूक्ष्म अनुभूतियों से वस्तुगत धरातल पर खड़ा कर दिया और इस प्रकार उसे सर्वजनसुलभ बनाने का प्रयत्न किया। उनकी द्वितीय मान्यता कि काव्य-बिम्ब सामान्य या जाति का नहीं बनता, बल्कि विशेष या व्यक्ति का बनता है, एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है। सामान्य या जाति एक व्यापक किन्तु अस्पष्ट तथ्य है, जिसको हम कल्पना में आँक नहीं सकते। अतः सामान्य या जाति का बिम्ब हो ही नहीं सकता। इस बात का समर्थन आचार्य शुक्ल भी करते हैं, जबकि वे कहते हैं "कवि का काम है कल्पना में 'बिम्ब' या मूर्त भावना उपस्थित करना, बुद्धि के सामने कोई विचार लाना नहीं। बिम्ब जब होगा, तब विशेष या व्यक्ति का ही होगा, सामान्य या जाति का नहीं।"[2]

यूरोप में बिम्बवाद अधिक समय तक नहीं चल सका। इस वाद की अपनी त्रुटियाँ थीं। बिम्बवादी सिद्धान्त काव्य-सम्बन्धी संकुचित दृष्टिकोण का द्योतक था। जहाँ उसने काव्य को संमूर्तन कला माना है, वहाँ उसकी दृष्टि केवल चाक्षुष बिम्ब तक पहुँची है और शेष ऐन्द्रिय संवेदनात्मक बिम्बों की उपेक्षा की गई है। यह सिद्धान्त साधारणतया लघु कविताओं तक को ही अपनी परिधि में लेता है, विवरणात्मक, वर्णनात्मक या इतिवृत्तात्मक प्रबन्धकाव्य इसकी परिधि में नहीं आता, जो इस सिद्धान्त की एक बड़ी कमी है। काव्य की श्रेणी में केवल गीत या मुक्तक ही नहीं आते, काव्य में प्रबन्धकाव्य का एक विस्तृत क्षेत्र है, जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। तीसरे बिम्बवाद एक कलात्मक सिद्धान्त है, जो काव्य के मात्र रूपपक्ष को आधार मानकर चलता है। किन्तु काव्य में रूपपक्ष का वहीं तक महत्व है, जहाँ तक वह भावपक्ष का पूर्ण आश्लेष करता है। बिना भाव के रूप का कोई अस्तित्व नहीं।

काव्य-बिम्ब का स्वरूप

बिम्ब या प्रतिबिम्ब शब्द का अर्थ चाहे जो भी हो, इस समय हिन्दी में 'बिम्ब' शब्द का प्रयोग अंग्रेज़ी शब्द 'इमेज' के पर्याय के रूप में होता है। बिम्ब के अर्थ में चित्र, प्रतिमा आदि अन्य पर्याय शब्दों का भी प्रयोग बहुधा किया जाता है। बिम्ब एक व्यापक अर्थ वाला शब्द है, जिसमें समस्त पृथ्वीतल के

---

१. डॉ० केदारनाथ सिंह—आधुनिक हिन्दी कविता में बिम्ब-विधान, पृ. १२
२. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल—चिन्तामणि, भाग १, पृ. २२८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उपादान एवं क्रिया-व्यापार आ सकते हैं। काव्य-बिम्ब कवि की अनुभूति की सफल अभिव्यक्ति का एक अपरिहार्य उपादान तत्व है। भारत में काव्य-बिम्ब सम्बन्धी अध्ययन अभी शैशवावस्था में है, किन्तु पाश्चात्य काव्यशास्त्र में बिम्ब सम्बन्धी विशद अध्ययन हो चुका है और वहाँ इसपर कई स्वतन्त्र ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं। इस प्रसंग में मिस स्पर्जियन का 'शेक्स्पियर्स इमेजरी ऐण्ड ह्वाट इट टेल्स अस', आर. एच. फोगल का 'दि इमेजरी ऑफ कीट्स ऐण्ड शैली', रोज़मोण्ड तुव का 'एलिज़बेथेन ऐण्ड मेटाफिसिकल इमेजरी', फ्रॉक कर्मोड का 'रोमान्टिक इमेज', सी. डी. लुवीस का 'दि पोयटिक इमेज', स्टीवन जे. ब्राउन का 'दि वर्ल्ड ऑफ इमेजरी', आदि कितने ही बिम्ब सम्बन्धी ग्रन्थों का उल्लेख किया जा सकता है।

अंग्रेज़ी में 'इमेज' शब्द का अर्थ है वस्तु की छाया, अनुकृति, सादृश्य अथवा समानता।[1] यह किसी व्यक्ति या पदार्थ की प्रतिकृति है।[2] यह शब्द प्रतिमूर्ति या मानसचित्र या काल्पनिक चित्र को प्रकट करता है।[3] यह मानस-चित्र या प्रतिकृति का द्योतक है।[4] हिन्दी के कोषों में भी बिम्ब शब्द का अर्थ 'इमेज' से मिलता-जुलता है। बिम्ब का अर्थ है प्रतिबिम्ब, छाया, प्रतिमूर्ति आदि।[5] यह वस्तु की प्रतिच्छाया है।[6] अतः अंग्रेज़ी 'इमेज' के लिए हिन्दी में 'बिम्ब' शब्द का प्रयोग प्रचलित है। देखा जाय तो 'इमेज' वस्तु की छाया या प्रतिमूर्ति है, जिसका हिन्दी में पर्याय होगा 'प्रतिमा'।

काव्य-बिम्ब का तात्पर्य किसी वस्तु या पदार्थ का काव्य में प्रत्यंकन या वस्तु के समान या सदृश्य चित्रण है। इस सम्बन्ध में यह विचारणीय है कि कवि का बिम्ब क्या उनके देखे पदार्थों का यथातथ्य चित्र है। थोड़े समय के लिए यह मान लिया जाए कि कोई दो कवि एक ही दृश्य का वर्णन करने बैठते हैं, किन्तु आज तक के काव्य इस बात का प्रमाण हैं कि किन्हीं दो कवियों के एक ही वस्तु के चित्रण समान नहीं होते। वाल्मीकि के राम न तुलसी के राम हैं न मैथिलीशरण के। प्रसाद, पंत और निराला की 'संध्या सुन्दरी' समान नहीं है। अतः स्पष्ट है कि कवि के मानस में बाह्य प्रपंच का जो प्रतिबिम्ब पड़ता है, वह उसके मानसी संस्कारों पर आधारित है। मानसी संस्कारों के निर्माण में व्यक्ति की परम्परा, वातावरण, शिक्षा-दीक्षा, अध्ययन आदि अनेक तत्वों का योग रहता

---

१. शोर्टर आक्स्फोर्ड डिक्शनरी
२. वेबस्टेर्स न्यू इन्टरनाशनल डिक्शनरी
३. चेम्बेर्स ट्वेन्टियथ् सेन्चुरी डिक्शनरी
४. दि मार्डन लाइब्ररी डिक्शनरी ऑफ दि इंग्लीश लान्गुवेज
५. हिन्दी शब्द सागर, काशी नागरी प्रचारिणी सभा
६. विश्व कोष, भाग १५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

है। इसलिए एक व्यक्ति का व्यक्तित्व और संस्कार दूसरे के व्यक्तित्व एवं संस्कार से भिन्न रहता है। दूसरे, कवि वस्तु के बाह्य-रूप का ही वर्णन नहीं करता, प्रत्यक्ष वस्तु के आन्तरिक सत्ता—सौन्दर्य का प्रत्यंकन करना भी उसका कर्तव्य है। कोई वस्तु एक के लिए सुन्दर लग सकती है, तो दूसरे के लिए असुन्दर। काव्य-बिम्ब आनंददायक होता है, जबकि प्रेषक की दर्शित वस्तु सदैव आनंददायक नहीं होती। अतः काव्य-बिम्ब चित्र मात्र नहीं होता। काव्य-बिम्ब सात्विक भाव को जगाता है क्योंकि कवि की भावना सात्विक होती है। कवि वस्तु को बाह्य चक्षु से देखकर जो रूप अंकित करता है वह मूल वस्तु के समान नहीं होता। कारण यह कि शायद ही कोई पदार्थ ऐसा होता जिसका समग्र रूप हमारी चक्षु एक साथ ग्रहण कर पाती हो। होता यह है कि कवि के मानस में बाह्य वस्तु के खण्ड चित्र ही एक के बाद एक अंकित होते जाते हैं, जिनके द्वारा कवि का मस्तिष्क एक धुँधला एवं अस्पष्ट समग्र बिम्ब ग्रहण करता है, जिसको कवि अपनी प्रतिभा एवं बुद्धि के योग से काव्य में प्रस्तुत करता है। जैसे पात्र में भरा पानी पात्र के अनुरूप आकार प्राप्त करता है, वैसे ही एक वस्तु ही विभिन्न दर्शकों के मस्तिष्क में मन की ग्राहिका-शक्ति की क्षमता के अनुसार भिन्न प्रकार से अंकित होती है।

कवि और साधारण व्यक्ति, दोनों की रस-ग्राहिका-शक्ति में भिन्नता है। हो सकता है कि एक साधारण व्यक्ति कवि से भी अधिक संवेदनशील हो तथा सौंदर्यास्वादन एवं मानस-बिम्ब बनाने में कवि से भी बढ़कर हो। आस्वादन क्षमता के रहते हुए भी वह उसे व्यक्त करने की क्षमता से वंचित रहता है। सफल कवि की यह विशेषता है कि वह जिस वस्तु का रसास्वादन करता है, उसको उसी रूप में पाठकों को प्रत्यक्षीकृत कराने का पाटव भी रखता है। दूसरे हम जो भी वस्तु स्वप्न में देखें, उसका सम्बन्ध किसी प्रकार के हमारे पूर्व संस्कार से होगा। वैसे ही कवि जो बिम्ब बनाता है, उसका भी आधार उसका पूर्व संस्कार है, जिसके पीछे अनुभूत किसी प्रत्यक्ष वस्तु का सम्बन्ध रहता है। कवि की रस-ग्राहिका शक्ति, मानस-प्रत्यक्ष करने की क्षमता, सृजनात्मक प्रतिभा, अभिव्यक्ति-पाटव, पाठक की दृष्टि से काव्यास्वादन की क्षमता आदि अनेक तत्वों के कारण काव्य-बिम्ब वस्तु का यथातथ्य चित्र नहीं होता। डॉ. बच्चनसिंह ने ठीक ही लिखा है—"निराकार अनुभूतियों को आकार देने के लिए कवि उसका संमूर्तन करता है, अर्थात् उन्हें चित्र-रूप में प्रस्तुत करता है। इस संमूर्तन के लिए वह नपी-तुली रेखाओं, आवश्यक रंगों, समुचित परिप्रेक्ष्य का पूरा ध्यान रखता है। काव्यगत संमूर्तन (इमेज) बाह्याकार का अनुकरण नहीं होता, वह मुख्यतः कवि की कल्पना और अनुभूति से निर्मित होता है। बाह्य जगत् के रूप-विन्यास से प्रभावित होकर कवि जब उसे भाषा में उतारने का प्रयास करता है, तो उसे स्वतः नये सौन्दर्यात्मक संदर्भ मिल जाते हैं जो विषय और भावों को

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

एक प्रतीकात्मक अर्थ भी प्रदान करता है।"[१]

बिम्ब एक शब्द-चित्र है।[२] अर्थात् कवि अपनी अनुभूति को जब शब्दों के माध्यम से चित्रात्मक रूप में अभिव्यक्त करता है, तब बिम्ब की सृष्टि होती है। इस बिम्ब का आधार बाह्य जगत् की रंग-ध्वनियाँ हैं।[३] बाह्य जगत् के रूप रंग, ध्वनियाँ कवि की अनुभूति को उद्वेलित करते हैं। रंग और ध्वनियाँ कवि की संवेदनाओं को उत्तेजित करती हैं और उनकी प्रेरणा से काव्य-सृष्टि होती है। यह तभी होगा जब कवि प्रकृति के साथ रागात्मक सम्बन्ध स्थापित करे तथा अपनी आत्मा का स्पन्दन प्रकृति के प्रत्येक स्पन्दन में अनुभव करे। इस एकात्म भावना या तदाकार परिणति में ही काव्य-प्रचोदन होता है और सुन्दर काव्य-सृष्टि होती है। लुवीस ने ठीक ही कहा है कि काव्य-बिम्ब सचराचर जगत् से सम्बन्ध रखने वाला मानव हृदय ही है।[४] कवि की ये भावनाएँ स्थूल गोचर रूप में या मूर्त रूप में ही कविता प्रस्तुत करती है।[५] अतः कलाकार सर्जन-काल में सौन्दर्य का अनुसंधान करने वाली प्रतिमा का मानस प्रत्यक्ष करके अपने कौशल द्वारा उसे मूर्त-वस्तु की स्थिति प्रदान करता है।[६] अतः काव्य-बिम्ब का प्रथम लक्षण है उसकी मूर्तिमत्ता।

कवि का बिम्ब ऐन्द्रिय गुणों से युक्त रहता है। कवि ने बिम्ब-निर्माण के लिए जिन प्रेरक अनुभूतियों को प्राप्त किया, उनके पीछे कवि की ऐन्द्रिय संवेदना रहती है। पदार्थ के साथ कवि के ऐन्द्रिय सन्निकर्ष से मन में तदनुरूप संवेदनाएँ उत्पन्न होती हैं, जो कवि के पूर्व संस्कारों से मेल खाकर अनुभूति रूप में परिवर्तित हो जाती हैं। वैसे ही ऐन्द्रिय गुणों से युक्त बिम्ब ही पाठकों की ऐन्द्रियानुभूति को जगा सकता है। ऐन्द्रिय ज्ञान से बिम्ब अधिक प्राणवान होते हैं। ऐन्द्रिय ज्ञान ही बिम्ब को अनुभवगम्य, स्पष्ट एवं स्फुट करता है। तात्पर्य यह है कि काव्य-बिम्ब एक ऐसा शब्द-चित्र है जिसके पीछे इन्द्रिय-संवेदना का स्पर्श हो। जे. ई. डॉनी ने काव्य-बिम्ब की इस ऐन्द्रियता पर विशेष ज़ोर डालते हुए लिखा है कि बिम्ब को वस्तु की प्रतिकृति नहीं समझना चाहिए। वह ऐन्द्रिय गुणों से परिपूर्ण विचारों का सारतत्व है।[७] ऐन्द्रिय संवेदनाओं में चाक्षुष संवेदना का प्रमुख हाथ है। वह वस्तु के रूप, रंग, आकार को नेत्रों के सम्मुख प्रस्तुत

---

१. डॉ० बच्चनसिंह—बिहारी का नया मूल्यांकन, पृ. ६५—६६
२. सी. डी. लुवीस—दि पोयटिक इमेज, पृ. १८
३. रोजमोण्ड तुव—एलिज़बेथन एण्ड मेटाफिसिकल इमेजरी, पृ. ३
४. सी. डी. लुवीस—दि पोयटिक इमेज, पृ. ३५
५. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल—रस-मीमांसा, पृ. ४१
६. हिन्दी साहित्य कोष, भाग १, पृ. ५१४
७. जे. ई. डॉनी—क्रीयटीव इमाजिनेशन, पृ. १२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

करती है, जिससे पाठक वस्तु के साथ तुरन्त तादात्म्य अनुभव करने लगता है। तभी रोनाल्ड पीकॉक का विचार है कि ऐन्द्रिय संवेदनाओं से प्राप्त पूर्वकालीन स्मृतिजन्य अनुभूतियों की पुनः स्थापना संमूर्तन है।[1] इसमें स्मृति और कल्पना का योग रहता है। कवि वस्तु के प्रत्यक्षीकरण के समय काव्य-रचना नहीं करता। काव्य-सृजन के समय वस्तु आँखों से ओझल रहती है। तभी वर्ड्सवर्थ ने भाव, चिन्तन और मनन को महत्व देते हुए लिखा है कि कविता मानव-मन की बलवती भावनाओं का सहज उच्छलन है और उसका उद्भव शान्त अवस्था में भावों के चिन्तन से होता है।

अधिकतर बिम्ब चाक्षुष होते हैं, किन्तु यह आवश्यक नहीं है कि बिम्ब चाक्षुष ही हों। अन्य इन्द्रिय-संवेदनाओं जैसे श्रव्य, स्पृश्य, घ्रातव्य एवं आस्वाद्य के भी अपने-अपने बिम्ब हो सकते हैं, भले ही उनमें चाक्षुष जैसी भावोत्तेजन की क्षमता न हो।[2] वैसे श्रव्य, स्पृश्य, घ्रातव्य एवं आस्वाद्य बिम्बों में भी अस्पष्ट ही सही थोड़ी-बहुत चाक्षुषता अवश्य रहती है। इसके विपरीत वह चाक्षुष बिम्ब जिसमें शब्द, स्पर्श आदि का समावेश न हो, विशेष मूल्य नहीं रखता। ऐसे चाक्षुष चित्र प्रायः जड़ और मोटे रूप में बहुमुखी होते हैं और वे सूक्ष्म ऐन्द्रिय बोध को सन्तुष्ट करने में प्रायः अशक्त दीख पड़ते हैं।[3]

उपर्युक्त तथ्यों से हम यहाँ तक पहुँच गये कि बिम्ब मानस-चित्र [illegible] ऐन्द्रिय संमूर्तन है, किन्तु इतने मात्र से बिम्ब बिम्ब नहीं हो सकता। [illegible] संवेदना के होते हुए भी चित्र प्राणवान एवं प्रभावकारी नहीं बन सकता। [illegible] निर्माण के पीछे कवि की दीर्घकालीन साधना आवश्यक है। कवि ने प्रत्यक्ष जगत् से या सुनी-सुनायी बातों से जो संवेदना एवं संवेग प्राप्त किए, वे ही कवि के अवचेतन में रहकर मुक्ति के लिए प्रयत्नशील होकर कवि को काव्य-सृजन के लिए प्रेरणा देते रहते हैं। अतः काव्य-बिम्ब का संवेगात्मक होना आवश्यक है। संवेग के बिना बिम्ब उस मूर्ति के समान है जिसकी प्राण-प्रतिष्ठा नहीं हुई हो। तभी कॉलरिज ने बिम्ब की प्राण-प्रतिष्ठा के लिए वासना और संवेग का संस्पर्श आवश्यक बताया है।[4] वास्तव में संवेग और अनुभूति अमूर्त संवेदन मात्र हैं, जिनको व्यक्त करना ही बिम्ब का लक्ष्य है। अतः अनुभूति को मानस-चित्रों में अभिव्यक्त करने की पद्धति ही बिम्ब-योजना है।[5] अर्थात् बिम्ब में अनुभूति महत्वपूर्ण है और बिम्ब उस अनुभूति को व्यक्त करने की प्रणाली मात्र है। इस

---

१. रोनाल्ड पीकॉक—दि आर्ट ऑफ ड्रामा, पृ. ९६
२. वी. ए. फिथियन—कन्सिडरिंग पोयट्री, पृ. १५
३. डॉ० बच्चनसिंह—बिहारी का नया मूल्यांकन, पृ. ७०
४. आई. ए. रिचर्ड्स—कॉलरिज ऑन इमाजिनेशन, पृ. ३५
५. मिस एडिथ रॉकर्ट—न्यू मथेडस फॉर दि स्टडी ऑफ लिटरेचर, पृ. २७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

बिम्बात्मक अभिव्यक्ति का उद्देश्य है कवि के भावों, विचारों और अनुभूतियों को पाठकों को प्रेषित कर उनमें भी रस-संचार करना। अगर कवि अपने भावों को पाठकों में संचारित नहीं कर पाता, अगर पाठक कवि के बिम्बों से प्रभावित नहीं होता और रसवृष्टि से आनन्दानुभूति का अनुभव नहीं करता तो कवि कितने ही चमकीले या चमत्कारयुक्त बिम्ब की योजना करे तो भी कवि-कर्म सफल नहीं समझा जाता। सभी कविताओं का अन्तिम लक्ष्य है सौन्दर्य के माध्यम से रसास्वादन के लिए भावोत्तेजन करना।[१] अतः प्रत्येक बिम्ब में एक न एक भाव-संकुल कथ्य की अवस्थिति अनिवार्य है। डॉ० नगेन्द्र का कथन है कि काव्य-बिम्ब शब्दार्थ के माध्यम से कल्पना द्वारा निर्मित एक ऐसी मानस-छवि है जिसके मूल में भाव की प्रेरणा रहती है।[२] कवि देश-काल से परे एक क्षणिक अनुभूति को भाव से अनुप्राणित कर चित्र रूप में प्रस्तुत करता है और भावात्मक विशिष्टता चित्रमयता के पीछे रहती है। यह भाव बाह्य वस्तु के रूप, गुण या व्यापार से सम्बन्धित होता है और उसके अनुसार बिम्ब भी वस्तुपरक या भावपरक ही हो सकता है।

बिम्ब एक कला-सर्जन है और कला-सर्जन के पीछे जहाँ भाव की उत्तेजना रहती है, वहाँ सर्जनात्मक कल्पना या प्रतिभा भी निवास करती है। यह कल्पना ही कवि के भावों का पुनः सृजन करती है और विभिन्न बिम्बों में एकान्विति लाती है। यही कारण है कि काव्यगत बिम्ब से प्राप्त आनन्द वस्तु के वास्तविक दर्शन से प्राप्त आनन्द से भिन्न है, क्योंकि कवि की सौन्दर्य-विधायिनी कल्पना असुन्दर को भी सुन्दर बनाती है तथा पाठक की कल्पना को भी उत्तेजित करती है। अतः लुवीस का यह कथन कि बिम्ब अनुभव के प्रकाश में वस्तु का पुनर्निर्माण करता है,[३] अत्यन्त सारपूर्ण है। अनुभवों के प्रकाश में वस्तु का पुनर्निर्माण कल्पना का ही काम है। यही कारण है कि कुछ विद्वानों के अनुसार कल्पना ही बिम्ब-निर्माण है। "बिम्ब आँख का विषय नहीं, कल्पना का विषय है। केवल उसका बोध होना चाहिए। वह सूक्ष्म या स्थूल किसी भी प्रकार का हो सकता है। इसलिए एक सफल बिम्बात्मक कविता में जो प्रत्यक्ष दिखाई देता है, उससे कहीं अधिक महत्वपूर्ण वह अमूर्त झलक होती है, जो एक ज्योति-रेखा की तरह क्षणभर के लिए चेतना के धरातल पर खिचकर तत्काल विलीन हो जाती है।"[४] यह अमूर्त झलक जो चेतना में खिचकर तत्काल विलीन हो जाती है, कल्पना नहीं तो और क्या है?

---

१. कॉलरिज—बायोग्रफिया लिटरेरिया, भाग २, पृ. २२०
२. डॉ० नगेन्द्र—काव्य-बिम्ब, पृ. ५
३. सी. डी. लुवीस—दि पोयटिक इमेज, पृ. २९
४. डॉ० केदारनाथसिंह—आधुनिक हिन्दी कविता में बिम्ब-विधान, पृ. २१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कवि जो कुछ प्रस्तुत करता है उसका अर्थवत् होना और विचारात्मक होना आवश्यक है। काव्य में शब्द और अर्थ की एकान्विति अपरिहार्य है। पाठक तभी आनन्द का अनुभव कर सकेंगे जब कि वे कवि-वर्णित प्रत्येक दृश्य, शब्द एवं अभिव्यक्त अर्थ को हृदयंगम कर सकें। अतः बिम्ब का प्रत्येक अंश सार्थक होता है और वह कविता को भी अर्थवान् बनाने में सहायता पहुँचाता है। उसकी अर्थवता प्रसंगानुकूल होती है। कवि को चाहिए कि वह ऐसे बिम्बों की सृष्टि करे, जो प्रसंग के अनुरूप हों। यहीं पर क्षेमेन्द्र का औचित्य सिद्धान्त पूर्णतः सिद्ध होता है। बिम्ब काव्य का अभिन्न अंग होता है और उसकी अभिन्नता तभी सिद्ध होगी जब कि वह स्वयं अर्थ को प्रकाशित करे तथा संपूर्ण काव्य के अर्थ-प्रकाशन में सहायक हो। जो अर्थ प्रकाशित होता है उसके पीछे कवि का कोई विचार रहता है। कवि जो रचना करता है, उसके पीछे कुछ कथ्य अवश्य रहता है। कवि जो संदेश देना चाहता हैं, वह कविता के माध्यम से देता है और उसका सहायक तत्व है—विचारों का मूर्त रूप। बिम्ब भाव और विचार का व्यंजक तत्व होता है।

अब प्रश्न यह है कि बिम्ब का स्वरूप क्या अलंकार तक सीमित किया जा सकता है, जैसा कि अंग्रेज़ी के कुछ समीक्षकों ने माना है। मिस स्पर्जियन ने 'बिम्ब' शब्द का प्रयोग उपमा तथा रूपक के अर्थ में किया है।[1] उपमा और रूपक सादृश्य मूलक अलंकार हैं और इनमें प्रस्तुत के वस्तु, व्यापार और गुण के सादृश्य या साधर्म्य पर अप्रस्तुतों का विधान किया जाता है। और ऐसा करने में मूल उद्देश्य अप्रस्तुत का मूर्त रूप खड़ा करना है। छायावादी कवियों ने प्रभाव-साम्य को दृष्टि में रखकर अत्यन्त हृदयग्राही अप्रस्तुतों का विधान किया है। इन अप्रस्तुतों की मूर्ति-विधायिनी क्षमता को स्वीकार करते हुए भी स्वीकार करना होगा कि अप्रस्तुत योजना में हमारी दृष्टि प्रस्तुत से हटकर अप्रस्तुत की ओर अधिक रमती है। अप्रस्तुत योजना में यह ध्यान रखा जाता है कि जो अप्रस्तुत लाये जाते हैं, वे प्रस्तुत के अनुरूप भावोत्तेजक हों। अतः अप्रस्तुत के साथ ही प्रस्तुत का भी संमूर्तन हो जाता है। फिर भी जब यह कहा जाता है कि बिम्ब उपमा और रूपक है, वहाँ ज़ोर अप्रस्तुत पर पड़ता है। अप्रस्तुत को बिम्ब-धर्मी मानते हुए भी हमें यह स्वीकार करना पड़ता है कि उपमा और रूपक हमारे यहाँ अलंकार ही माने गए हैं और इसीलिए उन्हीं को बिम्ब नहीं माना जा सकता, बिम्ब का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। जहाँ कोई अलंकार-विधान नहीं है, ऐसे स्थानों में भी अत्यन्त सफल बिम्ब कवि लाया करते हैं। 'कामायनी' का प्रथम छन्द उदाहरण-स्वरूप लिया जाए—

---

१. मिस स्पर्जियन—शेक्सपीयर्स इमेजरी एण्ड ह्वाट इट टेल्स अस, पृ. ५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हिमगिरि के उत्तुंग शिखर पर,
बैठ शिला की शीतल छाँह,
एक पुरुष, भीगे नयनों से,
देख रहा था प्रलय प्रवाह।

कौन कह सकता है कि अलंकार के अभाव में यह छन्द बिम्बात्मक नहीं है। कवि ने यहाँ किसी उपमा या रूपक का सहारा लिये बिना सीधी-सादी भाषा में हिमालय के उत्तुंग शिखर पर बैठे भीगे नयनों से प्रलय प्रवाह का अवलोकन करने वाले 'पुरुष' का सजीव चित्र प्रस्तुत किया है और इस बिम्ब-योजना में प्रयुक्त शब्द ही सहायक सिद्ध हुए हैं। हिमगिरि, उतुंग शिखर, शीतल छाँह, एक पुरुष, भीगे नयन, प्रलय प्रवाह आदि शब्द इतने चित्रात्मक हैं कि सहसा चित्र उभर आता है और नेत्रों के सम्मुख विपन्न दशा में फँसा हुआ 'पुरुष' उपस्थित हो जाता है। यही नहीं, कवि की चित्रधर्मी भाषा हमारी कुतूहलवृत्ति को भी उकसा देती है। यही कवि की बिम्ब-योजना की सफलता है। चाहे अलंकार हो या न हो, बिम्ब-योजना सफल तभी मानी जाएगी जब कि प्रयुक्त बिम्ब कष्टसाध्य न होकर अनायास निकला हुआ हो। 'काव्यगत चित्र उस चित्रकाव्य के उदाहरण नहीं होते, जिसकी भारतीय साहित्यशास्त्रों में निन्दा की गयी है, प्रत्युत, यह वह कला है जिसके द्वारा काव्य में शब्दों के संयोग से वस्तुओं और विचारों के मूर्तिमान रूप प्रस्तुत किये जाते हैं। चित्र-रचना की सामग्री, अक्सर अलंकारों की सामग्री होती है, किन्तु चित्र अलंकार लाये बिना भी रचे जा सकते हैं। यही नहीं, किसी भी विशेष योजना के बिना, केवल विशेषणों अथवा क्रियापदों के आधार पर भी सजीव चित्रों की रचना हो सकती है। परन्तु व्यवहारतः चित्र रचना में उपमानों का इतना अधिक प्रयोग होता है कि अंग्रेज़ी में चित्र और रूपक प्रायः पर्याय बनकर चल रहे हैं।'[१] कहमें का तात्पर्य यह कि काव्य-बिम्ब का सम्बन्ध पदार्थों की तुलना या समानताओं तक सीमित नहीं है। केवल इतना कहा जा सकता है कि अलंकार बिम्बात्मक होते हैं, बिम्ब-योजना के सहायक अनेक तत्वों में अलंकार भी है। इसीलिए स्टीवन जे. ब्राउन ने काव्यगत तुलना को बिम्ब-निर्माणके लिए अनिवार्य नहीं माना। उसके अनुसार बिम्ब वस्तु का तात्कालिक स्थानापन्न है, जिसके निर्माण में कभी तुलना सहायक होती है, और कभी नहीं भी।[२] रूपक, उपमा, मानवीकरण, सिनेकडोक, मेटोनिमी, समासोक्ति, मुहावरे, लोकोक्ति, प्रतीक सब बिम्बात्मक हैं। इनमें भी मानवीकरण और प्रतीक की मूर्तिविधायिनी क्षमता सर्व-विदित है। छायावादी काव्य की बिम्ब-योजना की सफलता के मुख्य कारण ये दो ही हैं। वैसे

१. रामधारीसिंह 'दिनकर'—काव्य की भूमिका, पृ. १००
२. स्टीवन जे. ब्राउन—दि वर्ल्ड ऑफ इमेजरी, पृ. २

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ही सब शब्द-शक्तियों में लक्षणा बिम्ब-विधान का अचूक अस्त्र है। तभी शुक्लजी की मान्यता है कि अगोचर बातों या भावनाओं को भी, जहाँ तक हो सकता है, कविता स्थूल गोचर रूप में रखने का प्रयास करती है। इस मूर्ति विधान के लिए भाषा लक्षणा-शक्ति से काम लेती है।[१]

काव्य-बिम्ब कवि के व्यक्तित्व का द्योतक तत्व है। बहुत से अंग्रेज़ी आलोचक बिम्बों को ही कवि के महान व्यक्तित्व एवं सृजन-सफलता का आधार मानते हैं।[२] बिम्बों के विषय से कवि के व्यक्तित्व का पता चलता है। प्रत्येक कवि के विषय के चुनाव के पीछे उसके व्यक्तिगत संस्कार का महत्वपूर्ण स्थान है। यह बहुधा देखा जाता है कि प्रत्येक कवि के कुछ अपने बिम्ब होते हैं, जो उसकी रुचि एवं संस्कार के दर्पण हैं। बिम्ब काव्य का एक ढाँचा है और प्रत्येक कविता एक बिम्ब होती है। तभी तो डॉ० नगेन्द्र कला की सर्जना को बिम्ब-रचना का नाम देते हैं।[३] यहाँ नगेन्द्र जी ने काव्य की समग्रता में बिम्ब का अस्तित्व सूचित किया है। वैसे एक ही कविता में अनेक पृथक-पृथक बिम्ब माला की मणियों के समान ऐसे गुँथे रहते हैं कि बिम्ब को काव्य का अंग मानना पड़ेगा।[४]

काव्य में बिम्ब की स्थिति पर विचार करते हुए कहना पड़ेगा कि बिम्ब काव्य के किसी अंश में भी रह सकता है और पूरी कविता भी एक बिम्ब हो सकती है। काव्य में प्रयुक्त एक पद, कभी एक वाक्यांश और कभी एक वाक्य बिम्ब-निर्माण कर सकता है। काव्य में प्रत्येक पद, प्रयुक्त प्रत्येक वाक्य बिम्ब की अवतारणा में योग दे सकता है। जहाँ संगठित साँगरूपक हो वहाँ प्रत्येक शब्द बिम्ब प्रस्तुत करने में समर्थ होता है। साँगरूपक में बिम्ब की स्थिति एक से अधिक संज्ञाओं, विशेषणों, क्रियापदों में मानी जा सकती है। उदाहरण के लिए 'कामायनी' में प्रलय-शेष पानी से ऊपर उभरी पृथ्वी का वर्णन लिया जा सकता है —

सिन्धु सेज पर धरा वधू अब
तनिक संकुचित बैठी सी
प्रलय निशा की हलचल स्मृति में
मान किये-सी, ऐंठी सी।[५]

उपर्युक्त छन्द में सेज, वधू, निशा, हलचल (संज्ञाएँ), संकुचित (विशेषण),

---

१. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल—रस-मीमांसा, पृ. ४
२. मिस स्पर्जियन—शेक्सपीयर्स इमेजरी एण्ड ह्वाट इट टेल्स अस, पृ. ७२
३. डॉ० नगेन्द्र—काव्य-बिम्ब, पृ. ३
४. क्लेनथ ब्रूक्स एण्ड राबर्ट पेन वारेन—अन्डरस्टैंडिंग पोयट्री, पृ. २७०
५. जयशंकर प्रसाद—कामायनी, 'आशा' सर्ग, पृ. २४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मान कियेसी, ऐंठीसी (क्रियाएँ) बिम्बात्मक हैं और सबके सम्मिलित प्रभाव से पूरे छन्द में पिछली रात्रि में पति की नयी अनुचित चेष्टाओं की स्मृति में मान किये रूठी बैठी नवोढ़ा का बिम्ब उभर आता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि बिम्ब सामान्य वस्तु ध्वनि की भाँति पद, वाक्य, प्रबन्ध से प्रकाशमान है।[1]

उपर्युक्त विश्लेषण के आधार पर बिम्ब के स्वरूप के सम्बन्ध में कहा जा सकता है—

(१) बाह्य जगत् के प्रत्यक्षीकरण से कवि के मन में अंकित भावों-अनुभूतियों का वह शब्द-चित्र है।
(२) बिम्ब ऐन्द्रिय संवेदनाओं को जगाता है।
(३) बिम्ब वस्तु का यथातथ्य चित्रण न होकर स्मृति-जन्य अनुभूतियों की कल्पनात्मक सर्जना है।
(४) बिम्ब भावों और विचारों की अर्थवत् अभिव्यक्ति है जिससे पाठक या श्रोता के मन में वैसे ही भाव और विचार संचरित हो सकें।
(५) बिम्ब केवल अलंकार मात्र नहीं है।
(६) बिम्ब पद से लेकर प्रबन्ध तक में अवस्थित है।

ऊपर के लक्षणों को दृष्टि में रखकर बिम्ब की परिभाषा इस प्रकार दी जा सकती है—"काव्य-बिम्ब भावोद्वेलन में समर्थ, अनुभूतियों का काल्पनिक एवं संवेदनात्मक शब्द-चित्र है, जो रचना-शैली के विविध उपकरणों से झलककर सहृदय पाठक को तन्मय करता है।"

बिम्ब के गुण

काव्य-बिम्ब कवि के संवेग, अनुभूति एवं भाव को सहृदयों तक प्रेषित करने का साधन है। अतः बिम्ब-निर्माण के पीछे कवि की यह भावना कार्य करती है कि वह जिसे अनुभव करता है, वैसी ही अनुभूनि श्रोता या पाठक भी प्राप्त करें। यह तभी हो सकता है कि कवि का बिम्ब प्रगाढ़ अनुभूति से बोझिल हो। बिम्ब केवल भावोत्तेजन ही नहीं करता, जीवन के अनुभवों की व्याख्या भी करता है।[2] इसलिए बिम्ब कितना ही सुन्दर क्यों न हो, जब तक उसमें संवेग की निविडता और पाठकों में बिम्ब जगाने की क्षमता न हो, तब तक वह कवि के महत्व का द्योतक नहीं हो सकता। अतः संवेग, संगठित विचार आदि बिम्ब की विशेषता है। इसके लिए कवि बाह्य वस्तु का संवेद्य रूप काव्य में प्रकट करता है और कवि का बाह्य वस्तु के प्रति रागात्मक सम्बन्ध कल्पनाजन्य आनन्द की सृष्टि करता है।

---

१. सी. डी. लुवीस—दि पोयटिक इमेज, पृ. १८
२. क्लेनथ ब्रूक्स एण्ड राबर्ट पेन वारेन—अन्डरस्टैंडिंग पोयट्री, पृ. २६९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इनके अतिरिक्त नवीनता, परिचितता, तीव्रता, सघनता, सहजता, उर्वरता, औचित्य एवं गत्यात्मकता भी बिम्ब के महत्वपूर्ण गुण हैं। परम्परागत रूढ़ बिम्ब नित्य प्रयोग से अपनी प्रभविष्णुता खो बैठता है, उसका प्रयोग करके कवि अपनी कविता में नयी सूझ, नयी कारयित्री प्रतिभा लावे। पुराने बिम्बों को भी कवि अपनी सृजनात्मक प्रतिभा के द्वारा नूतन रूप प्रदान कर सकता है। नये बिम्ब के लिए नयी वस्तु, नये भाव और नया आचरण चाहिए और नया बिम्ब नयी शैली की अपेक्षा रखता है। ताज़गी के लिए जहाँ बिम्ब का नूतन होना अपेक्षित है, वहाँ उसका कवि के रागात्मक सम्बन्ध से परिपुष्ट होना भी आवश्यक है। "ताज़गी से तात्पर्य उस शक्ति से है, जो कवि की वैयक्तिक अनुभूति को उसकी वैयक्तिकता एवं नवीनता के साथ मूल रूप में पाठक के हृदय तक पहुँचा सके।"[१]

कवि के बिम्ब स्वाभाविक रूप से भावों के उद्दाम प्रवाह से प्रेरित होकर निर्मित हों। बिम्ब का उद्भव, विकास और लय सब स्वाभाविक एवं सहज हो। मलयालम के महाकवि जी. शंकर कुरुप का कथन है—"मानसानुभूतियों को प्रस्फुटित करने के लिए मैं कभी बिम्बों की खोज नहीं करता। बिम्ब हृदयान्तर्गत सुषुप्त अनुभवों को जगाया करता है।"[२]

संक्षेप में बिम्ब के निम्नलिखित गुण अपेक्षित हैं—

(१) बिम्ब में भावों-विचारों की संकुलता।
(२) भावनाओं को उत्तेजित करने तथा उसे तीव्रता के साथ प्रस्तुत करने की क्षमता।
(३) ऐन्द्रियता एवं मूर्तता
(४) प्रभविष्णुता एवं रसात्मकता
(५) अलंकरण
(६) नवीनता एवं ताज़गी
(७) परिचितता
(८) तीव्रता एवं सघनता
(९) सहजता
(१०) उर्वरता
(११) औचित्य

मनोविज्ञान में बिम्ब

काव्य-बिम्ब और मनोविज्ञान के बिम्ब में पर्याप्त अन्तर होते हुए भी काव्य-बिम्ब अपनी निर्माण-प्रक्रिया में मनोविज्ञान के बिम्ब के अधिक निकट है।

---

१. हिन्दी साहित्य कोष, भाग १, पृ. ३१९
२. जी. शंकर कुरुप—लेखमाला, पृ. ५६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मनोविज्ञान के अनुसार बिम्ब वे सजीव स्मृतियाँ हैं जो मूल उत्तेजना की अनुपस्थिति में भी पूर्वकालिक विचार या अनुभव को पूर्णतया या आंशिक रूप में प्रस्तुत करती हैं।[1] मनोविज्ञान में इसका प्रयोग एक मानसिक व्यापार के लिए होता है, जो मनःचक्षु से ही देखा जा सकता है। इसका इन्द्रियों से कोई सम्बन्ध नहीं रखता।[2]

बिम्ब के दो रूप माने जा सकते हैं—वस्तुगत बिम्ब और भावगत बिम्ब। वस्तुगत बिम्ब का सम्बन्ध इन्द्रियों से है। किसी बाह्य वस्तु के साथ किसी इन्द्रिय के सन्निकर्ष से इन्द्रिय में जो संवेदन होते हैं, वे मस्तिष्क में पहुँच कर व्यवस्थित, संश्लिष्ट एवं वर्गीकृत हो रूप या आकार पाते हैं। यही प्रत्यभिज्ञान का विषय है, जो इन्द्रिय-बिम्ब के रूप में चेतना में उपस्थित रहते हैं। ये संख्या में पाँच हैं—रूप, शब्द, स्पर्श, रस और गन्ध के बिम्ब।[3]

भावगत बिम्ब मन की रचना है, जिसके पीछे पूर्वकालिक संवेदना का योग है। पूर्वकाल में देखी, सुनी या अनुभूत वस्तु से प्राप्त संवेदना मन में संस्कार रूप में रहती है, जो अनुकूल परिस्थिति में स्मृति एवं कल्पना के सहारे मानस-बिम्बों का निर्माण करती है। आधुनिक मनोवैज्ञानिक शोधों के आधार पर फ्राइड़ ने मन के तीन स्तर माने हैं—चेतन, अचेतन और अर्धचेतन। चेतन मन सामाजिक प्रतिबन्धों का मन है और अचेतन मन दमित वासनाओं का भण्डार है। अर्धचेतन इन दोनों के बीच का मार्ग है। मानस बिम्बों के चेतन और अचेतन मन की क्रिया के भेद से दो वर्ग माने जा सकते हैं। स्मृतिबिम्ब और कल्पना-बिम्ब चेतन मन के व्यापार हैं, जबकि स्वप्न-बिम्ब, दिवास्वप्न-बिम्ब और मिथ्या प्रत्यक्ष बिम्ब अचेतन मन के व्यापार हैं। बाह्य जगत् के अनुभव का स्मृति द्वारा पुनरुद्बोधन स्मृति-बिम्ब है। स्मृति प्रत्यक्ष ज्ञान के लिए परमावश्यक है, किन्तु स्मृति एक निष्क्रिय वस्तु है। इसलिए वह पूर्वानुभव को यथावत् पुनरुद्बुद्ध करती है। किन्तु कल्पना की सृष्टि कल्पना-बिम्ब पूर्वानुभव का संयोजित सुगठित एवं सुव्यवस्थित रूप है।

काव्य-बिम्बों का मनोविज्ञान के इन बिम्बों से थोड़ा-बहुत सम्बन्ध है। मनोविज्ञान के वस्तुपरक बिम्ब काव्य-बिम्बों की रचना में सहायक सामग्री हैं। स्मृति-बिम्ब और कल्पना-बिम्ब का काव्य-बिम्बों से सीधा सम्बन्ध है, क्योंकि काव्य-बिम्ब बाह्य जगत् से प्राप्त अनुभूतियों के स्मृति रूप की कल्पनात्मक सृष्टि ही है। स्मृति-बिम्ब आदि से सम्बन्धित मनोवैज्ञानिक खोजों ने आधुनिक काव्यगत संवेदनाओं, रचना-प्रक्रियाओं तथा काव्य के उत्स को इतना प्रभावित किया है

१. एनसैक्लोपीडिया ब्रिटानिका, भाग १२, पृ. १०३

२. वही, भाग १४, पृ. ३२८

३. द्रष्टव्य डॉ० नगेन्द्र—काव्य-बिम्ब, पृ. २१-२२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कि आधुनिक कवि कविता को अपनी प्रकृत संवेदना की अभिव्यक्ति मानकर अपनी यौन भावनाओं को अप्रच्छन्न रूप में प्रकट करने लगे हैं। वैसे ही "अति यथार्थवादियों की कविता का बिम्ब-विधान प्राचीन काव्य की कार्य-कारण-शृंखला में बन्धे हुए रूपकों की तरह न होकर, विशुद्ध संवेगात्मक नियमों के आधार पर निर्मित होने लगा है"[1] इस कारण इन कविताओं में संश्लिष्ट बिम्बों के स्थान पर खण्डित बिम्बों की अधिकता-सी आ गयी है। फलतः ये कविताएँ असम्बद्ध एवं दुरूह लगती हैं। मनोवैज्ञानिक बिम्बों की सब से बड़ी देन इस बात में है कि उन्होंने कवि के बिम्बों को देखकर उसके व्यक्तित्व को आंकने-परखने तथा कवि की मनोभावनाओं की मूल ग्रन्थियों का विश्लेषण करने की दिशा भी सुझा दी। अतः काव्य-बिम्बों के अध्ययन में मनोवैज्ञानिक बिम्बों का ज्ञान अपेक्षित है।

काव्य-बिम्ब एवं मनोवैज्ञानिक बिम्ब में अन्तर

बिम्ब का सम्बन्ध काव्य तथा मनोविज्ञान दोनों से है तथा काव्य-बिम्ब के अध्ययन में मनोवैज्ञानिक बिम्ब आधार भूमि भी प्रदान करता है। इतना होने पर भी दोनों को एक नहीं माना जा सकता। काव्य-बिम्ब एक शाब्दिक चित्र है तो मनोवैज्ञानिक बिम्ब एक मानसी प्रतिमा। इस दृष्टि से काव्य-बिम्ब शब्दार्थ के माध्यम से व्यक्त एक मूर्त रूप है, जबकि मनोवैज्ञानिक बिम्ब अमूर्त एवं अस्पष्ट है। काव्य-बिम्ब ऐन्द्रिय संवेदनाओं को उत्तेजित करनेवाला चेतन तत्व है, जो सक्रिय है। किन्तु मनोवैज्ञानिक बिम्ब स्मृति, स्वप्न एवं उन्माद जैसी कुछ अवस्थाओं में अकस्मात् मन के भीतर अपनी एक झलक दिखाकर तत्काल विलीन होनेवाला निष्क्रिय, जड़ एवं अनुभूतिविहीन तत्व है। काव्य-बिम्ब कवि की इच्छा-शक्ति की प्रेरणा से मन से निकलकर भाषा के ढाँचे में ढला रहता है। उसमें सृजन की एक प्रेरणा है और उसका लक्ष्य है सहृदय-हृदयाह्लाद की सामग्री प्रस्तुत करना। "कवि जब मानव-मन के सहज, कृत्रिम, गतिशील, जटिल संवेगों का भाषा के जीवन्त माध्यम के द्वारा शाब्दिक पुनर्निर्माण करता है तो उसे समीक्षा की आधुनिक पदावली में बिम्ब-विधान कहते हैं।"[2] मनोवैज्ञानिक बिम्ब मात्र प्रतिकृति है, जब कि काव्य-बिम्ब वस्तु की प्रतिकृति न होकर एक कलात्मक सृजना है, जिसके पीछे कवि की नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा का सबसे बड़ा हाथ रहता है। वह जीवन और जगत् के सम्बन्धों को प्रकाशित करता है। इस प्रकार काव्य-बिम्ब कवि की एक नूतन सृष्टि है जबकि मनोवैज्ञानिक बिम्ब मूल की जड़ प्रतिमूर्ति है।

---

१. डॉ० केदारनाथ सिंह—आधुनिक हिन्दी कविता में बिम्ब-विधान, पृ. ७

२. वही, पृ. ४९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

काव्य-बिम्ब और चित्र

बिम्ब मानस-प्रतिमा का मूर्तरूप में चित्रण है। अतः चाहें तो बिम्ब-विधान को चित्रण-कला की संज्ञा दी जा सकती है। काव्य का सम्बन्ध संगीत एवं चित्रकला से है ही। अनुभूति रेखादि विविध उपादानों को अपनाकर विविध कलाओं का रूप धारण करती है। एक ही अनुभूति नाना माध्यमों को स्वीकार कर नाना रूपों में परिणत हो जाती है। उषा सुन्दरी अपनी सुनहली किरणें बरसाती हुई शुभ्राकाश में अवतीर्ण होती है। इस दृश्य से उद्भूत आनन्दानुभूति को एक भावुक व्यंजक पदों, छन्दों में व्यक्त करता है तो कविता बनती है, उसी को जब रंग-रेखाओं से प्रकट करता है तो चित्र। उसी की स्वर-रागाश्रित अभिव्यक्ति संगीत को जन्म देती है तो तान-लयाश्रित अभिव्यक्ति से नृत्य-कला का जन्म होता है। अतः सभी कलाओं में निगूढ़ भावानुभूति एक है, अन्तर केवल उपादान तत्वों में है। फिर सभी कलाएँ अपनी परिपूर्णता की सिद्धि के लिए इतर कलाओं से सहायता लेती हैं। अतः काव्य भी अपने भावाविष्करण को मूर्त रूप देने के लिए चित्र-धर्म का सहारा लेता है। किन्तु इतना होने पर भी काव्य-बिम्ब और चित्रकला को एक नहीं माना जा सकता, क्योंकि दोनों के माध्यम में भिन्नता है।

बिम्ब-निर्माण की प्रक्रिया

बिम्ब-निर्माण की प्रक्रिया काव्य-निर्माण की ही प्रक्रिया है। काव्य-निर्माण का प्रारम्भिक रूप प्रत्यक्ष बोध और अन्तिम रूप कलात्मक अभिव्यक्ति है। प्रत्यक्ष बोध या ऐन्द्रियानुभूति और कलात्मक अभिव्यक्ति के मध्य कवि के मन में अनेक रहस्यात्मक व्यापार चलते रहते हैं, जिनकी रहस्यात्मकता का उद्घाटन करने के प्रयत्न काव्य-शास्त्रियों, दार्शनिकों तथा मनोविश्लेषणवादियों ने किये हैं। आधुनिक युग में मनोविश्लेषणवादियों ने कवि-मन के अनेक रहस्यात्मक परिवर्तनों पर जो पर्दे पड़े थे, उनमें से अधिकांश का निवारण कर दिया है किन्तु कुछ पर आवरण पड़े हुए हैं। काव्य-रचना की प्रक्रिया सम्बन्धी कई गूढ़ बातें विदित हो चुकी हैं।

मन के भीतर के रूप-विधान की चर्चा करते हुए आचार्य शुक्लजी ने लिखा है कि मन के भीतर यह रूप-विधान दो तरह का होता है। या तो यह कभी के प्रत्यक्ष देखी हुई वस्तुओं का ज्यों का त्यों प्रतिबिम्ब होता है अथवा प्रत्यक्ष देखे हुए पदार्थों के रूप, रंग, गति आदि के आधार पर खड़ा किया हुआ नया वस्तु-व्यापार-विधान। प्रथम प्रकार की अभ्यन्तर रूप-प्रतीति स्मृति कहलाती है और द्वितीय प्रकार की रूप-योजना या मूर्ति-विधान को कल्पना कहते हैं। कहने की आवश्यकता नहीं कि इन दोनों प्रकार के भीतरी रूप-विधानों के मूल हैं प्रत्यक्ष अनुभव किए हुए बाहरी रूप-विधान। अतः रूप-विधान तीन प्रकार के हुए (१) प्रत्यक्ष रूप-विधान, (२) स्मृति रूप-विधान और

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(३) कल्पित रूप-विधान।[1] शुक्लजी ने उपर्युक्त तीनों प्रकार के रूप-विधानों में से अन्तिम अर्थात् कल्पित रूप-विधान को ही काव्य की कोटि में स्थान दिया। वास्तव में शुक्लजी ने रूप-विधान के जो तीन भेद बताये, वे बिम्ब-निर्माण की प्रक्रिया के ही तीन सोपान हैं। बिम्ब-निर्माण के तीन सोपान माने जा सकते हैं—प्रत्यक्षीकरण, स्मृति और कल्पना। जब शुद्ध संवेदना में पूर्वानुवर्ती प्रत्यक्ष ज्ञान (अप्रेसियशन) का अर्थात् पुराने अनुभव द्वारा प्राप्त अर्थ (मीनिंग) का सम्मिश्रण होता है, तब ही प्रत्यक्षीकरण होता है।[2] अर्थात् वस्तु और ऐन्द्रिय सन्निकर्ष से लेकर वस्तु के मानस प्रत्यक्षीकरण तक की प्रक्रिया प्रत्यक्षीकरण कहलाता है। स्मृति का काम है मानस-बिम्ब बनाना और कल्पना का कार्य है मानस-बिम्ब की अभिव्यक्ति। अर्थात् डॉ० नगेन्द्रजी के निर्धारित तीन सोपानों जैसे (१) अनुभूति का निर्वैयक्तीकरण (२) साधारणीकरण और (३) शब्दार्थ के माध्यम से अभिव्यक्ति के[3] साथ इन तीन सोपानों का अन्तर्भाव हो जाता है।

बाह्य वस्तु के ऐन्द्रिय संस्पर्श के पश्चात् बिम्ब-निर्माण का दूसरा स्तर आरम्भ होता है। कवि स्मृति के द्वारा या किसी उत्प्रेरक मूर्त वस्तु के दर्शन से अपनी संचित अनुभूति को जागृत करता है और कल्पना के द्वारा उसको मूर्त रूप देता है। इस प्रकार मन के अनुभव ही कल्पना में आकर बिम्ब रूप धारण करते हैं। किन्तु यह ध्यान में रखना चाहिए कि अनुभूतियाँ एक के बाद एक बनकर प्रतिमाओं का रूप धारण करती हैं। तब कवि एक विचारक बनकर अपने लिए आवश्यक बिम्बों को ग्रहण करता है और त्याज्य को ठुकरा देता है। इस प्रकार कवि मानस-बिम्बों को तैयार करता है। यही वह दशा है, जिसे क्रोचे ने सहजानुभूति की अवस्था की संज्ञा दी है। यहीं आकर कवि अपने अनुभव को आत्मनिष्ठ न बनाकर वस्तुनिष्ठ रूप में सर्वसंवेद्य बनाता है, जिसके लिए वह विभाव, अनुभाव आदि का विधान करता है। यहाँ कवि की स्वानुभूति अन्य व्यक्तियों, पदार्थों पर आरोपित होकर सामान्यीकृत हो जाती है, जिसे भारतीय काव्यशास्त्रों में साधारणीकरण का नाम दिया गया है। पाश्चात्य आलोचक लुवीस ने भी इस साधारणीकरण की ओर संकेत किया है जबकि वे कहते हैं कि एक लोक-सामान्य सत्य, जिसके सम्मुख सभी आत्मसमर्पण करते हैं, बिम्ब-निर्माण करता है और यह सामान्य सत्य अनुभव के निर्वैयक्तीकरण का ही परिणाम है।[4]

---

१. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल—चिन्तामणि, भाग १, पृ. २४२, २४३

२, समालोचक (सौंदर्यशास्त्र विशेषांक) अंक १, फरवरी १९५८, 'कला और कल्पना पर एक दार्शनिक दृष्टि' शीर्षक लेख—डॉ० ब्रजगोपाल तिवारी, पृ. १७

३. डॉ० नगेन्द्र—काव्य-बिम्ब, पृ. ५२-५३

४. सी. डी. लुवीस—दि पोयटिक इमेज, पृ. १२१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आगे कवि अपने मानस-बिम्बों को उपयुक्त शब्दार्थ में प्रकट करता है। इसके लिए कवि कभी अलंकार का सहारा लेता है तो कभी भाषा की शब्द-शक्तियों का। इस प्रकार विभिन्न उपादानों का सहारा लेकर काव्य-बिम्ब पाठकों एवं श्रोताओं की आनन्दानुभूति के लिए प्रस्तुत होता है।

अब हमारे सम्मुख एक प्रश्न अनायास ही उठ खड़ा होता है कि क्या काव्य-बिम्ब या स्वयं काव्य ही कवि के अचेतन मन की उपज है, जैसा कि युँग और फ्राइड़ जैसे मनोवैज्ञानिकों की धारणा है। उनकी मान्यता है कि काव्य अबोधावस्था की प्रक्रिया है। चेतनावस्था में उसको सम्पन्न कर कोई विजय प्राप्त नहीं कर सकता। कई बार कवि स्वयं अपने भाव तब तक नहीं जान पाता जब तक कि उसकी पूर्ण अभिव्यक्ति नहीं हो पाती। यहाँ हमारा विचार है कि काव्य-रचना एक चेतन क्रिया है। चाहे भावों और अनुभूतियों का उद्गम अचेतन मन से ही हो, तो भी अचेतन मन से निकलती प्रतिमाओं को संगठित, व्यवस्थित एवं कलात्मक रूप देने के लिए कवि का चिन्तन-मनन भी अपेक्षित है। यही नहीं, कवि अपने मानस-बिम्बों को मूर्त रूप में प्रस्तुत करने के लिए जिस रूप-पक्ष का सहारा लेता है, वह एक चेतन क्रिया ही है। अगर यह मान लिया जाए कि बिम्ब-निर्माण अचेतन व्यापार ही है तो भी ऐसा लगता है कि यह अचेतत व्यापार भी कवि के नैसर्गिक युक्ति-बोध से प्रेरित होकर चलता है। अन्यथा उसमें सत्यं शिवं सुन्दरम् की प्रतिष्ठा हो ही नहीं सकती। फिर बिम्बों में जो संगठन, स्पष्टता एवं संतुलन आता है, वह अचेतन मन का कार्य नहीं हो सकता, चेतन का स्पर्श पाकर ही ऐसा हो सकता है। अतः दिनकरजी ने कल्पना और विचार को बिम्ब का अपेक्षित तत्व मानते हुए कहा है कि "चित्र रेगिस्तान से उड़कर नहीं आते। वे उसे कवि के मस्तिष्क से निकालते हैं, जो कल्पना और विचार से लबालब भरा हुआ है।"[१] कविता केवल संकेत ही नहीं, न कि केवल विचार ही। कविता में दोनों का समन्वय रहता है। हमारे यहाँ महाकवि तुलसीदासजी ने बहुत पहले ही इस बात की ओर संकेत किया था—

हृदय सिंधु मति सीप समाना।
स्वाती शारद कहँहि सुजाना॥
जो वर्षहि बर-बारि बिचारू।
होंहि कवित्त मुक्तामणि चारू॥[२]

अर्थात् हृदय (संवेदना) के सागर में मति (चेतना) सीप के समान है। जब सुन्दर घडी (प्रसंग) में शारदा (कल्पना) कृपा करती है और विचारों की

१. रामधारीसिंह दिनकर—काव्य की भूमिका, पृ. १०२
२. रामचरितमानस, बालकाण्ड १० (ख), ४–५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वर्षा होती है, तब सुन्दर काव्य-कृतियाँ जन्म लेती हैं।

अब श्रोता या पाठक पक्ष से भी काव्य-बिम्ब पर थोड़ा-सा विचार करना अप्रासंगिक नहीं होगा। काव्य-बिम्ब का जन्म कवि के सौन्दर्य-बोध से होता है और उसका विलयन होता है सहृदय के सौन्दर्य बोध में। कवि-निर्मित बिम्ब का उद्देश्य है पाठक में कवि की अनुभूति को उसी रूप में जगाना और तद्वारा अपने अनुभवों को यथार्थ एवं शाश्वत बनाना। इसके लिए कवि पाठकों या श्रोताओं की पाँचों इन्द्रियों से प्राप्त अनुभवों को जगाता है; उनकी बुद्धि, स्मृति तथा इन्द्रिय पर प्रभाव डालता है।[1] यह तभी होता है जबकि कवि के मन की अनुभूतियाँ उद्ग्रथनात्मक भावना-व्यापार से विकारों, संवेदनाओं से घुल-मिलकर व्यक्त होती हैं। आचार्य शुक्ल ने तभी काव्य के दो पक्ष स्वीकार किये हैं विभाव पक्ष और भाव पक्ष। कवि एक ओर तो ऐसी वस्तुओं का चित्रण करता है जो मन में कोई भाव उठाने या उठे हुए भाव को और जमाने में समर्थ होती हैं और दूसरी ओर उन वस्तुओं के अनुरूप भावों के अनेक स्वरूप शब्दों द्वारा व्यक्त करता है। पहला विभाव पक्ष है और दूसरा भाव पक्ष।[2] मनुष्यात्मा के भीतर की सूक्ष्म भावनाएँ समान स्वभाव की होती हैं। इसलिए कवि के भीतर स्पन्दित भावनाएँ जो चित्रों में आविष्कृत होती हैं, समाज के इतर व्यक्तियों में भी समान स्पन्दन पैदा करती हैं। अतः काव्यास्वादन में सप्रेषण और ग्रहण दो क्रियाएँ चलती हैं। कवि पाठक में अपने बिम्बों का संप्रेषण करता है और पाठक अपनी ग्राहक-कल्पना के सहारे समानुभूतियों में अपने मन का संक्रमण करता है। यही समानुभूति अभिनवगुप्ताचार्य का तन्मयीभावन है।[3] मूर्ति-विधान की क्षमता पाठक में भी होनी चाहिए। जहाँ कवि पूर्ण चित्रण नहीं करता, वहाँ पाठक या श्रोता को भी अपनी ओर से कुछ मूर्ति-विधान करना पड़ता है।[4] अतः कवि के बिम्बों का पाठक कैसा ग्रहण करता है, यह उसके प्रत्यक्षीकरण की क्षमता पर निर्भर है। यह क्षमता पाठक के व्यक्तित्व एवं संस्कार पर आश्रित है। उसके अनुसार विभिन्न पाठक कवि के एक ही बिम्ब को थोड़ी-बहुत भिन्नता के साथ ग्रहण कर सकते हैं।

काव्यालोचन के प्रतिमान रूप में बिम्ब

यह निर्विवाद रूप से सभी कालों में स्वीकृत किया गया है कि काव्य का अन्तिम लक्ष्य सौन्दर्यात्मक अनुभूति की प्राप्ति है। किन्तु इस सौन्दर्यात्मक अनुभूति की प्राप्ति के माध्यम को लेकर काव्यालोचन के क्षेत्रों में कई मानदंडों की उद्भावना हुई है। भारत में अलंकार, वक्रोक्ति, रीति, ध्वनि, रस और

---

१. बी. ए. फिथियन—कनसिडरिंग पोयट्री, पृ. १४
२. द्रष्टव्य आचार्य रामचन्द्र शुक्ल—रस-मीमांसा, पृ. १०९
३. डॉ० निर्मला जैन—रस-सिद्धान्त और सौन्दर्यशास्त्र, पृ. २२९
४. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल—रस-मीमांसा, पृ. २६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

औचित्य संप्रदाय इसी के परिणाम हैं। पाश्चात्य साहित्य में प्रचलित हुए अनुकरणवाद, अभिजात्यवाद, स्वच्छन्दतावाद, कल्पनावाद, अभिव्यंजनावाद, मनोविश्लेषणवाद, प्रकृतिवाद आदि भी काव्यालोचन के मानदंड को लेकर खड़े किये गये हैं। भारत में रस की प्रतिष्ठा हुई जो एक भाववादी सिद्धान्त है। पाश्चात्य देशों में काव्यालोचन काव्य की अन्तरात्मा तक पूर्णतया नहीं पहुँच सका, वहाँ रूपवाद को अधिक प्रश्रय मिला। अकेले भाववाद और रूपवाद दो अतिवाद हैं और दोनों काव्य के मूल्यांकन के दो छोर हैं और इन दोनों में सामंजस्य की स्थापना वर्तमान सुष्ठु काव्यालोचन के लिए आवश्यक है। बिना भाव के रूप और बिना रूप के भाव दोनों विकलांग हैं। बिम्बवाद इन दोनों विरोधी प्रतिक्रियाओं में सामंजस्य ढूँढ़ने का प्रयास करता है। "कलात्मक सौन्दर्य के प्रति इस परस्पर विरोधी प्रतिक्रिया के कारण, आलोचना का दायित्व हो जाता है कि वह रसास्वादन के इन दोनों छोरों के बीच कोई ऐसा प्रतिमान ढूँढ़ निकाले जो दोनों स्तरों को एक साथ छू सके। जहाँ तक आधुनिक कविता के मूल्यांकन का प्रश्न है, बिम्ब-विधान एक ऐसा कलात्मक प्रतिमान हो सकता है जिसका सम्बन्ध सहज ही विषय-वस्तु और रूप दोनों से स्थापित हो जाता है।"[1]

किन्तु कठिनाई इस बात में है कि बिम्बवादियों ने बिम्ब को काव्य का प्राणतत्व घोषित किया। बिम्बवादी नेता एज़रा पॉण्ड यहाँ तक कह गये कि बृहदाकार ग्रन्थ लिख डालने से जीवन भर में केवल एक बिम्ब की सृष्टि करना महत्तर है।[2] हम 'बिम्ब का स्वरूप' प्रसंग में देख आये हैं कि बिम्ब भावों को प्रेषित करने का साधन है और इस संप्रेषण का लक्ष्य है रसानुभूति। अतः काव्य में रस आत्मा है और रस रूप आत्मा को पाठक तक प्रेषित करने का अत्यन्त प्रभावशाली माध्यम बिम्ब है। अर्थात् बिम्ब अलंकार, छन्द आदि के समान रचना-शैली का एक उपकरण है। वस्तु, भाव या विचार को कल्पना एवं मानसिक प्रक्रिया के माध्यम से इन्द्रियगम्य बनाने वाला व्यापार ही बिम्ब-विधान है।[3] इसलिए काव्य के सन्दर्भ में उसका मूल्य असंदिग्ध है, परन्तु वह प्राणतत्व न होकर काव्य का सहकारी मूल्य है। डॉ० गोविन्द त्रिगुणायत ने बिम्ब और रस का शरीर और प्राण का सम्बन्ध माना है। बिना शरीर के प्राण का अस्तित्व नहीं है और प्राणहीन शरीर जड़ हो जाता है। "काव्य के दो प्रमुख तत्व हैं—एक बिम्ब और दूसरा सहृदय-हृदयाह्लादित्व, जिससे काव्य-बिम्ब अनुप्राणित होता है। वास्तव में पहला काव्य का शरीर है और दूसरा

---

१. डॉ० केदारनाथसिंह—आधुनिक हिन्दी कविता में बिम्ब-विधान, पृ. १६
२. सी. डी. लुवीस द्वारा उद्धृत, दि पोयटिक इमेज, पृ. २५
३. डॉ० भगीरथ मिश्र—काव्यशास्त्र, पृ. २८२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उसका प्राण ।"[१] कविता में रूप-विधान (बिम्ब) का महत्व निर्धारित करते हुए डॉ० रामयतनसिंह 'भ्रमर' ने सही मूल्यांकन किया है कि जो रूप-विधान कविता की आत्मा को योग दे, भावों को मूर्त रूप देने में जहाँ तक सार्थक हो सके, वहाँ तक उसकी सार्थकता है, अन्यथा वह शृंगार का एक बाह्य प्रसाधन मात्र बनकर रह जाता है ।[२] डॉ० नगेन्द्र जी ने भी बिम्ब को काव्य-शैली का एक उपकरण मानकर बताया है कि अमूर्त अनुभूति को व्यक्त करने के लिए बिम्ब की आवश्यकता है ।[३] आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जी की दृष्टि में बिम्ब सादृश्यमूलक अलंकार की कोटि में आता है ।[४]

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि काव्य में बिम्ब रस को गाढ़ भाव से अनुभूत करने का एक साधन है । इसके लिए अनेक साधनों में से बिम्ब अधिक शक्तिशाली साधन है क्योंकि मूर्तिमत्ता उसका अनिवार्य गुण है । रस अगर आत्मा है तो बिम्ब शरीर है और दोनों की सामंजस्यपूर्ण अवस्थिति से काव्य का उत्कर्ष बढ़ता है । किन्तु हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि रस साध्य है और बिम्ब साधन है । अत: साध्य की सिद्धि में सहयोग पहुँचाने में ही उसका मूल्य है । इसीलिए टी. ई. ह्यूम जैसे आचार्यों ने उन्हीं बिम्बों को महत्व दिया है जो कि पाठकों के मन में आनन्द उत्पन्न करते हैं । वास्तव में काव्य का यह आनन्द पक्ष ही काव्यशास्त्र में रस की संज्ञा पाता है ।

काव्य में बिम्ब को आलोचना का एकमात्र प्रतिमान नहीं माना जा सकता क्योंकि उससे कविता का दायरा संकुचित हो जाता है तथा काव्य अलंकार-वादियों के समान एक प्रकार का चमत्कार बन जाता है । यही नहीं, बिम्ब के मोह में पड़कर काव्य में आजकल अस्पष्टता लाने का प्रयास हो रहा है तथा कवि बिम्ब का सहारा लेकर अपनी अज्ञानता एवं दुर्बलता को छिपाने का प्रयत्न कर सकता है ।[५] कलात्मक सौन्दर्य का सम्बन्ध अन्तर्जगत् से है । किन्तु बिम्ब रचना-शैली का सहायक तत्व होते हुए भी काव्य-रचना की एकल अर्थवत्ता से हठात् हमारा ध्यान खींच लेता है । मुक्तक गीतों या छोटी कविताओं में बिम्ब सप्राणता अवश्य लाये, पर प्रबन्ध काव्य की महावाक्यार्थ की अन्विति में यह योगदान नहीं दे सकता । यही कारण है, अंग्रेजी के आलोचक मिडिल्टन मुरे ने शैली तत्व के तीन उपकरणों—संगीतात्मक अभिव्यंजना, बिम्ब की चाक्षुषी-यता एवं सानुरूप अभिव्यंजना में प्रथम दो को उतना महत्व नहीं दिया, जितना

१. समीक्षालोक (रस-सिद्धान्त विशेषांक), जुलाई–अगस्त १९७०, पृ. ८३
२. रामयतनसिंह 'भ्रमर'—आधुनिक हिन्दी कविता में चित्र-विधान, पृ. २–३
३. डॉ० नगेन्द्र—आलोचक की आस्था, पृ. २
४. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी—साहित्य-सहचर, पृ. ५५
५. द्रष्टव्य, डॉ० नामवरसिंह—कविता के नये प्रतिमान, पृ. १२७-१३३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कि तृतीय तत्त्व सानुरूप अभिव्यंजना को दिया है ।[१]

संभवतः बिम्बवाद की इन्हीं कमियों के कारण बीसवीं शती के उत्तरार्द्ध में आते-आते अंग्रेजी साहित्य में भी बिम्ब विरोधी स्वर मुखरित हुए । टी. एस. इलियट के 'आब्जेक्टिव को-रिलेटिव' सिद्धान्त का प्रतिवाद करते हुए डोनाल्ड डेवी ने 'आरटिकुलेट एनेरजी' (१९५५) में परम्परागत वाक्य-विन्यास का समर्थन किया । जॉर्ज ह्वाली बिम्ब शब्द को ही अस्पष्ट घोषित करता है । उसके अनुसार बिम्ब का स्वरूप निश्चित करना कठिन है, क्यों कि बिम्ब का आरंभ और अन्त कहाँ होता है, बिम्ब क्या है और क्या नहीं, यह निश्चित करने का कोई मानदण्ड नहीं है ।[२] हिन्दी में डॉ० नामवरसिंह भी बिम्बवाद को संशयात्मक दृष्टि से देखते हैं तथा उनका आक्षेप है कि 'बिम्ब-ग्रहण' के नाम पर हम कविता से उसका विशेष कथ्य न प्राप्त कर केवल अपनी जानकारी का ही प्रक्षेप करते हैं ।[३]

बिम्ब विरोधी इन प्रतिवादों में भले ही कुछ कटुता का आभास मिले, किन्तु इस तथ्य से कोई इनकार नहीं कर सकता कि इनमें आंशिक सत्य भी है और उस सत्यांश की ओर पहले ही संकेत किया जा चुका है । अब इस प्रसंग को आगे न बढ़ाकर यही निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि बिम्ब काव्य का प्राण तत्व नहीं हो सकता । काव्य के इतर उपकारक तत्व जैसे छन्द, अलंकार आदि के समान बिम्ब का भी काव्य प्रसाधन के एक अनिवार्य तत्व के रूप में महत्वपूर्ण स्थान है ।

कल्पना और बिम्ब

कल्पना अंग्रेजी के 'इमेजिनेशन' का समानार्थक शब्द है और इमेजिनेशन 'इमेज' से बना है । अतः 'इमेजिनेशन' का शाब्दिक अर्थ होगा मूर्ति-विधान । पाश्चात्य काव्यशास्त्रों में जो 'इमेजिनेशन' है, उसके अर्थ में भारतीय काव्य-शास्त्रों में प्रतिभा का प्रयोग होता आया है । अतः 'प्रतिभा' सम्बन्धी भारतीय मतों का थोड़ा-सा उल्लेख करना अप्रासंगिक न होगा ।

भारतीय काव्याचार्यों ने 'प्रतिभा' को काव्यसृजन की प्रेरणाशक्ति माना है ।[४] अभिनवगुप्ताचार्य के विचार से प्रतिभा सृजनशक्ति है ।[५] हेमचन्द्र का यहाँ तक कथन है कि काव्य-रचना का कारण प्रतिभा है, व्युत्पत्ति और अभ्यास

१. जे. मिडिल्टन मुरे—दि प्रॉब्लम ऑफ स्टाइल, पृ. ९५
२. जॉर्ज ह्वाली—पोयटिक प्रोसेस, पृ. १६१
३. डॉ० नामवरसिंह—कविता के नये प्रतिमान, पृ. १३८
४. कवित्व बीजं प्रतिभानम्—वामन : काव्यालंकार सूत्र, १-३-१६
५. शक्तिः प्रतिभानम्—अभिनवगुप्त : ध्वन्यालोक-लोचन, पृ. ३४६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उसके संस्कारक हैं, काव्य के कारण नहीं।[1] आचार्य भामह की मान्यता है कि मंद बुद्धि भी गुरूपदेश से शास्त्राध्ययन में समर्थ हो सकता है, पर काव्य तो कभी-कभी किसी प्रतिभाशाली के ही भाग्य में होता है।[2] अतः काव्य प्रतिभा का ही विकास है और इसी के द्वारा आन्तर आर्षचक्षु का उन्मीलन होता है, जिससे साधारण जनों के लिए अगम्य स्थानों में कवि पहुँच जाता है और अदृश्य वस्तुओं का सद्यः साक्षात्कार करता है।[3] इसी कारण से पं. बलदेव उपाध्यायजी ने प्रतिभा का अर्थ 'झलक', कारण सामग्री के अभाव में भी भावों का मानस-क्षितिज पर स्वतः प्रकाश या आविर्भाव किया है।[4] भामह ने काव्य के सन्दर्भ में 'प्रज्ञा' और 'प्रतिभा' नामक दो तत्वों का उल्लेख किया है। इनमें से प्रज्ञा अंग्रेज़ी के 'फैन्सी' का समानार्थक शब्द है और इसका कार्य वस्तु-जगत् का सहज प्रत्यय प्राप्त कराना है। 'प्रतिभा' इन्हीं वस्तु-प्रत्ययों से नव-नव काव्यांगों (काव्य-बिम्ब) का निर्माण करती है। इसलिए 'प्रतिभा' सौन्दर्यात्मक काव्य-बिम्बों की साक्षात्कारिणी शक्ति है और यही रसावेश की स्थिति में काव्य-सर्जना करती है। अग्निपुराणकार ने ऐसी प्रतिभा से युक्त कवि को प्रजापति की संज्ञा दी है।[5] अतः 'प्रतिभा' काव्य का नियामक तत्व है और इसका प्रधान कार्य है पुर्नार्निर्माण। कवि इसी महान गुण के बल पर प्रकृति के इन्द्रिय-साध्य अंशों को ग्रहण कर उन्हें अपनी रुचि एवं भावना के अनुसार रूप प्रदान करता है। भारतीय मतानुसार 'प्रतिभा' एक दैविक शक्ति है, सरस्वती-कृपा का फल है। इसी वरदान को पाकर भाग्यवान कवि अनागत एवं अप्रत्यक्ष को भी प्रत्यक्ष कर देता है। वैसे ही यह प्रतिभा ज्ञानस्वरूपिणी भी है। संकल्प एवं विकल्पात्मक ज्ञानों में से प्रतिभा का सम्बन्ध प्रथम प्रकार के ज्ञान से है, जिसके द्वारा विषयों का सूक्ष्म ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। सारांश में 'प्रतिभा' एक देवी वरदान है जो कवि को विषय-वस्तु का सूक्ष्म ज्ञान ही नहीं कराती, अपितु उससे अपनी रुचि एवं भावना के अनुसार अनागत एवं अप्रत्यक्ष का भी नूतन सृजन कराती है।

---

१. प्रतिभैव च कवीनां काव्य कारण कारणम्।
व्युत्पत्याभ्यासौ तस्या एवं संस्कारकारको न तु काव्यहेतु। हेमचन्द्र :
काव्यानुशासनम्, प्रथम अध्याय–१

२. गुरूपदेशादध्येतुं शास्त्रं जडधियोऽप्यलम्।
काव्यं तु जायते जातु कस्यचित्प्रतिभावतः॥ भामह : काव्यालंकार,
प्रथम अध्याय ५

३. व ४. पं० बलदेव उपाध्याय—भारतीय साहित्यशास्त्र, पृ. ३३०

५. अपारे काव्य संसारे कविरेकः प्रजापतिः
यथा स्मैरोचते विश्वं तदेहं परिवर्तते। —अग्निपुराण, ३३९-१०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अब कल्पना के सम्बन्ध में जो भी मन्तव्य व्यक्त किये गये हैं, उनकी भी परीक्षा करेंगे। अंग्रेज़ी साहित्य में कल्पना पर पर्याप्त मात्रा में विचार किया गया है। साहित्यकों तथा मनोवैज्ञानिकों ने इस पर अपनी सम्मति प्रकट की है।

कल्पना का तात्पर्य है—(१) इन्द्रियों के लिए अगोचर पदार्थ का रूप-विधान कल्पना है। (२) अघटित घटनाओं और प्रसंगों का मनन करना कल्पना है और (३) कल्पना एक मानसिक शक्ति है जो अप्रत्यक्ष बाह्य पदार्थों के बिम्ब और प्रत्यय निर्मित करती है।[१] अर्थात् कल्पना वह मानसिक शक्ति है जिसके द्वारा अप्रत्यक्ष एवं अघटित वस्तुओं, घटनाओं का प्रत्यय, मनन और बिम्ब संभव हो जाता है। मनोवैज्ञानिक वुड्वर्थ इसको 'मानसिक कौशल' कहता है[२] तो माक्डुगल के मतानुसार अप्रत्यक्ष वस्तुओं के प्रति चिन्तन-मनन कल्पना है।[३]

"कल्पना का धातुमय अर्थ है—सामर्थ्य। इसकी सामर्थ्य से रचना-पक्ष की पुष्टि होती है।"[४] पी. बी. शैली के अनुसार कल्पना एक चिरन्तन सत्ता है, जो नश्वर सवेगों को शाश्वत बनाती है।[५] कल्पना कवि को सृजन की प्रेरणा देती है, उसको बाह्य जगत् का प्रत्यय करा देती है और सबसे अधिक वह नित्य नूतन संसार की सृष्टि कराती है। "अतीत को वर्तमान बनाना, सुदूरस्थ को प्रत्यक्ष करना और जीवन के अनुभव और ज्ञान को निश्चित रूप प्रदान करना कल्पना का प्रसार है।"[६] किन्तु कल्पना कभी निराधार नहीं होती, उसके पीछे कोई न कोई अनुभूत सत्य अवश्य रहता है जिसका काव्य में रूपान्तर हो जाता है।[७] बाह्य अनुभूत सत्य को नूतन रूप प्रदान करने का जो कार्य कल्पना करती है, वह अत्यन्त गूढ़ एवं रहस्यात्मक है। कवि बाह्य प्रपंच का दास नहीं, वह बाह्य प्रभावों से अधिक अपनी कल्पना के सहारे कविता करता है और इस प्रकार प्रकृति की कुरूपता भी सुन्दरता में परिणत हो जाती है। रसात्मक कवि की काव्य-सृष्टि मनोहर एवं आनन्ददायक बनती है। इसका कारण यह है कि कवि बाह्य जगत्, यहाँ तक कि बिलकुल अपरिचित एवं विचित्र वस्तुओं में भी लोकमान्य तत्व का सन्धान करता है और उसी लोकमान्य तत्व को काव्य में अभिव्यक्त करता है। कवि का वैयक्तिक अनुभव कल्पना का सहारा पाकर चिन्तन के संयोग से सामान्य बनता है। उसकी अनुभूति निर्वैयक्तिक रूप में

---

१. आक्सफॉर्ड इंग्लीश डिक्शनरी
२. वुड्वर्थ—साइकोलाजी, पृ. ४४८
३. माक्डुगल—एन आउटलाइन ऑफ साइकोलाजी, पृ. २८४
४. पं० रामदहिन मिश्र—काव्य-दर्पण, पृ. ३२
५. सी. डी. लुवीस से उद्धृत, दि पोयटिक इमेज, पृ. ६५
६. डॉ० भगीरथ मिश्र—काव्यशास्त्र, पृ. २४
७. जॉन लिविंगटन लास—दि रोड टू क्सानडु, पृ. १०४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रकट होती है। तात्पर्य यह कि कल्पना की अवस्था में वह इस जगत् के समानान्तर जगत् की सृष्टि करता है, जिसमें इस जगत् की असुन्दरताएँ और विसदृशताएँ नहीं रहतीं।[1]

अनुभूति एवं स्मृति से कल्पना का घनिष्ट सम्बन्ध है। कल्पना का आधार अनुभूति है। इसलिए कल्पना और अनुभूति में कार्य-कारण सम्बन्ध है। अनुभूति काव्य की मूलसत्ता है और कल्पना उसका क्रियात्मक रूप। किन्तु दोनों में व्यावहारिक भेद के होते हुए भी तत्वतः दोनों की एकरूपता सिद्ध हो जाती है। "कला-दर्शन में कल्पना शब्द उस संपूर्ण प्रक्रिया का द्योतक है, जो काव्य-सृष्टि में आदि से अन्त तक व्याप्त रहती है। कल्पना का मूलस्रोत अनुभूति है और उसकी परिणति है काव्य की रूपात्मक अभिव्यंजना।"[2] अनुभूत भाव की सर्वजन संवेद्यता कवि की कल्पना-शक्ति पर निर्भर है। जिस कवि की कल्पना शक्ति जितनी ही उन्नत हो, उतनी ही उन्नत उसकी कविता होगी और उतना ही प्रगाढ़ एवं उन्नत उसका संवेदन होगा। अतः कल्पना ही कवि का प्रमुख साधन है, जिसके द्वारा वह अपनी अनुभूति को पाठक तक प्रेषित करता है। इस प्रयत्न में कल्पना अरूप अनुभूति को रूपायित करती है, मनोहार्य तथा सर्वजन संवेद्य बना देती है।

स्मृति से भी कल्पना का निकट सम्बन्ध है। कल्पनात्मक सृष्टि के लिए अनुभूति को जागृत करने का कार्य स्मृति करती है। अनुभूति और कल्पना को जोड़ने का कार्य स्मृति का है। वह माध्यम है जिसके द्वारा अनुभूति कल्पना का स्पर्श पाकर लोकोत्तर बनती है, नया परिधान धारण कर लेती है। इस प्रकार अनुभूति, स्मृति एवं कल्पना अन्योन्याश्रित हैं। काव्य-सृजन में इन सब का योगदान अनिवार्य एवं अनुपेक्षणीय है।

दार्शनिक काण्ट ने प्रतिभा के तीन रूप माने हैं—(१) सम्मेलक प्रतिभा (रिप्रोडक्टिव इमेजिनेशन), (२) उत्पादक कल्पना (प्रोडक्टिव इमेजिनेशन) और (३) सौन्दर्य कल्पना (एस्तेटिक इमेजिनेशन)। ये लगभग कॉलरिज की ललित कल्पना (फैन्सी), मूल कल्पना (प्राइमरी इमेजिनेशन) तथा विशिष्ट कल्पना (सेकण्डरी इमेजिनेशन) ही हैं। कॉलरिज ने मूल कल्पना तथा विशिष्ट कल्पना की विस्तार से चर्चा की है। मूल कल्पना मन में विश्व को प्रस्तुत करती है तथा प्रत्यय बोध को व्यवस्था में ढालती है और उसे ज्ञान में बदलती है। यह कल्पना सभी मनुष्यों में पायी जाती है। और यही सब प्रकार के मानसिक बोध की सजीव आधारमूल शक्ति है।[3] पर विशिष्ट कल्पना केवल कलाकारों में पायी जाती है

---

१. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी—साहित्य-सहचर, पृ. ५९
२. आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी—नया साहित्य : नये प्रश्न, पृ. १४६
३. कॉलरिज—लिटरेरिया बायोग्राफिया, चाप्टर १३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

और यही वास्तविक कवि-कल्पना है जिसके द्वारा कवि नूतन पदार्थों-अनुभूतियों को जन्म देता है। इसे कॉलरिज ने ऐक्य विधायिनी शक्ति तथा सौन्दर्य विधायक तत्व माना है। महर्षि अरविन्द ने भी कल्पना के दो रूपों का उल्लेख किया है—विषयनिष्ठ कल्पना (आब्जेक्टिव इमेजिनेशन) तथा विषयिनिष्ठ कल्पना (सब्जेक्टिव इमेजिनेशन)। प्रथम प्रकार की कल्पना जीवन और जगत् की बाह्य अवस्थाओं को प्रत्यक्ष करती है और द्वितीय भावमय अनुभूतियों को उद्बुद्ध करनेवाली शक्ति का प्रत्यक्षीकरण है।[१] अरविन्द की विषयनिष्ठ कल्पना और विषयिनिष्ठ कल्पना का सम्बन्ध कॉलरिज की मूल कल्पना और विशिष्ट कल्पना से स्थापित किया जा सकता है।

कल्पना काव्य-प्रतिभा की आत्मा है और उसका स्थान हमारे मानसिक जीवन में संवेदना और विचार के बीच में है। काव्य के संदर्भ में कल्पना के छः कार्यों का उल्लेख कॉलरिज ने किया है जो ऐक्य विधान, सारग्रहण, समाहरण, संग्रहण और संगठन है। कल्पना परस्पर विरोधी गुणों में सामंजस्य एवं संतुलन लाती है। वह नानात्व में एकत्व की प्रतिष्ठा करती है। मन में स्मृतिवश उद्भूत बिम्बों में से अपने लिए आवश्यक बिम्बों को स्वीकार करती है और त्याज्य को ठुकरा देती है तथा सबको इस प्रकार एकीकृत करती है कि कार्य-कारण सम्बन्ध से जोड़कर भावों में सामंजस्यपूर्ण पारस्परिक सम्बन्ध की भी स्थापना करती है। इस प्रकार कवि को बाह्य संसार के प्रस्तुतीकरण तथा पुनः सृजन में वह सहायता पहुँचाती है। अंग्रेज़ी आलोचक आई. ए. रिचर्ड्स ने भी कल्पना की छः विशेषताएँ बतायी हैं,[२] जो इस प्रकार हैं—

१) कल्पना बिम्बों का निर्माण करती है और यही उसका मुख्य कार्य है।
२) कल्पना काव्य में अलंकृत भाषा का प्रयोग करती है। काव्य में अप्रस्तुत योजना कल्पना का ही कार्य है।
३) पाठक में काव्य रसास्वादन की क्षमता प्रदान करने का कार्य भी कल्पना करती है।
४) साहित्य में नये-नये विषयों की खोज, मार्मिक प्रसंगों की योजना और समर्थ जीवन्त पात्रों की अवतारणा कल्पना का कार्य है।
५) कल्पना वस्तुओं का संयोजन करती है।
६) विरोधी गुणों में संतुलन एवं एकसूत्रता लाने का कार्य कल्पना द्वारा ही होता है।

उपर्युक्त विवेचना से यह स्पष्ट हो जाता है कि कल्पना काव्य की मूल

---

१. दि फ्यूचर पॉयट्री, स्टाइल एण्ड सब्स्टन्स, रामदहिन मिश्र से उद्धृत, काव्य-दर्पण, पृ. ३२-३३

२. आई. ए. रिचर्ड्स—प्रिन्सिपिल्स ऑफ लिटररी क्रिटिसिज्म पृ. २३९-२४२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शक्ति है और उसका मुख्य कार्य बिम्ब-विधान है। इस प्रकार कल्पना और बिम्ब-विधान में अटूट सम्बन्ध है। काव्य-बिम्ब का मुख्य सम्बन्ध शैली से है क्योंकि वह शब्द-चित्र होता है। इस दृष्टि से भी कल्पना का बिम्ब से गहरा सम्बन्ध है। कल्पना ही बिम्ब को नया रूप और नयी शैली प्रदान करती है। प्रतीकात्मक भाषा में तथा उपमान-योजना में कल्पना का कार्य निस्संदेह महत्वपूर्ण है। अतः कल्पना के क्षेत्र में विषय और शैली दोनों समाविष्ट हैं। इस प्रकार बिम्ब के निर्माण में तथा उसकी अभिव्यक्ति में कल्पना का योग रहता है। बिम्ब और कल्पना का पारस्परिक सम्बन्ध दर्शाते हुए डॉ० रामयतनसिंह 'भ्रमर' ने कहा है "कल्पना मानव-मस्तिष्क की एक विशिष्ट प्रक्रिया है, जो अपने सचेष्ट क्षणों में उन नूतन और अनेक रूप छाया-छवियों का बिम्ब-ग्रहण किया करती है, जो कभी दृष्टिपथ या अनुभूति की परिधि में आ जाने के कारण अन्तःपटल पर सुप्त अथवा जागृत संस्कारों के रूप में पड़ी रहती है, जबकि रूप-विधान उस कल्पना के सचेष्ट क्षणों की परिपूर्णता की स्वतः स्फुरित निष्पत्ति या सचित्र भाषा है।"[1]

प्रतीक और बिम्ब

'प्रकृष्टं तीकनें इते प्रतीकम्' अर्थात् अर्थ-ज्ञान या अर्थ-प्राप्ति करानेवाले शब्दों को प्रतीक कहते हैं। हिन्दी का 'प्रतीक' शब्द अंग्रेजी 'सिम्बल' का समानार्थक है। व्यवहार में प्रतीक शब्द अपनी विशेष लाक्षणिकता के कारण प्रकृष्ट अर्थ की व्यंजना करता है। कविता में इसका प्रयोग उपमान रूप में होता है, किन्तु इसका प्रसार भाषा, साहित्य, कला, धर्म, दर्शन, जीवन तक है। इसका आरम्भ सृष्टि के प्रथम पुरुष के प्रथम प्रस्फुटित शब्दों से माना जा सकता है।[2]

'सिम्बल' के कोषगत अर्थ हैं—१) वह चिह्न जो किसी वस्तु की व्यंजना करता है, २) स्वेच्छा से प्रयुक्त या परम्परागत संकेत और ३) जो किसी अन्य वस्तु का प्रतिनिधि होता है।[3] इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि 'सिम्बल' स्वेच्छा से प्रयुक्त या परम्परागत संकेत है, जो किसी अन्य वस्तु के लिए प्रयुक्त होता है। यह वह दृश्य वस्तु है जो मस्तिष्क के सम्मुख किसी अप्रस्तुत वस्तु की सादृश्यता को अपने सम्बन्ध-सूत्रों द्वारा प्रस्तुत करती

१. डॉ० रामयतनसिंह 'भ्रमर'—आधुनिक हिन्दी कविता में चित्र-विधान, पृ. ४

२. आर्थर सिमन्स—दि सिम्बोलिस्ट मूवमेन्ट इन लिटरेचर (डॉ० जगदीश-नारायण त्रिपाठी द्वारा 'आधुनिक हिन्दी कविता में अलंकार-विधान', पृ. ३५ पर उद्धत)

३. चेम्बर्स इंग्लीश डिक्शनरी

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

है।[1] वेबस्टर के अनुसार प्रतीक अपने सम्बन्ध, सामंजस्य, रूढ़ि अथवा संयोग से किसी अन्य वस्तु की ओर संकेत करता है, किन्तु उसका उद्देश्य समानता या सादृश्य नहीं है। वह किसी अदृश्य वस्तु का दृश्य संकेत है।[2] इसका प्रयोग उस दृश्य वस्तु के लिए किया जाता है, जो किसी अदृश्य (अगोचर या अप्रस्तुत) विषय का प्रतिविधान उसके साथ अपने साहचर्य के कारण करती है।[3] उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर निम्नलिखित निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं—

१) प्रतीक किसी अगोचर या अप्रस्तुत विषय का प्रतिविधान करता है।
२) यह प्रतिविधान सादृश्य या साहचर्य के कारण किया जाता है।
३) प्रतीक दृश्यात्मक होता है।
४) यह परम्परागत या नवीन हो सकता है।

प्रतीक उपमेय के स्थान पर प्रयुक्त होनेवाला उपमान शब्द है, काव्य-शास्त्रीय भाषा में वह रूपकातिशयोक्ति कहलाता है। साहित्य में इसका प्रयोग अमूर्त मानसिक भावनाओं या फिर अगम-अगोचर अनुभूतिगम्य सत्ता को व्यंजित करने के लिए ही होता है। "अनुभूतियों की अभिव्यक्ति में भाषा जहाँ असमर्थ हो जाती है, वहाँ प्रतीकों की योजना की जाती है।"[4] मानव-मन की कुछ भावनाएँ जैसे हर्ष, शोक, सुख, दुख, आशा, निराशा आदि इतनी अमूर्त हैं कि उनको साधारण भाषा में अभिव्यक्त करना कठिन है। जब कवि इस कठिनाई का अनुभव करता है, तब वह प्रतीकात्मक भाषा का सहारा लेता है। इससे स्पष्ट है कि प्रतीक का लक्ष्य भाव की सहज स्वाभाविक एवं सरस अभिव्यक्ति है। साहित्य में अमूर्त भावनाओं को प्रतीकों में बहुधा अभिव्यक्त करने की प्रणाली अति प्राचीन है। सुख के लिए 'फूल', दुख के लिए 'शूल', आनन्द के लिए 'दिन', विषाद के लिए 'रात', यौवन के लिए 'वसन्त', बुढ़ापे के लिए 'पतझड़', आदि कितने ही प्रतीक परम्परा से प्रयुक्त होते हैं। ये प्रतीक कुछ तो साहित्यिक हैं, और कुछ सांप्रदायिक एवं धार्मिक। कुछ धार्मिक संप्रदायों ने दुरूह आध्यात्मिक विचारों को सहज बनाने के लिए धार्मिक प्रतीकों को अपनाया है। नाथ संप्रदाय में प्राप्त होनेवाले तरुवर (काया), पल्लव (प्रकृति), गाय (आत्मा), सिंह (विकारग्रस्त मन) आदि ऐसे ही प्रतीक हैं।

अनन्त, अव्यक्त ईश्वर बुद्धिग्राह्य नहीं है, केवल ज्ञान-चक्षु से उसकी अनुभूति की जा सकती है। जब कवि अपनी इस आध्यात्मिक अनुभूति को शब्दों में व्यक्त करने का संकल्प करता है तब उसकी बुद्धि कुंठित हो जाती है,

---

१. एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका, भाग २१, पृ. ७००
२. विलियम टिन्डल से उद्धृत, दि लिटेररी सिम्बल, पृ. ६
३. हिन्दी साहित्य कोष, भाग १, पृ. ३१७
४. डॉ० रामयतनसिंह 'भ्रमर'—आधुनिक हिन्दी कविता में चित्र-विधान, पृ. १७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वह अपनी भाषा को अभिव्यक्ति के लिए अक्षम पाता है। अतः आध्यात्मिक अनुभूति एवं दार्शनिक विचारों को प्रतीकों के माध्यम से अभिव्यक्त करने की भारतीय परम्परा अतिप्राचीन है। मुण्डकोपनिषद् में जीवात्मा- परमात्मा के स्वभावों की प्रतीकों के द्वारा सुन्दर व्याख्या की गयी है—

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया
समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्य-
नश्नन्नन्यो अभिचाकशीति।[१]

यहाँ 'द्वासुपर्णा' जीवात्मा एवं परमात्मा का प्रतीक है। 'वृक्ष' (वृश्च्यते 'विनश्यति' अर्थात् नाशवान) संसार का तथा 'फल' कर्मफल का प्रतीक है।

प्रतीक-योजना का आधार रूप-साम्य और धर्म-साम्य है। अर्थात् सादृश्य और साधर्म्य (गुण-क्रिया साम्य) के आधार पर बहुधा प्रतीक-विधान किया जाता है। प्रतीकों में प्रस्तुत और अप्रस्तुत का ऐसा संयोग रहता है जिससे वह कथन को अत्यन्त रोचक एवं आकर्षक रूप प्रदान करता है।[२] उपर्युक्त आधारों के अतिरिक्त छायावादी काव्य में प्रभाव-साम्य के आधार पर भी प्रतीकों की योजना की गयी है, जिसमें कवि का ध्यान प्रस्तुत-अप्रस्तुत, के रूप, रंग, आकार, अथवा क्रिया-व्यापार पर न जाकर, केवल हृदय पर पड़ने वाले प्रभाव पर रहता है। प्रभाव-साम्य पर आधारित इन प्रतीकों में नवीनता, सार्थकता एवं सांकेतिकता के गुण अत्यधिक मात्रा में पाये जाते हैं तथा उनसे प्राप्त चित्र अतिसूक्ष्म एवं व्यंजक है। ये प्रतीक भावोद्बोधन में अत्यन्त सक्षम हैं। छायावादी प्रतीकों में प्राप्त व्यंजकता का गुण इतना अधिक है कि वही उनकी प्राणवत्ता का परिचायक है। प्रतीक-विधान में व्यंजना का गुण जिस मात्रा में होगा, कवि को अभिव्यक्ति में उतनी ही सफलता प्राप्त होगी। इसलिए कल्पना व भाव-जगत् को आन्दोलित करने के लिए प्रतीकों में व्यंजकता परमावश्यक मानी गयी है। ई. अण्डरहिल ने बताया कि जिस प्रतीक में जितनी अधिक व्यंजक शक्ति है वह पाठक में उतनी अधिक संवेदना उत्पन्न कर सकेगा तथा अधिक अर्थ प्रदान कर सकेगा। अतः एक उत्तम प्रतीक पाठक में भावोत्तेजन करने के लिए सौन्दर्य एवं संवेग का अधिकाधिक उत्कर्ष धारण करता है। उसका प्रभाव बुद्धि पर न पड़कर मनुष्य के संवेदनात्मक हृदय पर पड़ता है।[३] इसी व्यंजना गुण को लेकर छायावादी कवियों ने मुकुल (प्रिया), मधुप (प्रिय), उषा (नवयौवन), पतझड (विषाद), झंझा (मानसिक क्षोभ), अरुण मुकुर

---

१. मुण्डकोपनिषद्, ३-१-१
२. डॉ० गणपतिचन्द्र गुप्त—साहित्य-विज्ञान, पृ. ३३२
३. ई० अण्डरहिल—मिस्टिसिज्म, पृ. १३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(सूर्य), आँखों का तारा (प्रिय), तम (दुख,) प्रकाश (सुख), जैसे सैकड़ों प्रतीकों का प्रयोग किया है और ये सारे प्रतीक अपनी लाक्षणिकता एवं सांकेतिकता के कारण अर्थ-व्यंजना में अत्यन्त सफल हैं। सम्भवतः इसी अर्थ-व्यंजना की शक्ति से प्रभावित होकर डॉ० कैलास वाजपेयी ने कहा है—"कविता में कम से कम शब्दों का प्रयोग और अधिक से अधिक अर्थ भरने की इच्छा और प्रयास ने प्रतीकों को जन्म दिया है।"[१]

प्रतीक का सम्बन्ध जीवन के समस्त क्षेत्रों से है। जैसा कि इसके पूर्व उल्लेख किया गया है, साहित्य, गणित, विज्ञान, धर्म, दर्शन, जीवन सभी को प्रतीक अभिभूत किये रहता है। इसलिए प्रतीकों के भेद निश्चित करना अत्यन्त कठिन है। जिस प्रकार जीवन के कार्य-व्यापारों की कोई सीमा नहीं है, इसी प्रकार प्रतीकों की भी कोई सीमा नहीं। भावात्मक, विचारात्मक, आध्यात्मिक, प्राकृतिक, राष्ट्रीय, सांप्रदायिक, धार्मिक आदि प्रतीक के नाना प्रकार उसके मूलस्रोत के आधार पर बन सकते हैं। स्थूल रूप से हम प्रतीकों के तीन प्रकार मान सकते हैं—

(१) परम्परागत प्रतीक
(२) वैयक्तिक प्रतीक
(३) प्राकृतिक प्रतीक

परम्परागत प्रतीक साहित्य की अपनी संपत्ति हैं, जिनका प्रयोग पहले से होता आ रहा है। ये अपेक्षाकृत सरल एवं बोधगम्य हैं क्यों कि इनका हमारी धारणा से पूर्व सम्बन्ध रहता है ऐसे प्रतीक अपने रूढ़िगत प्रयोगों के कारण चमत्कार खो चुके हैं। सूर्य-चन्द्र, कामधेनु, संजीवनी, पारसमणि ऐसे प्रतीक हमारे साहित्य में अत्यन्त प्रचलित हैं, किन्तु वैयक्तिक प्रतीक हर काल में भिन्न-भिन्न होते हैं; ऐसे प्रतीक कवि के निजी आविष्कार हैं। कवि अपनी भावानुभूति को प्रेषणीय बनाने के लिए अपनी रुचि एवं संस्कार के अनुसार नये प्रतीकों को खोज निकालते हैं। ऐसे प्रतीकों का अर्थ समझ पाना कठिन है, किन्तु नूतन वैयक्तिक प्रतीकों को अपनाते समय कवि को यह ध्यान रखना चाहिए कि वे सामाजिक जीवन से गृहीत हों, तथा सामान्य जनता के परिचित हों।

प्रतीक और बिम्ब के सम्बन्ध की ओर भी ध्यान जाता है। प्रतीक अपने मूल रूप में बिम्ब ही थे, किन्तु निरंतर प्रयोग के कारण उनका अर्थ रूढ हो गया है। अर्थात् प्रतीक का अर्थ निश्चित रहता है, किन्तु बिम्ब प्रसंग-सापेक्ष होने के कारण अनेकार्थ व्यजक हो सकता है। प्रतीक का प्रसंग से निरपेक्ष अर्थ पूर्व निर्णीत है, किन्तु बिम्ब से जो अर्थ व्यंजित होता है, वह संदर्भगत होता है और प्रसंग के अनुसार एक ही बिम्ब के भिन्न पाठक भिन्न अर्थ कल्पित कर सकते

---

१. डॉ० कैलास वाजपेयी—आधुनिक हिन्दी कविता में शिल्प, पृ. ७५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हैं ।[1] प्रत्येक शब्द भावों और कल्पनाओं का प्रतीक है और उसका लक्ष्य अमूर्त को मूर्तता प्रदान करना है; प्रतीक रूप, गुण, धर्म, एवं प्रभाव को व्यंजित मात्र करता है। प्रतीक उतने प्रभावात्मक रूप में चित्र खड़ा नहीं कर पाता, जितना बिम्ब कर पाता है। प्रतीक अपनी संक्षिप्तता एवं चमत्कार से भाषा की शक्ति को बढ़ाता है। बिम्ब भी काव्य में संक्षिप्तता, व्यंजकता एवं भास्वरता लाता है, किन्तु वह अपनी पृष्ठभूमि में ही भावधारा का व्यंजक होता है। रूप खड़ा करने में बिम्ब का बड़ा हाथ है, क्योंकि बिम्ब यह कार्य अधिकांश में अपनी ऐन्द्रिय संवेदना के गुण के कारण करता है। प्रतीक में ऐन्द्रियता आवश्यक तत्व नहीं है, फलतः वह अपनी स्वाभाविकता के बल पर ही स्पष्ट और सुन्दर रूप खड़ा कर पाता है। दूसरे प्रतीक का लक्ष्य बौद्धिक आकर्षण को उद्दीप्त करना है। इतना अन्तर होते हुए भी प्रतीक और बिम्ब दोनों शैली के दो उपकारक तत्व हैं। प्रत्येक बिम्ब का विकसित रूप ही प्रतीक है। बिम्ब-विधान के कई साधनों में प्रतीक का अपना विशिष्ट स्थान है। कविवर सुमित्रानन्दन पन्तजी ने कहा है—

जो अव्यक्त रहा अन्तर में,
मुक्त, अगीत रहा ध्वनि स्वर में
उसे प्रतीकों में बिम्बित
रहने दो, रहने दो।[2]

अलंकार और बिम्ब

अलंकार-सम्प्रदाय के प्रवर्तक आचार्य भामह थे। उन्होंने अलंकार को काव्य का प्राणतत्व सिद्ध किया था।[3] आगे के आचार्यों में दण्डी, उद्भट, रुद्रट आदि अलंकारवादी थे। उन दिनों अलंकार को इतना महत्व दिया जाता था कि काव्यशास्त्र को अलंकारशास्त्र तथा काव्यशास्त्रियों को आलंकारिक की संज्ञा दी जाती थी।

आचार्य दण्डी काव्य की शोभा बढ़ाने वाले धर्म को अलंकार कहते हैं।[4] आचार्य वामन की मान्यता है—काव्य अलंकार से ही ग्राह्य होता है[5] तथा सौन्दर्य ही अलंकार है। इन आचार्यों ने अलंकार का व्यापक अर्थ में प्रयोग किया था और जब वामन ने सौन्दर्य को अलंकार की संज्ञा दी तो स्पष्ट है कि वे काव्य

---

१. सी. डी. लुवीस—दि पोयटिक इमेज, पृष्ठ ४०-४१
२. सुमित्रानंदन पंत—वाणी, पृ. ४१
३. सैषा सर्वत्र वक्रोक्तिरनयार्थो विभाव्यते। यत्नोऽस्यां कविना कार्यः कोऽलंकारोऽनया विना॥ भामह—काव्यालंकार, २-८५
४. काव्य शोभाकरान् धर्मान् अलंकारान् प्रचक्षते। दण्डी—काव्यादर्श, २-१
५. काव्यं ग्राह्यमलंकारात्। वामन—काव्यालंकार सूत्र, १-१-१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

के बाह्य एवं आभ्यंतर सौन्दर्य की बात कर रहे थे, क्योंकि सौन्दर्य अनेक वस्तुओं के संगठन एवं सम्मेलन में होता है। पीयूषवर्षी जयदेव की चुनौती है कि जो काव्य को अलंकार रहित मानता है, वह अग्नि को उष्णतारहित क्यों नहीं मानता।[1] तात्पर्य यह कि प्राचीन आचार्यों की दृष्टि में अलंकार काव्य का जीवातु है। किन्तु भोजराज ने अलंकार में गुणों की महत्ता स्वीकार करते हुए गुणरहित अलंकार से सज्जित काव्य को श्रुतिमधुर मानने से इनकार किया तो क्षेमेन्द्र ने अलंकार के उचित सन्निवेश पर बल दिया।

अलंकार की प्रवृत्ति सार्वकालिक, सार्वत्रिक एवं सार्वजनीन है। काव्य के सौन्दर्य प्रसाधक तत्वों में उसका महत्वपूर्ण स्थान है। किन्तु उसका सन्निवेश ऐसा होना चाहिए कि वह काव्य के भावोत्कर्ष में सहायक सिद्ध हो। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है,—"भावों का उत्कर्ष दिखाने और वस्तुओं के रूप, गुण और क्रिया का अधिक तीव्र अनुभव कराने में कभी-कभी सहायक सिद्ध होनेवाली युक्ति अलंकार है।"[2]

अलंकारों के विविध भेदों में अर्थालंकार का स्थान सर्वोपरि है और अर्थालंकार का क्षेत्र उपमान का क्षेत्र है। उपमान अप्रस्तुत, अप्रकृत और अवर्ण्य भी कहलाता है। यह काव्य का कल्पना-पक्ष है। यह भी प्रस्तुत या उपमेय के समान स्थूल-सूक्ष्म, मूर्त-अमूर्त हो सकता है और इसी व्यापकता को देखकर राजशेखर ने उपमान को अलंकारों की मुकुटमणि कहा है। पाश्चात्य काव्य-शास्त्रों में वर्णित मेटफॉर बहुत कुछ अंशों में उपमान का समानार्थी है। अप्रस्तुत योजना के अन्तर्गत जो कुछ आता है, वह उपमान के अन्तर्गत भी आता है।

उपमान की सफलता भाव प्रेरित कल्पना पर आश्रित है। यह कल्पना जितनी अतिशय होगी उतनी उपमान-योजना सुन्दर एवं सार्थक बनेगी। अप्रस्तुत योजना या उपमान की सफलता की कसौटी यह है कि वह पाठक के मन पर वही प्रभाव डाले, जो कि कवि के मन में प्रस्तुत के दर्शन से होता है। पं० रामदहिन मिश्र ने काव्य में उपमान-योजना की महत्ता सिद्ध करते हुए लिखा है—"यह काव्य का प्राण है, कला का मूल है और कवि की कसौटी है। यह काव्य में प्रभाव उत्पन्न करती है, प्रेषणीयता लाती है, भावों को विशद बनाती है और रमणीयता को वर्द्धित करती है।"[3]

सादृश्यमूलक अलंकारों में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, संदेह, भ्रान्ति, अपह्नुति,

१. अंगीकरोति यः काव्यं शब्दार्थावनलंकृति।
असौ न मन्यते कस्मादनुष्णमनलंकृति ॥ जयदेव—चंद्रालोक, १-८

२. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल—रस-मीमांसा, पृ. ३५८

३. पं० रामदहिन मिश्र—काव्य में अप्रस्तुत-योजना, पृ. ७३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

दीपक, अप्रस्तुत प्रशंसा आदि बिम्बात्मक हैं। डॉ० रामकुमार वर्मा का अनुमान है कि मनोवैज्ञानिकों ने रूपक में तन्मयता, उपमा में रूप-लिप्सा, उत्प्रेक्षा में कल्पना की प्रचुरता, दीपक में अर्थलाघव, अर्थान्तरन्यास में न्याय दृष्टि, यथासंख्य में गणितज्ञ की प्रतिभा, असंगति में कुतूहलता का चमत्कार तथा अप्रस्तुत-प्रशंसा में किसी कूटनीतिज्ञ की कला के दर्शन किए होंगे।[1] डॉ० वर्मा जी ने उपर्युक्त अलंकारों की सूक्ष्म विशेषताओं का दिग्दर्शन कराया है। उपमा सादृश्य या साधर्म्य या प्रभावसाम्य पर आधारित है। फलतः उपमा प्रस्तुत एवं अप्रस्तुत के चित्र खड़ा करने में सक्षम है। साथ ही नपे-तुले शब्दों में वह एक व्यापक परिवेश को समाहित कर सकती है। इसलिए समस्त अर्थालंकारों का मूल उपमा है। उपमा या रूपक में आनेवाले अप्रस्तुत एक ओर वस्तु को चित्रित करते हैं तो दूसरी ओर अलंकृत भी करते हैं।[2] अप्रस्तुत विषय को सरल तथा स्पष्ट करते हैं और भाव को उच्च भूमि पर खड़ा करते हैं।[3] रूपक अपनी संक्षिप्तता के कारण प्रभावोत्पादक होता है और उसकी बिम्बक्षमता अन्य सभी अलंकारों से बढ़कर है। उत्प्रेक्षा में उपमेय पर उपमान कल्पित किया जाता है और इस कल्पना के पीछे दोनों वस्तुओं के समान रूप, आकार, दीप्ति, कान्ति, प्रकाश आदि का ध्यान रखा जाता है। यही बात अल्पाधिक मात्रा में अन्य सभी सादृश्यमूलक अलंकारों में भी देखी जा सकती है। अन्योक्ति अलंकार बिम्ब-ग्रहण में अतीव समर्थ है। इसमें अप्रस्तुत ऐसा लाया जाता है कि उसका वर्णन समाप्त होते न होते प्रस्तुत झलक जाता है। इसके लिए यह आवश्यक है कि अप्रस्तुत-योजना हमारे किसी न किसी भाव की भूमि पर योजित हो और प्रस्तुत में जीवन को स्पर्श करने की सामर्थ्य हो।[4] पंत जी की एक कविता है—

> पीली पड, निर्बल, कोमल,
> कृश-देह-लता कुम्हलाई !
> रे म्लान अंग, रंग, यौवन !
> चिर मूक, सजल, नत चितवन।
> जग के दुःख से जर्जर उर,
> बस मृत्यु शेष है जीवन।[5]

यहाँ चाँदनी के बिम्ब के साथ ही साथ चाँदनी जैसा ही पीला, निर्बल कुम्हलाया, म्लान, जर्जर, मृत्युशेष आदि विशेषणों के कारण एक गलित यौवना

---

१. डॉ० रामकुमार वर्मा—साहित्यशास्त्र, पृ. ३५२
२. क्लीनथ ब्रूकस् एण्ड राबर्ट पेन वारेन—अन्डरस्टेंडिंग पोयट्री, पृ. २६९
३. वही, पृ. २६९
४. पं० रामदहिन मिश्र—काव्य में अप्रस्तुत योजना, पृ. १०५
५. सुमित्रानंदन पंत—गुंजन ('चाँदनी' कविता), पृ. ३४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

रुग्ण नारी का भी बिम्ब अनायास खड़ा हो जाता है, जो प्रयुक्त लक्षक पदों के कारण होता है।

मानवीकरण, ध्वन्यर्थ व्यंजना, विरोधाभास, विशेषण विपर्यय जैसे अलंकार भी अपनी बिम्ब-सामर्थ्य के कारण काव्य में उपयोगी हैं। जड एवं निर्जीव वस्तुओं में चेतना या मानवीय भावनाओं तथा क्रिया-व्यापारों का आरोपण करके जो मूर्त एवं संश्लिष्ट चित्र अंकित किये जाते हैं, वे अपने आप बिम्ब ही होते हैं, क्यों कि "बिम्ब ग्रहण के लिए चित्र का संश्लिष्ट होना आवश्यक है। संश्लिष्ट चित्रण से केवल आलंबन के बाह्य रूप या अवयवों का ही चित्र परिस्फुट नहीं होता, अपितु भाव के ठहरने के लिए भी अवसर प्राप्त होता है।"[1] ध्वन्यर्थ व्यंजना का आधार ध्वनि या नाद है जो अपने नादात्मक सौन्दर्य के कारण हमारी श्रौत संवेदना को उत्तेजित करती है तथा शब्द सामर्थ्य से प्रसंग और अर्थ का उद्बोधन कराकर चित्र की अवतारणा कर देती है। विरोधाभास, विशेषण विपर्यय आदि अलंकार भी अपनी लाक्षणिक शक्ति के सहारे चित्र प्रस्तुत करने की सामर्थ्य रखते हैं।

इस प्रकार सादृश्यमूलक अलंकार बहुधा बिम्बात्मक ही होते हैं। उनमें जो उपमान लाये जाते हैं वे सादृश्यात्मक, लाक्षणिक या प्रतीकात्मक होते हैं। इनमें जो उपमान-योजना होती है, वह चार प्रकार की हो सकती है जैसे—(१) अमूर्त वस्तु के लिए अमूर्त उपमान (२) अमूर्त के लिए मूर्त उपमान (३) मूर्त के लिए मूर्त उपमान तथा (४) मूर्त के लिए अमूर्त उपमान।

अमूर्त या मूर्त वस्तु के लिए प्रयुक्त मूर्त उपमान बिम्ब खड़ा करने की सामर्थ्य रखते हैं, किन्तु मूर्त या अमूर्त के लिए अमूर्त उपमान प्रस्तुत करने पर ऐसे उपमान अपनी सूक्ष्मता एवं भावात्मकता के कारण स्थूल या मूर्त बिम्बों की अवतारणा नहीं कर पाते। ऐसे प्रसंगों में काल्पनिक मूर्ति-विधान ही सम्भव है, जिसके रसग्रहण के लिए पाठक को कल्पना का सहारा लेना पड़ता है। यहाँ काव्य का सारा मूर्तीकरण कल्पनाश्रित एवं सांकेतिक गरिमा से भर उठता है। दूसरे मूर्त या अमूर्त प्रस्तुत की कोमलता एवं सूक्ष्मता को व्यक्त करने के लिए अमूर्त अप्रस्तुत सहायक सिद्ध होते हैं। साथ ही ऐसे अमूर्त अप्रस्तुत प्रस्तुत की अलौकिकता का भी आभास देते हैं। अतः आध्यात्मिक सत्ता जो परोक्ष, रूप-रेखा गुणरहित है, की सूक्ष्मता, अलौकिकता एवं कमनीयता की ओर संकेत करने के लिए अमूर्त अप्रस्तुतों की अनिवार्य आवश्यकता है और ऐसे काल्पनिक बिम्बों को बिम्ब की कोटि से हटाया नहीं जा सकता। इस

१. डॉ० जगदीशनारायण त्रिपाठी — आधुनिक हिन्दी कविता में अलंकार-विधान, पृ. २९३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रकार के काल्पनिक बिम्ब छायावादी साहित्य की एक मौलिक देन है और उन्हें मूर्तरहित होने से ठुकरा देना छायावादी काल्पनिक सौन्दर्य के प्रति उपेक्षा दिखाना ही है।

उपर्युक्त बातों से यह स्पष्ट होता है कि अलंकार बिम्बात्मक होते हैं। अन्तर इतना है कि सादृश्यमूलक अलंकार बहुधा अप्रस्तुत का बिम्ब खड़ा करने में अपना योगदान देता है। किन्तु बिम्ब प्रस्तुत और अप्रस्तुत दोनों प्रकार के हो सकते हैं। इस दृष्टि से बिम्ब का क्षेत्र अलंकार के क्षेत्र से विस्तृत है। फिर भी जब बिम्ब और अलंकार का उद्देश्य भावोद्दीपन करना है, तब बिम्ब को अपनी सिद्धि के लिए अलंकार का सहारा लेना पड़ता है। रससिद्ध कवि भावनाओं का बिम्ब-ग्रहण कराने में सक्षम होते हैं। कवि-वाणी में अलंकारों का प्रमुख स्थान है। अलंकार भावों का उत्कर्ष दिखाने तथा वस्तुओं के रूप-रंग-आकार को गोचर एवं मूर्त बनाने में अधिक सहायक हैं।

भाषा और बिम्ब

कविता में अनुभूति और अभिव्यक्ति का सामंजस्य ही महत्वपूर्ण है।[1] अनुभूति की सफल अभिव्यक्ति ही बिम्ब-निर्माण की कला है। सफलता कवि की भाषा सामर्थ्य पर आश्रित है। भाव और भाषा का सामंजस्य ही चित्रराग है।[2] यही बात ह्यूम ने इस तरह कही है—"कविता रोजमर्रा की भाषा नहीं, वह मूर्तभाषा है, जो अमूर्त को भी मूर्त रूप में प्रस्तुत करती है तथा बिम्ब सजीव भाषा का सारतत्व है।[3] भाषा ध्वनि, वर्ण, शब्द, वाक्य, लोकोक्ति एवं मुहावरों का समुच्चय ही है और बिम्ब को अपना रूप धारण करने के लिए इनमें से प्रत्येक का सहारा लेना पड़ता है।

प्रथमतः बिम्ब का आधार शब्द है, क्योंकि मूल रूप में बिम्ब एक शब्द-चित्र है। प्रत्येक शब्द जो काव्य में प्रयुक्त होता है, किसी भाव या कल्पना का मूर्त रूप ही है। अन्य कलाओं में रस-सृष्टि के माध्यम स्थूल होते हैं, किन्तु कविता इसी शब्द के माध्यम से प्रकट होती है, रूप धारण करती है। या यों कह सकते हैं कि कविता का आधार शब्द है और शब्द ही बिम्ब की ओर संकेत करता है। अतः काव्य में प्रयुक्त शब्दों का सार्थक एवं प्रसंगानुकूल होना अत्यन्त अपेक्षित है, वर्ना वे अपना धर्म पूर्णतया निभा नहीं सकते। यही कारण है, कॉलरिज ने काव्य की परिभाषा देते हुए कहा है कि कविता सुन्दरतम शब्दों का सुन्दरतम विन्यास है।[4] सुन्दरतम शब्दों से कॉलरिज का तात्पर्य यही है कि

---

१. पॉल वेलरी—दि आर्ट ऑफ पोयट्री (अनूदित), पृ. ६८
२. सुमित्रानन्दन पंत—पल्लव, 'प्रवेश', पृ. ३१
३. टी. ई. ह्यूम—स्पेकुलेशन, पृ. १३५
४. पोयट्री ईज़ दि बेस्ट वर्डस् इन देयर बेस्ट आर्डर : कॉलरिज

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

काव्य में प्रयुक्त शब्द अर्थाभिव्यंजना में पूर्णतया सक्षम हों तथा उनका प्रयोग प्रसंगानुकूल हो। एक ही शब्द प्रसंगानुसार भिन्न-भिन्न अर्थों की व्यंजना कर सकता है। अतः कवि का शब्द-पारखी होना अपेक्षित गुण है। उसको चाहिए कि वह तोल-तोलकर शब्दों का प्रयोग करे ताकि अनर्थ न कर बैठे। यही बात पं० रामदहिन मिश्र जी भी कहते हैं—"भाषा का चित्र-धर्म उसे कहते हैं, जिसके द्वारा किसी वस्तु या घटना के अनुकरण द्वारा वक्तव्य विषय का प्रांजल रूप से प्रकाश किया जाता है।...भाषा के अन्दर भरा-पूरा जो वह जागतिक प्रतिकृति या प्रतिछवि है, वही भाषा का चित्रधर्म है। यह जितना ही रूप-सँवारा, साफ-सुथरा और स्पष्टार्थक शब्दों में व्यक्त होगा, उतना ही चित्रधर्म (इमेज) उत्तम होगा।"[१] अज्ञेय जी के विचार में भी—"शब्द का ज्ञान—शब्द की अर्थवत्ता की सही पकड़ ही कृतिकार को कृती बनाती है। ध्वनि, लय, छन्द आदि के सभी प्रश्न इसी में से निकलते हैं और इसी में विलय होते हैं।"[२]

चित्रधर्म के प्रसंग में कविवर पंत ने चित्रराग की भी महत्ता प्रतिपादित की है। उनके अनुसार भाव और भाषा का सामंजस्य, उनका स्वरैक्य ही चित्रराग है[३] और कविता में भाव और स्वर का सामंजस्य रखनेवाले शब्द प्रयुक्त होते हैं। अतः बिम्बात्मक भाषा संगीत का हाथ पकड़कर, उसके कंधे से कंधा मिलाकर चलती है। पंत जी ने कहा है—"भाषा संसार का नादमय चित्र है, छविमय स्वरूप है। यह विश्व की हृत्तंत्री की झंकार है, जिसके स्वर में वह अभिव्यक्ति पाता है।"[४] अतः सफल काव्य में चित्रात्मकता एवं संगीत का समानुपातिक योग रहता है। भाषा की संगीतात्मकता या रागतत्व बिम्बात्मक होता है, क्योंकि संगीत का राग स्वराश्रित है। स्वर संगीत में चित्रात्मकता का विशेष गुण है। स्वर संगीत की चित्रात्मक शक्ति का उद्घोष करते हुए अज्ञेयजी ने लिखा है—" 'आ' ध्वनि का रूप है विस्तार, 'ई' ध्वनि का रूप है आनत, ऊँचाई, 'ऊ' ध्वनि में दूरी, 'ए' ध्वनि में उर्ध्व गति, 'ओ' ध्वनि में वस्तु का व्योम तथा भीम प्रवाह और 'औ' में गहराई और गांभीर्य है।"[५] अज्ञेय जी ने ध्वनि की चित्रात्मकता पर ज़ोर देते हुए जो बात कही है, उसी से मिलती-जुलती बात डॉ० कृष्णलाल शर्मा ने भी लिखी है—"वर्ण जैसे विशिष्ट भावोद्घोष में सहायक होते हैं, उसी प्रकार वस्तु-ध्वनि के प्रसंग में वस्तु के आकार-प्रकार का बिम्ब खड़ा करने में या इन्द्रिय संवेद्य बनाने में भी सहायक

---

१. पं० रामदहिन मिश्र—काव्य में अप्रस्तुत-योजना, पृ. ४५
२. अज्ञेय—तार सप्तक, 'पुनश्च'
३. सुमित्रानन्दन पंत—पल्लव, 'प्रवेश' पृ. ३१
४. वही, पृ. २६
५. अज्ञेय—तारसप्तक, पृ. ४१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

होते हैं।"[1] सफल कवि अपनी भाषा में स्वर संगीत एवं वर्णों-ध्वनियों के समुचित नियोग का ध्यान रखता है ताकि उसका भाव बिम्ब रूप में पाठक को ग्राह्य हो जाए। महाकवि प्रसाद ने हिमगिरि को आच्छादित कर फैले हुए हिम के विस्तार का वर्णन करते हुए लिखा है—

दूर दूर तक विस्तृत था हिम
स्तब्ध उसी के हृदय समान।[2]

यहाँ 'ऊ' ध्वनि के प्रयोग से दूरी की मात्रा द्विगुणित हो जाती है, 'था' में 'आ' स्वर हिम के विस्तार, 'उसी के हृदय' में 'ई' ध्वनि मनु के दबे स्तब्ध हृदय की ओर संकेत करती है। कविवर पंत ने भी पर्वत के विस्तार की ओर संकेत करने के लिए 'आ' वर्ण की आवृत्ति का आश्रय लिया है, जैसे 'मेखलाकार पर्वत अपार'।[3] वैसे ही क्षिप्रगति एवं नाटकीयता के लिए लघु वर्णों का सहारा लिया है, जैसे 'पल पल परिवर्तित प्रकृति वेश।'[4] भारतीय काव्य-शास्त्र में भाषा को चित्रमय बनाने के तीन साधन माने गये हैं—

(१) लक्षणा शक्ति (इसमें प्रतीक पद्धति भी सम्मिलित है)।
(२) मानवीकरण
(३) विशेषण-विपर्यय

मानवीकरण और विशेषण-विपर्यय में भी मूलतः लक्षणाशक्ति का ही चमत्कार है। आचार्य शुक्ल ने इस लक्षणा शक्ति को मूर्ति-विधायिनी माना है तथा उनकी सम्मति में लक्षणा द्वारा स्पष्ट एवं सजीव आकार-प्रकार का विधान प्रायः सब देशों के कवि-कर्म में पाया जाता है।[5] वाच्यार्थ में बाधा होने पर तथा लक्ष्यार्थ का उससे सम्बन्ध होने पर रूढ़ि या प्रयोजन को लेकर जहाँ वाच्यार्थ से भिन्न अर्थ की प्रतीति होती है, वहाँ आरोपित क्रिया-रूप लक्षणा होती है—

मुख्यार्थे बाधे तद्योगे रूढ़तोऽथ प्रयोजनात्।
अन्योऽर्थो लक्ष्यते यत्सा लक्षणारोपिता क्रिया॥[6]

लक्षणा आरोपित है और इस आरोप के पीछे रूढ़ि या प्रयोजन कार्य करता है। यह लक्षणाशक्ति आधुनिक काल में काव्य का सर्वस्व बन गयी है। छायावादी कवियों को पाकर इसने अपना विस्तार विशेष्य, विशेषण, क्रिया,

१. डॉ० कृष्णलाल शर्मा—आधुनिक हिन्दी कविता में ध्वनि, पृ. १५१
२. जयशंकर प्रसाद—कामायनी, चिन्ता, पृ. ३
३. सुमित्रानन्दन पंत—पल्लव, उच्छ्वास, पृ. ५८
४. वही, पृ. ५८
५. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल—चिन्तामणि, भाग १, पृ. १७५
६. मम्मट—काव्य प्रकाश, पृ. २१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

लोकोक्ति, मुहावरे सभी तक कर दिया है। कुंज बिहारी (मधुप), तरुवासिनी (कोकिल), धाराधर (बादल), जलवाह (बादल), शशिहासिनी (चाँदनी) आदि संज्ञापद, जो छायावादी कवियों की लेखनी से निसृत हुए, अपनी लाक्षणिकता के कारण चित्रात्मक हैं। स्वप्निल मुस्कान, रजत प्रसार, अजान नयन, विकच बचपन, मधुमय निःश्वास, मधुमय अभिशाप, मूछित नीरवता, हेमाभरश्मि, मधुमय पीड़ा, स्पंदित व्यथा, सुनहला हास, जैसे विशेषण जो बिम्बधर्मी गुणों से ओतप्रोत हैं, आधुनिक हिन्दी कविता को छायावादी कवियों की देन हैं। उनकी यही बिम्बधर्मी वृत्ति क्रियापदों के निर्माण में भी परिलक्षित होती है। टकराता फिरता पवमान (का. ३), पथर बनकर ठिठुरे रहे अड़े (का. ३), मान किये-सी ऐंठी सी (का. २४), कल्पना में है कसकती वेदना (प. ६५), झर गई कली (गुं. ३९), इठलाती आती ग्राम युवती (ग्रा. १७), सरकाती-पट, खिसकाती-लट, शरमाती झट (ग्रा. १७) आदि भावव्यंजना में सक्षम क्रियापदों से छायावादी काव्य भरा हुआ है।

विशेषण-विपर्यय, मानवीकरण आदि की बिम्बात्मकता एवं लाक्षणिकता पर इसके पूर्व अलंकार के प्रसंग में विचार किया गया है।

भाषा और बिम्ब की संबद्धता पर प्रकाश डालते हुए डॉ० सुधा सक्सेना ने लिखा है, "भाषा में प्रकट होनेवाला बिम्ब भाव का दृश्य स्वरूप है। इस रूप में बिम्ब के अन्तर्गत भाव और भाषा दो पृथक सत्ताएँ नहीं हैं, वरन् एक ही दर्पण के दो धरातल हैं।"[1] भाषा बिम्ब का आधार है और बिम्बहीन भाषा निर्जीव एवं प्रभावहीन होती है। अतः बिम्ब और भाषा अपने अस्तित्व के लिए एक दूसरे का आधार लेते ही रहते हैं। कविता में बिम्ब और भाषा की इसी अनिवार्यता को दृष्टि में रखकर पन्तजी का विचार है—"कविता के लिए चित्रभाषा की आवश्यकता पड़ती है, उसके शब्द सस्वर होने चाहिएँ, जो बोलते हों, सेब की तरह जिनके रस की मधुर लालिमा भीतर न समा सकने के कारण बाहर झलक पड़े, जो अपने भाव को अपनी ही ध्वनि में आँखों के सामने चित्रित कर सकें, जो झंकार में चित्र, चित्र में झंकार हों······।"[2]

बिम्बों का वर्गीकरण

बिम्ब का सम्बन्ध जीवन और जगत् से है। जीवन के विविध तथा जगत् के नाना रूपों के आधार पर बिम्ब अनेक प्रकार के हो सकते हैं। इसलिए बिम्बों के कई वर्ग बनाये जा सकते हैं। बिम्बों के वर्गीकरण एवं प्रकारों के सम्बन्ध में मतैक्य नहीं है। फिर काव्य-बिम्ब का सम्बन्ध भाव एवं शैली दोनों से है। इसलिए विषय एवं शैली दोनों पक्षों को दृष्टि में रखकर कई प्रकार के बिम्ब माने जा सकते हैं।

१. डॉ० सुधा सक्सेना—जायसी की बिम्ब-योजना, पृ. १५९
२. सुमित्रानन्दन पन्त—पल्लव, 'प्रवेश', पृ. २८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

रिचार्ड हेर्टर फोगल ने बिम्ब के निम्नलिखित पाँच प्रकार माने हैं,[१]

(१) ऐन्द्रिय बिम्ब-योजना (इमेजरी ऑफ सेन्सेशन)
(२) मिश्र ऐन्द्रिय बिम्ब-योजना (सिनेस्थेटिक इमेजरी)
(३) भावारोपण सम्बन्धी बिम्ब-योजना (एम्पाथिक इमेजरी)
(४) मूर्त बिम्ब-योजना (कोन्क्रीट इमेजरी)
(५) अमूर्त बिम्ब-योजना (अब्स्ट्राक्ट इमेजरी)

उन्होंने ऐन्द्रिय बिम्ब-योजना के कई भेद किये हैं—चाक्षुष बिम्ब (विशुवल इमेज), श्रव्य बिम्ब (आडिटोरी इमेज), स्पृश्य बिम्ब (टाक्टुवल इमेज), घ्रातव्य बिम्ब (अवफाक्टोरी इमेज), आस्वाद्य बिम्ब (गस्टाटोरी इमेज), आंगिक बिम्ब (आरगानिक इमेज) और गत्यात्मक बिम्ब (किनेस्थेटिक एण्ड मोटर इमेज)।

रॉबिन स्केल्टन के अनुसार बिम्बों का वर्गीकरण[२]—विषय-वस्तु, ऐन्द्रियानुभूति एवं बिम्बों का प्रभाव—इन तीन आधारों पर किया जा सकता है। कार्य की दृष्टि से उन्होंने बिम्बों के दो भेद किये हैं—अलंकरणात्मक बिम्ब (डेकोरेटीव इमेज) और क्रियात्मक (फांक्शनल इमेज)। प्रथम बिम्ब विषय के अलंकरण के लिए आता है, और द्वितीय विषय का अनिवार्य अंग है। फिर बिम्बों के प्रभाव के आधार पर उसके सजीव बिम्ब (लिविंग इमेज) और निर्जीव या खण्डित बिम्ब (ब्रोकेन इमेज) दो भेद किये गये। रसपूर्ण बिम्ब सजीव और प्रभावहीन बिम्ब निर्जीव है। इनके अतिरिक्त भी उन्होंने बिम्बों के दस भेदों का उल्लेख किया है,[३] जो इस प्रकार हैं –

(१) साधारण बिम्ब (सिम्पिल इमेज)
(२) तात्कालिक बिम्ब (इमीडिएट इमेज)
(३) विशृंखलित बिम्ब (डिफ्यूस इमेज)
(४) अमूर्त बिम्ब (अब्स्ट्राक्ट इमेज)
(५) मिश्रित बिम्ब (काम्पलेक्स इमेज)
(६) सेश्लिष्ट बिम्ब (कंबयिन्ड इमेज)
(७) संश्लिष्ट अमूर्त बिम्ब (कंबयिन्ड अब्स्ट्राक्ट इमेज)
(८) संश्लिष्ट एवं मिश्रित अमूर्त बिम्ब (अब्स्ट्राक्ट कबयिन्ड एण्ड काम्पलेक्स इमेज)
(९) रूपकात्मक बिम्ब (एलिगोरिकल इमेज)
(१०) लाक्षणिक बिम्ब (एम्बलेमाटिक इमेज)

---

१. आर. एच. फोगल—इमेजरी ऑफ कीट्स एण्ड शैली, पृ. २९
२. रॉबिन स्केल्टन—दि पोयटिक पाटर्न, पृ. ९३
३. वही, पृ. ९०–९१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ऊपर का वर्गीकरण वैज्ञानिक नहीं कहा जा सकता। साधारण बिम्ब और तात्कालिक बिम्ब का अन्तर स्पष्ट नहीं है, क्योंकि साधारण बिम्ब भी तात्कालिक बिम्ब हो सकता है। विशृंखलित बिम्ब प्रभाव नहीं डाल पाता अतः वह असफल बिम्ब है। आठवें प्रकार के बिम्ब में चौथे, पाँचवें और छठे प्रकार के बिम्ब का अन्तर्भाव हो सकता है।

करमोड ने बिम्ब को मोटे तौर पर चार वर्गों में विभाजित किया है[1]

(१) स्थिर बिम्ब (स्टैटिक इमेज)
(२) गत्यात्मक बिम्ब (मूविंग इमेज)
(३) संश्लिष्ट बिम्ब (इन्टेग्रल इमेज)
(४) आलंकारिक बिम्ब (आरनामेन्टल इमेज)

अपनी संक्षिप्तता एवं लघुता के कारण यह वर्गीकरण सरल है।

भारतीय विद्वानों ने भी अपने दृष्टिकोण से बिम्बों के वर्गीकरण का प्रयास किया है। डॉ० गोविन्द त्रिगुणायत ने तीन प्रकार की ध्वनियों को ही दृष्टि में रखकर बिम्ब के स्वभावोक्ति विधायक (वस्तु प्रधान), रसोक्ति विधायक और वक्रोक्ति विधायक–तीन भेद स्वीकार किये हैं।[2] इनको हम चाहें तो वस्तुगत बिम्ब, भावगत बिम्ब और अलंकृत बिम्ब की संज्ञा दे सकते हैं। डॉ० भगीरथ मिश्र ने पर्याप्त गहराई में जाकर बिम्बों के प्रथम दो भेद किये–ऐन्द्रिय बिम्ब और मानस-बिम्ब, ऐन्द्रिय बिम्बों के पुनः दृश्य बिम्ब तथा अन्य संवेद्य बिम्ब दो प्रकार माने। फिर दृश्य बिम्ब के भीतर वस्तु-बिम्ब और व्यापार-बिम्ब दो उपभेद किये। वस्तु-बिम्ब के भी सहज और अलंकृत बिम्बों के प्रकार स्वीकार किये। मानस-बिम्ब के भी भाव-बिम्ब और विचार-बिम्ब दो भेद बताये हैं।[3] यह वर्गीकरण अधिक मनोवैज्ञानिक है।

बिम्बों के वर्गीकरण के प्रसंग में आचार्य नगेन्द्र जी के वर्गीकरण का विशेष महत्व है। उन्होंने संभावित सभी बिम्बों का संक्षेप में विश्लेषण करके उनके पाँच वर्ग निर्धारित किये।[4]

(१) दृश्य, श्रव्य, स्पृश्य, घ्रातव्य और रस्य
(२) लक्षित और उपलक्षित
(३) सरल और संश्लिष्ट
(४) खण्डित और समाकलित
(५) वस्तुपरक और स्वच्छन्द

१. फ्रॉंक करमोड—रोमांटिक इमेज, पृ. १२८
२. समीक्षालोक–रस-सिद्धान्त विशेषांक, जुलाई-अगस्त १९७०, पृ. ८६
३. डॉ० भगीरथ मिश्र—काव्यशास्त्र, पृ. २८७
४. डॉ० नगेंद्र—काव्य-बिम्ब, पृ. १७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रथम वर्ग ऐन्द्रिय अनुभूतियों पर आधारित है। चाक्षुष संवेदना पर आधारित बिम्ब दृश्य बिम्ब है, जो रूपवान होता है और इसमें वस्तु के रूप-रंग आकार का बिम्ब खड़ा किया जाता है। श्रव्य बिम्ब का आधार कर्णेन्द्रियों से प्राप्त संवेदना है जिसमें नाद, ध्वनि, लय आदि के बिम्ब आते हैं। स्पृश्य बिम्ब स्पर्शजन्य संवेदना से गृहीत बिम्ब हैं। घ्रातव्य बिम्ब तथा रस्य बिम्ब का आधार क्रमशः घ्राणेद्रिय और आस्वादनेन्द्रिय है। पाँचों प्रकार के ऐन्द्रिय बिम्बों में चाक्षुष बिम्ब सबसे स्पष्ट और मूर्त है।

वर्ग २ का आधार सर्जक कल्पना है। लक्षित और उपलक्षित बिम्बों को क्रमशः प्रस्तुत और अप्रस्तुत बिम्ब की संज्ञा भी दी जाती है। लक्षित बिम्ब सहज स्वाभाविक बिम्ब है और इससे विभाव, अनुभाव, संचारी आदि सम्बद्ध हैं। ऐसे बिम्बों में बिम्ब-निर्माण का आधार रंग-रेखाएँ हैं और भावोत्तेजन के लिए ऐसे बिम्बों में ऐन्द्रियता का भी समावेश किया जाता है और ऐसा बिम्ब अभिधात्मक न होकर लाक्षणिक गूढ़ एवं व्यंजक होता है। वैसे सभी काव्यगत बिम्ब लक्षित और उपलक्षित दो भेदों में आकलित किये जा सकते हैं।

वर्ग ३ तथा वर्ग ४ को एक साथ मिलाया जा सकता है, क्योंकि ये दोनों वर्ग प्रेरक अनुभूति पर आधारित हैं। जो अनुभूति सरल है उससे सरल बिम्ब बनता है। यह बिम्ब कार्य-कारण सम्बन्ध विहीन या पूर्वापर सम्बन्धहीन एक साधारण बिम्ब है, जिससे किसी भाव की एक झलक मात्र प्राप्त होती है। ऐसे बिम्ब को खण्डित बिम्ब भी कहा जा सकता है। समाकलित या संश्लिष्ट बिम्ब अनेक खण्डित या सरल बिम्बों की एक माला है, जो किसी घटना, प्रसंग या वस्तु का पूर्ण चित्र प्रस्तुत करती है। यह बिम्ब निस्सीम संवेदना, सूक्ष्म पर्यवेक्षण शक्ति एवं सशक्त अभिव्यक्ति पाटव का परिचायक है और वास्तव में यही सफल बिम्ब है जो बिम्ब-ग्रहण में सहायक है।

वर्ग ५ काव्य-दृष्टि पर आधारित है। वस्तुपरक बिम्ब यथार्थ बिम्ब है और स्वच्छन्द बिम्ब कल्पना की उपज है। स्वच्छन्द बिम्ब को काल्पनिक बिम्ब भी कहा जा सकता है।

बिम्ब के वर्गीकरण एवं प्रकारों के सम्बन्ध में भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों के विचारों का परिचय प्राप्त करने के उपरान्त हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि भारतीय विद्वानों की दृष्टि बहुधा विषय वस्तु पर रहती है जबकि पाश्चात्य विद्वान बिम्ब के शैलीगत भेदों को महत्व देते हैं। भारतीय दृष्टिकोण अत्यन्त व्यावहारिक, सरल एवं स्वाभाविक है, क्योंकि उनकी दृष्टि बिम्ब-ग्रहण की दशा को महत्व देती है, चाहे बिम्ब सरल हो या संश्लिष्ट, चाहे खण्डित हो चाहे समाकलित, बिम्ब-ग्रहण जो होता है, वह किसी वस्तु, भाव या विचार का ही हो सकता है।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

व्यावहारिक दृष्टि से मोटे तौर पर बिम्ब को चार वर्गों में बाँटा जा सकता है।

(१) ऐन्द्रिय बिम्ब
(२) वस्तुपरक बिम्ब
(३) भाव-बिम्ब
(४) दार्शनिक बिम्ब

बिम्ब का आधार ऐन्द्रिय संवेदना है और वह बिम्ब का मौलिक गुण है। मुख्यत: इसी ऐन्द्रियता की दृष्टि से अन्य शैलीगत तत्वों जैसे प्रतीक, अलंकार, मानवीकरण आदि से उसकी भिन्नता है। ऐन्द्रिय संवेदना की इस प्रमुखता को देखते हुए ऐन्द्रिय बिम्बों का एक पृथक वर्ग मानना उचित होगा। फिर ऐन्द्रिय संवेदनाओं की भिन्नता को ध्यान में रखते हुए उसके दृश्य बिम्ब, श्रव्य बिम्ब, स्पृश्य बिम्ब, घ्रातव्य बिम्ब और आस्वाद्य बिम्ब ये पाँच प्रकार होते हैं। दृश्य-बिम्ब वस्तुओं के रूप-व्यापार पर आधारित है और इस कारण उसके स्थिर बिम्ब एवं गत्यात्मक बिम्ब नाम के दो उप-भेद हो सकते हैं। वस्तु के रूप-रंगादि स्थिर दशा सूचक बिम्ब को स्थिर बिम्ब तथा उसके क्रिया-व्यापार एवं गतिसूचक बिम्ब चल बिम्ब या गत्यात्मक बिम्ब है।

वस्तुपरक बिम्ब का सम्बन्ध जीवन एवं जगत् से है। उसकी तीन कोटियाँ हो सकती हैं—मानव, मानवेतर प्राणिवर्ग तथा प्रकृति। मानव के अन्तर्गत पुरुष एवं नारी बिम्ब आते हैं और उनके बिम्ब सांस्कृतिक, सामाजिक, धार्मिक, यौन सम्बन्धी, स्मृति सम्बन्धी, कालिक जैसे आधारों पर बनते हैं। अतः पुरुष बिम्ब एवं नारी बिम्ब के सांस्कृतिक बिम्ब, सामाजिक बिम्ब, धार्मिक बिम्ब, यौन बिम्ब, स्मृति-बिम्ब, कालिक बिम्ब आदि प्रकार हो सकते हैं। कालिक बिम्ब में पौराणिक जीवन, ऐतिहासिक घटना, सामयिक परिस्थिति जैसे राजनैतिक, आर्थिक, व्यावसायिक, वैज्ञानिक चित्र अंकित किये जाते हैं। सुविधा की दृष्टि से मानव सम्बन्धी रूप बिम्ब, सामाजिक बिम्ब, राजनैतिक बिम्ब, ऐतिहासिक बिम्ब, पौराणिक बिम्ब, सांस्कृतिक बिम्ब, साहित्यिक बिम्ब, व्यावसायिक बिम्ब, यौन बिम्ब, वैज्ञानिक बिम्ब, आदि प्रकार माने जा सकते हैं।

प्रकृति-बिम्ब का क्षेत्र अपेक्षाकृत बड़ा है और सभी देशों के सब समय के काव्यों में प्रकृति के नानाविध चित्र अंकित होते आये हैं। फिर भी सुविधा की दृष्टि से उसके चार प्रकार के बिम्बों का उल्लेख हो सकता है—जड प्रकृति के बिम्ब, मानवीकृत बिम्ब, मनुष्येतर चेतन प्रकृति के बिम्ब और प्रतीकात्मक बिम्ब। जड प्रकृति में जलीय, स्थलीय एवं आकाशीय सभी पदार्थों जैसे समुद्र, नदी, जल, स्रोत, फूल, पत्तियाँ, वृक्ष-लताएँ, पहाड़, चोटी, कंदरा, घाटी, पत्थर, समय और ऋतुएँ, खनिज पदार्थ, सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, बिजली, बादल, वर्षा, पवन आदि से सम्बन्धित बिम्ब रखे जा सकते हैं। मानवीकरण

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पर आश्रित बिम्बों की एक पृथक श्रेणी इसलिए आवश्यक है कि छायावादी काव्य में प्रकृति के ऐसे चित्रों की अधिकता है। उनमें प्रकृति का यथातथ्य चित्रण न होकर चेतनात्मक रूपों का आरोप करके चित्रों की अधिकता है। उनमें प्रकृति का यथातथ्य चित्रण न होकर चेतनात्मक रूपों का आरोप करके चित्र खड़े किये जाते हैं। मनुष्येतर चेतन प्रकृति में पार्थिव एवं अपार्थिव दो श्रेणियाँ बनायी जा सकती हैं। पार्थिव बिम्बों का सम्बन्ध पशु-पक्षी, कीट-पतंगों से है। इसके अतिरिक्त कल्पनाश्रित निजंधरी कथाओं से सम्बन्धित अप्सरा, भूत-प्रेत आदि के बिम्ब भी काव्य की संपत्ति हैं। ये कथाएँ तर्काश्रित नहीं होतीं, केवल मानव-विश्वासों पर आधारित होती हैं और इनका उपयोग काव्य में मनोरंजन या चमत्कार उत्पन्न करने के लिए किया जाता है। इसलिए ऐसे बिम्बों को अपार्थिव माना गया है।

भाव-बिम्बों का क्षेत्र मानसिक है। मानव-मन की भावनाएँ अनन्त हैं। इन अमूर्त भावनाओं को बिम्बात्मक रूप में मूर्तित करने का प्रयास छायावादी काव्य में हुआ है। काव्यशास्त्रियों ने इन भावों के दो भेद किये हैं—स्थायी और संचारी भाव। स्थायी भावों की संख्या नौ मानी गयी है—प्रेम (रति), हास, शोक, क्रोध, उत्साह, भय, घृणा, विस्मय एवं निर्वेद। प्रेम के संयोग एवं वियोग पक्षों से सम्बन्धित बिम्ब काव्य की अक्षय निधि है। संचारी भावों की संख्या अनिश्चित है, किन्तु काव्यशास्त्रों में उनकी संख्या ३३ निश्चित की गयी है जो सुखात्मक, दुखात्मक, उभयात्मक एवं उदासीन नाम की चार श्रेणियों में विभक्त है। सुखात्मक श्रेणी में गर्व, औत्सुक्य, हर्ष, आशा, मद, सन्तोष, चपलता, मृदुलता और धैर्य; दुखात्मक कोटि में लज्जा, असूया, अमर्ष, अवहित्था, त्रास, विषाद, शंका, चिन्ता, नैराश्य, उग्रता, मोह, अलसता, उन्माद, असन्तोष, ग्लानि, अपस्मार, मरण एवं व्याधि; उभयात्मक में आवेग, स्मृति, विस्मृति, दैन्य, जड़ता, स्वप्न और चित्त की चंचलता एवं उदासीन की कोटि में वितर्क, मति, श्रम, निद्रा और विबोध, इस प्रकार कुल ३३ संचारी भाव के बिम्ब रखे जा सकते हैं।

हमने विचार-बिम्ब के स्थान पर दार्शनिक बिम्ब का एक प्रथक् वर्ग रखा है। विचार में बुद्धि की प्रधानता है, किन्तु काव्यान्तर्गत आनेवाले कुछ बिम्ब ऐसे हैं जिनको विचार के अन्तर्गत नहीं रख सकते और पूर्वोक्त किसी कोटि में भी इनकी गिनती नहीं हो सकती। अध्यात्म या परमसत्ता को कल्पना एवं अनुभूति के सहारे ही सिद्ध किया जा सकता है। अध्यात्म सम्बन्धी रहस्यानुभूति से प्रेरित बिम्ब काव्य में प्राप्त होते हैं, जिनको व्यक्त करने के लिए कवियों ने सांकेतिक पदावली का सहारा लिया है। ऐसे बिम्बों की चर्चा करते हुए डॉ० केदारनाथ सिंह ने लिखा है—"रहस्यवादी कवि की कल्पना प्रत्यावर्तन पद्धति का आश्रय ग्रहण करती है। वह परोक्ष अनुभूति से चलकर

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पुन: स्थूल रूपाकारों की ओर लौटने के लिए विवश होता है। अमूर्त की ओर लौटने की यह पद्धति एक नये प्रकार के बिम्ब-विधान को जन्म देती है, जिसमें प्रत्येक बिम्ब अन्ततः उस अमूर्त भाव-दशा के प्रति समर्पित होता है।"[१] अतः विचारात्मक तत्व जैसे आत्मा-परमात्मा, जीवन, जगत्, जन्म-मृत्यु, माया आदि के साथ रहस्यात्मक अनुभूति पर निर्मित बिम्बों को दार्शनिक बिम्ब के वर्ग में स्थान दिया जा सकता है।

१. डॉ० केदारनाथ सिंह—आधुनिक हिन्दी कविता में बिम्ब-विधान, पृ. १७२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

बिम्बों का वर्गीकरण

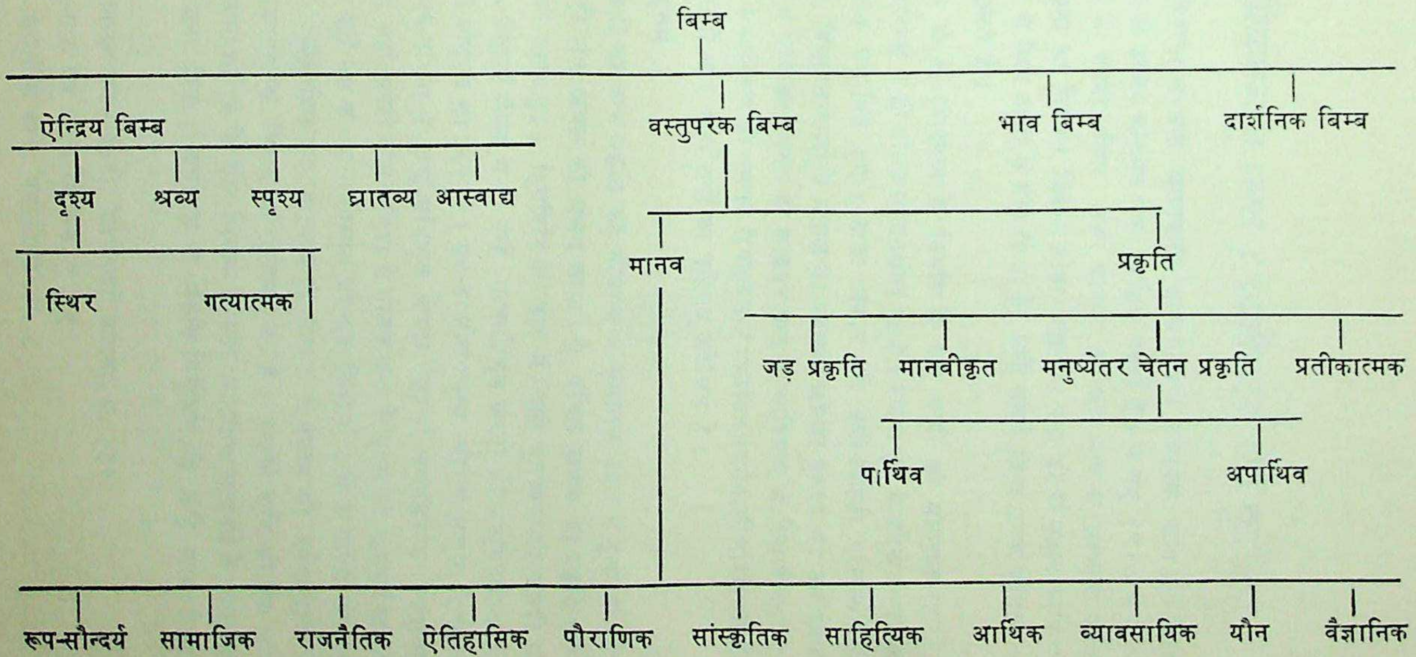

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सुमित्रानन्दन पन्त : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

सुमित्रानन्दन पन्त छायावादी काव्यधारा के उन्नायक कवि हैं। हिन्दी काव्य-क्षेत्र में उनका आगमन एक स्वर्णिम घटना है। वे सन् १९१८ में हिन्दी काव्य-क्षेत्र में अपनी 'वीणा' लेकर प्रविष्ट हुए और तब से आजतक उनकी काव्य-साधना का निरन्तर विकास होता रहा है। पन्त जी के महान व्यक्तित्व के निर्माण में जिन तथ्यों ने योग किया है, उन्हें समझे बिना उनके कृतित्व का अध्ययन दुष्कर है।

पन्त जी के व्यक्तित्व के निर्माण में कई तत्वों का योगदान रहा है। पन्त जी प्रारम्भ से ही अधिक संवेदनशील रहे हैं। फलतः युग के अनेक आन्दोलनों से वे पर्याप्त प्रभावित हुए। नाना प्रकार की देशी-विदेशी परिस्थितियों, आन्दोलनों, विचारधाराओं के प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष जो-जो प्रभाव पड़े उन सबका संतुलित एवं समन्वित स्वरूप ही कविवर पन्त के व्यक्तित्व में दिखाई देता है। अतः पन्त के व्यक्तित्व को समझने से पहले उन्हें प्रभावित करनेवाली परिस्थितियों, विचारधाराओं और आन्दोलनों का परिचय अपेक्षित है।

प्रकृति-साहचर्य

पन्तजी का जन्म प्रकृति की क्रीड़ा-भूमि कूर्माचल प्रदेश में हुआ था और जन्म लेते ही 'मातृ अंचल की अभय छाया', से वंचित बालक को प्रकृति-धात्री की परिचर्या प्राप्त हुई। हिमगिरि के क्रोड़ में बसी कूर्माचल की पहाड़ी की नीरव मूर्ति-शिलाएँ शैशव में ही उन्हें मन्त्राभिभूत करती थीं। शृंगनाद करती निर्झरणियाँ कौतूहल की वस्तु थीं। नभ का नील रहस्य चीरता उत्तुंग हिमालय अपनी वैभव-गरिमा से उन्हें अभिभूत करता रहा।[1] नगाधिराज देवतात्मा हिमालय ने जहाँ अपनी मौन-भंगिमा से बालक पन्त के हृदय को आश्चर्य-चकित कर दिया, वहाँ मन को आत्म-विस्मृत भी कर दिया।[2] उसी के परिणामस्वरूप उनका मन एकान्तप्रिय एवं आत्मस्थ हो गया। हिमालय की पर्वत-श्रेणियाँ, सौन्दर्य, पावनता एवं विराग का मूर्तिमत् रूप हैं। इन्होंने कवि को एक ओर भावुक बनाया तो दूसरी ओर चिन्तक। इसी प्राकृतिक साहचर्य ने पन्त को जन-भीरू बना दिया।[3] कूर्माचल के प्रकृति-निरीक्षण से उन्हें काव्य-प्रेरणा

---

१. सुमित्रानन्दन पंत—वाणी, 'आत्मिका' कविता, पृ. १११
२. वही—साठ वर्ष : एक रेखांकन, पृ. ११
३. वही —आधुनिक कवि, 'पर्यालोचन', पृ. ८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मिली ।[१] इसी ने उनमें अदम्य आशा, अजेय आत्म-विश्वास तथा महत् उत्साह भर दिया, जो आगे चलकर उनका संबल रहा। इसी के प्रभाव से पन्त स्वभाव से सात्विक, सौम्य, उदार एवं सन्त हैं। हिमालय की गरिमामय सात्विकता एवं निगूढ़ गंभीरता में पन्त ने किसी अध्यात्म सत्ता का सान्निध्य अवश्य पाया है, तभी तो उनके प्रकृति-चित्रण में रहस्यानुभूति की मात्रा इतनी अधिक मिलती है। यह कहा जा सकता है कि कूर्माचल के पार्वतीय साहचर्य ने पन्त को आवश्यक भावुकता और कल्पना ही नहीं दी, किसी रहस्यात्मक सत्ता के अस्तित्व की ओर भी संकेत किया था।

आगे चलकर सन् १९३१ में पन्त कालाकांकर के राजा अवधेशसिंह तथा उनके अनुज कुंवर सुरेशसिंह के आग्रह पर कालाकांकर में रहने लगे। वहाँ के आठ-नौ वर्षों के निवास ने पन्त को भारतीय ग्रामीण जीवन को निकट से देखने-परखने का अवसर दिया। वहाँ वे गंगा के सात्विक तट पर एकान्त कुटिया में रहते थे। वहाँ का जीवन सन्तमय जीवन के अनुकूल रहा। हमारे पूर्वज ऋषि-मुनि ऐसे ही स्थान पर रहकर मुक्ति-लाभ पाते थे। अतः कहा जा सकता है कि कविवर पन्त के व्यक्तित्व को रूप देने में कूर्माचल की पार्वतीय उपत्यका तथा पावन गंगा तट पर स्थित कालाकांकर के 'नक्षत्र' का योग है।

धार्मिक एवं साहित्यिक वातावरण

पन्त जी का जन्म मध्यवित्तीय परिवार में हुआ था। जीवन में सभी प्रकार की सुविधाएँ प्राप्त थीं, किन्तु इन सुविधाओं ने उनके जीवन के लक्ष्य को नहीं मोडा, वे विलासी नहीं बने। उनके स्वभाव को साहित्यिक एवं धार्मिक जीवन की ओर केन्द्रित करने का श्रेय उनके भ्राता तथा बूढ़ी दादी को है। उनके भ्राता साहित्यिक अभिरुचि रखते थे तथा कालिदास के 'मेघदूत' और 'शकुन्तला' के छन्दों को बड़े मधुर कंठ से गाकर सुनाया करते थे। उनके यहाँ रामायण, भागवत एवं गीता का नित्य पाठ होता था और उसमें बालक पन्त रुचि लेते थे। बूढ़ी दादी से प्रतिदिन संध्या समय वे दन्त कथाएँ तथा देवी-देवताओं की आरती के गीत सुनते थे। इन सब का परिणत प्रभाव ही समझना चाहिए कि पन्त के किशोर हृदय में धर्म, सत्संग आदि के प्रति सद्भावना उत्पन्न हुई। यहाँ तक कि एक योगी के व्यक्तित्व से प्रभावित होकर स्कूल की पढ़ाई छोड़कर वे उसके साथ जाने को तैयार हो गये थे।[२] जब मैट्रिक्युलेशन की परीक्षा के लिए वे वाराणसी गये, तो वहाँ उन्हें उपनिषद् एवं तिलक के 'गीता-रहस्य' का अध्ययन करने का सुअवसर मिला। उपनिषद् ब्रह्म और जगत् तथा ब्रह्म और आत्मा की एकता का प्रतिपादन करते हैं। उपनिषदीय

---

१. सुमित्रानन्दन पन्त—आधुनिक कवि, 'पर्यालोचन', पृ. ७

२. वही—साठ वर्ष : एक रेखांकन, पृ. १८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ब्रह्म विद्या एवं मायावाद का पर्याप्त प्रभाव पन्त जी के काव्यों में पाया जाता है। यही नहीं, उपनिषदों में बताया गया है कि ब्रह्म विज्ञानमय एवं आनन्दमय है तथा उसे जितेन्द्रियता, शान्तचित्तता एवं आत्मनिष्ठा से प्राप्त किया जा सकता है। इस विचार का पन्त जी पर बहुत प्रभाव पड़ा। वैसे ही गीता के कर्ममय संन्यास को उन्होंने अपने जीवन में उतारा। भगवान् श्रीकृष्ण ने गीता का उपदेश ब्रह्म-बोध के लिए दिया था। यह ब्रह्म-बोध ज्ञान-निष्ठा एवं योग-निष्ठा से प्राप्त होता है। ज्ञान-निष्ठा का दूसरा नाम कर्म-संन्यास है। समस्त कार्यों को तथा अपने आपको ईश्वर में केन्द्रित करना ज्ञाननिष्ठा है। संसार के प्रति अनासक्ति, कर्म के प्रति स्वाभाविक प्रवृत्ति तथा मनसा-वाचा-कर्मणा ईश्वर के अधीन हो जाना ही योगनिष्ठा है। इन्हीं साधनों से मनुष्य अपने परमतत्व को प्राप्त कर सकता है। गीता का उपदेश है कि सभी धर्मों को छोड़-कर भगवान की शरण जाएँ।[1] पन्त जी के काव्य में गीता में बताये गये कर्म संन्यास तथा मोक्ष-साधनों और ईश्वर-कृपा का महत्वपूर्ण स्थान है। उनके कर्मसिद्धान्त,[2] पुनर्जन्मसिद्धान्त[3] तथा ब्रह्मस्वरूप[4] गीता की छाया लिये हुए हैं। उनकी अध्यात्मवादी रचनाओं से यह स्पष्ट पता चलता है कि जो जीव अहं का त्याग कर ऊर्ध्वगमन के लिए उत्साहित होता है, उसकी सफलता के लिए ईश्वर आतुर है। इस प्रकार उपनिषद् एवं गीता ने पन्त जी को जीपन एवं जगत् के प्रति स्वथ्य दृष्टिकोण प्रदान किया। उनके मन में ईश्वर के अस्तित्व का दृढ़ बोध उत्पन्न हुआ।

बनारस के निवास-काल में पन्तजी कालिदास एवं भवभूति के अध्ययन का अवसर प्राप्त कर सके। भारतीय कवियों में सरोजिनी नायडु, रवीन्द्रनाथ, विद्यापति, चण्डीदास तथा रीतिकालीन कवियों ने पन्त पर अपना अमिट प्रभाव डाला। सरोजिनी नायडु तथा रवीन्द्रनाथ के प्रभाव का अनुस्मरण करते हुए पन्तजी ने लिखा है—"श्रीमती नायडु की शब्द-योजना तथा रवीन्द्र की कल्पना, सौन्दर्य-बोध तथा उनकी कविताओं में निहित असीम के स्पर्श ने मेरे मन को प्रभूत रूप से अभिभूत किया।"[5]

पन्त पर अंग्रेज़ी के रोमान्टिक कवियों में शैली, कीट्स, वर्ड्स्वर्थ तथा टेनिसन का भी कम प्रभाव नहीं पड़ा। प्रयाग में रहते हुए शिवधार पाण्डे के

---

१. सर्व धर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज। अहं त्वा सर्वपापेभ्यः मोक्षयिष्यामि मा शुचः। गीता १८–६६

२. द्रष्टव्य, पल्लव, पृ. १०७

३. द्रष्टव्य, स्वर्णकिरण, स्वर्णोदय, पृ. १३३

४. द्रष्टव्य, गुंजन, पृ. ८६

५. साठ वर्ष : एक रेखांकन, पृ. २७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सहयोग से उन्होंने अंग्रेजी कवियों का व्यापक अध्ययन किया। रोमान्टिक काव्य-धारा की प्रमुख विशेषताएँ—मानव-प्रेम, प्रकृति-प्रेम, सौन्दर्योपासना, प्रचलित रूढ़ियों के प्रति विद्रोह-वृत्ति, अज्ञातसत्ता के प्रति विस्मय-भावना तथा पूर्ण आस्था, नये-नये प्रयोग, मानवीय मन का अवगाहन, स्वप्नदर्शी बनकर कल्पना-जगत् में विहार करना, कवि शैली की कविता के विशेष गुण हैं। कीट्स की सौन्दर्योपासना, वर्ड्स्वर्थ की कविता में व्यक्त प्रकृति की रहस्यात्मक अभिव्यक्ति तथा टेनिसन की विद्रोहवृत्ति का पन्त पर कम प्रभाव नहीं पड़ा।

सांस्कृतिक संस्थाएँ

पन्तजी का बाल्यकाल भारत के पुनर्जागरण का युग था। रूढ़ियों और अन्धपरम्पराओं को दूर करने तथा समाज के नवनिर्माण में कई सांस्कृतिक संस्थाओं ने कार्य किया, जिनमें ब्रह्मसमाज, आर्यसमाज, प्रार्थना-समाज, थियोसफिकल सोसाइटी तथा रामकृष्ण मिशन का योग अविस्मरणीय है। उन्नीसवीं शताब्दी के प्रबल विचारकों में राजा राममोहनराय का व्यक्तित्व महत्वपूर्ण था। उन्होंने हिन्दू-धर्म एवं इस्लाम का व्यापक अध्ययन किया था। वे हिन्दुओं की मूर्ति-पूजा के विरोधी तथा एकेश्वरवाद एवं विश्वधर्म के पोषक थे। भारतीय एवं पाश्चात्य संस्कृति का समन्वय उनका स्वप्न था। वेद की प्रतिष्ठा, सर्वधर्म समन्वय एवं विश्वबंधुत्व के सिद्धान्तों के प्रचार के उद्देश्य को लेकर उन्होने १८१५ ई० में 'आत्मीय सभा' के नाम से एक संस्था का आरम्भ किया, जो बाद में 'ब्रह्म समाज' के नाम से प्रसद्ध हुई। बाल-विवाह एवं सती-प्रथा पर कुठाराघात करने तथा विधवा-विवाह को प्रोत्साहित करने में ब्रह्म समाज का महत्वपूर्ण हाथ रहा।

स्वामी दयानन्द सरस्वती प्रतिभा-सम्पन्न समाज-सुधारक एवं सांस्कृतिक नेता थे। उन्होंने १८७५ ई. में बम्बई में आर्य-समाज की स्थापना की। उन्होंने देखा कि हिन्दूधर्म की कट्टरता और संकीर्ण दृष्टिकोण से पीड़ित निम्नवर्गीय जनता निराश हो दूसरे धर्मों को अपना रही है। अतः हिन्दू-धर्म का पुनः संगठन एवं सुधार करने के लिए दयानन्द सरस्वती उद्यमशील हुए तथा उन्होंने एक ओर हिन्दू-धर्म में प्रचलित रूढ़ियों-परम्पराओं की निन्दा की तो दूसरी ओर ईसाई पादरियों को चुनौती दी। उन्होंने मृतप्राय वैदिक धर्म की पुनः स्थापना का यत्न किया और सभी हिन्दुओं को वेदाध्ययन का अधिकार दिया। भारतीय भाषा, भारतीय संस्कृति और भारतीय राष्ट्रीयता को प्रोत्साहन देते हुए उन्होंने एक महान आदर्श जनता के सामने रखा।

गोविन्द रानडे के नेतृत्व में प्रार्थना-समाज ने भारतीय राष्ट्र के उद्धार का प्रयत्न किया। रानडे व्यक्ति-स्वातन्त्र्य के सबल समर्थक एवं धार्मिक सुधार के पुरोधा थे। उन्होंने एक ब्रह्म की उपासना पर बल दिया। बदलती हुई परिस्थिति के परिप्रेक्ष्य में प्राचीन धार्मिक मूल्यों की नयी व्याख्या की। वे

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सहभोज, अन्तर्जातीय विवाह, विधवा-विवाह और स्त्री-शिक्षा के समर्थक थे।

भारतीय समाज के नवोत्थान के कार्यों में थियोसफिकल सोसाइटी ने जो कदम उठाये, वे अत्यन्त प्रशंसनीय रहे। इस सोसाइटी की स्थापना रूसी महिला व्यावात्सकी ने १८७५ ई० में की थी। १८७९ ई. में मद्रास के अड्यार में इसकी शाखा खोली गयी। इस संस्था के विचारों को भारत में व्यापक रूप में प्रसारित करने का श्रेय एनीबेसन्ट को है। इस सोसायटी का लक्ष्य विश्व-बन्धुत्व था। एनीबेसन्ट ने हिन्दू-धर्म के प्रचार का बीडा उठाया तथा वेदों की महत्ता घोषित की। वे मानव मात्र को ईश्वर की सन्तान मानती थीं। उनका उपदेश था सभी धर्मों, वर्णों, सम्प्रदायों में समभावना पैदा करना। सेवा एवं विश्वकल्याण की भावना को जनता में प्रचारित करने में इस सोसाइटी ने पर्याप्त सफलता प्राप्त की।

भारतीय जनता में सौहार्द, समभावना, भ्रातृ-प्रेम एवं धार्मिक सहिष्णुता के विकास का महान कार्य राकृष्ण मिशन ने अपने हाथ में लिया। श्री रामकृष्ण परमहंस सभी धर्मों को ईश्वर-प्राप्ति का मार्ग मानते थे तथा सबको आदर की दृष्टि से देखते थे। उनका उपदेश था, सब धर्मों का अन्तिम लक्ष्य ईश्वर-प्राप्ति है और मनुष्य किसी भी धर्म का सही अनुसरण करते हुए चरम लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। इसी सर्वधर्म समन्वय की भावना का देश-विदेश में प्रचार करने के लिए स्वामी विवेकानन्द ने १८९६ ई० में रामकृष्ण मिशन की स्थापना की। आज इस मिशन की अनेक शाखाएँ विश्व के नाना भागों में स्थापित हैं। स्वामी विवेकानन्द भारतीय धार्मिक रंगमंच पर अपना अलौकिक व्यक्तित्व लेकर अवतीर्ण हुए थे। उनके अनुसार हिन्दू-धर्म ने संसार को सहिष्णुता एवं सार्वभौम मानवता का पाठ पढ़ाया था। वे वैराग्य एवं संन्यास को मुख्य मानते हुए भी कर्ममार्ग का उपदेश देते थे। उनके अनुसार वही धर्म है जो पीड़ित जनता के आँसू पोंछ सके। विश्वबन्धुत्व एवं मानव मात्र की सेवा को ईश्वर की सेवा का पर्याय मानकर विवेकानन्द ने कर्म-संन्यास का पाठ पढ़ाया। इस प्रकार रामकृष्ण मिशन ने सर्वधर्म-समन्वय, विश्वबन्धुत्व एवं विश्वमानवता के प्रचार में स्तुत्य कार्य किया।

श्री सुमित्रानन्दन पन्त के काव्य में जाति-वर्णविहीन समाज की प्रतिष्ठा एवं विश्वबन्धुत्व की भावना का जो आदर्श है, उसके पीछे इन सांस्कृतिक संस्थाओं का प्रभाव स्वीकार किया जा सकता है। नारीजागरण, सेवा-व्रत, आदर्श समाज की परिकल्पना एवं मानवतावाद की प्रतिष्ठा का जो आग्रह है, वह भी इन्हीं संस्थाओं के प्रभूत प्रभाव का परिचायक है।

रामतीर्थ, रवीन्द्र, अरविन्द, गांधी एवं मार्क्स

कविवर पन्त के व्यक्तित्व के निर्माण में उन्नीसवीं–बीसवीं शती के कतिपय अन्य चिन्तकों और विचारकों का भी सक्रिय योग रहा है। स्वामी रामतीर्थ

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्वतन्त्र विचारक एवं मनीषी थे, जिन्होंने भारतीय जनता के बीच नवीन चिन्तन-धारा प्रवाहित की। वे वेदान्तिक अद्वैतवाद के प्रबल प्रचारक थे तथा ज्ञान, सत्यनिष्ठा, संयम, समानता, एक ईश्वर में विश्वास का संदेश देते थे।

रवीन्द्र के सार्वभौम कवि-व्यक्तित्व का प्रभाव साहित्य पर पड़ता जा रहा था। उनके काव्य में एक आध्यात्मिक सौन्दर्य-चिन्तन एवं उन्मुक्त आत्माभिव्यक्ति थी, जिससे प्रेरणा पाकर साहित्य में रूढ़ियों के प्रति विद्रोह एवं नवीन प्रवृत्तियों की ओर लगाव बढ़ता जा रहा था। रवीन्द्र की महत्ता केवल कवि के रूप में ही नहीं थी, वे पुनर्जागरण युग के अग्रदूत भी थे। उन्होंने राजनीति के पंकिल जीवन से कोसों दूर रहकर विश्व-कुटुंब के प्रवक्ता एवं विश्व-मानव के शुभचिन्तक के रूप में अपने उज्ज्वल व्यक्तित्व का प्रसार किया। वे संसार से विमुक्त वैराग्य-साधना के विरोधी थे तथा सांसारिक ज्वाला में तपकर उसके अनुभवों से अपने को सम्पन्न बनाकर मुक्ति की कामना करते थे। यही कर्ममय वैराग्य तिलक के 'गीता-रहस्य' में है और गांधी-दर्शन में भी।

भारतीय राजनीति एवं अध्यात्म के क्षेत्र में महर्षि अरविन्द का आगमन एक वरदान सिद्ध हुआ। महर्षि अरविन्द ने ब्रह्म और जगत् की एकता सिद्ध की तथा दोनों को सत्य घोषित किया। उन्होंने उपनिषदों, पुराणों, गीता आदि का व्यापक अध्ययन एवं अनुशीलन करके भारतीय दार्शनिक विचारों की युग-सापेक्ष एवं मानवानुकूल व्याख्या की। उनके दर्शन में भौतिक जगत् एवं आध्यात्मिक सत्ता दोनों को स्वीकृति मिली। समस्त प्रकृति मूल में ब्रह्म की शक्ति के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। यह सम्पूर्ण विश्व ब्रह्म का रूपात्मक एवं गत्यात्मक स्वरूप ही है। एक ही ब्रह्म जड़ में तिरोहित और चेतन में विकसित है। अरविन्द को पूर्ण आशा है कि मानवता अतिमन की साधना करके इस संसार को स्वर्ग बना सकेगी। पन्त की उत्तरकालीन रचनाओं पर अरविन्द-दर्शन का व्यापक प्रभाव पड़ा है। अतः उनकी उत्तरकालीन रचनाओं को समझने के लिए अरविन्द-दर्शन का विशेषज्ञान अपेक्षित है।[1] अरविन्द-दर्शन के सम्बन्ध में यथास्थान विचार किया जाएगा।

महात्मा गांधी बीसवीं शती के मूर्धन्य विचारक एवं चिन्तक थे। उन्होंने वेदान्तिक सत्य एवं अहिंसा-सिद्धान्त को राजनीति में लाकर उनका क्रियात्मक रूप दिखाया। सत्य, अहिंसा, तप, उपवास एवं ब्रह्मचर्य गांधीजी के आदर्श थे। उनके अनुसार सत्य, प्रेम एवं अहिंसा पर्यायवाची शब्द हैं। जहाँ सत्य है वहीं

---

१. विशेष जानकारी के लिए देखें, हिन्दी काव्य और अरविन्द दर्शन—ले० डॉ० प्रतापसिंह चौहान, युगवाणी प्रकाशन, कानपुर, प्रथम संस्करण, १९६२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ज्ञान है और आनन्द भी। जीव-दया और भ्रातृ-स्नेह अहिंसा के क्रियात्मक रूप हैं। सत्य, ज्ञान एवं आनन्द परस्पराश्रित हैं। गांधी जी की मान्यता है कि मनुष्य ईश्वर से विरक्त हो कर एक घड़ी भी नहीं जी सकता। भारतीय समाज में प्रचलित एवं समाज को विघटन की ओर ले जानेवाले वर्गों-जातियों के भेदोपभेदों को देखकर वे दुखी होते थे और उनका विरोध करते थे। उन्होंने एकता पर बल दिया तथा विश्व-मानवतावाद का प्रचार किया। हरिजनोद्धार को उन्होंने जीवन का व्रत स्वीकार किया। उन्होंने सभी प्रयत्नों में नैतिक बल को सर्वोपरि स्थान दिया।

कविवर पन्त को प्रभावित करनेवाले पाश्चात्य विचारकों में कार्ल मार्क्स का स्थान सर्वोपरि है। मार्क्स उन्नीसवीं शती के युगान्तरकारी विचारक एवं मनीषी थे। उन्होंने अपने द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद का सिद्धान्त प्रचारित कर चिन्तन-क्षेत्र में क्रांति पैदा की। उनके समाजवाद का आधार वर्ग-संघर्ष है। उन्होंने मन, चेतन सत्ता और आत्मा को भौतिक वस्तुओं से निरपेक्ष कोई पृथक् तत्व नहीं माना। वे ईश्वरीय सत्ता पर अविश्वास प्रकट करते थे। उनके अनुसार समाज में दो वर्ग हैं—पूँजीपति एवं सर्वहारा वर्ग। प्रथम वर्ग दूसरे के शोषण पर जी रहा है। मार्क्स ने दोनों के बीच संघर्ष का होना अवश्यंभावी बताया तथा यह दिखाया कि उस संघर्ष में सर्वहारा वर्ग की विजय निश्चित है। मार्क्स के अनुसार सामाजिक व्यवस्था का आधार आर्थिक व्यवस्था है, किन्तु वर्तमान सामाजिक विषमता पूँजीवाद का दुष्परिणाम है। मार्क्स रक्तक्रान्ति पर विश्वास रखते थे। मार्क्सवाद में व्यक्ति-चेतना का पृथक् महत्व नहीं, वह सामाजिक चेतना की इकाई मात्र है।

उपर्युक्त चिन्तकों-विचारकों का प्रभाव पन्त पर पड़ा। पन्तजी के मानवतावाद, विश्वबन्धुत्व की भावना, सत्य-अहिंसा सिद्धान्त, जाति-वर्ग विहीन मानवता के स्वप्न के पीछे रामतीर्थ, रवीन्द्र, गांधीजी के विचार काम कर रहे हैं। 'युगवाणी' एवं 'ग्राम्या' में मार्क्सवाद के सिद्धान्तों को वाणी मिली और इधर की रचनाओं जैसे स्वर्णकिरण, स्वर्णधूलि, उत्तरा आदि पर अरविन्द का प्रचुर प्रभाव है, इसे कुछ आलोचक अरविन्दवाद की साहित्यिक अभिव्यक्ति मानते हैं।

पन्त जी का व्यक्तित्व

पहले ही यह बताया जा चुका है कि पन्त जी के व्यक्तित्व के निर्माण में कूर्माचल की निसर्ग सिद्ध सुषमामयी प्रकृति-सुन्दरी, स्वयं के व्यापक अध्ययन, चिन्तन और मनन, पुनर्जागरण युग की सांस्कृतिक संस्थाओं तथा युगीन विचारधाराओं का सम्मिलित प्रभाव रहा है। वसुन्धरा ने अपने व्यापक स्नेह द्वारा पन्त जी को वह सब दिया, जो उनके भीतर मनुष्यत्व के पोषण के लिए आवश्यक था। कोमलता, भावुकता, संगीत और काव्य-प्रेम के साथ सहिष्णुता,

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

व्यापक स्नेह और मानव-कल्याण की जो भावना पन्त जी को मिली, उसके लिए वे प्रकृति के ऋणी हैं। माँ प्रकृति ने अपनी स्नेह-छाया के इन्द्रधनुषी आँचल में उन्हें सदैव इतना सम्मोहित और आत्मविभोर रखा कि बचपन का असह्य एकाकीपन उनमें नैराश्य, उदासीनता और कुण्ठा को जन्म नहीं दे पाया।[१] पन्त जी का अत्यन्त सूक्ष्म एवं निरीह व्यक्तित्व है। तन से सुन्दर और मन से कोमल एवं संवेदनशील पन्तजी सौम्य, शान्तिचित्त एवं उदार व्यक्ति हैं। वे आत्मनिष्ठ व्यक्ति हैं जो एकांत में रहना अधिक पसन्द करते हैं। भीड़-भाड़ एवं सभा-समारोहों से वे बचकर रहना चाहते हैं। उनके अपने शब्दों में वे जन-भीरु हैं।[२] किन्तु जीवन और जगत् की गति-विधियों के वे सूक्ष्म द्रष्टा हैं तथा प्रत्येक गति-विधि से वे अपने को परिचित रखते हैं। जीवन के प्रति अदम्य आशा, उत्साह एवं उन्मेष तथा मानवता के उज्ज्वल भविष्य के प्रति सदैव आशा एवं लोक-कल्याण के प्रति निश्चल विश्वास उनके व्यक्तित्व के अंग हैं।[३]

पन्त-काव्य का समग्र अध्ययन करने से पता चलता है कि उनके काव्य में रागी-विरागी का स्वर, भावुक एवं विचारक का संघर्ष, कवि, चिन्तक, दार्शनिक द्रष्टा की वाणी रूपायित है। कवि-रूप में पन्त जी का व्यक्तित्व अतिशय महत्वपूर्ण है। निविड़ अनुभूति, ऊँची कल्पना एवं सशक्त अभिव्यक्ति उनके कवि-व्यक्तित्व की विशेषताएँ हैं। भाव एवं अभिव्यक्ति का ऐसा मणि-कांचन संयोग अन्यत्र दुर्लभ है। अनुभूति में थोड़ी कमी दिखाई पड़ी तो कल्पना ने आकर उसे पूरा कर दिया। "कवि की कल्पना इतनी सचेतन एवं प्रखर है कि प्रत्येक अनुभूति उनके सम्मुख चित्ररूप में आती है और उसको ज्यों का त्यों अनुवादित करके वे वायु पर रंगीन रेखाएँ खींच देते हैं। काव्य, चित्र, संगीत तीनों की त्रिवेणी उनकी प्रत्येक पंक्ति में नहीं, प्रत्येक शब्द में तरंगित रहती है।"[४] प्रत्येक अनुभूति को वे बिम्ब रूप में प्रस्तुत करते हैं। इसलिए वे जो कहना चाहते हैं, वह चित्र रूप में पाठक के सामने आता है और इस चित्र-विधान में पन्त जी की सफलता बिम्बधर्मी विशेषणों के प्रयोग में है। पन्त की शैली सर्वत्र संयत एवं शालीन है। जैसे जीवन में वे मितभाषी हैं वैसे काव्य में भी वे शब्दों का मित व्यय जानते हैं। इसलिए शब्दों के चुनाव एवं प्रयोग में

---

१. श्री सुमित्रानन्दन पन्त : स्मृतिचित्र (पन्तजी : एक व्यक्तित्व–शांति जोशी) पृ. २२-२३

२. आधुनिक कवि, 'पर्यालोचन', पृ. ८

३. विशेष जानकारी के लिए 'पन्त : छायावादी व्यक्तित्व और कृतित्व', प्रकाशक—जय प्रकाशन, हैदराबाद, १९७०

४. डॉ० नगेन्द्र—सुमित्रानन्दन पन्त, पृ. ४६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वे इतने सतर्क एवं सावधान हैं कि भरती के शब्द पन्त-काव्य में कठिनाई से मिल जाते हैं।

काव्य प्रकृति, मानव और ईश्वर पर केन्द्रित रहता है। उनका समन्वय ही आनन्द की साधना है और पन्त जी इसी एकत्व में मानव का मंगल चाहते हैं। पन्त का कवि स्वभाव से सात्विक एवं शालीनता की प्रतिमूर्ति है। यही कारण है पन्त के प्रकृति-चित्रण में या नारी-सौन्दर्य वर्णन में ऐन्द्रियता का स्पर्श नहीं, दिव्यता एवं पवित्रता है। उनके लिए प्रकृति ईश्वर का व्यक्त रूप है और उनको वह आलंबन, उद्दीपन, परोक्ष की अभिव्यक्ति, प्रतिबिम्ब, प्रतीक या संकेत सभी रूपों में दिखाई देती है। नारी-चित्रण के प्रसग में पन्त ने नारी के अन्तर्बाह्य सौन्दर्य के विविध वर्णन किये हैं। सौन्दर्य के प्रति उनका अत्यधिक आकर्षण है, चाहे नारी-सौन्दर्य हो, चाहे प्रकृति-सौन्दर्य या अध्यात्म-सौन्दर्य। सौन्दर्य में उनकी तल्लीनता है और तदाकार परिणति ही उनका काव्य है। किन्तु पन्त सात्विक सौन्दर्य के उपासक हैं, उनकी दृष्टि नारी के कल्याणी स्वरूप पर पड़ती है और मन ही मन वे नारी के संसर्ग में 'पावन गंगा स्नान' की अनुभूति प्राप्त करते हैं। अर्थात् उनके सौन्दर्य में शिवत्व की अनुभूति है और सौन्दर्य शिवत्व से मण्डित होकर सत्यान्वेषी बनता है, आनन्ददायी बनता है। भारतीय संस्कृति पहले से ही सौन्दर्य को परब्रह्म की शक्ति मानकर चलती है और उसी सौन्दर्य की साधना करते हुए कविवर पन्त परब्रह्म की ओर बढ़ना चाहते हैं। "उनके भीतर सदा से एक सत्यान्वेषी सौन्दर्य की भावना जागने का यत्न करती रही है और सामने से एक-एक पट का निवारण करती चली गयी है। उसकी नींव सत्य पर थी, इसलिए उसने थकना नहीं जाना। वह कभी बाह्य ज्ञानवर्धन में लीन रही और कभी अन्तर्मुखी हो गयी है पर, वह सदा ही एक विकसित होनेवाले व्यक्तित्व के समान उत्तरोत्तर विस्तृततर और विशालतर समन्वयों में प्रस्फुटित होती गयी है।"[१]

इसी समन्वय- साधना से प्रेरित होकर कवि पन्त मानव और प्रकृति का आकर्षण दिखाकर उनके सम्बन्ध पर प्रकाश डालते हैं। आज मानव का अहित इसलिए है कि वह प्रकृति को भूल बैठा। किन्तु विराट भगवान की स्पष्ट अभिव्यक्ति, प्रकृति के साथ आत्मीयता, सुख-स्मृद्धि के लिए आवश्यक है। पन्त-काव्य में अभिव्यक्त वेदना और करुण भावना का कारण मानव और प्रकृति के वैषम्य को लेकर है। पन्त की प्रकृति सदा आनन्दमयी है। लघु लहरें गिरते-गिरते उठने की शिक्षा पाती हैं, किन्तु इस प्रयत्न में असफल होकर भी वे

१. श्री सुमित्रानन्दन पन्त : स्मृति चित्र (एक-प्रिय स्मृति — विद्यावती कोकिल), पृ. ७८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

निराश नहीं होतीं, वे बार-बार उद्यमशील हैं और प्रसन्न हैं।[1] किन्तु मानव थोड़ी-सी असफलता पर खिन्न एवं उदास हो उठता है। पन्त की समन्वय-भावना सुख-दुःख को अपरिहार्य तत्व मानकर दोनों का आश्लेष करते हुए जीवन-विकास का सन्देश देती है। मानव तथा प्रकृति में आत्मीयता की आवश्यकता बताने के साथ ही वे आनन्द-साधना के लिए अध्यात्म को भी आवश्यक मानते हैं। वे अध्यात्म को मनुष्य के सभी कार्यों का प्रेरणास्रोत सिद्ध करते हैं।

पन्त जी के कवि-व्यक्तित्व के साथ ही उनके दार्शनिक व्यक्तित्व का भी विशिष्ट स्थान है। कभी-कभी ऐसा लगता है कि उनका दार्शनिक व्यक्तित्व कवि-व्यक्तित्व से आगे बढ़ने का प्रयत्न करता है। आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने इस सत्य की ओर संकेत करते हुए लिखा है—"सन् १९४० के पश्चात् पन्तजी का व्यक्तित्व उत्कट वैचारिक संघर्षों के पश्चात् जिस भूमिका पर आकर स्थिर हुआ वह मूलतः दर्शन की भूमिका ही कही जाएगी। काव्य और दर्शन के इस संघर्ष में दर्शन की विजय हुई, यही सत्य स्वीकार करना ही पड़ेगा।"[2]

पन्तजी के व्यक्तित्व का सबसे प्रबल पक्ष है—उनकी आस्तिकता। वे आत्मवादी दार्शनिक हैं। सृष्टि के कर्ता-भर्ता एक अलौकिक सत्ता का प्रतिभास वे कण-कण में पाते हैं और अत्यन्त निश्चयात्मिका वाणी में घोषित करते हैं कि सरिता तक की आत्मा होती है।[3] यहाँ दार्शनिक दृष्टि से वे सर्वात्मवादी हैं क्योंकि एक सूक्ष्म चेतना का समस्त विश्व में दर्शन उनकी विशेषता है और इसी के कारण सम्पूर्ण प्रकृति में उन्होंने अपनी ही आत्मा का स्पंदन अनुभव किया है। पेड़-पौधे भी अपने पत्तों को हिला-हिलाकर गूढ़ संकेतों के द्वारा इसी रहस्यमय सत्ता के अस्तित्व का उद्घोष करते हैं।[4] कवि की आध्यात्मिक सत्ता अत्यन्त विराट् विश्वात्मा है, जो द्युतिमय एवं चिन्मय है, संपूर्ण सृष्टि उसी से उद्भूत एवं विकसित है।[5] कवि पन्त का पूर्ण विश्वास है कि मानवता दिव्यात्मा की कृपा पर ही अपने लक्ष्य को पाने में सफल होगी। इसी आत्मवादी आस्तिकता के कारण मार्क्सवाद से प्रभावित होते हुए भी वे भौतिकवादी नहीं बन सके तथा मानव को मात्र मृत्तिका कण के रूप में न अपनाकर सर्वशक्तिमान शक्ति की पूर्ण सृष्टि मानने लगे। इसी आस्तिकता ने उनका मार्क्सवाद से पिंड छुड़ाया तथा उन्हें अध्यात्मवादी दार्शनिक क्षेत्र की ओर ले जाने में सफलता पायी।

---

१. गुंजन, पृ. ३१
२. श्री सुमित्रानन्दन पन्त : स्मृति-चित्र (पुष्पहार-नन्ददुलारे वाजपेयी), पृ. ११७
३. सुमित्रानन्दन पन्त—गुंजन, पृ. १४
४. वही, गूंजन, पृ. ७४
५. वही, पल्लविनी, 'सौरमण्डल', पृ. २२१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पन्तजी के व्यक्तित्व के अन्य पक्ष भी हैं और संभवतः सबसे महत्वपूर्ण पक्ष हैं—सन्तुलन और समन्वय तथा समचितता। कवि निवृत्तिमार्गी दार्शनिक नहीं, प्रवृत्तिमार्गी' होता है। गीता का अनासक्त कर्मयोग और विवेकानन्द का कर्मसंन्यास उनके व्यक्तित्व की आधारशिला है। संसार तथा उसके तत्वों को क्षणिक या नाशवान मानकर एकांत तपस्या-साधना का उपदेश देनेवाले दार्शनिक वे नहीं हैं। वे एक साथ रागी—विरागी तथा भोक्ता-द्रष्टा बनने का उपदेश देते है और यही उनके व्यक्तित्व की विशेषता है। उनका आदर्श रहा है—

मत हो विरक्त जीवन से
अनुरक्त न हो जीवन पर।[१]

तभी जीवनानुभवों से वंचित होकर वे मुक्ति की कामना नहीं करते। पन्त का व्यक्तित्व भोक्ता-द्रष्टा के समन्वय में है। उनकी विचारधारा के अनुकूल वही आदर्श है। कवि का प्रश्न है कि क्या ऐसा पक्षी कहीं नहीं है जो एक साथ भोक्ता एवं द्रष्टा हो, अर्थात् जो विश्ववृक्ष का फल भोगता भी हो तथा निश्चल देखता भी हो।[३] जो केवल भोक्ता या केवल द्रष्टा हो, उसका व्यक्तित्व अपूर्ण एवं एकांगी है। कवि को आशा है और विश्वास भी कि मानव इन दोनों गुणों का संतुलन करके जीवन को परिपूर्ण बना सकता है। कहना न होगा कि पन्तजी के महान् व्यक्तित्व का आधार यही भोक्ता-द्रष्टा का सतुलन है। वे सौन्दर्य के भोक्ता हैं किन्तु द्रष्टा के नेत्रों से ही; वे प्रेम के उपासक हैं किन्तु सात्विक मन से, वे भूतवाद का आश्लेष करते हैं, किन्तु आन्तरिक अध्यात्मवाद को तिलांजलि दिये बिना, वे अध्यात्म की आकांक्षा करते हैं किन्तु जगत् में रहकर। यही सन्तुलन, समन्वय और समचित्तता पन्तजी के व्यक्तित्व का सबसे प्रोज्वल रूप है।

पन्तजी के दार्शनिक चिन्तन का अन्तिम लक्ष्य है सार्वभौम मानवता की सिद्धि। वे मानवता के उपासक हैं। मानवता के उज्ज्वल भविष्य के लिए चिन्तित हैं। उनके मानवतावादी दृष्टिकोण के विकासक्रम में वैदिक आदर्शवाद, उपनिषद्-कालीन अध्यात्मवाद, भारतीय सांस्कृतिक समन्वयवाद, मार्क्सवादी भौतिक दर्शन, कवीन्द्र रवीन्द्र का विश्वबन्धुत्व, महर्षि अरविन्द का भागवत् जीवन-दर्शन तथा राष्ट्रपिता गांधी का सत्य-अहिंसा सिद्धान्त सब का समन्वित प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है।[४] मानव को 'दिव्य स्फुलिंग

---

१. सुमित्रानन्दन पन्त—ज्योत्स्ना, पृ. ७७
२. ज्योत्स्ना, पृ. ७७
३. सुमित्रानन्दन पन्त—स्वर्णकिरण, 'द्वासुपर्णा', पृ. ६५
४. लेखक का लेख 'पन्त के मानवतावाद का स्वरूप'—हिन्दी प्रचार समाचार मद्रास, दिसम्बर १९६९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

चिरन्तन,[1] मानते हुए 'मानव-ईश्वर' की कोटि में पहुँचाने का उनका स्वप्न है। वे मानव-भू को स्वर्ग बनाकर तथा पीडित मानवता को दिव्य चेतना का संदेश देकर उस अमरासन पर बैठाने के लिए प्रयत्नशील हैं। उसके लिए वे चाहते हैं कि बाह्य रूप वैपरीत्य जिसमें मनुष्य बुरी तरह फँसे हुए हैं, अन्तः सौन्दर्य के द्वारा दूर किया जाये। कविवर पन्त एक नवसंस्कृति का शिलान्यास करना चाहते हैं जिसके आधार तत्व शुद्धभाव, कर्म का मन, आत्मिक चेतना की वाणी एवं सुसंस्कृत जीवन होंगे। पन्त का मानवतावाद सांस्कृतिक धरातल पर प्रतिष्ठित है और उनकी संस्कृति विश्वबन्धुत्व पर अवस्थित है। आर्य संस्कृति के 'वसुधैव कुटुंबकम्', पर आधारित कवीन्द्र रवीन्द्र का विश्व मानवतावाद ही पन्त के मानवतावाद का स्वरूप है। पन्त का विश्वास है कि उनकी कल्पना की मानवता आध्यात्मिक सत्ता की अनुकंपा से ही संभव होगी। इसलिए वे भगवान से प्रार्थना करते हैं कि मानव के हित विज्ञान-ज्ञान सुलभ हो जाएँ और मानव इच्छा के अनुरूप कार्य का संकल्प ले सकें, चेतन मन अचेतन मन पर विजय पा सके। राष्ट्र-राष्ट्र में, देश-देश में, मानव-मानव में प्रीति-गंगा प्रवाहित हो उठे।

सारांश में कहा जा सकता है कि पन्त जी ने कोई नया दर्शन नहीं दिया, किन्तु भारतीय दार्शनिक परम्परा के सारभूत तत्त्वों को ग्रहण कर उनको इस प्रकार प्रस्तुत किया कि वह मानव-सापेक्ष एवं युगसापेक्ष हो। प्रचलित दार्शनिक तत्वों की युगानुरूप व्याख्या तथा काव्यात्मक अभिव्यक्ति में उनका व्यक्तित्व चमक उठता है। उनकी आत्मा विश्वात्मा बन गयी और उनके माध्यम से विश्व बोलता है। विश्वात्मा की समरसता से ओतप्रोत उनकी आत्मा की वाणी देशकाल की सीमा में अवगुंठित न होकर 'सोऽहम्' की स्थिति प्राप्त कर लेती है और इसी में पन्तजी के व्यक्तित्व की चरम परिणति है।

कृतित्व

द्विवेदीकालीन हिन्दी कविता इतिवृत्तात्मकता, उपदेशात्मकता एवं वक्तृता के कारण नीरस होती जा रही थी। कविता का विकास एक बंधी-बंधाई प्रणाली के अनुसरण पर हो रहा था। वह बाह्यार्थ निरूपिणी थी। मुख्यतः सामाजिक समस्याएँ, धार्मिक अधोगति पर ग्लानि, देश-भक्ति एवं राष्ट्रीयता के स्वर इस काल की कविता में मुखरित हुए। कवियों की दृष्टि बाह्य जगत् पर खूब रम गयी, किन्तु अन्तर्जगत् उपेक्षित ही रहा। कलापक्ष की दृष्टि से ब्रज भाषा के स्थान पर खड़ी बोली काव्य-भाषा के रूप में प्रतिष्ठित हो गयी, किन्तु यह खड़ी बोली बहुत कुछ यांत्रिक भाषा-सी लगती थी। छन्द के लिए कविगण शब्दों का मनमाना प्रयोग करते थे। अनुप्रास एवं स्वरमैत्री

१. सुमित्रानन्दन पन्त—युगपथ (युगांत), पृ. ११

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

द्वारा भाषा को संगीतात्मक बनाने का प्रयास किया गया, फिर भी कविता अपनी कर्कशता एवं खटखटाहट से बच नहीं पायी । उसमें स्थूल-बाह्य चित्रण के स्थान पर सूक्ष्म आन्तरिक भावों को अभिव्यक्त करने की क्षमता नहीं आई। फलतः काव्य की स्थूल दृष्टि एवं अभिधात्मक प्रणाली की प्रतिक्रिया स्वाभाविक थी । रामनरेश त्रिपाठी, मुकुटधर पांडेय आदि के काव्य में स्वच्छन्द वृत्ति एवं स्थूल के स्थान पर सूक्ष्म का आग्रह प्रकट होने लगा । त्रिपाठी ने कोमल अमूर्त भावनाओं को मूर्त रूप में तथा मूर्त को अमूर्त अप्रस्तुतों में प्रकट करने की ओर कदम उठाया । मुकुटधर पांडेय ने भावात्मक एवं रहस्यानुभूति से युक्त मुक्तक प्रगीतों की ओर आस्था दर्शायी । आगे चलकर मैथिलीशरण गुप्तजी की रचनाओं में भी इस प्रकार की काव्य-पद्धति का दर्शन होने लगा । इस प्रकार द्विवेदी-युग के अंतिम दिनों में स्वानुभूतिमय भावगीतों की प्रचुरता दिखाई पड़ती है । आगे इसका विकास जयशंकर प्रसाद के द्वारा हुआ । प्रसाद जी के 'प्रेम पथिक', 'कानन-कुसुम' आदि संकलनों में स्वानुभूति, रहस्यात्मक प्रकृति-चित्रण, आध्यात्मिक सत्ता के प्रति जिज्ञासा एवं उत्सुकता तथा शैली की दृष्टि से लाक्षणिक प्रयोग एवं प्रतीकात्मक और सांकेतिक भाषा का आभास मिलता है । प्रसादजी अपनी प्रारंभिक रचनाओं के द्वारा छायावादी काव्यधारा की भूमिका बांध रहे थे । इसी समय श्री सुमित्रानंदन पन्त अपनी प्रारंभिक रचना 'वीणा' लेकर काव्य-जगत् में अवतीर्ण हुए । 'वीणा' में छायावादी काव्य-धारा की अनेक विशेषताएँ दृष्टिगोचर हुईं । इस प्रकार पन्तजी का हिन्दी काव्य-क्षेत्र में आगमन उस समय हुआ, जबकि छायावादी काव्यधारा अपनी शैशवावस्था में थी । उस छायावादी काव्य-शिशु को पाल-पोस कर स्वावलंबी बनाने का कार्य कविवर पन्तजी ने किया ।

पन्त का काव्य-विकास

कविवर पन्तजी 'वीणा' काल से लेकर अबतक काव्य-सृजन में अनवरत तल्लीन रहे हैं । कवि रूप में उनका अंतिम लक्ष्य मानव-मंगल है । मानव के शुभेच्छु पन्तजी साधना के मार्ग में कई विचारधाराओं से प्रभावित होते रहे, जिनका उल्लेख पहले किया जा चुका है । वे उन विचारधाराओं का काव्यात्मक प्रयोग करते गये । इस प्रयोग में पहले वे सौन्दर्य-द्रष्टा रहे, फिर उन्हें शिवत्व की अनुभूति हुई तो वे चिन्तन-मनन में लगे और आज वे सत्यान्वेषी हैं । इस प्रकार सौन्दर्य-दृष्टि, चिन्तन-मनन और अन्त में सत्यान्वेषण उनकी काव्यधारा के विकास के सोपान हैं । इस प्रकार पन्त-काव्य के विकास की तीन मंजिलें निर्धारित की जा सकती हैं– अ) छायावादी काव्यधारा (सन् १९१६ से १९३६ तक), आ) प्रगतिवादी काव्यधारा (सन् १९३६ से १९४४ तक) तथा

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

३) अध्यात्मवादी काव्यधारा (सन् १९४८ से आजतक)। इन तीनों कोटियों में पन्त के काव्य-विकास का अध्ययन करना सरल एवं सुगम होगा।[१]

(अ) छायावादी काव्यधारा

समूचे हिन्दी-काव्य के इतिहास में छायावाद भावपक्ष एवं कलापक्ष की दृष्टि से अपना विशिष्ट स्थान रखता है। स्वानुभूति, अतीन्द्रिय प्रेम और सौन्दर्य-भावना, प्रकृति एवं नारी के प्रति परिवर्तित दृष्टिकोण, रहस्यानुभूति तथा मानवतावादी विचार और कलात्मक क्षेत्र में लाक्षणिकता, प्रतीकात्मकता, नूतन अप्रस्तुत-योजना एवं चित्रात्मक शैली छायावादी काव्य की मुख्य प्रवृत्तियाँ हैं।

सुमित्रानन्दन पन्त जी की प्रारम्भिक रचनाएँ अर्थात् 'वीणा' से लेकर 'युगांत' तक की काव्य-कृतियाँ छायावादी वैभव से परिपूर्ण हैं। छायावादी स्वानुभूति या आत्माभिव्यंजना जैसे कवि के वैयक्तिक सुख-दुख, हर्ष-शोक, विरह-मिलन, आँसू-उच्छ्वास अधिकतर इन रचनाओं में दिखाई देते हैं। 'वीणा' विश्व-जननी के सम्मुख किशोरी बालिका के उद्गीत हैं। 'आँसू', 'उच्छ्वास' एवं 'ग्रन्थि' में प्रेम के विरह-मिलन के जो प्रसंग हैं, उनमें वैयक्तिकता की छाया है। 'ग्रन्थि' में असफल प्रेम के नैराश्य में वेदना की उत्ताल तरंगों में फँसे कवि की मर्मस्पर्शी अनुभूतियों का चित्रण है।

छायावादी कवि पन्त अतीन्द्रिय प्रेम एवं सौन्दर्य के उपासक हैं। उनकी प्रेम और सौन्दर्य की दृष्टि प्रकृति, नारी एवं आध्यात्मिक सत्ता की ओर केन्द्रित है। प्रकृति के प्रति उनका निरीक्षण इतना सूक्ष्म है कि उसके प्रत्येक स्पन्दन-कंपन से उनका चिर परिचय है। पन्त-काव्य में प्रकृति के नाना रूपों के चित्र अंकित हैं। स्वभाव से सौम्य एवं कोमल होने के कारण पन्त की दृष्टि अधिकतर प्रकृति के कोमल, मृदुल एवं सौन्दर्यात्मक रूपों के प्रत्यंकन में रमी रही। 'परिवर्तन' जैसी एकाध कविताओं को छोड़कर कहीं भी उसके गुरु-गम्भीर रूप का वर्णन नहीं मिलता। पन्त के लिए प्रकृति विराट् की स्पष्ट अभिव्यक्ति है, इसलिए प्रकृति की प्रत्येक वस्तु चेतन है, जो मनुष्य के समान नाचती-थिरकती, हँसती-खेलती, उछलती-कूदती किलकारती रहती है। प्रकृति का यह मानवीकरण पन्त जी की सबसे बड़ी विशेषता है। वैसे ही कविवर पन्त प्रकृति के कण-कण में विरात् का संकेत पाकर जिज्ञासा एवं कुतूहल वृत्ति से ओत-प्रोत हो जाते हैं।[२] यही कारण है कि वे प्राकृतिक रहस्यवादी कहलाते हैं। पन्त-काव्य में प्रकृति के नाना रूपों की जो प्रचुरता है, उसी को लक्ष्य करते हुए कहा गया है कि

---

१. कालक्रमानुसार पन्त की रचनाओं की तालिका परिशिष्ट में संलग्न है।
२. सुमित्रानन्दन पन्त —पल्लव, 'मौन निमन्त्रण' कविता, पृ. ९०–९२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

यदि छायावाद वस्तुतः प्रकृति काव्य था, तो सुमित्रानन्दन पन्त स्वभावतः युग-कवि रहे।[1]

नारी को हिन्दी-काव्य में पहली बार रीतिकालीन श्रृंगारिक कारा से मुक्त कर पन्त ने उसे देवी, माता, सहचरी और प्राण के आसन पर प्रतिष्ठित किया। उनके काव्य में नारी सात्विकता की प्रतिमूर्ति, रूप-सौन्दर्य के कानन की रानी, दिव्यता, पावनता का साकार रूप है। पन्त जी ने जहाँ प्रकृति के नाना अप्रस्तुतों के सहारे उसके बाह्य सौन्दर्य का उत्कर्ष दिखाया, वहाँ उसके आन्तरिक सौन्दर्य का भी मूल्यांकन किया है।[2] नारी के प्रति इस अतिशय तल्लीनता का ही यह परिणाम था कि प्रकृति पर नारी-सौन्दर्य का आरोप बहुधा किया गया। किन्तु पन्त जी का नारी-प्रेम एवं नारी-सौन्दर्य एक आत्मिक उल्लास है, मानसिक अनुभूति है, अमांसलता एवं अतीन्द्रियता उसकी विशेषता है।

पन्त को दार्शनिक अद्वैतवाद मान्य है। वे आत्मा को अजर, अमर एवं अनन्त मानते हैं। जन्म और मृत्यु देह-परिवर्तन हैं। जन्म-मृत्यु संसार-सागर के दो कगारे हैं जिनके बीच जीवन-नौका विहार करती रहती है।[3] संसार में सुख और दुख दोनों का महत्व है और दोनों को भोगकर चलने में जीवन की पूर्णता है। जीवन में दोनों की आँख-मिचौनी चलती रहती है। किन्तु विषमता यह है कि मानव केवल सुख भोगने को तैयार है, दुख की ज्वाला में तपने को तैयार नहीं। पन्त जी का विचार है, सांसारिक ज्वाला में तपकर कुन्दन से जीवन को शुद्ध पवित्र बनाना ही श्रेयस्कर है। सांसारिक दुखों की उपेक्षा करके जो मुक्ति-लाभ होता है, वह बन्धन है।[4] वैसे ही संसार की नश्वरता, क्षणिकता एवं परिवर्तन पर भी कवि का ध्यान गया है।

पन्त ने अपने अनुभूति-पक्ष को सक्षम एवं सफल कलात्मक परिवेष दिया है। जीर्ण-शीर्ण ब्रजभाषा के स्थान पर खड़ी बोली को प्रतिष्ठित करने तथा उसे भावाभिव्यंजना का सक्षम रूप देने में पन्त जी का बहुत बड़ा योग है। वे चित्र-भाषा एवं चित्रराग के महत्व को पहचानते हैं। पन्त जी का शब्द-चयन अनोखा है। वे शब्द-प्रयोग में अत्यन्त संयमी हैं। शब्दों की अन्तरात्मा तक उनकी पहुँच है। वे भली-भाँति जानते हैं कि किस शब्द का प्रयोग किस रूप में होना चाहिए। उनका एक-एक शब्द एक-एक चित्र खड़ा करता है। उन्होंने अंग्रेज़ी के अनुकरण पर नये-नये शब्दों का गठन करके शब्द-भण्डार की वृद्धि की है। बिम्ब-विधान के सभी सहायक तत्व लाक्षणिकता, ध्वन्यात्मकता, चित्रात्मकता

---

१. रूपाम्बरा (सं. अज्ञेय), पृ. १४
२. सुमित्रानन्दन पन्त—गुंजन, 'भावी पत्नी के प्रति', पृ. ३९–४४
३. सुमित्रानन्दन पन्त—गुंजन, 'नौका विहार', पृ. १०४
४. सुमित्रानन्दन पन्त—गुंजन, पृ. ११

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

एवं प्रतीकात्मकता उनकी भाषा-शैली की विशेषताएँ हैं, किन्तु शब्द-प्रयोग में सौन्दर्य-विधान सदैव उनके लक्ष्य में रहता है। इस कारण उन्होंने सौन्दर्य की रक्षा करने के लिए कभी-कभी शब्द को तोड़कर प्रयुक्त करने में भी संकोच नहीं किया है। इसी सौन्दर्य के मोह में पड़कर पुल्लिग शब्दों का स्त्रीलिंग में प्रयोग पन्त जी की छायावादी भाषा-शैली की एक विशेषता है। भाषा के प्रयोग में जिस सतर्कता एवं संयम का पालन हुआ है, वह वर्ण-परिज्ञान एवं ध्वनि-परिज्ञान में भी देखा जा सकता है।

पन्त जी अर्थालंकारों के प्रयोग में विशेष सफल हुए हैं। अर्थालंकारों में भी उपमा और रूपक उनके प्रिय अलंकार हैं। उपमानों के प्रस्तुतीकरण में पन्त जी ने कमाल किया है। नित्य नूतन उपमानों का चुनाव उनकी विशेषता है। संपूर्ण छायावादी कवियों में मानवीकरण के वे प्रतिनिधि कवि हैं। वैसे ही उत्प्रेक्षा, रूपकातिशयोक्ति, अन्योक्ति, विशेषण-विपर्यय, ध्वन्यार्थ व्यंजना, विरोधाभास आदि अलंकार उनके काव्य में प्रचुरता से मिलते हैं। सभी अलंकार भावों के उत्कर्ष के लिए प्रयुक्त हुए हैं।

पन्त जी मात्रिक छन्द के कवि हैं। उनमें भी वे स्वच्छन्द छन्द के पक्ष-पाती हैं। पन्त के अनुसार छन्द में भाव और भाषा का सामंजस्य होता है। उनके छन्द-विधान का लक्ष्य लय एवं गति है। उनको स्वर का संगीत लुभाता है। भावों के प्रसार या संकोच के लिए दीर्घ या लघु मात्राओं का प्रयोग किया गया है। शब्द-सौन्दर्य के समान छन्द-योजना में भी उनकी अद्भुत प्रतिभा देखी जा सकती है।

इस प्रकार छायावादी पन्त जी का काव्य सर्जनात्मक कल्पना, रागात्मक अनुभूति एवं संवेदनात्मक बिम्बों से परिपूर्ण है।

(आ) प्रगतिवादी काव्य-धारा

प्रगतिवाद मार्क्सवाद का साहित्यिक रूप है। मार्क्स के अनुसार वस्तु-सत्य ही एकमात्र सत्य है। वे अध्यात्मवादी सत्य को मिथ्या मानकर वस्तु-सत्य पर विश्वास करते थे तथा दो विरोधी तत्वों के संघर्ष से विकास संभव मानते थे। उनकी दृष्टि में समाज का इतिहास वर्ग-संघर्ष का इतिहास है। वे पूँजी-वाद के कट्टर विरोधी थे। जब मार्क्स के मुख्य सिद्धान्तों की कविता में अभिव्यक्ति होने लगी तो उस प्रकार के काव्य को प्रगतिवादी काव्य की संज्ञा दी गयी। पन्त जी ने मार्क्स का गम्भीर अध्ययन किया। उन्हें लगा कि छायावादी काव्य अपनी अतिशय कल्पना के कारण समाज-साक्षेप नहीं है। फलतः 'युगवाणी' और 'ग्राम्या' में वे प्रगतिवादी भावना को अपनाते से जान पड़ते हैं। यहाँ वे सामाजिक समस्याओं के समाधान में उलझे हुए दिखाई देते हैं। 'मार्क्स के प्रति' कविता में वे अपना समाजवादी दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं—

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

साक्षी है इतिहास, आज होने को पुनः युगांतर,
श्रमिकों का अब शासन होगा। उत्पादन यंत्रों पर।
वर्गहीन सामाजिकता देगी सबको सम साधन,
पूरित होंगे जन के भव जीवन के निखिल प्रयोजन।[1]

'भूत-दर्शन' कविता में साम्यवाद के साथ मधुर स्वर्ण युग के पदार्पण की आशा व्यक्त की गयी है। धनपति समाज की जोंक हैं, जो मानव के श्रम का शोषण कर पेट भरती हैं तथा वे अहमन्य, अर्थबल के व्यभिचारी कुत्सित लोग नारी के सतीत्व तक की रक्षा नहीं कर सकते। उनके लिए नारी भोग्या मात्र है—

शय्या की क्रीड़ा कन्दुक है जिनको नारी,
अहमन्य वे, मूढ़, अर्थबल के व्यभिचारी।
सुरांगना, संपदा, सुराओं से संसेवित,
नर पशु वे : भू–भार, मनुजता जिनसे लज्जित।[2]

यहाँ वे मानवता के प्रबल समर्थक हैं। 'दो लड़के,' 'मानव पशु,' 'नारी' जैसी कविताओं में समाज को शोषित, कुत्सित एवं पीड़ित मानवता के प्रति सहानुभूति तथा मानव को शोषित करनेवाली संस्कृति, कला एवं सामाजिक व्यवस्था के प्रति रोष प्रकट हुआ है। कवि की मान्यता है कि धर्म, नीति, सदाचार का मूल्यांकन जनहित को दृष्टि में रखकर किया जाना चाहिए, क्योंकि देश, काल और स्थिति के ऊपर मानवता का स्थान है। किन्तु आज होता यह है कि मध्यवर्ग गत संस्कृति का दास है और वह प्रभु-सेवक एवं जन-वंचक है। कृषक युग-युग का भार वाहक, रूढ़ियों का दास तथा शोषित है। अतः मार्क्स के नारे का अनुसरण करते हुए कवि भी कृषकों का आह्वान करता है।

जागो, श्रमिको, बनो सचेतन,
भू के अधिकारी हैं श्रम-जन।[3]

'युगवाणी' में सिद्धान्त प्रतिपादन हुआ तो 'ग्राम्या' में उसका प्रयोग। कवि के अपने शब्दों में इसमें ग्रामीणों के प्रति बौद्धिक सहानुभूति ही मिल सकती है।[4] इसमें एक ओर भारतीय ग्रामों की समस्याओं और परिस्थितियों पर विचार किया गया है, तो दूसरी ओर भारतीय जनता का यथार्थवादी चित्रण है। भारतीय ग्रामों की स्थिति असन्तोषजनक है। भारतीय ग्राम करुण कथा से परिपूर्ण, सभ्यता से वंचित, रूढ़ि एवं अंधविश्वास के नरक मात्र हैं। ग्रामीण जनता के चित्रण में नारी को शोषिता एवं भोग्या की स्थिति में देखा गया है।

---

१. युगवाणी, पृ. ४४
२. वही, पृ. ४९
३. युगवाणी, पृ. ५३
४. ग्राम्या, 'निवेदन'

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ग्रामीण लोग कठपुतली से बढ़कर नहीं हैं। गाँव के लड़के मटमैले, जीर्ण वसनों में आवृत्त भयातुर प्राणी हैं तो बूढ़े हड्डियों के ढाँचे मात्र हैं।

ग्राम्या में कुछ नारी-चित्र स्थूल एवं मांसल हैं। 'ग्राम-युवती', 'धोबियों का नृत्य' आदि कविताएँ उदाहरण स्वरूप रखी जा सकती हैं। प्रगति-युग में भी पंत की छायावादी प्रकृति-सौन्दर्य की भावना छूट नहीं गयी। 'ग्राम श्री', 'संध्या के बाद', जैसी कविताओं में छायावादी संस्कार सुरक्षित हैं।

पंतजी ने प्रगतिवादी काव्य का सृजन किया अवश्य, किन्तु उनके प्रगतिवाद की कुछ निश्चित सीमाएँ हैं। उन्होंने ग्रामों की दीनहीन दशा का वर्णन, सामन्ती संस्कृति की निन्दा आदि तक ही अपने प्रगतिवाद की सीमा निर्धारित की। वे न मार्क्स की रक्त-क्रान्ति को प्रश्रय दे सके, न उनके भूतवाद को। ये दोनों बातें उनके संस्कारी मन के प्रतिकूल थीं। दूसरी बात यह थी कि जिस समय वे मार्क्सवाद को अपना रहे थे, तब तक गाँधीजी के व्यक्तित्व ने उनपर अपना व्यापक प्रभाव डाल दिया था। अतः भूतवाद की एकांगिता पर उन्हें विचार करना पड़ा—

भूतवाद उस धरा स्वर्ग के लिए मात्र सोपान,
जहाँ आत्मदर्शन अनादि से समासीन अम्लान।[१]

इसी आन्तरिक साम्य का उद्घोष 'चींटी' कविता में सुनाई देता है। कवि केवल निद्रा, भय, मैथुन, आहार का पक्षपाती नहीं, ये पशुवृत्तियाँ हैं और इस दृष्टि से मनुष्य और पशु में भेद कुछ नहीं है। मानव की महत्ता इन बाह्य वस्तुओं पर आधारित न होकर आन्तरिक साम्य—ईश्वर से एकाकार परिणति पर निर्भर है। फिर मनुष्यत्व की विशेषता है—आत्मभाव—सब में एक ही आत्मा के विकास का दर्शन करना। 'गंगा का प्रभात'[२] कविता दार्शनिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसमें एक ओर प्रभातकालीन गंगा का वर्णन है तो दूसरी ओर सृष्टि-विकास पर भी प्रकाश डाला गया है। सूर्य उस स्वर्ण पुरुष का प्रतीक है जो अपनी आलोक-किरण को बरसाकर संसार के तम का निवारण करता है तथा सारी सृष्टि को निरुद्देश्य जीवन-विकास में बहा ले जा रहा है। इस प्रकार यहाँ यह स्पष्ट किया गया है कि जीवनधारा निरुद्देश्य तत्व है और सोद्देश्य तत्व है सृष्टितत्व भगवान। कहने का तात्पर्य इतना ही है कि प्रगतिवादी काव्यधारा में भी कवि की आत्मा-परमात्मा संबंधी मान्यता पूर्ववत् बलवती है और वह भूतदर्शन से पराभूत नहीं हो सकी।

प्रगतिवाद जनभाषा का समर्थन करता है। वह अनलंकृत भाषा चाहता है। कवि ने इस ओर संकेत किया है—

---

१. सुमित्रानंदन पन्त—युगवाणी, 'बापू', पृ. १९
२. वही, युगवाणी, पृ. ३९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तुम वहन कर सको जन मन में मेरे विचार,
वाणी मेरी, चाहिए तुम्हें क्या अलंकार ।[1]

अतः कवि ने ग्रामीण जनता की भाषा के निकट अपनी भाषा को पहुँचाने का प्रयास किया । सरलता, स्पष्टता एवं अभिधेयता भाषा की विशेषताएँ हैं । छायावादी लाक्षणिकता एवं प्रतीकात्मकता अब दूर की बात रह गयी । पन्त का कलात्मक सौन्दर्य नहीं रहा । कवि के शब्दों में 'युग के गद्य' को वाणी दी गयी है । किन्तु जहाँ तक चित्रात्मक सौन्दर्य या बिम्ब-विधान की बात है, 'ग्राम्या' के अधिकांश चित्र अपनी स्थूलता एवं मूर्तता के कारण सजीव बिम्ब प्रस्तुत करते हैं । छायावादकालीन बिम्ब अधिकतर अपने अमूर्त अप्रस्तुतों के कारण काल्पनिक चित्र प्रस्तुत करते हैं तो इस काल के चित्र चाक्षुष अधिक हैं, बिम्ब-विधान की दृष्टि से पन्तजी की प्रगतिवादी काव्य-धारा का भी महत्वपूर्ण स्थान है ।

अध्यात्मवादी काव्य-धारा

'ग्राम्या' के उपरान्त पन्त की काव्य-चेतना अध्यात्मवादी हो गयी । 'स्वर्ण-किरण', 'स्वर्णधूलि', 'उत्तरा' आदि में मांगलिक स्वर सुनाई देता है । पन्त का यह अध्यात्मवाद एक समन्वयात्मक दृष्टिकोण है, जो वस्तु-सत्य एवं आत्म-सत्य के समन्वय पर आत्मिक चेतना के दिव्य विकास को प्रश्रय देता है । पन्त जी ने यह समझ लिया कि आज की मानवता की समस्या आर्थिक न होकर सांस्कृतिक है । अतः पन्त जी मानवता के बाह्य एवं आन्तरिक धरातल पर सक्रिय क्रान्ति लाना अपेक्षित समझते हैं । बाह्य क्रान्ति जाति, वर्ग एवं श्रेणी से होती है तो आन्तरिक क्रान्ति चेतन मन से ।

आज मानव-जीवन दुख-दैन्य अभाव-ग्रस्त एवं पीड़ित है । आज जाति, वर्ण, सम्प्रदाय, धर्म आदि के नाम पर बर्बर रक्तपात हो रहा है । राष्ट्र-राष्ट्र में घृणात्मक युद्ध हो रहे हैं, जिनका अन्त होना चाहिए । घृणा घृणा से शान्त नहीं होती, बल्कि प्रज्वलित होती है । अतः उसके शमन के लिए पारस्परिक सहानुभूति चाहिए । आज की सामाजिक व्यवस्था सन्तोषजनक नहीं है, यहाँ नर-नारी में केवल देह-जनित वासना ही अधिक है । कवि चाहता है कि नर-नारी आत्मिक धरातल पर उठकर सामाजिक समता को प्राप्त करें और जीवन को प्रशस्त करें । कवि ने 'पतिता' एवं 'परकीया' कविताओं में आत्मिक प्रेम की प्रतिष्ठा की है । कवि की सामाजिक चेतना बोल उठती है कि मनुष्य मन से ही कलंकित होता है, देह से नहीं । रज की देह सदा कलुषित है । अतः मनुष्य को शरीर की मलिनता पर ध्यान न देकर, यह देखना चाहिए कि

१. ग्राम्या, 'वाणी', पृ. १०३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उसका मन पावन है या कलंकित ।[१] 'परकीया' का युवक रोटी के लिए अपनी देह को बेचने वाली युवती से कहता है कि स्वकीया या परकीया, सब समाज की परिभाषाएँ हैं। ये सब वाह्याडंबर हैं, किन्तु नारी वह है जो हृदय से पवित्र है—

पंकिल जीवन में पंकज-सी
शोभित आप देह से ऊपर,
वही सत्य जो आप हृदय से,
शेष शून्य जग का आडंबर ।[२]

पन्त का सामाजिक जीवन का सिद्धान्त भी अत्यन्त व्यावहारिक है। 'मुक्तिबन्धन' कविता में यह दिखाया गया है कि जीवन में अत्यधिक स्वतन्त्रता एवं अत्यधिक बन्धन दोनों हानिकारक हैं। अगर पक्षी को बन्धन में बाँध रखा जाए तो उसकी स्वाभाविक उड़ान रुक जाएगी, वैसे ही उसे स्वच्छन्द उड़ने दिया जाए तो उसे चारे के लिए धरती पर आना ही पड़ेगा। जैसे विहग के लिए उड़ान एवं चारा दोनों अपेक्षित हैं वैसे ही मनुष्य को मुक्ति एवं बन्धन सापेक्ष हैं। बन्धनहीन मुक्ति एवं मुक्तिहीन बन्धन दोनों से मनुष्य विकलांग हो जाएगा।[३]

मनुष्य-जीवन में संस्कृति और धर्म का भी समन्वय होना चाहिए, जो सहिष्णुता, सद्भावना एवं शान्ति से ही संभव है। कवि भारतीय एवं पाश्चात्य दोनों संस्कृतियों को अपने-अपने स्थान पर एकपक्षीय मानता है। पश्चिमी जगत् ने भौतिकवाद का समर्थन एवं अध्यात्म—पक्ष का निरसन एवं पूर्वी जगत् ने अध्यातम पक्ष का प्रबल समर्थन एवं वस्तु-सत्य का सर्वथा त्याग करके अपने-अपने एकपक्षीय अतिवादी अपूर्ण सिद्धान्तों का पल्ला पकड़ा है। पूर्णता दोनों विरोधी तत्वों के संतुलन पर निर्भर है।

पन्तजी जिस आन्तरिक क्रान्ति की बात कहते हैं, उसका आधार अरविन्द दर्शन है। पन्तजी अरविन्द की तरह स्वीकार करते हैं कि जड़-चेतन में एक ही चैतन्य का निवास है। संसार के माया-जाल से मुक्त अरूप भगवान सीमित रूप धारण कर संसार में जन्म लेता है। किन्तु यह सीमित रूप बन्धन मात्र नहीं, अपितु चेतना की भवमुक्ति के लिए वाहन भी है। पन्तजी की कल्पना है कि मानवता मन को ऊर्ध्वगामी बनाकर अपने सृष्टिकर्ता के स्वर्गीय गुणों से विभूषित हो अतिचेतन मन बन सकती है, जिससे उसमें दिव्य चेतना का निवास हो सकता है। इसके लिए अतिमन की साधना अपेक्षित है। कवि ने

१. सुमित्रानन्दन पन्त—स्वर्णधूलि, पृ. ११८
२. वही, स्वर्णधूलि, पृ. १२०
३. वही, स्वर्णधूलि, 'मुक्ति-बंधन', पृ. ४२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

यह अनुभव किया है कि संसार का रुख भौतिकवाद की ओर है, फलतः आज घोर अशान्ति है। इससे संसार की रक्षा तभी होगी जबकि वह अन्तः केन्द्रित हो जाए—

नव मानवता को निस्संशय
होना रे अब अंतः केन्द्रित,
जन भू स्वर्ग नहीं युग संभव
बाह्य साधनों पर अवलंबित।[1]

यह तभी होगा जबकि मानव प्रीतियुक्त, शीलयुक्त, एवं सुसंस्कृत रुचि का हो। इन गुणों से युक्त मानव ही कवि की कल्पना का अतिमानव है और ऐसे अति-मानवों से परिपूर्ण धरती ही स्वर्ग है।

प्रीतियुक्त जन, शीलयुक्त मन
उपचेतन प्रांगण रुचि संस्कृत,
मनुज धरा को छोड़ कहीं भी
स्वर्ग नहीं संभव, यह निश्चित।[2]

कवि की धारणा है कि संसार में विकास-प्रक्रिया का सूत्रपात हो चुका है और मनुष्य-चेतना दिव्य-चेतना की कृपा से प्रेरित हो आरोहण के मार्ग पर अग्रसर हो रही है। आज संसार में व्याप्त अशान्ति, पौ फटने के पहले के तम के समान है। जब मानव-चेतना ऊर्ध्वगामी बनने के लिए प्रयत्नशील होती है तब दिव्य चेतना उसके इस कार्य में सहायता पहुँचाने के लिए अवरोहण की गति अपनाती है अर्थात् ऊपर से नीचे को आती है। इस प्रकार अतिमन की साधना की द्विधा गति है। 'स्वर्णकिरण' की प्रथम कविता 'अभिवादन' दिव्य चेतना के अवरोहण का चित्र प्रस्तुत करती है। इस द्विधामूलक गति एवं उससे संसार में होनेवाले परिवर्तनों का वर्णन कवि ने किया है —

स्तर पर स्तर कर पार चेतना के, योगेश्वर,
स्वर्णारुण—से नव्योदित तुम चिदाकाश पर।
मानव से ईश्वर, ईश्वर से मानव बनकर,
आये लौट धरा पर, ले नव जीवन का वर।[3]

इस साधना की चरम परिणति में जीव चारों ओर अनिर्वचनीय आनन्द का विकास अनुभव करता है। वह इन्द्रियों के लिए अगोचर स्तर पर पहुँचकर लौकिक अनुभूतियों से परे ऐसे लोक में वास करता है, जहाँ से देखने पर अवाक्

---

१. सुमित्रानंदन पंत—वाणी, 'आत्मिका', पृ. १३२
२. वही, पृ. १३९-१४०
३. सुमित्रानंदन पंत – स्वर्ण किरण, पृ. ९०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ऊँचाइयों, असीम प्रसारों तथा अतल गहराइयों में उसे एकमात्र अगम शान्ति ही दिखाई देती है—

इन रजत नील ऊँचाइयों पर
सब मूल्य, सब विचार
खो गये ।
यहाँ रूप रस गंध स्पर्श से परे
अवाक् ऊँचाइयों
असीम प्रसारों
अतल गहराइयों में
केवल अगम शान्ति है ।[1]

पंत जी के उत्तरकालीन काव्यों में जो अध्यात्मवाद है, वह वास्तव में एक संतुलित एवं समन्वयात्मक दृष्टि है, जो महर्षि अरविन्द की अतिमन की साधना से प्रभावित है ।

अध्यात्मवादी पंत की काव्य-भाषा सांकेतिक एवं प्रतीकात्मक है । रहस्यात्मक अनुभूतियों और स्थितियों को अभिव्यक्त करने का यही साधन है । कवि के स्वर्णकिरण, स्वर्णप्रात, स्वर्ण निर्झर, मेघ, पावक, तड़ित, स्वप्न शिखर, आभा, चन्द्र-ज्वाल सब प्रतीक हैं और इन प्रतीकों का अर्थ समझे बिना कविता समझी नहीं जा सकती । इतना तो स्वीकार करना ही पड़ेगा कि पंत के ये प्रतीक अपनी दार्शनिक अर्थवत्ता के कारण दुरूह हैं । भाषा अत्यन्त सूक्ष्म है और आध्यात्मिक सिद्धान्तों को व्यंजित करने में सक्षम है । आध्यात्मिक अनुभूतियों को भी बिम्ब रूप में प्रस्तुत करने की उसकी क्षमता स्तुत्य है । जहाँ दार्शनिक तत्व की उद्भावना सीधी-सादी भाषा में करना कठिन लगा, वहाँ कवि ने मूल संस्कृत मंत्रों और स्तोत्रों को ज्यों का त्यों रख दिया है । इस प्रकार करने में एक ओर कवि की आर्ष वचनों के प्रति श्रद्धा प्रकट होती है तो दूसरी ओर उनकी सहजता एवं स्वाभाविकता की रक्षा भी हुई है ।

१. सुमित्रानंदन पंत—कला और बूढ़ा चाँद, पृ. १३१–१३२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पन्त-काव्य में ऐन्द्रिय बिम्ब

बिम्ब की ऐन्द्रिय संवेद्यता एक महनीय गुण है और यही गुण पाठक की इन्द्रियों को संतृप्त करता है। इसलिए श्रेष्ठ कवि अपने ऐन्द्रिय बोध का उचित मात्रा में प्रयोग करता है और बिम्ब को चित्रमय बनाता है। जिस कवि का ऐन्द्रिय-बोध जितना अधिक प्रगाढ़ होगा, वह उतना ही सघन ऐन्द्रिय बिम्ब प्रस्तुत करेगा। ऐन्द्रिय बोध के आधार पर बिम्ब के दो प्रकार हो सकते हैं—स्थूल संवेदनात्मक और सूक्ष्म संवेदनात्मक। सूक्ष्म संवेदनात्मक बिम्ब मन से सम्बन्धित होने से भाव-बिम्ब की कोटि में आते हैं। इसलिए स्थूल संवेदनात्मक बिम्ब ऐन्द्रिय बिम्ब के अन्तर्गत लिये जा सकते हैं और इनमें वे सारे बिम्ब समाविष्ट किये जा सकते हैं, जिनकी संवेदना का आधार पंचेन्द्रिय हैं। यह ऐन्द्रिय चित्रण जहाँ वस्तु का भावन करता है, वहाँ कलात्मक अंकन भी प्रस्तुत करता है। यही कारण है कि डॉ० शंभुनाथसिंह ने कलात्मक चित्रण में छः तत्व आवश्यक मानते हुए उनमें इन्द्रियों के विषय का औचित्यपूर्ण सामंजस्य अर्थात् अनुपात के अनुसार ऐन्द्रिक विषयों का चित्रण आवश्यक माना है।[1] "कवि जितने ही सूक्ष्म और जटिल भावों को संतुलित कर सकेगा, चित्र उतना ही काव्योपम और श्रेष्ठ होगा।"[2] अतः काव्य में ऐन्द्रिय तत्वों का उचित समावेश अपेक्षित है।

ऐन्द्रियता प्रत्येक काल की कविता में पाई जाती है, किन्तु छायावाद का वह सर्वस्व है। द्विवेदीकाल में भी ऐन्द्रिय बिम्बों की रचना हुई, किन्तु उस समय के कवियों का ऐन्द्रिय बोध सीमित था। उस युग के काव्य में प्रकृत भाव की अधिकता थी और उसमें सीधे-सादे उद्‌गारों का कथन मात्र था। उसमें वैसा कोई तत्व नहीं रहा, जिससे पाठक को अपनी ओर से भी कुछ करना पड़ता हो। या यों कह सकते हैं कि "छायावाद से पूर्व की कविता में प्रायः स्थूल रंग-रेखाओं से निर्मित यथार्थानुरूप वस्तु-चित्र देखने को मिलते हैं, शब्द-चित्र और भाव-चित्र नहीं।"[3] अतः द्विवेदी युगीन काव्य में ऐन्द्रिय बिम्बों की सृष्टि के लिए खुला वातावरण नहीं मिला था। द्विवेदी युगीन काव्य की उस

---

१. द्रष्टव्य डॉ० शंभुनाथसिंह—छायावाद-युग, पृ. २७८
२. डॉ० बच्चनसिंह—बिहारी का नया मूल्यांकन, पृ. ७५
३. डॉ० बलवीरसिंह 'रत्न'—हिन्दी की छायावादी कविता का कला-विधान, पृ. १९२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कमी की पूर्ति छायावाद-युग में हुई। छायावाद-युग में कविता की उत्स भूमि वह मानसिक गठन रही "जिसमें कल्पना की अविरल प्रवाह से घन सश्लिष्ट निविड़ आवेग की प्रधानता होती है।"[1] छायावादी कवि अन्तर्मुखी अधिक है और वह कल्पना की अवस्था में "वर्तमान जगत् की अननुकूल एवं विसदृश्य परिस्थितियों से ऊबकर एक अनुकूल और मनोरम जगत् की सृष्टि करता है।"[2] अतः स्थूल वस्तुओं की अपेक्षा छायावादी कवियों का ध्यान अमूर्त मानसिक भावनाओं के चित्रण की ओर गया और सूक्ष्म एवं अमूर्त भावनाओं को चित्रात्मक रूप में प्रस्तुत करने के लिए उन्हें ऐन्द्रियता से संवलित करने की आवश्यकता थी। यही कारण है कि छायावादी कवियों ने प्रारम्भ काल में अपने बिम्बों को अधिक ऐन्द्रिय बनाने का प्रयत्न किया और अनेक ऐन्द्रिय बिम्ब छायावादी काव्य की अमूल्य देन हैं।

छायावादी कवियों में पन्त की ऐन्द्रिय संवेदना अपेक्षाकृत अधिक रही है। पन्तजी के बिम्बों में भावावेग की अपेक्षा ऐन्द्रियता एवं चित्रात्मकता अधिक रही। इसके कई कारण हो सकते हैं। हमको यह विस्मृत नहीं करना चाहिए कि छायावाद के पोषक एवं पुरोधा कवि के रूप में उनका स्थान सबसे अधिक रहा और आलोचकों के हाथों छायावाद के प्रारंभ काल में उनकी जितनी निन्दा हुई, उतनी और किसी कवि की नहीं हुई। अतः अपनी भावनाओं एवं कल्पनाओं को सर्व सवेद्य बनाने की उन्हें अत्यन्त आवश्यकता थी। 'पल्लव' की भूमिका तथा गुंजन की 'मेरा कैसा गान' जैसी कविता उनके युग-बोध एवं कर्तव्य-भावना की परिचायक हैं। दूसरे पन्तजी का बाल्यकाल से प्रकृति के प्रति जो साहचर्य रहा, उसने उन्हें कल्पना-जीवी बनाया। फलतः प्रकृति के प्रत्येक कंपन को स्वप्न-चित्रों के रूप में अंकित करने की उनकी अपार साधना थी। वह युग ही कुछ ऐसा था कि—'भाषा की अर्थ और नाद-व्यंजना की सहायता से कवि दृश्य रूपों की सृष्टि करता है। अब केवल कुछ अलंकारों द्वारा ही किसी वस्तु का वर्णन करना कला नहीं है, वरन् काव्य-जगत् की वस्तुओं को स्वप्न-चित्रों के समान पाठकों के सामने उपस्थित करना ही कला की सफलता है।'[3] और इस कला में पन्तजी अतीव समर्थ हैं, क्योंकि उन्होंने अपने भावों को कल्पना एवं ऐन्द्रियता के संस्पर्श से इतना मूर्त रूप प्रदान किया कि डा. नगेन्द्रजी के शब्दों में 'कल्पना का एक स्पर्श, रूप, रस, गंध आदि का एक टच एक साथ किन भावों को जाग्रत कर देता है, वह पन्तजी पूर्ण रीति से जानते हैं। उनकी सवेदना इतनी तीव्र है कि जहाँ कोई भावना उठी नहीं कि तुरन्त ही उन्होंने

---

१. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी—साहित्य-सहचर, पृ. ७१
२. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी—साहित्य-सहचर, पृ. ५८
३. डा० श्रीकृष्णलाल — आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास, पृ. ४०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अपने कलामय पाश में बाँध लिया।"[1] अतः पन्त शब्द-शिल्पी हैं और उनका शब्द-शिल्प अत्यन्त चित्रात्मक है। पन्त-काव्य में कला-बोध का उत्कर्ष है। पन्तजी के इसी कला-बोध की प्रशंसा में डा. विश्वंभरनाथ उपाध्यायजी का कथन है कि "नये कोमल भावों के लिए सवाक् एवं सचित्र वाक्यों के आविष्कार में पन्त सर्वश्रेष्ठ कवि हैं, उन्हें 'शब्द-शिल्पी' ठीक ही कहा गया है।"[2] आगे पन्त-काव्य में प्राप्त ऐन्द्रिय बिम्बों के विविध प्रकारों का विवेचन किया जाएगा।

चाक्षुष बिम्ब

चाक्षुष बिम्ब चक्षुरिन्द्रिय का विषय है और इस दृष्टि से यह सर्वाधिक मूर्त एवं मांसल है। छायावादी ऐन्द्रिय बिम्बों में चाक्षुष बिम्ब अधिक मात्रा में मिलते हैं। इस प्रकार के बिम्बों में चित्रात्मक गुण अधिक मिलता है। इसमें किसी वस्तु के रूप, आकार, रंग, गति, परिवर्तन तथा कायिक, सात्विक चेष्टाएँ आदि अंकित किये जाते हैं। रूप तत्व पर आधारित इन बिम्बों का काव्य में महत्वपूर्ण स्थान है। रूपगत विशेषता चित्रकला का मूल आधार है। चित्रात्मक काव्य में मूर्ति-विधान या रूप-विधान के द्वारा चाक्षुष बिम्बों का निर्माण किया जाता है और ये बिम्ब अपनी स्पष्टता के कारण अत्यन्त प्रेषणीय होते हैं। चक्षु से भावित सौन्दर्य को मूर्त रूप में प्रस्तुत करने वाले चाक्षुष बिम्बों की मात्रा कवि के व्यक्तित्व पर आधारित है। कोई प्रकृति के रूप-चित्रण में अतीव समर्थ होते हैं तो कोई नारी के। पन्त की दृष्टि नारी के कोमल सौन्दर्य एवं प्रकृति के रूप-सौन्दर्य पर अधिक टिकी रही और एक से एक कमनीय चित्र वे अंकित कर सके। स्वयं पन्त का कथन है कि "प्रकृति-चित्रणों में प्रायः मैंने अपनी भावनाओं का सौन्दर्य मिलाकर उन्हें ऐन्द्रिक चित्रण बनाया है।"[3]

पन्तजी के इन चाक्षुष बिम्बों में उनकी अपार एवं गहन सूक्ष्म दृष्टि तथा उससे प्राप्त संवेदना को सजीव रूप में अंकित करने की क्षमता का दर्शन होता है। सुविधा की दृष्टि से इन चाक्षुष बिम्बों की दो कोटियाँ मानी जा सकती हैं—स्थिर बिम्ब और गत्यात्मक बिम्ब।

(अ) स्थिर बिम्ब

स्थिर बिम्ब वस्तु के रूप, आकार एवं रंग को दिखाकर हमारी राग-चेतना को उद्बुद्ध कर हमारे मन में वस्तु को भावित करता है। उसके अन्तर्गत

१. डॉ० नगेन्द्र—सुमित्रानन्दन पन्त, पृ. २१

२. डॉ० विश्वंभरनाथ उपाध्याय—आधुनिक हिन्दी कविता : सिद्धान्त और समीक्षा, पृ. १९७

३. सुमित्रानन्दन पन्त—आधुनिक कवि, 'पर्यालोचन', पृ. ८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वस्तु की रूपाकृति एवं वातावरण का मूर्त रूप आता है। स्थिर बिम्बों को खड़ा करने में कवि संज्ञा पद, विशेषण, अप्रस्तुत-योजना, विशेषण-विपर्यय आदि नाना प्रकार के उपकरणों का सहारा लेता है। पन्तजी ने इन सभी उपकरणों का आश्रय लिया, किन्तु वे अपने बिम्बधर्मी विशेषणों के लिए पूरे हिन्दी साहित्य में प्रसिद्ध हैं। वे शब्दों के अंतरंग में पैठकर देखते हैं और शब्दों का प्रयोग तोलकर करते हैं कि उनके स्थान पर पर्यायवाची शब्दों को रखकर काम नहीं चलाया जा सकता। पन्त के शब्द-प्रयोग की इस विशेषता की ओर संकेत करते हुए पं. रामदहिन मिश्र जी लिखते हैं—"शब्दों के अंतरंग में पैठकर उनके कलरव सुनने वाले शब्द-शिल्पी पन्त को भाषा का सूत्रधार कहना अतिशयोक्ति में नहीं गिना जा सकता।"[1] वैसे ही पन्तजी ने अपनी वर्ण्य वस्तु का बिम्ब खड़ा करने के लिए कहीं अप्रस्तुत का सहारा लिया है, तो कहीं विशेषण-विपर्यय का, कहीं मानवीकरण शैली का प्रयोग किया है तो कहीं रंगों का। आगे हम पन्त-काव्य में आये हुए कुछ स्थिर बिम्बों की परीक्षा करेंगे।

रूप-आकार सम्बन्धी बिम्ब

काव्य-कला की सफलता की यह कुँजी है कि वह वर्ण्य विषय के रूपाकार को पाठक की आँखों के सम्मुख प्रस्तुत कर सके ताकि पाठक में भी वही तन्मयता एवं तल्लीनता की भावना सजग हो, जिससे प्रेरित हो कवि ने वर्ण्य वस्तु का चित्रण किया है। डॉ० कुमार विमल ने इस शैली के दो भेद माने हैं—संकेतग्राही बिम्ब-विधान और उपकरणमूलक बिम्ब-विधान।[2] प्रथम में संपृक्त दृश्य की पृथक-पृथक अंग छटाओं का ब्योरेदार वर्णन नहीं रहता, उसकी समन्वित संपूर्णता को प्रतिबिम्बित किया जाता है, जबकि द्वितीय श्रेणी के बिम्ब-विधान में अंग-प्रत्यंग का विस्तारपूर्वक वर्णन किया जाता है। पन्तजी के काव्य में दोनों शैलियों का दर्शन किया जा सकता है। उदाहरण के लिए पन्त द्वारा प्रस्तुत 'कवि' का बिम्ब लिया जा सकता है—

> यहाँ विजन छाया वन में रहता एकाकी
> एक स्वप्न द्रष्टा कवि, तरुण अरुण सा सुन्दर,
> लता प्रता से मंडित कुसुमित पर्ण कुटी में।[3]

प्रस्तुत अवतरण में स्वप्न द्रष्टा कवि का एक रूप-चित्र अंकित किया गया है। यहाँ पन्त का ध्यान 'कवि' के प्रत्येक अंग के ब्योरेदार वर्णन की ओर नहीं गया। विजन छायावन में लता-प्रता से मंडित पर्णकुटी में रहते कवि का समन्वित

१. पं. रामदहिन मिश्र—काव्य में अप्रस्तुत योजना, पृ. २८
२. डॉ० कुमार विमल—छायावाद का सौन्दर्यशास्त्रीय अध्ययन, पृ. १९६
३. रजतशिखर, पृ. ५१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रभाव जो पन्त के हृदय पर पड़ा वह तरुण अरुण का है। इस अप्रस्तुत के द्वारा कवि के तरुण-सौन्दर्य का चित्र अंकित है।

करुण नयनों की नीरव कोर
डाल निश्चल स्वामी की ओर
अर्धहिनहिना, अश्रुजल छोड़
दृगों में मूँद चरम छवि पावन।[1]

प्रस्तुत अंश में शत्रु की विकराल करवाल से आहत हो मरणासन्न पड़े चेतक की मूर्ति कल्पना है। मरणासन्न स्वामिभक्त चेतक का स्थूल बिम्ब ही नहीं, उसके भाव-बिम्ब का भी यहाँ प्रत्यक्षीकरण होता है। करुण नयन, नीरव कोर, निश्चल स्वामी, अर्ध-हिनहिनाना, अश्रुजल छोड़, दृगों में मूँद चरम छवि, आदि प्रयोग इतने बिम्ब धर्मी हैं कि हम अपने सामने साक्षात् निश्चल खड़े प्रताप और उनके सामने मृत्यु की राह देखते चेतक को देखते हैं। 'करुण नयन' और 'नीरव कोर' में विशेषण-विपर्यय का अद्भुत चमत्कार एवं चित्रात्मकता दर्शनीय है। 'विशेषण-विपर्यय' के सहारे नेत्रों के द्वारा अपने हृदय की अपार वेदना को व्यंजित करनेवाले चेतक का सजीव बिम्ब प्रस्तुत करने के साथ-साथ कवि ने चेतक के आन्तरिक भावों को भी व्यंजित किया है। वह चेतक स्वामिभक्त है और उसके लिए राणा के प्रति प्रेम आध्यात्मिक धरातल का है, क्योंकि उसके लिए स्वामी प्रताप देवतातुल्य है। विदाई का समय निकट है, अतः भाव-विक्षुब्ध हृदय के कारण वह पूर्णतया हिनहिनाकर अपनी कृतार्थता प्रकट नहीं कर सकता। 'अर्ध हिनहिनाना' पूरे कारुणिक वातावरण को प्रत्यक्ष कर देता है। फिर उसका अश्रुजल छोड़ना तथा स्वामी की पावन छवि को दृगों में मूँदना उसकी कृतार्थता का प्रकटीकरण है। कवि स्वामि-भक्त चेतक के अंतिम क्षणों का कारुणिक वातावरण प्रस्तुत करने में पूर्णतया सफल हुआ है।

संकेतग्राही एवं उपकरणमूलक बिम्बों का एक-एक उदाहरण प्रस्तुत करने के उपरांत पन्त-काव्य में आये अन्य रूप-बिम्बों को देखने का प्रयास किया जाएगा —

(१) मम जीवन का प्रमुदित प्रात।[2]
(२) सजल मेरा सोने का गान।[3]
(३) आत्मा के अति अतल अकूल सिन्धु में मज्जित
खोजूँ मैं आनन्द विभव अनिमेष समाधित।[4]

---

१. वीणा-ग्रन्थि, पृ. ८१
२. वीणा—ग्रंथि पृ. ८
३. पल्लव पृ. १२४
४. पतझर पृ. ३६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(४) देवदारू के ऊर्ध्व शृंग
बनते जिज्ञासा - मन्थित, ।[१]

(५) संस्कृति का प्रासाद उठाना जन को
स्वर्ग विचुंबी...............।[२]

(१) बाल्यकालीन जीवन के उल्लास, उमंग, उत्साह एवं आनन्द को प्रकट करने के लिए 'प्रमुदित प्रात' शब्द का प्रयोग किया गया है, जो अतीव सार्थक उपमान है। प्रात:काल जागरण का समय है, नवीन स्फूर्ति एवं आनन्द का दाता है। सम्पूर्ण वातावरण सुखद एवं मोहक है। अत: बाल्यकाल के लिए 'प्रमुदित प्रात' एक उपयुक्त उपमान है।

(२) विशेषण-विपर्यय के सहारे अमूर्त गान का भी बिम्ब प्रस्तुत किया गया है।

(३) आत्मा के लिए सिन्धु का अप्रस्तुत और उसकी निस्सीमता एवं गहराई को दिखाने के लिए 'अति अतल अकूल' विशेषण प्रयुक्त हुए हैं। कवि ने आत्मा के लिए अप्रस्तुत सागर लाकर जहाँ उसकी व्यापकता, निस्सीमता एवं गहराई का चित्रण किया है, वहाँ उसके अन्तस्तल में निमज्जित होने पर प्राप्त होनेवाले आनन्द-विभव की भी व्यंजना की है। सागर के अन्तस्तल में जो डूबता है वह मोती पाता है, वैसे ही आत्मा की गहराई में पहुँचकर मनुष्य आध्यात्मिक आनन्द प्राप्त करता है। अत: आत्मा जैसी निगूढ़ एवं अमूर्त वस्तु के लिए मूर्त समुद्र का बिम्ब जहाँ चाक्षुष है, वहाँ भाव-व्यंजक भी है।

(४) व (५) में क्रमश: देवदारू एवं प्रासाद की ऊँचाई दिखाने के लिए 'ऊर्ध्व' एवं 'स्वर्ग विचुंबी' विशेषणों का सहारा लिया गया है और ऊँचे देवदारू एवं प्रासाद के रूप-बिम्ब प्रस्तुत किये गये हैं।

उपर्युक्त पाँचों बिम्ब खण्डित बिम्ब हैं, जो वर्ण्य वस्तुओं के खण्डित चित्र मात्र प्रस्तुत करते हैं। ये खण्डित बिम्ब एक आंशिक प्रभाव डालते हैं। ऐसे ही आकार संबंधी कुछ खण्डित बिम्ब निम्न उदाहरणों में पाये जाते हैं।

(१) विविध आयताकार, वर्ग षट्कोण क्यारियाँ सुषमित
वर्तुल, अंडाकृति नव रुचि से कटी छँटी, दूर्वावृत।[३]

(२) एक टाँग पर तुले, दीर्घतर
पास खड़े तुम लगते सुन्दर
नारिकेल के हे पादप वर।

१. पतझर, पृ. ६६
२. वही पृ. ७७
३. ग्राम्या पृ. ७६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

चक्राकार दलों से संकुल
फैलाये तुम करतल वर्तुल,[1]

(३) धुंध धूल बन निखिल भूत घूमते प्रलय के
विकट भँवर में, चक्राकार घुमड़ अंबर में।[2]

प्रथम उदाहरण में पौधों की क्यारियों के रूपाकार का वर्णन हुआ है। वे क्यारियाँ विविध आयताकार जैसे षट्कोण, वर्तुल, अंडाकृति की हैं और वे सब की सब नव रुचि से कटी-छँटी तथा दूर्वावृत हैं। उपर्युक्त प्रसंग के पढ़ते ही हमारे सामने एक ऐसे बगीचे का बिम्ब छा जाता है जहाँ विविध आकार की क्यारियाँ दूर्वावृत हो फैली हुई हैं।

द्वितीय में चक्राकार दलों से संकुल अपने वर्तुल करतलों को फैलाये नारिकेल वृक्षों का बिम्ब है।

तृतीय में सभ्यता के विनाश-काल को कवि ने आँधी के रूप में चित्रित किया है। इस वर्णन में आँधी ही रूपायित हुई है। विनाश के प्रलय-कालीन दृश्य का बिम्ब है।

पन्तजी ने संज्ञा पदों, विशेषणों, क्रियापदों, अप्रस्तुतों, विशेषण-विपर्यय आदि के सहारे अनेक खंडित रूप-चित्र प्रस्तुत किये हैं, जिनकी एक लंबी सूची बनायी जा सकती है। सुविधा के लिए कुछ उदाहरण नीचे दिये जा रहे हैं— रंध्र मग गामी (किरण, वी. ग्र. २५), कलित कल्पना की डाली, (वही ५२), कान से मिले अजान नयन (प. ३), भग्न उर पर भूधर सा (वही, १६), बढ़ा गंधवह नभ की ओर (वायु के लिए, प. २३), सुख-दुख की खेल मिचौनी (गुं. १५), अपलक तारावली (वही ३०), हँसमुख प्रसून (वही ३१), रुग्ण जीवन-बाला (वही ३४), लाज में लिपटी उषा (वही ४०), मृदूर्मिल सरसी (वही ४३), अधोमुख अरुण सरोज (वही ४३), लाज की छुईमुई (वही ४३), उन्मद वात (वही ५०), स्वप्निल पंखड़ियाँ (वही ५२), स्वप्निल हास (वही ९३), अजान चितवन (क. बू. चाँ., ७२) आँसू का मुक्ताभार (वही १७), अवसाद का कुहासा (वही २७), स्वप्नों का रथ (वही ३०), स्वप्न तरी (वही ५३), कामना की आग (वही ६०) तद्रिल अलि (लो. ७), घृणा विरोध-निशा का पथ (वही ४३९), कृमियों सा रेंगता जन जीवन (वही ४००), क्षुब्ध क्रुद्ध बिच्छू सी आहत मति (वही ४४०), कामदग्ध जग जीवन के मरु में (वही ४४१), अहं-कूप (वही ४४४), अणु दानव (वही ४४५), स्वप्नों की सुरधनु (वही ४४६) आत्मा का मनसिज (वही ५४८), निशि-

१. स्वर्णधूलि, पृ. ८५
२. शिल्पी, पृ. ६४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्याली (पौ. २), नीलम प्याली[1] (नयन के लिए-वही २), प्रीति-पद्म (वही ७९) —ये सब बिम्बात्मक हैं।

पन्त-काव्य में संश्लिष्ट रूप-बिम्ब भी मिलते हैं. उन्होंने प्रकृति, नारी आदि के संश्लिष्ट रूप-बिम्ब प्रस्तुत किये हैं। ऐसे बिम्बों में कवि की सूक्ष्म पर्यवेक्षण शक्ति एवं चित्रण-कला का परिचय मिलता है। रूप-बिम्ब की दृष्टि से पन्तजी की 'वह बुड्ढा' शीर्षक कविता अत्यन्त महत्वपूर्ण है —

खड़ा द्वार पर लाठी टेके,
वह जीवन का बूढ़ा पंजर
चिमटी उसकी सिकुड़ी चमड़ी
हिलते हड्डी के ढाँचे पर।
उभरी ढीली नसें जाल सी
सूखी ठठरी से हैं लिपटी,
पतझर में ठूँठे तरु से ज्यों
सूनी अमर बेल हो चिपटी।

x x x x

बैठी छाती की हड्डी अब,
झुकी रीढ़ कमठा सी टेढ़ी,
पिचका पेट, गढे कंधों पर
फटी बिवाई से हैं एडी।[2]

यहाँ चलने में असमर्थ, लाठी के सहारे अपने दुर्बल नर-कंकाल को संभाले एक बूढ़े का फोटोग्राफिक चित्र अंकित किया गया है। प्रथम चार पंक्तियों में बिना किसी अप्रस्तुत की योजना के, सरल सीधी एवं स्पष्ट शब्दावली में द्वार पर लाठी थामे खड़े बूढ़े का कारुणिक रूप प्रस्तुत कर उसके प्रति हमारी सद्भावना जगाने का प्रयत्न किया गया है। 'जीवन का बूढ़ा पंजर' अत्यन्त बिम्बात्मक है, जो पाठक के नेत्र-समक्ष पंजर शेष बूढ़े का चित्र अंकित कर देता है। आगे चलकर यह बिम्ब पूर्णता प्राप्त करता है। वह हड्डी का ढाँचा है और उसपर चिमटी हुई सूखी एवं सिकुड़ी चमडी हिल रही है, मानो हड्डी और चमड़ी अब पृथक-पृथक हो गयी हों। 'हड्डी का ढाँचा' और 'हिलती चमड़ी' बूढ़े को सजीव रूप में प्रत्यक्ष कर देता है। फिर कवि प्राकृतिक पदार्थों का सहारा लेकर उसका बिम्ब प्रस्तुत करता है। सूखी ठठरी के लिए ठूँठे तरु

---

१. प्रसादजी ने भी नेत्र के लिए ऐसी कल्पना की है—
काली आँखों में कितनी यौवन के मद की लाली
मानिक मदिरा से भर दी किसने नीलम की प्याली। —आँसू, पृ. २१

२. ग्राम्या, पृ. २९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

का उपमान तथा उभरी हुई जाल-सी फैली ढीली नीली नसों के लिए अमर-बेलि का उपमान रूप-साम्य एवं धर्म-साम्य पर प्रस्तुत है। बूढ़े की सूखी ठठरी से चिपटी नीली नसें पत्रहीन सूखे ठूँठे तरु से लिपटी अमर बेलि के समान प्रतीत होती हैं। इस तरह बिम्ब को प्राणवान एवं प्रभावकारी बनाया गया है। उसकी छाती की हड्डी बैठ गयी है और झुकी रीढ़ धनुष के समान टेढ़ी है। झुकी हुई रीढ़ की टेढ़ी कमठा से तुलना सारूप्य एवं साधर्म्य पर आधारित है। पिचका हुआ या धँसा हुआ पेट, कंधे का गढ़ा और बिवाई से फटी एडी उसकी अकिंचनता तथा क्षीणता को प्रकट करते हैं।

'लोकायतन' में भू-चेतना स्वरूपा सीता का कल्पनाजन्य ध्यानावस्थित रूपचित्र अनुपम है, पाठक को मुग्ध कर देता है।[1]

वहाँ कुशासन पर अपने घुटने मोड़ ध्यानमग्न बैठी भू-चेतना स्वरूपा सीता का सात्विक भावतरंगों से मंडित रूप-बिम्ब प्रस्तुत हुआ है। कवि उसके रूप-आकार का विस्तार से वर्णन कर ऐन्द्रिय बिम्ब खड़ा कर देता है, मानो सीता अपनी सात्विक गरिमा से विभूषित हो हमारे सम्मुख ही बैठी है। उनकी नतचितवन निर्निमेष और मौन है। पलकों के लिए नीलकमल दल का अप्रस्तुत प्रयुक्त हुआ है जो रूप-साम्य एवं गुण-साम्य पर आधारित है। दीर्घ एवं काली आँखों के लिए नील कमल का उपमान परंपरा से चला आ रहा है। यहाँ युग संध्या पर ध्यानावस्थित सीता का वर्णन किया गया। संध्या होते ही कमलदल का मुँद जाना लोकप्रसिद्ध है। पलक रूपी कमलदल मुँदते जा रहे हैं। मुँदती पलकों के लिए नीलकमल दल का अप्रस्तुत विशेष सार्थक है। कन्धे पर लहराते कोमल कुन्तलों के लिए 'युगसंध्या के घने सुनहले तम' अत्यन्त भाव-व्यंजक है, और रूप-साम्यपर आधारित है। संध्याकालीन सुनहला तम अत्यन्त मोहक एवं हृदयाकर्षक होता है। सीता के सघन कुन्तल सुनहले तम के समान हैं क्योंकि आगे की पंक्ति में कवि ने बताया है कि वह चन्द्रमुखी है। चन्द्रमुख की सुनहली आभा से कन्धे पर लहराते काले कुन्तलों का थोड़ा-बहुत सुनहला दिखाई देना स्वाभाविक है।

सध्याकालीन पूर्ण चन्द्र काले धब्बों से लांछित है। सीता का चन्द्रमुख भी इस लांछन से बच नहीं पाया है। उसके भाल-मुकुर पर गत जीवन के लांछन का स्मृति-कज्जल अंकित है। कहने का तात्पर्य यह है कि भू-चेतना सीता के वास्तविक महत्व को पहचानने की क्षमता गत पशुयुग की चेतना में नहीं थी। दर्पण का प्रयोग अत्यन्त भावपूर्ण है। मुखको हृदय का दर्पण कहा जाता है। सीता का माथा उनके अन्तस्तल में व्याप्त कलंक-स्मृति को व्यक्त कर रहा है। चन्द्रमुखी सीता चिन्ताग्रस्त एवं म्लान है। यह म्लानता चन्द्रमा के लांछन से समता रखती है। किन्तु युगप्रभात होने को है, और प्रभात में जैसे ही अधखुले

१. लोकायतन, पृ. ८–९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

क्षितिजों पर वातावरण की सुनहली किरणें ज्योतिरेखा फैलाती हैं, वैसे ही एक नवीन युग के आगमन की सूचना पाकर सीता का मानस मुक्तोज्वल स्मिति से चमकने लगता है। शुभ्र पयोधर के लिए 'प्रीति-सिंधु शिखर' तथा 'स्वर्ग मर्त्य के मधु उभार' ये दो उपमान दिये गये हैं, जो सार्थक हैं। चंद्र के प्रति सागर का प्रेम सर्व-विदित है। चन्द्रमा के प्रभाव के कारण सागर तरंगायित हो उठता है। सीता के मानस में जो प्रेम-सिन्धु है, वह भावी स्वर्ग-मर्त्य के लिए तरंगित हो रहा है। वक्षहार जीवन-मूल्यों की अमूल्य मणियों से गुँथा हुआ है और अक्षय प्रकाश से मंडित है। यहाँ तक सीता का बिम्ब प्राकृतिक वस्तुओं के सहारे बना है, और आगे की अंतिम चार पंक्तियों में चाक्षुष रूप अंकित किया गया है।

वह कुशासन पर अपने शुभ्र श्रोणि जघनों को लगाये बैठी है, सुन्दर घुटने मुड़े हुए हैं। कुटि कृश तथा सूक्ष्म है, उस पर स्वर्णिम कौशेय बँधा हुआ है। अपने करतल पर चिबुक रखे, नत-आनन बैठी है। सीता का यह बिम्ब अत्यन्त मोहक, ऐन्द्रिय एवं चित्रात्मक है।

पन्तजी प्रकृति के कवि हैं और उनके काव्य में प्रकृति के एक से एक सुन्दर चित्र प्राप्त होते हैं। 'पर्वत प्रदेश में पावस' कविता में पर्वत का जो स्वाभाविक एवं सरस चित्रण किया गया है, उसमें भाषा की चित्रात्मकता प्रकट हुई है। कविता में वर्णनात्मक शब्दों का अभाव है, किन्तु कवि का शब्द-शोधन इतना उपयुक्त एवं सुरुचिपूर्ण है कि यह कमी कहीं अनुभव नहीं की जा सकती।

पन्त-काव्य शब्द-चित्रों से भरा-पूरा है। ये शब्द-चित्र अधिकतर प्रकृति सौन्दर्य पर आधारित हैं। प्रकृति की प्रत्येक वस्तु पन्त में एक गुदगुदी पैदा करती है और फलतः वे सुन्दर प्रकृति-बिम्ब अंकित करते हैं। पन्त की दृष्टि सेम के छोटे-छोटे पौधों का दर्शन करती है, तो वे तुरन्त उन्हें बिम्बों में बाँध लेते हैं—

> देखा, आँगन के कोने में कई नवागत
> छोटी छोटी छाता ताने खड़े हुए हैं।
> छाता कहूँ कि विजय पताकाएँ जीवन की,
> या हथेलियाँ खोले थे वें नन्हीं, प्यारी,—
> जो भी हो, वे हरे हरे उल्लास से भरे
> पंख मारकर उड़ने को व्याकुल लगते थे,
> डिंब तोड़ कर निकले चिड़ियों के बच्चों-से।[१]

प्रस्तुत अंश पन्तजी की चित्रविधायिनी कोमल कल्पना का सुन्दर उदाहरण है। सेम के छोटे-छोटे पौधों को सभी ने देखा है, किन्तु पन्तजी ने उसको

---

१. अतिमा, पृ. ६४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इस रूप में बिम्बित किया कि साधारण से सेम के पौधे अपनी नवीनता एवं ताजगी के कारण चित्ताकर्षक हो गये। इसमें तीन बिम्ब पृथक्-पृथक् आकर अपना समन्वित प्रभाव डालते हैं। ये तीन बिम्ब हैं—छाता ताने खड़े बालकों का, अपनी नन्हीं प्यारी हथेलियाँ खोले शिशुओं का तथा डिब तोड़कर निकले पक्षी-शावकों का जो पंख मारकर उड़ने को व्याकुल दिखते हैं। पहले बिम्ब में छाता ताने बालकों का चित्र है, जिसमें आतप-वर्षा के प्रति पौधों की संरक्षणता प्रकट होती है। किन्तु कवि उन्हें छाता ताने कहकर संतृप्त नहीं होता। वे जीवन की विजयपताकाएँ हैं। अभी तक उनके बीज मिट्टी के अन्दर प्रकाश के लिए तरस रहे थे। किन्तु वे अपने प्रयत्न में सफल हुए। अतः वे जीवन की सफलता सूचक पताकाएँ ताने खड़े हैं। दूसरे बिम्ब में सेम के पौधों को हथेलियाँ खोले खड़े शिशुओं के रूप में देखा गया है। हथेलियाँ खोले खड़े रहने में उनकी कार्य-सन्नद्धता का भाव व्यंजित होता है। 'नन्हीं, प्यारी' विशेषणों के द्वारा उनके दलों की कोमलता एवं मसृणता का भाव भी व्यंजित किया गया है। डिब तोड़कर निकले विहग-शावकों का उपमान प्रस्तुत कर बीजों के मिट्टी का स्तर तोड़कर अंकुरित एवं पल्लवित होने की त्वरित गति को व्यंजित किया गया है। साथ ही यह भी प्रकट होता है कि जिस प्रकार डिब तोड़कर निकले शावक आकाश में उड़ने के लिए व्याकुल हैं उसी तरह सेम के पौधे अपनी छोटी-सी सफलता पर ही संतुष्ट नहीं हैं, वे उन्नत होने को व्यग्र हैं। इस प्रकार प्रथम बिम्ब में सेम के पौधों के खड़े होने, द्वितीय में अपने श्रम या भुजबल पर भरोसा रखने और तृतीय में प्रगति के प्रति तत्पर होने का भाव प्रकट होता है।

वर्णाश्रित बिम्ब

चाक्षुष बिम्बों के साथ वर्ण-परिज्ञान का सीधा संबंध है। "वर्ण-बोध चाक्षुष बिम्बों को कलापूर्ण चित्रात्मक सौन्दर्य प्रदान करता है।"[1] यह रंग या वर्ण-बोध कवि के व्यक्तित्व का परिचायक होता है और उसी के आधार पर कवि के आन्तरिक व्यक्तित्व का पता लगा सकते हैं। पन्तजी ने वैसे तो सभी रंगों के प्रति अपना राग दिखाया है, किन्तु श्वेत एवं सुनहले रंगों के प्रति विशेष आकृष्ट हैं। उन्होंने चाक्षुष-बिम्बों को वर्ण-बोध से युक्त कर नयनाभिराम चित्र अंकित किये हैं। कहीं एक ही वर्ण से चित्र को संवेद्य बनाया है तो कहीं वर्णों के मिश्रित प्रयोग के द्वारा। कहीं-कहीं उनके काव्य की वर्ण-शबलता हमें को मुग्ध कर देती है तो कहीं वर्ण-विपर्यय से उद्भूत वातावरण अमिट प्रभाव डालता है।

पन्त-काव्य में आये रंगों की एक लम्बी तालिका बनायी जा सकती है।

१. डा० कुमार विमल—छायावाद का सौन्दर्यशास्त्रीय अध्ययन, पृ. १९८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सुनहला, धूलि धूसरित, श्याम, नीला, पीत, हरित, रजत, फेनिल, गौर-श्याम, स्वर्णलोहित, रक्तिम, ताम्र, मरकत, हरित पीत, अरुण पीत, रजत नील, बैंगनी, कपिश, हरिताभ, वासंती, माणिक, फालसई, ललछौहा, इंद्रधनुषी, मूँगी, पाटली, पीताभ, चंपई, गेरुवी, उन्नाती, वासनी, कुसुँभी, केसरी, सूही, सिन्दूरी, सेमई, दुग्ध, चितकबरा, धूम घुंआरा आदि रंग उनके काव्य में बार-बार प्रयुक्त हुए हैं, जिनके द्वारा उन्होंने अपने चित्रों को एक चतुर चितेरे के समान भावमय बनाया है। कुछ चित्र नीचे दिये जा रहे हैं—

(१) स्वर्ण दिशा को देख, सजल दृग,
तुम्हें पुकारा है उज्ज्वल।[१]

(२) रक्त पलाश ! रक्त पलाश !
सखे, मुझे दोगे सिंदूर के पुष्पों की ज्वाला का हास।[२]

(३) अरहर सनई की सोने की किंकिणियाँ हैं शोभाशाली।[३]

(४) स्वप्न द्वार फिर खोल ऊषा ने
स्वर्ण विभा बरसाई।[४]

(५) नव प्रभात के स्वर्ण हास्य से
रश्मि गर्भ हों धरा रेणु कण।[५]

(६) अब शुभ्र गगन में शुभ्र चंद्र
नव कुंद धवल तारावलि री,
अब शुभ्र अवनि में शुभ्र सरसि,
सरसी में श्वेत कमल री।[६]

(७) स्वर्ण क्रांति, रस स्वर्ण कलश लेकर
स्वर्णिम स्मिति किरणें बरसा भू पर
स्वर्ण द्वार खोलती स्वर्ग शोभा
स्वर्ण अलक से मुख दिखला सुन्दर।[७]

प्रथम में प्रातःकाल का बिम्ब अंकित किया गया है। उषा के उदित होने से उसकी सुनहली किरणें विकीर्ण हो उठीं और पूर्व दिशा स्वर्णिम हो गयी है।

द्वितीय में पलाश-वन का बिम्ब है। पलाश के लाल-लाल पुष्पों के विकसित होने से संपूर्ण पलाश ही रक्त रंग का हो उठा और वह अपने सिन्दूरी पुष्पों की ज्वाला फैलाये हुए है।

---

१. वीणा–ग्रंथि, पृ. १२
२. युगवाणी, पृ. ८६
३. ग्राम्या, पृ. ३५
४. उत्तरा, पृ. ४०
५. उत्तरा, पृ. ८०
६. रजत शिखर, पृ. १५१
७. लोकायतन, पृ. ४४८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तृतीय में ग्रामश्री का बिम्ब है। अरहर और सनई फलों से भर गये हैं और उनकी किंकिणियाँ पककर सोने की हो गयी हैं। वे अपनी स्वर्णिम शोभा फैला रही हैं।

चतुर्थ और पंचम उद्धरणों में उषाकालीन स्वर्णिम सुषमा का बिम्ब है। चतुर्थ में उषा का मानवीकरण है। यह एक नायिका है जो रात भर स्वप्निल तंद्रा में थी। प्रातःकाल के होते ही अपने स्वप्न द्वार खोल दिया और पूर्व दिशा में स्वर्णिम आभा फैला दी। कवि हास में भी सुनहले रंग का आश्लेष पाता है। इसलिए प्रभात का हास सुनहला है। सुनहला हास कितना मधुर एवं मादक है। इस स्वर्णिम हास से रजकण रश्मि गर्भ हो उठे।

छठे में चन्द्रिका-स्नात रात्रि का वर्णन है। पूरी रात्रि शुभ्र चाँदनी से खेल चुकी है। इसलिए आकाश शुभ्र है। नवीन कुंद पुष्प के समान तारे भी शुभ्र धवल हैं। सारी पृथ्वी शुभ्र रंग में स्नात है और इसलिए सरोवर और सरोवर में कमल सब श्वेत रंग के हैं। चाँदनी रात का बिम्ब वर्ण-बोध से आकर्षक हो उठा है।

सप्तम में यह दिखाया गया है कि सुन्दरपुर के ग्रामवासियों का सामाजिक संगठन अंतश्चेतना से परिचालित है। इस अंतश्चेतनाश्रित प्रत्येक कार्य के लिए स्वर्णिम रंग का प्रयोग किया गया है।

ऐसे ही पन्त-काव्य में असंख्य वर्णाश्रित बिम्ब प्राप्त होते हैं। रजत कण को छू, बना रजत कण (वी. ग्र, २५), स्वर्ण सरित की धार (वही ५३), कौन कौन तुम इस मदिरा के कनक हास से भीत (वही ७५), तुम्हारी स्वर्ण ज्वाला सी तान (प. १२४), स्वर्ण पंखों की विहग कुमारी (वही), उषा की कनक मदिर मुस्कान (वही), कनक कर बढ़ा-बढ़ाकर प्रात (वही), सजल मेरा सोने का गान (वही), सजल स्वर्ण से पावन रच जीवन की मूर्ति (गु. ११), इन्द्रधनुषी पट से ढंक गात (वही ४१), लोटता राशि-राशि हिम हास (वही ४६), सिकता की सस्मित सीपी पर मोती की ज्योत्स्ना रही विचर (वही १०२), हरित धरा से झाँक रही नीलम की कलि, तीसी नीली (ग्रा. ३५), मखमली टमाटर हुए लाल (वही ३६), चाँदी की सी घंटियाँ तरल बजती रहतीं रह रह खिन खिन (वही), ज्वालागर्भित शोणित बादल (उ. ५३), युग स्वप्नों की साँझ सुनहली (वही), सदाचार की रजत रश्मियों से मंडित (र. शि. ९४), ज्योत्स्ना का रुपहला रेशमी अचल फहरा (वही १०७), दर्शन के स्फटिकोज्वल शुभ्र सौध में (वही ११०) हिम धवल कुंद कलियां कल रंक (वही १५२), जो स्वप्न मूर्त हो सके नहीं, भरते उर में स्वर्णिम गुंजन (अ. ३७), कहाँ गूँथ लाई कवरी में रक्त जिह्व रतनार फूल (वही १०८), ओ हीर रश्मि अंतः सत्य ओ माणिक किरण (क. बू. चाँ. ४२) यह माणिक सरोवर, रजत हरित, अमृत जल अरुण सरोवर (वही ५१), यह माणिक मदिर आलोक

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(वही), फालसई सोपानों पर ललछौंहे पगधर उषाएँ उतरती हैं (वही ५६), किरणों के मुक्ताभ प्यालों में सुनहली हाला लाई हो (वही ६९), वासंती रंग की साड़ी सूही अंगिया प्रिय तन पर (लो. १५०), स्वप्नों की सुरधनु संपद् हँसती (वही ४४६), उन्नावी, कासनी, कुसुंमी पट फुल्ल यौवना पर फबते निश्चित (वही ४४८), षड् ऋतुएँ सित संगति में आती, सुरधनु ज्योत्स्ना मिहिका को धूप छाँह सुषमाएँ बरसाती (वही ५३७), फहराता रुपहली वायुओं में सुनहला अंचल तुम्हारा (पौ. ४), तुम्हीं पूर्णता, स्वर्ण संतुलन भर जाती हो (वही ३८), प्रभु से ही पा वह सित इंगित (वही ८३), उर अवाक् करता सित विस्मय (वही १२५) आदि पन्तजी की रंग-सवेदना के एक से एक सुन्दर उदाहरण हैं। यहाँ तक कि हास, मुस्कान, ज्योति, छाया, आनंद, प्रेरणा, संगति, रस, दीप्ति, प्रसार, सौरभ जैसी अमूर्त वस्तुओं को भी इसी रंग-सवेदना से संवलित कर उन्हें ऐन्द्रिय बिम्ब बना छोड़ने का स्तुत्य प्रयास किया गया है।

वर्ण मिश्रित बिम्ब

उपर्युक्त उदाहरणों में वर्णों की इकहरी अनुभूतियों के चित्र दिखाये गये हैं। "प्रत्यक्ष जगत में कोई भी रंग अपने समीपी रंगों के अस्तित्व से सर्वथा असंपृक्त नहीं होता। लाल प्रायः पीले को प्रभावित करता है, पीला हरे को और हरा नीले अथवा श्याम वर्ण को। रंगों का यह परस्पर अन्तरावलंबन दृश्य जगत् का एक अतिपरिचित व्यापार है।"[1] श्रेष्ठ एवं अधिक संवेदनशील कवि वर्णों के इस पारस्परिक संबंध से परिचित रहता है और वह अनुकूल वर्णों को मिलाकर अपने बिम्बों की प्रेषणीयता, चित्रात्मकता एवं ऐन्द्रियता के धर्म को बढ़ा देता है। पन्तजी इस कला में विशेष जागरूक दिखाई देते हैं। उन्होंने विचित्र रंगों के घोल से सजीव बिम्बों का निर्माण किया है और इस प्रयत्न में वे रंगों की विविधता एवं सूक्ष्मता पर भी विशेष ध्यान रखते हैं। उदाहरण के लिए वसन्तागमन के वातावरण को प्रस्तुत करनेवाली निम्न पंक्तियाँ ली जाएँ—

रुपहले, सुनहले आम्र मौर,
नीले, पीले औ' ताम्र—भौंर।[2]

प्रस्तुत पंक्तियों में वसन्त के आगमन पर अपनी श्री शोभा दिखाते आम्र-मौरों तथा उससे उन्मत्त हो गुनगुनाते मंडराते हुए पुष्पों के पराग-कणों से विविध रंगी-जैसे नीले, पीले एवं ताम्र रंग के मधु लोभी भ्रमरों का वर्णन है। पन्तजी की इस वर्ण-मिश्रण-कला का सही परिचय पाना हो तो चित्रकला सम्बन्धी रंगों पर भी दृष्टि डालनी होगी। रंग चित्र-कला का प्राण है। जैसे

---

१. डॉ० केदारनाथसिंह—आधुनिक हिन्दी कविता में बिम्ब—विधान, पृ. २०३
२. गुंजन, पृ. ९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

काव्य में स्वर-मैत्री अनिवार्य है, वैसे चित्रकला में रंग-मैत्री चित्र को रसात्मक बना देती है। पन्त की रंग-संवेदना एक सफल चित्रकार की है। चित्रकला में लाल, पीला और नीला मुख्य रंग माने जाते हैं और इन्हीं की मिलावट से अन्य रंग बनते हैं। जैसे लाल और पीला मिलने से नारंगी रंग, लाल और नीला मिलकर बैंगनी रंग तथा पीला और नीला मिलकर हरा रंग प्रस्तुत करते हैं। फिर इन्हीं में सफेद तथा काले की विभिन्न मात्रा मिलकर रंग गाढ़े और हल्के किये जाते हैं।[१] पन्तजी ने सुनहले (लाल), नीले और पीले रंगों की मैत्री से बिम्ब को चित्रात्मक बना दिया, फिर रुपहले (सफेद) रंग के घोल से उस चित्र को और भी आस्वाद्य बनाया है। चित्रकला में रंग भावों का प्रतीक होता है। पीला तीव्र बुद्धि तथा विवेक, नीला मुक्ति, लाल तीव्र प्रेम, सफेद आह्लाद तथा प्रकाश का प्रतीक है।[२] कवि ने अपने रंगों के मिश्रण से वसन्तकालीन शोभा एवं प्रकाश, पुष्पों के प्रति भ्रमरों के अनुराग, मधु-संचय के प्रति उनके विवेक, मधु-पान में उनकी आत्म-विस्मृति तथा उल्लास सबको चित्र रूप में अवतरित किया है। एक कुशल चित्रकार की-सी रंग-संवेदना एवं रंग-बोध आगे भी द्रष्टव्य है।

> सुन्दर मधु ऋतु, सुन्दर है गुँजित दिगंत का हरित प्रसार,
> ताम्र, रजत, मरकत, विद्रुम के विविध किसलयों का मृदुभार,[३]

यहाँ मधु ऋतु का बिम्ब है। 'मधु ऋतु' शब्द ही बिम्बात्मक है। कल कूजन से गुँजित दिगंत का हरित प्रसार इतना ऐन्द्रिय एवं चित्रात्मक है कि वह हमारी श्रवणेन्द्रिय एवं चक्षुरिन्द्रिय की संवेदनाओं को उद्बुद्ध करता है। उस हरित प्रसार के तले बहुरंगी किसलयों का साम्राज्य है। ताम्र, रजत, मरकत, विद्रुम एवं हरित सभी रंग समन्वित प्रभाव डालते हैं, उसके कारण मधु ऋतु की सूक्ष्म अनुभूतियों से युक्त बिम्ब बन जाता है। आगे निम्न पंक्तियों की संवेद्यता भी दर्शनीय है—

> स्वर्ण मंजरित आम्र आज औ' रजत ताम्र कचनार,
> नील कोकिला की पुकार नव, पीत भृंग गुंजार।[४]

यहाँ स्वर्ण मंजरियों से भरे आम्र, रजत ताम्र कचनार, नील कोकिला और पीत भृंग सब मिलकर हमारी रंग-संवेदना के विविध स्तरों को झकझोरते हैं और एक इन्द्रधनुषी रंगाभा फैलाते हैं। पन्तजी की दृष्टि नागरिक जीवन के सौन्दर्य

---

१. द्रष्टव्य, रामचन्द्र शुक्ल—चित्रकला का रसास्वादन, पृ. ८४
२. वही, पृ. ८५
३. युगवाणी, पृ. ८६
४. वही, पृ. ८८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

से हटकर ग्रामीण प्रकृति के सौन्दर्य के प्रत्यंकन में केन्द्रित रही, जिसके पीछे उनके शैशव के ग्राम्य जीवन एवं पार्वतीय शोभा के प्रति मोह का हाथ है।

कई कवियों ने भारतीय ग्रामों का वैभव गाया है, किन्तु पन्तजी के हाथों अंकित भारतीय ग्रामश्री का उज्ज्वल वैभव अभूतपूर्व है। देखिए—

फैली खेतों में दूर तलक
मखमल की कोमल हरियाली
लिपटीं जिससे रवि की किरणें
चाँदी की सी उजली जाली
तिनकों के हरे हरे तन पर
हिल हरित रुधिर है रहा झलक
श्यामल भूतल पर झुला हुआ
नभ का चिर निर्मल नील फलक।[1]

यहाँ रंग-सम्बन्धी सूक्ष्म कोमलानुभूतियों का चित्रण है और ग्रामों की वर्ण शबलता पाठकों के सामने बिम्ब को प्राणवान बनाकर रख देती है। खेतों में बहुत दूर तक मखमली आभा से युक्त कोमल हरीतिमा फैली हुई है और उस पर रवि की किरणें ऐसी लिपटी हुई हैं मानो चाँदी की-सी उजली जाली बिछी हुई हो। तिनकों के हरे तन पर इधर-उधर ओस की बूँदें ढुलक रही हैं, सूरज की सुनहली किरणों के पड़ने से वे हरित रुधिर की आभा पाती हैं। फिर श्यामल भूतल और उसकी ओर झुका हुआ चिर निर्मल नभ का नील फलक, सब मिल-कर दूर तक फैले खेतों का जो रंग संवेद्य बिम्ब प्रस्तुत करते हैं, वह कवि की सूक्ष्म पर्यवेक्षण शक्ति, ऐन्द्रियानुभूति एवं चित्र-कला का परिचायक है। साथ ही चित्र के प्रधान रंगों से ही चित्र का भाव सरलता से प्राप्त किया जा सकता है।

वर्ण-बोध के वैविध्य एवं सूक्ष्म संवेदना के परिचायक अनेक बिम्ब पन्त-काव्य में सुलभ हैं, जिनपर विचार करने से यह स्पष्ट प्रतीत होगा कि मिश्रित रंग-सवेदना की दृष्टि में पन्तजी का रुपहला-सुनहला, हरित पीत, रजत नील, स्वर्ण रजत, हरित नील रंगों के प्रति विशेष आग्रह रहा है। उदाहरण के लिए कुछ पंक्तियाँ नीचे उद्धृत की जा रही हैं—

(१) स्वर्ण रजत बालुका पुलिन-से
टूट रहे मन के प्रण। —उत्तरा, पृ. ५९

(२) हरित पीत छायाएँ सुन्दर
लोट रहीं धरती की रज पर, —उत्तरा पृ. ८१

(३) स्वर्ण कणों के शालि झूम झुक नयन लुभाते
सहज सुहाते स्वच्छ रुपहले काँसों के वन।—रजत-शिखर, पृ. १४०

१. ग्राम्या, पृ. ३५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(४) रजत नील जल सी अंबर सरसी की निर्मल। -रजत शिखर पृ.१५२
(५) रजत नील मुक्त व्योम —सौवर्ण, पृ. ९३
(६) हरित नील कंदुक सा दीख रहा भूगोलक। —वही, पृ. ९६
(७) ताम्र हरित कुछ पल्लव, कुछ कलि कोरक स्वर्णिम
—अतिमा, पृ. २२
(८) रजत नील स्वर्णारुण शृंगों पर भर स्वर्गिक प्लावन—वही, पृ. २७
(९) नील पीत सित लोहित विद्युल्लतिका कंपित प्रतिपल।
—वही, पृ. १४५
(१०) नील हरित सित रक्त पीत धूमिल पाटल तन, —पतझर, पृ. २२

वर्ण परिवर्तन पर आधारित रूप-बिम्ब

यह सांसारिक नियम है कि यहाँ कोई भी वस्तु एकरूप या स्थायी नहीं रहती। संसार परिवर्तनशील है। सांसारिक परिवर्तनों के अनुरूप प्रकृति में भी परिवर्तन आ जाता है। फिर वर्ण सम्बन्धी परिवर्तन हम प्रतिदिन देखते हैं। रात की समाप्ति पर सुनहली विभा फैलाती हुई उषा देवी का आगमन होता है, उषा के उपरान्त दिन अपनी नयी आभा फैलाता है और दिन समाप्त होने पर संध्या एक और रंग लेकर आती है। रंग-परिवर्तन एक स्वाभाविक प्रक्रिया है, किन्तु इसे शब्द-बिम्बों में मूर्तित करना सहज कार्य नहीं है। कम से कम छायावादी काव्य के पहले इस प्रकार के वर्ण-परिवर्तन सम्बन्धी चित्र बिरले ही प्राप्त होते थे। छायावादी कवियों ने इस रंग-परिवर्तन को प्रथम अनुभव किया और छायावादी कवियों में भी पन्तजी वर्ण-परिवर्तन सम्बन्धी बिम्ब अपेक्षाकृत अधिक दे सके।

रात की समाप्ति पर उषादेवी अपनी स्वर्णिम विभा लेकर अवतरित होती है, उसकी स्वर्णिम किरणें अंधकार को समाप्त कर स्वर्णिम छाया फैलाती हैं। इस प्रकार अंधकार के उपरांत प्रातः कालीन जो स्वर्णिम आभा बिखरती है, उसका बिम्ब पन्तजी इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं—

मलिन उर छूकर तिमिर का अरुण कर
कनक आभा में खिलाते हैं कमल।[1]

यहाँ मानवीकरण के सहारे तिमिर के मलिन उर की कल्पना की गयी है। अरुण कर उस मलिन उर को छूकर कनक आभा फैलाते हैं। इस प्रकार अंधकार के बाद जो कनक आभा फैलती है उसका सजीव चित्र यहाँ प्रस्तुत है।

षड् ऋतुएँ सुर बालाओं सी करतीं सजधज नर्तन
वासंती किसलय कितने ही रंग करते परिवर्तन।
रजत ताम्र, पाटल ईंगुरी, हरित पीत, मृदु कंपित।[2]

---

१. वीणा-ग्रंथि, पृ. १०१
२. अतिमा, पृ. १४५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

यह उद्धरण 'कूर्माचल के प्रति' कविता से लिया गया है। कूर्माचल की प्रकृति-सुषमा कवि को मोहित करती रही और वह निरंतर ध्यानपूर्वक उसके ऋतु-परिवर्तनों का सूक्ष्म दर्शन करता रहा, तो उसे लगा कि षड् ऋतुएँ सज-धज कर कूर्माचल के रंगमंच पर अवतरित होती हैं और अपना नर्तन दिखाती हैं। षड्ऋतुओं के इस नर्तन के फलस्वरूप वासन्ती किसलय बार-बार अपना रंग बदलते रहते हैं। वे वासन्ती रंग से कभी रजत ताम्र हो जाते हैं तो कभी पाटल ईंगुरी और कभी हरित पीत। इस प्रकार वासन्ती किसलयों के रंग-परिवर्तन के ऐसे बिम्ब प्रस्तुत किये गये हैं मानो फिल्मी चित्र बदलते जा रहे हों।

पन्तजी का सूर्यास्त का निम्नलिखित बिम्ब वर्ण-परिवर्तन का सुन्दर उदाहरण है।

अब हुआ सांध्य स्वर्णाभ लीन,
सब वर्ण वस्तु से विश्वहीन।
गंगा के चल जल में निर्मल, कुम्हला किरणों का रक्तोत्पल
है मूँद चुका अपने मृदु दल।
लहरों पर स्वर्ण रेख सुन्दर पड़ गयी नील, ज्यों अधरों पर
अरुणाई प्रखर शिशिर से डर।[1]

यह संध्या कालीन वर्ण-परिवर्तन का बिम्ब है। 'किरणों का रक्तोत्पल' सूर्य का उपमान है, जो अभी गंगा के निर्मल जल में अपनी किरणें समेट कुम्हला गया। सूर्यास्त के कारण अब तक जो स्वर्णिम विभा संसार में छायी थी, वह लीन हो गयी और संसार पर अंधकार का परदा पड़ गया। अंधकार के पड़ते ही सभी वर्ण वस्तुएँ लुप्त हो गयीं। अबतक गंगा की लहरों पर जो स्वर्णिम रेखा पड़ी हुई थी, वह अंधकार से नीली हो गयी। जैसा कि शीत-काल की ठंड से अरुण अधर नीला पड़ जाता है। सूर्यास्त के बाद संध्या की धुंध में नील रंग के आविर्भाव को दिखाने के लिए शीतकाल में लालिमा के स्थान पर नीले होते अधरों का यह उपमान सादृश्य पर आधारित है। पन्तजी ने वर्ण-परिवर्तन का यह जो बिम्ब प्रस्तुत किया है कलात्मक, ऐन्द्रिय एवं भावपूर्ण है।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि पन्तजी रूप-बिम्ब के निर्माण में कहीं एक विशेषण का प्रयोग करते हैं, तो कहीं इकहरे वर्णों का प्रयोग करते हैं। कई भावों से पुष्ट बिम्बों को प्रस्तुत करने के लिए कहीं वर्ण मिश्रण का सहारा लेते हैं तो कहीं वर्ण-परिवर्तन का। इस प्रकार उनके रूप-बिम्बों में चाक्षुष-बोध के सभी उपादान तत्त्वों का समावेश हुआ है।

---

१. गुंजन, पृ. ८४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आ. गत्यात्मक बिम्ब

गत्यात्मक बिम्बों द्वारा गतियुक्त वस्तुओं, स्थितियों, दृश्यों या व्यापारों का अंकन प्रस्तुत किया जाता है। गत्यात्मक बिम्ब-निर्माण अपेक्षाकृत कठिन है, क्योंकि उसमें सूक्ष्म पर्यवेक्षण शक्ति आवश्यक है, साथ ही गत्यात्मक सौन्दर्य लाने के लिए कवि का कला-कुशल होना भी आवश्यक है। गति समय सापेक्ष है और समय को पकड़ना कठिन कार्य है। यही कारण है कि साहित्य में सुन्दर गत्यात्मक बिम्बों की कमी रहती है। किन्तु छायावादी साहित्य इसके लिए अपवाद है। छायावादी कवि, सौन्दर्य की बारीकियों की पहचान एवं सूक्ष्म सौन्दर्य-चेतना तथा अपनी व्यंजनात्मक काव्य-शैली के कारण गत्यात्मक बिम्बों की दृष्टि में विशेष सफल हुए हैं। गत्यात्मक बिम्ब-निर्माण के लिए कवि को कल्पना-शक्ति आवश्यक है और छायावादी कवि कल्पना-जगत् के प्राणी थे। इसी कल्पना-शक्ति के द्वारा उन्होंने स्थावर एवं अमूर्त वस्तुओं में भी गति भर दी और गत्यात्मक बिम्ब अंकित किये।

पन्तजी ने अपने काव्य में गत्यात्मक बिम्बों को लाने की ओर ध्यान दिया। उनके पास गत्यात्मक बिम्बों के लिए आवश्यक सृजन-प्रतिभा थी। उनके अधिकतर गत्यात्मक बिम्ब क्रियात्मक बिम्ब हैं। क्रिया-व्यापार का सूक्ष्म प्रत्यंकन गत्यात्मक बिम्ब है। पन्तजी के कुछ गत्यात्मक बिम्ब अत्यन्त स्थूल हैं जैसे —

तरल तरंगों में मिलकर,
उछल-उछल कर, हिल-हिल कर
माँ, तेरे दो श्रवण पुटों में
निज क्रीड़ा कलरव भर दूँ—[१]

यह उद्धरण माता के सम्मुख किसी शिशु के पानी में उछल-उछल कर खेलने तथा कोलाहल मचाने का क्रीडा-बिम्ब प्रस्तुत करता है। शिशु को पानी में उछल कूद करने से बढ़कर आनंद कहाँ मिलेगा? 'तरंगों में मिलकर', 'उछल-उछल कर', 'हिल-हिलकर', 'भर दूँ' सब क्रिया-व्यापार व्यंजक शब्द हैं और बाल-चेष्टाओं का बिम्ब प्रस्तुत करने में समर्थ हैं। ऐन्द्रियता की वृद्धि के लिए 'तरल' में स्पर्श संवेदना तथा 'कलरव' में श्रुति-संवेदना भी है।

बाल रजनी सी झलक थी डोलती
भ्रमित हो शशि के बदन के बीच में,
अचल, रेखांकित कभी थी कर रही
प्रमुखता मुख की सुछवि के काव्य में।[२]

१. वीणा-ग्रंथि, पृ. ३
२. वीणा-ग्रंथि, पृ. १००

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

यहाँ नायिका की अलकों का गत्यात्मक चित्र है। नायिका की अलकें बाल रजनी के समान थीं। अलकों का रजनी से उपमान रूप-सादृश्य पर आधारित है। किन्तु रजनी के साथ 'बाल' विशेषण जोड़कर कवि ने बालों की चंचलता या गत्यात्मकता का आभास दिया है। नायिका का चंद्रमुख देखकर, अलकें जो स्वभाव से चंचल हैं, भ्रमित हो उठीं और डोलने लगीं। अचल अलकों के आज डोलने के कारण की कल्पना कवि की नवीन सूझ है। जब कोई पाठक काव्य पढ़ता है, तब कुछ विशेष प्रसंग पर उसको रेखांकित करता है। वैसे ही नायिका की सुछवि के काव्य में मुख की प्रमुखता को रेखांकित कर दिखाने का कार्य अलकें कर रही हैं। प्रस्तुत बिम्ब सूक्ष्म अनुभूत्यात्मक गत्यात्मक बिम्ब है।

अधर मर्मरयुत, पुलकित अंग,
चूमतीं चल-पद चपल तरंग,
चटकतीं कलियाँ पा भ्रू-भंग,
थिरकते तृण, तरु-पात।[१]

यहाँ नायिका एवं प्रकृति का सापेक्ष गत्यात्मक बिम्ब है। नायिका के अधर मर्मरयुत हैं, अंग-प्रत्यंग पुलकित हैं, पद चंचल हैं और भौहें तनी हुई हैं। चपल तरंगें नायिका के चंचल पदों को चूमकर उसकी गति में क्षिप्रता भरती हैं और बिम्ब में नाटकीयता का आभास प्राप्त होता है। नायिका के भ्रू-भंग्र से शिक्षा पाकर कलियाँ चटकती हैं तो तृण, तरु-पात सब थिरक उठते हैं। इस प्रकार नायिका के क्रिया-व्यापारों का प्रकृति के साथ संबंध स्थापित कर जो समन्वित गत्यात्मक बिम्ब लाया गया है, वह प्रभावकारी है।

पन्तजी की 'ग्रामयुवती' कविता स्थूल गत्यात्मक बिम्ब का प्रोज्वल उदाहरण है। इसमें यौवन के उद्दाम सौन्दर्य से युक्त ग्राम-युवती के 'हाव-भाव' का सजीव बिम्ब प्रस्तुत किया गया है। उसकी प्रत्येक चेष्टा का स्वाभाविक अंकन किया गया है, मानो हम उसको अपने नेत्रों के सम्मुख चलते हुए देख रहे हों।

उन्मद यौवन के उभर
    घटा सी नव असाढ़ की सुन्दर
अति श्याम वरण,
    श्लथ, मंद चरण,
इठलाती आती ग्राम युवति
    वह गजगति
सर्प डगर पर

---

१. गुंजन, पृ. ७८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सरकाती-पट
खिसकाती-लट,—
शरमाती झट
वह नमित दृष्टि से देख उरोजों से युग घट ।[1]

प्रस्तुत उद्धरण में पनघट पर पानी भरने जाती ग्राम-युवती का स्वाभाविक बिम्ब है, भले ही पूरा बिम्ब कामोद्दीपक हो। उसके उन्मद यौवन एवं अतिश्याम वर्ण के लिए आषाढ़ की नव घटा का उपमान सादृश्य एवं साधर्म्य पर आधारित है। उन्मद यौवन की बाढ़ लिये सर्प डगर पर गज गति से, श्लथ मंद चरण धर इठलाती आती ग्राम-युवती अपनी भाव-चेष्टाओं एव आंगिक चेष्टाओं से आकर्षक है और मोहक भी। सरकाती पट, खिसकाती लट, शरमाती झट जैसे प्रयोगों ने ग्राम-युवती के क्रिया-कलापों की क्षिप्रगति को मूर्त अभिव्यक्ति प्रदान की है।

मनुष्येतर प्राणियों के क्रिया-कलापों का सूक्ष्म अवलोकन भी पन्तजी की विशेषता है। इस प्रकार के सूक्ष्म निरीक्षण से प्राप्त अनुभूतियों को बिम्ब-रूप में प्रकट करने में विशेष ध्यान रखा गया है। कुछ उदाहरण नीचे प्रस्तुत किये जा रहे हैं। पन्तजी का बिल्ले के प्रति विशेष प्रेम है और इसी कारण उन्होंने एक बिल्ला पाल रखा है, जो उनका बहुत लाडला है।[2] निम्न पंक्तियों में एक मार्जार बाला की चेष्टाओं का चित्रण है—

तूल-सी मार्जार बाला सामने
निरत थी निज बाल क्रीड़ा में—कभी
उछलती थी, फिर दुबक कर ताकती,
घूमती थी साथ फिर फिर पूंछ के।[3]

तूल सी मार्जार बाला की क्रीड़ाओं का सजीव बिम्ब है, जो अत्यन्त प्रभावकारी है। उसके उछलने, दुबककर ताकने, घूमने की क्रियाओं द्वारा गत्यात्मक बिम्ब लाया गया है। यह गत्यात्मकता किसी आलंकारिक भाषा या अप्रस्तुत विधान के द्वारा न लायी जाकर सीधी-सादी स्वाभाविक भाषा में केवल क्रियापदों के द्वारा लायी गयी है।

झिलमिल करते जुगनूं वन में
बिजली छिपती दिपती घन में।[4]

यहाँ बर्षाकालीन वातावरण का गत्यात्मक बिम्ब है। वन में जुगनू झिल-

१. ग्राम्या, पृ. १७
२. शांति जोशी—सुमित्रानंदन पंत : जीवन और साहित्य, भूमिका
३. वीणा-ग्रंथि, पृ. १०७
४. युगपथ, पृ. १४९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मिल करते हैं। घन में बिजली कभी कौंधती है तो कभी लीन हो जाती है। किन्तु बिजली के छिपने और दिखने की क्रियाओं को व्यक्त करने के लिए 'छिपती दिपती' क्रियाओं का प्रयोग हुआ है। यहाँ प्रयुक्त भाषा चित्रधर्मी है। लघु वर्णों के बार-बार प्रयोग से क्रिया-व्यापारों की त्वरित गति का आभास होता है।

'गिरि-विहगिनी' कविता में पक्षी के ग्रीवा-भंग, कुदक-फुदक आदि का गत्यात्मक चित्रण मिलता है—

विहगिनि, एकाकी मैं, बैठा तरु-छाया में,
देख रहा हूँ ग्रीवा-भंगि तुम्हारी सुन्दर,
चपल पंख फडका तुम, कुदक-फुदक डालों पर,
अस्फुट स्वर भरतीं, संभव मुझसे मन में डर।[१]

तरु-विहगिनी अपनी ग्रीवा-भंगी से कवि पर प्रभाव डालती है और कवि एकाकी उसके क्रिया-व्यापारों का दर्शन कर रहा है। इधर गत्यात्मक बिम्ब लाने के लिए क्रियार्थक-संज्ञा, विशेषण एवं क्रिया-पद का प्रयोग किया गया है। 'चपल' पंख का विशेषण है और 'फडका' क्रिया है। इस प्रकार चंचल पंखों को फैलाकर उड़ने का शब्द-चित्र प्रस्तुत किया गया है। फिर 'कुदक-फुदक' और 'भरती स्वर' क्रियाओं द्वारा उसकी मानसिक एवं कायिक क्रियाओं को शब्दायित किया गया है।

कपोत का एक बिम्ब जिसमें चित्रधर्मी भाषा का प्रयोग हुआ है—

चपल कपोत तडित गति से
द्रुत मंडरा सिर पर
मुझे घेरते
धूप छाँह के पर फडका कर।[२]

'चपल' विशेषण एवं 'तड़ित' तथा 'द्रुत' क्रिया-विशेषणों के द्वारा कपोत की चंचलता, तीव्र गति एवं 'मंडराना' क्रिया का चित्र अंकित किया गया है। 'चपल', 'तड़ित' एवं 'द्रुत' में बार-बार ह्रस्व वर्णों को भर कर कपोत की अप्रतिम गति का बोध कराया गया है। फिर 'तड़ित' शब्द ही बिम्बात्मक है। 'तड़ित' में बिजली के कौंधने-बुझने का भाव भरा हुआ है। 'धूप-छाँह' के पर फड़का' में दीर्घ वर्णों की आवृत्ति से पंखों के फैलने का चित्र अनायास मूर्तित हो उठता है। इस प्रकार उपर्युक्त पंक्तियाँ अपनी चित्रात्मक भाषा के कारण कबूतर का गत्यात्मक बिम्ब सामने लाती हैं।

गति जीवन का प्रतीक है और यह जड़ पदार्थों में नहीं होती। किन्तु

१. पतझर, पृ. २३
२. वही, पृ. २५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्राचीन काल से हमारी यह मान्यता रही है कि जड़ में भी चेतन ब्रह्म का वास है। इसलिए हमारे कवियों ने जड़ पदार्थों का भी मानवीकरण कर उसके गत्यात्मक रूप को अंकित किया है। पन्तजी की कला की यह विशेषता है कि वे स्थावर वस्तुओं तथा दृश्यों तक का गतिमान बिम्ब अंकित कर देते हैं। पर्वत तो स्थावर है, पर पन्त के हाथों वह गतिमान हो गया है। 'पर्वत प्रदेश में पावस' कविता की निम्न पंक्तियाँ देखने लायक हैं।

उड़ गया अचानक, लो भूधर
फड़का अपार पारद के पर।
रव शेष रह गये हैं निर्झर।
है टूट पड़ा भू पर अम्बर।[१]

वर्षा के पहले विशालकाय मेघ उड़ते हुए आते हैं। कवि उस मेघ को दीर्घकाय पर्वत के समान देखता है। पर्वत और मेघ की अभिन्नता से यहाँ बिम्ब पूर्ण बनता है। इस पूर्णता में गति सहायता देती है। कवि की कल्पना है कि पर्वत अपार पारद के पंखों को फड़का कर उड़ गया है। जो चला गया है, वह नेत्रों को दिखाई नहीं देता, किन्तु कान देर तक गतिजन्य ध्वनि अनुभव करते हैं। बादल के फूटने के बाद जो झरने मुखरित हो उठे उनकी ध्वनि ही पंख फड़-फड़ाने से उत्पन्न ध्वनि है, जो दूर से कानों में पड़ती है।

'प्रथम रश्मि' कविता में अन्धकारमयी रात्रि के व्यतीत हो जाने पर उषाकाल में प्रकृति का जो परिवर्तन दृष्टिगत होता है, उसका चित्रण करते हुए एक सुन्दर एवं प्रभावशाली बिम्ब प्रस्तुत किया गया है—

सिहर उठे पुलकित हो द्रुम दल
सुप्त समीरण हुआ अधीर,
झलका हास कुसुम अधरों पर
हिल मोती का सा दाना;
खुले पलक, फैली सुवर्ण छवि,
खिली सुरभि, डोले मधु बाल,
स्पन्दन कंपन औ' नव जीवन
सीखा जग ने अपनाना।[२]

उषाकाल के आगमन पर प्रकृति में जो क्रिया-कलाप होते हैं, उनका मूर्तिवत् रूप प्रस्तुत करने की ओर कवि का ध्यान गया है। वृक्षों के दलों का सिहर उठना, सुप्त समीरण का अधीर हो उठना, कुसुमों के अधरों पर हास का झलकना, पलकों का खुलना, सुरभि का खिलना और मधुपों का डोलना—सभी

१. पल्लव, पृ. ५८
२. वीणा-ग्रन्थि, पृ. ८०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

में गतिमयता है और उसके समन्वय से प्रभातकालीन वातावरण का एक संश्लिष्ट चित्र अंकित हो उठा है। इस बिम्ब-विधान में मानवीकरण और लाक्षणिक शैली आदि का सहारा लिया गया है। 'सिहर उठे पुलकित हो द्रुम दल' तथा 'सुप्त समीरण हुआ अधीर' मानवीकरण के सुन्दर उदाहरण हैं। 'झलका हास कुसुम अधरों पर' लाक्षणिक प्रयोग है। तुषार बिन्दुओं के लिए 'मोती का दाना' रूप-साम्य पर आधारित उपमान है। 'खिली सुरभि' अत्यन्त बिम्बात्मक प्रयोग है। सुरभि जैसी अदृश्य एवं अमूर्त सत्ता को ऐन्द्रिय मूर्तिमत्ता दे दी गयी है।

प्राकृतिक उभय वस्तुओं के बीच प्रणय-व्यापार सम्बन्धी बिम्बों की सृष्टि में पन्तजी बहुत आगे जाते हैं। 'पल्लव' की निम्न लिखित पंक्तियाँ प्राकृतिक वस्तुओं के प्रणय-व्यापार सम्बन्धी बिम्ब का श्रेष्ठ उदाहरण है—

देखता हूँ, जब उपवन
पियालों में फूलों के
प्रिये ! भर भर अपना यौवन
पिलाता है मधुकर को।
नवोढ़ा बाल लहर
अचानक उपकूलों के
प्रसूनों के ढिग रुक कर
सरकती है सत्वर ![1]

यहाँ दो बिम्ब प्रस्तुत हैं। एक बिम्ब उपवन और मधुकर के प्रेम का है तो दूसरा प्रसून और लहर के प्रेम का है। प्रथम में उपवन का मधुकर को फूलों के प्यालों में भर-भर अपना यौवन पिलाने का एक सुन्दर बिम्ब प्रस्तुत हुआ है। 'भर-भर' शब्द की आवृत्ति से यौवन पिलाने वाले उपवन के मानसिक उल्लास एवं उमंग की व्यंजना की गयी है। दूसरा बिम्ब प्रभाव-साम्य पर आधारित है। वैसे नवोढ़ा और बाल-लहर में थोड़ा-सा साधर्म्य भी है। प्रस्तुत उद्धरण में लहर को नवोढ़ा रूप में देखा गया है, जो उपकूलों पर स्थित प्रसूनों के पास आकर एक क्षण के लिए रुककर सत्वर सरक जाती है। नवोढ़ा में भी यही धर्म थोड़ी-बहुत मात्रा में पाया जा सकता है। वह पति के पास पहुँचकर भी किसी अज्ञात भय एवं स्वाभाविक लज्जावश उसके पास से जल्दी से जल्दी भाग जाना चाहती है। इसी साधर्म्य पर लहर पर नवोढ़ा का अध्यवसान करके उसके प्रसूनों के पास एक क्षण रुकने और फिर तुरन्त सरककर निकल जाने की क्रिया का बिम्ब बनाया गया है।

'नौका-विहार' कविता गत्यात्मक बिम्बों की दृष्टि से पन्त-काव्य में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। इस एक कविता में प्राकृतिक वस्तुओं के अनेक

१. पल्लव, पृ. ६७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गत्यात्मक बिम्ब पाठकों को मुग्ध कर देते हैं। शुभ्र ज्योत्स्नामयी रात्रि में गंगा की जलधारा चीरकर आगे बढ़ती हुई नौका का गत्यात्मक बिम्ब अपने शब्द-विन्यास एवं अप्रस्तुत-योजना के कारण मोहक है।

मृदु मद मंद, मन्थर मंथर, लघु तरणि, हंसिनी सी सुन्दर,
तिर रही, खोल पालों के पर।[1]

चांदनी रात में फेनिल जलधारा को चीरती हुई आगे बढ़ती नौका के लिए 'हंसिनी' का उपमान सादृश्य एवं साधर्म्य पर आधारित है। चाँदनी की शुभ्र किरणों के पड़ने से नौका भी शुभ्र है और जैसे हंसिनी पानी परतै रती आगे बढ़ती है, वैसे ही यह नौका भी पानी की गति को भेद कर आगे बढ़ रही है। हंसिनी के समान पालों के पर लगे हुए हैं। फिर 'मृदु, मंद-मंद मंथर मंथर' में ऐसा लगता है कि पानी काटकर नौका के बढ़ने की ध्वनि हम सुन रहे हैं। इस प्रकार चाक्षुष एवं श्रव्य संवेदनाओं को प्रभावित करने वाला यह बिम्ब सरस एवं सजीव है।

नौका के आगे बढ़ने से गंगा की जलधारा चंचल हो उठती है और उसकी लहरों में प्रतिबिम्बित तारों भरा आकाश भी चंचल हो उठता है। चंचल लहरों में प्रतिबिम्बित आकाशमंडल का एक संश्लिष्ट बिम्ब द्रष्टव्य है—

नौका से उठतीं जल हिलोर,
हिल पड़ते नभ के ओर-छोर !
विस्फारित नयनों से निश्चल कुछ खोज रहे चल तारक दल
ज्योतित कर नभ का अंतस्तल;
जिनके लघु दीपों को चंचल, अंचल की ओट किये अविरल
फिरती लहरें लुक-छिप पल-पल !
सामने शुक्र की छवि झलमल, पैरती परी-सी जल में कल
रुपहरे कचों में हो ओझल !
लहरों के घूँघट से झुक-झुक दशमी का शशि निज तिर्यक मुख
दिखलाता, मुग्धा सा रुक-रुक ![2]

इस उद्धरण में जो बिम्ब आया है, वह कवि की गहरी अनुभूति, उच्च कल्पना शक्ति एवं प्राणवंत अभिव्यंजना-पाटव से समन्वित है। नौका की गति से गंगा के जल में हिलोरें उठती हैं, फलतः चंचल जल में आकाश का प्रतिबिम्ब इधर से उधर तक हिलता हुआ दिखाई देता है। इससे तारे भी चंचल हो उठते हैं। लहरों में पड़कर चंचल हो उठे जगमग तारों को देखकर कवि कल्पना

१. गुंजन, पृ. १०२
२. गुंजन, पृ. १०२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

करता है कि वे आकाश के अंतस्तल को मशालों से ज्योतित कर अपने विस्फारित नेत्रों से कुछ खोज रहे हैं। मनुष्य भी अंधकार में कुछ खो जाने पर दीपक को प्रकाशित कर खोज करता है। चंचल लहरों में पड़कर तारों के प्रतिबिम्ब दीर्घाकार हो मशालों के समान दिखाई देते हैं। दूसरी ओर लहरें चंचल तारों के लघु दीपकों के बुझ जाने के भय से अपने अंचल की ओट किये लुक-छिप फिरती हैं। यह कवि-कल्पना कितनी स्वाभाविक एवं मोहक है। सामाजिक जीवन में भी हम देखते हैं कि रात्रि के अंधकार में स्त्रियाँ दीपक को बुझने से बचाने के लिए अपने अंचल की ओट किये चलती हैं। लघु दीप, अंचल की ओट आदि प्रयोग काफी बिम्बात्मक हैं। फिर टिमटिमाते दीप लिये चलनेवाली स्त्री कभी प्रकाश में दिखाई देती है, कभी प्रकाश के मंद होते ही अदृश्य हो जाती है। वैसे ही तारों के दीप लिये फिरती लहरों के लिए 'लुक-छिप' क्रिया-विशेषण भाव-व्यंजक तथा सार्थक है। कवि-दृष्टि ज़रा आगे बढ़ती है, तो शुक्र प्रतिबिम्बित दिखाई देता है। शुक्रतारा अत्यन्त प्रकाशमान है। वह गंगा के जल में एक परी के समान तैरता है। परी के जल-विहार से उसका कचभार बिखर जाता है और फैलकर मुख को भी छिपा देता है। इधर शुक्रतारा चाँदनी से दीपित रुपहली लहरों रूपी बालों में ओझल होता है। आगे दशमी के शशि का मुग्धा रूप में बिम्ब है। लहरों में पड़कर कभी चंद्र दिखाई देता है तो कभी ओझल हो जाता है। अतः कवि ने मुग्धा पर उसका अध्यवसान करके यह बताया है कि लज्जा के कारण लहर रूपी घूँघट से झुक-झुक कर देख रहा है। दशमी के शशि की मुग्धा रूप में कल्पना साधर्म्य पर आधारित है। मुग्धा तो प्रिय का मुँह देखना चाहती है, किन्तु संकोचवश घुँघट से झुक-झुक कर देखती है। इस साधर्म्य पर शशि के तिर्यक मुख एवं लहरों के घूँघट उठा-उठाकर देखने की कल्पना की गयी है। इस प्रकार कई बिम्बों के सम्मेलन से गंगा की जल-धारा में प्रतिबिम्बित नभ का एक कमनीय संश्लिष्ट बिम्ब बनता है और पूरा वातावरण पाठक के दृष्टि-पटल के सम्मुख नाच उठता है।

पन्तजी ने कहीं-कहीं नारी एवं प्रकृति का साश्रित बिम्ब भी प्रस्तुत किया है। मानव और प्रकृति का चिरकालिक संबंध है। कहीं प्रकृति मानव की शिक्षिका बनती है तो कहीं मानव प्रकृति से शिक्षा ग्रहण करती है। अतः दोनों परस्पराश्रित हैं। इसी भावना से प्रेरित हो पन्तजी ने यह बिम्ब प्रस्तुत किया है—

जल में शत तडित् लताओं सी सुन्दरियाँ
तिरती थीं, कल क्रीडा करतीं, इठलातीं।
जिनकी देखा देखी ये चंचल लहरें
शोभा ग्रीवा मटकाती, भृकुटि नचातीं।[1]

---

१. युगपथ, पृ. १५६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

यहाँ दो बिम्ब साथ-साथ प्रस्तुत हैं—जल-विहार करती तड़ित लताओं-सी सुन्दरियाँ और उनकी देखा-देखी ग्रीवाभंग करती लहरें। जलक्रीड़ा में इठलाती तिरती सुन्दरियों के लिए 'तड़ितलता' का अप्रस्तुत सादृश्य एवं साधर्म्य पर आधारित प्रभावसाम्य को लेकर खड़ा किया गया है। तड़ित लता-सी आभायुक्त कृशांगी सुन्दरियाँ जल-विहार करती हुई चंचलाएं हैं। इसलिए तड़ित लता और सुन्दरियों में 'चपलता' समान धर्म है। जलक्रीडा के समय भी बलखाती सुन्दरियाँ अपने रूप–लावण्य का एक क्षणिक प्रभाव दर्शक के मन पर डालती हैं, जैसे कि विद्युल्लता अपनी चकाचौंध से दर्शक को एक क्षण के लिए विस्मित कर देती है। इन सुन्दरियों की कायिक चेष्टाओं से शिक्षा लेकर ग्रीवा मटकाती, भृकुटी तानती चंचल लहरों का एक पृथक बिम्ब है। मानवीकरण के सहारे लहरों की क्रियाओं का दर्शन कराया गया है।

सारांश यह कि पन्तजी चाक्षुष बिम्बों के सफल कलाकार हैं। उन्होंने जल-स्थल-नभ पर्यन्त वस्तुओं को चाक्षुष संवेदना से परिपुष्ट कर ऐसा चित्रित किया है कि वे सारे बिम्ब पाठक की चाक्षुष संवेदना को उद्दीप्त करते हैं। चाक्षुष संवेदना को उद्दीप्त करने के लिए उन्होंने वस्तुओं, स्थितियों, दशाओं के स्थिर एवं गत्यात्मक दोनों प्रकार के रूपों को मूर्तित करने का प्रयास किया है, और एन्द्रिय संवेदना को प्रबल करने के लिए आवश्यक कला-सामग्री का भी उपयोग किया है। उनके कुछ बिम्ब खंडित हैं तो कुछ संश्लिष्ट एवं उदात्त हैं। उनके खंडित चाक्षुष बिम्ब क्षणिक स्थिति, अवस्था या दशा के बोधक हैं। उनके संश्लिष्ट बिम्ब किसी वस्तु, अवस्था एवं स्थिति का व्यापक एवं स्थायी प्रभावोत्पादक चित्र अंकित करने में सक्षम हैं।

श्रव्य बिम्ब

श्रव्य बिम्ब का आधार श्रुति-संवेद्य ध्वनियाँ हैं। ऐन्द्रिय संवेदनाओं में चाक्षुष संवेदना का धरातल अधिक स्थूल है, जिसकी अपेक्षा ध्वनि-संवेदना सूक्ष्म अनुभूति पर आधारित है। ध्वनि गहरी अनुभूति पैदा करती है और हृदय को झंकृत करती है। यही कारण है, कवि लोग अपने काव्य में धीमी ध्वनियाँ, करधनी की झंकार, पक्षी का कलरव, पशुओं की ध्वनि, बीन, मृदंग, मंजीर, तूर्य, सारंगी आदि वाद्य यंत्र तथा वस्त्राभूषणों की ध्वनियों का समावेश कर अपने वर्ण्य विषय की ऐन्द्रिय प्रेषणीयता बढ़ाने का प्रयास करते हैं। "श्रावणिक बिम्ब स्पष्टतः शब्द-संयोजित प्रकृत ध्वनि-चित्र ही होते हैं। शब्द-ध्वनियों के द्वारा कवि काव्य में एक विशेष वातावरण के परिवेश का निर्माण करता चलता है और प्रायः वर्णध्वनि, छान्दस लय, तुकान्त, अनुप्रास, अनुरणात्मक एवं ध्वन्यर्थ व्यंजक शब्दों के द्वारा श्रावणिक बिम्बों का निर्माण करता है।"[1] इस कथन से

१. डॉ० सुरेन्द्र माथुर—काव्य-बिम्ब और छायावाद, पृ. ११६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्पष्ट है कि श्रव्य बिम्बों के दो भेद माने जा सकते हैं। प्रथम वर्ण ध्वनि, छान्दस लय, तुकान्त आदि पर आधारित श्रव्य बिम्ब, जो साधारणतः अनुप्रास की कोटि में आता है और द्वितीय, अनुकरणात्मक एवं ध्वन्यर्थ व्यंजक शब्दों पर आधारित श्रव्य बिम्ब जिसे अंग्रेज़ी में 'आनामाटोपिया' कहा जाता है। यही बात डॉ० केदारनाथसिंह ने कही है --"ध्वनि अथवा नाद-कल्पना का उपयोग कविता में दो प्रकार से होता है। उसका एक प्रकार तो अलंकार-विधान के अन्तर्गत आता है, जिसे सामान्यतः 'अनुप्रास' कहते हैं। इसी का एक अधिक विकसित रूप पाश्चात्य काव्य-शास्त्र का 'आँनामाटापोइया' या ध्वन्यर्थ व्यंजना है। उसका दूसरा रूप ध्वनि अथवा स्वर की ऐन्द्रिय कल्पना के रूप में पाया जाता है।"[१] हिन्दी काव्य-धारा के विकास में द्विवेदीयुगीन रचनाओं तक में प्रधान रूप से प्रथम कोटि के अनुप्रासाश्रित श्रव्य बिम्बों की प्रधानता रही। इधर छायावादी काव्य में ध्वन्यर्थ व्यंजक श्रव्य बिम्बों का खुलकर प्रयोग हुआ है। इन ध्वनि-कल्पना से उद्भूत श्रव्य बिम्बों में केवल शाब्दिक या ध्वन्यात्मक चमत्कार ही नहीं होता, उनमें अनुभूति संवलित रहती है और बिना अनुभूति के ऐसे चमत्कार शब्द-जाल या ध्वनि-जाल ही समझे जाएँगे। "नाद-कल्पना का अर्थ जानी-पहचानी ध्वनियों की शाब्दिक अनुकृति मात्र नहीं है। श्रेष्ठ ध्वनि-चित्र वहाँ होता है, जहाँ वह काव्यगत अनुभूति की किसी विशेष स्थिति, भावदशा या क्रिया-व्यापार की अभिव्यक्ति करता है।"[२]

छायावादी कविता में प्रयुक्त श्रव्य-बिम्ब अनुभूति के संस्पर्श से इच्छित प्रभाव उत्पन्न करते हैं। छायावादी कवियों ने श्रव्य बिम्बों की अवतारणा किसी भाव-दशा या क्रिया-व्यापार को मूर्त रूप में प्रस्तुत करने के लिए की है। इसलिए द्विवेदी कालीन अलंकाराश्रित श्रव्य बिम्बों की तुलना में ये बिम्ब बिलकुल नूतन एवं हृदयस्पर्शी हैं। इन कवियों ने भाषा के अर्थ और नाद-व्यंजना की सहायता से दृश्य रूपों की सृष्टि की है। इनके श्रव्य बिम्ब अभिधात्मक शब्द-संगीत पर आधारित हैं और व्यंजनाश्रित भाव-संगीत का इनमें प्रायः अभाव है, क्योंकि "अभिधाश्रित शब्द-संगीत के बिना श्रव्य-बिम्बों की सृष्टि सुकर नहीं है।"[३]

छायावादी कवियों में श्रव्य बिम्बों की अवतारणा में पन्तजी सबसे आगे रहे हैं। इसका प्रमुख कारण उनका शब्द पर असाधारण अधिकार ही है। वे शब्द की अन्तरात्मा तक पहुँचकर ऐसे ध्वन्यात्मक शब्दों का प्रयोग करते हैं कि श्रव्य बिम्ब निर्मित होते हैं। तभी तो कहा जाता है कि पन्त की भाषा चित्र-राग और चित्र-संगीत पर आश्रित है। पन्त जी के काव्य में प्राप्त श्रव्य बिम्बों

---

१. डॉ० केदारनाथसिंह—आधुनिक हिन्दी कविता में बिम्ब-विधान, पृ. १४५
२. डॉ० केदारनाथसिंह—आधुनिक हिन्दी कविता में बिम्ब-विधान, पृ. १४६
३. डॉ० कुमार विमल—छायावाद का सौन्दर्यशास्त्रीय अध्ययन, पृ. २०५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

की तीन कोटियाँ मानी जा सकती हैं—मानव सम्बन्धी, मानवेतर प्राणी संबंधी तथा जड़ प्रकृति सम्बन्धी। आगे इन तीनों वर्गों में प्राप्त बिम्बों पर विचार किया जाएगा।

(अ) मानव संबंधी श्रव्य बिम्ब

इसमें वे सारे बिम्ब लिये जा सकते हैं, जो मानव, उसके आभूषण, वाद्य-यंत्र एवं हथियारों की ध्वनि-कल्पना पर आधारित हैं। पन्तजी के काव्य में ऐसे श्रव्य बिम्ब अधिक मात्रा में मिलते हैं। मानव-जीवन में विरह एक सहज घटना है और उस स्थिति में उसका विलाप करना स्वाभाविक है। किन्तु विरह को ध्वनि-चित्र में प्रस्तुत करना कुशल कवि का ही काम है। पन्तजी ने विरह का जो ध्वनि-चित्र अंकित किया है, देखने योग्य है—

विरह !—अहह, कराहते इस शब्द को
किस कुलिश की तीक्ष्ण, चुभती नौक से
निष्ठुर विधि ने अश्रुओं से है लिखा !![1]

इसमें आया 'अहह' ऐसा प्रयोग है जो ध्वनि-कल्पना पर आश्रित है और जो विरही का एक साकार चित्र श्रवणों द्वारा हृदय पर अंकित करता है। सुनते ही ऐसा लगता है मानो कोई आसपास बैठकर कराह रहा है।

विरह का ऐसा ही एक ध्वनि-चित्र और देखा जा सकता है, जिसमें विरह की सिसकियाँ ही नहीं, आँसू के मेघों की उमड़-घुमड़ भी है—

सिसकते हैं समुद्र से मन,
उमड़ते हैं नभ से लोचन,[2]

इसमें आयी दो क्रियाएँ 'सिसकना' और 'उमड़ना' पूरा बिम्ब उतार कर हमारे सामने प्रस्तुत करती हैं। 'सिसकना' क्रिया भावावेश की स्थिति में नियंत्रण तोड़ हाहाकार भरने का बिम्ब अंकित करती है तो 'उमड़ना' क्रिया वर्षाकालीन मेघों के समान आँसू के उमड़ने का चित्र रख देती है।

मानव-जीवन की आकांक्षा को निर्झरणी के रूप में निरूपित करते हुए नीचे एक श्रव्य-बिम्ब आया है, जो आलंकारिक होते हुए भी आकांक्षा की अबाध गति दिखाने में पूर्ण समर्थ है—

यहाँ प्राण पुलिनों को भावों से स्पंदित कर
जीवन की आकांक्षा बहती कल कल ध्वनि में,[3]

जैसे कोई निर्झरणी अपनी तरंगों से पुलिनों को स्पंदित कर कल-कल

१. वीणा-ग्रंथि, पृ. १३२
२. पल्लव, पृ. ७१
३. रजतशिखर, पृ. ४९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ध्वनि में झरती है, वैसे जीवन की आकांक्षा प्राण के पुलिनों को भावों से स्पंदित कर कल-कल बह रही है। यहाँ 'कल कल' ध्वनि निर्झरणी का बिम्ब प्रस्तुत करती है और साँगरूपक की अवतारणा से अबाध प्रवाहित आकांक्षा का चित्र भी मानस-पटल पर अंकित हो जाता है।

पंतजी ने स्वर-माध्यम से धोबियों के उल्लसित नृत्य का जो चित्रण किया है, वह श्रव्य बिम्ब की दृष्टि से सर्वोत्तम है—

लो छन छन, छन छन,
छन छन, छन छन,
नाच गुजरिया हरती मन !
धनि के पैरों में घूँघरू कल,
नट की कटि में घंटियाँ तरल,
वह फिरकी-सी फिरती चंचल
नट की कटि खाती सौ सौ बल,
X X X X
उड़ रहा धाधिन, धातिन,
औ, 'हुडुक धुडुकता ढिम ढिम ढिम,
मंजीर खनकते खिन खिन खिन खिन,
मद मस्त रजक, होली का दिन,
X X X X
फहराता लहँगा लहर लहर
उड़ रही ओढनी फर फर फर।[1]

'छन छन' का प्रयोग बार-बार करके नृत्यनिरत गुजरिया के पैरों में बँधे घूंघरू की ध्वनि का सजीव चित्रण हुआ है। 'धाधिन, धातिन' में ढोलक का स्वर, 'ढिम ढिम' में हुडक का स्वर और 'खिन खिन खिन' में मंजीर की ध्वनि मुखरित है। गुजरिया की ओढनी के उड़ने में फर फर फर की ध्वनि सुनायी पड़ती है। इस प्रकार विभिन्न ध्वनियों के सम्मेलन से नृत्य का एक ध्वनि-चित्र अंकित होता है।

पन्तजी ने अनेक श्रव्य-बिम्ब अंकित किये हैं। घूंघट भारतीय नारी का सांस्कृतिक आभूषण है, जिसका श्रुति-बिम्ब इस प्रकार बनाया गया है—

कटनी के घूंघट रुनझुन
(बज बज कर मृदु गाते गुन।)[2]

---

१. ग्राम्या, पृ. ३१–३२
२. वीणा-ग्रन्थि, पृ. २४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

'रुन झुन' में घूँघट की ध्वनि मुखरित हुई है, जो अत्यन्त श्रुति-मधुर लगती है। वैसे ही पायल, रजत घंटियों आदि के ध्वनि-चित्र भी द्रष्टव्य हैं।

(१) बज पायल छम
छम छम।[1]

(२) रजत घंटियाँ बजती छन छन,
स्वर्णिम पायल झंकृत झन झन।[2]

कवि ने हथकड़ियों की ध्वनि के प्रति भी अपना मोह दिखाया है।

तड़क रहीं हथकड़ियाँ झन झन।[3]

पन्तजी ने चरागाहों के ग्रामीण जीवन को देखा-परखा है और साँझ के समय चरागाहों से लौटने वाले जानवरों के गले की धीमी-धीमी टनटनाती घंटियों की ध्वनि भी सुनी है। तभी तो कवि विस्मय के साथ प्रश्न करता है कि यह टनटनाती ध्वनि किस अपरिचित स्थान से मुखरित हो रही है। निम्न लिखित पंक्तियाँ रहस्यात्मक होती हुई भी अपना श्रव्य बिम्ब पृथक् प्रस्तुत करती हैं—

साँझ के धुँधलके में
धीमी धीमी
टिनटिनाती घंटियों की ध्वनि
किन अनजान चरागाहों से
आ रही है।[4]

मनुष्य के हथियारों, वाद्य-यंत्रों आदि की ध्वनियों का भी कवि को ज्ञान है और तत्सम्बन्धी कई श्रव्य-बिम्ब उसके काव्य में खोजे जा सकते हैं। 'वीणा की गुंजार'[5] 'डम-डम-डम डमरू-स्वर,'[6] 'घमक घमाघम रहा मृदंग',[7] 'वीणा की मृदु झंकार',[8] 'इन्द्र धनु की सुनकर टंकार',[9] 'बज मृदंग ढिमिक ढिमिक स्वन'[10] आदि नाद-सौन्दर्य एवं सहज ध्वनि-कल्पना के सुन्दर उदाहरण हैं। कवि को युद्ध सम्बन्धी बाजों की ध्वनियों का सहज ज्ञान है, जिसका परिचय इन पंक्तियों में प्राप्त होता है—

सुनो, प्रयाण के विषाण तूरि भेरि बज उठे,
घनन, पणव, पटह प्रचंड घोष कर गरज उठे।[11]

---

१. स्वर्ण-धूलि, पृ. २८
२. उत्तरा, पृ. १११
३. वही, पृ. ५१
४. कला और बूढ़ा चाँद, पृ. २६
५. वीणा-ग्रन्थि, 'उत्सर्ग' कविता
६. ज्योत्स्ना, पृ. ९१
७. ग्राम्या, पृ. ४४
८. पल्लव, पृ. ७१
९. वही, पृ. ७१
१०. किरण वीणा, पृ. १२१
११. युगपथ, पृ. ८४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(आ) मानवेतर प्राणी से सम्बन्धित श्रव्य बिम्ब

प्रकृति-सौन्दर्य के सूक्ष्म पर्यवेक्षक कवि पन्त ने जहाँ प्रकृति के नाना बिम्ब अंकित किये हैं, वहाँ प्रकृति की ध्वनियों की सूक्ष्म संवेदनाएँ प्राप्त करके तत्संबंधी श्रव्य-बिम्बों से अपने काव्य को ऐन्द्रिय बनाने का प्रयत्न किया है। प्रकृति के चेतन प्राणियों में पशु-पक्षियों का भी समावेश होता है और पक्षियों में कोकिल, मोर, तोता, चातक, कबूतर, मुर्गा, पशुओं में हाथी, घोड़ा, हिरण, बन्दर आदि के प्रति कवि का स्वाभाविक एवं सहज अनुराग है। कूर्माचल के निसर्ग सिद्ध वातावरण में पालित इस कवि को इन पशु-पक्षियों की प्रत्येक चेष्टाओं का ही ज्ञान नहीं है, अपितु उनकी ध्वनि-संवेदनाएँ भी प्राप्त हैं। फलतः वह श्रुति-बिम्बों के द्वारा इन पशु-पक्षियों को अपने काव्य में चिरन्तन बनाने में सफल हुआ। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

(१) भिखारी बन सारंग समाज
उधर पुकार रहा है पी-पी.।[1]

(२) केकी की मृदु केका ध्वनि[2]

(३) विहग कुल की कलकंठ हिलोर[3]

(४) झिल्लियों की झँकार[4]

(५) आम्र मंजरित, मधुप गुंजरित,
कुसुमित फल द्रुम पिक कल कूजित[5]

(६) संध्या का गहराया झुट-पुट
भीलों का सा धरे सिर मुकुट
हरित चूड़ कुकड़ू कूँ कुक्कुट।[6]

(७) रोती भू झिल्ली सी झन-झन[7]

(८) भ्रात बुद्धि की प्रेत समस्याएँ मानव कृत,
जो अरण्य रोदन करती युग के मानस में,
निर्जन खण्डहर में झिल्ली सी झींख-झींख कर।[8]

(९) मौमा के छत्ते करते फूटे कानों में भन-भन।[9]

(१०) काँव-काँव कर आँगन में कौए गाते थे स्वागत।[10]

(११) चिड़ियों से ही चहक 'दिवस' फुर-फूर उड़ जाते
उर में उड़ती रंग-पंख स्मृतियाँ बखेर कर[11]

---

१. वीणा-ग्रंथि, पृ. ४६
२. वही, पृ. ५७
३. पल्लव, पृ. ९१
४. वही, पृ. १५३
५. ग्राम्या, पृ, ५५
६. स्वर्ण धूलि पृ. ८५
७. उत्तरा, पृ. ५३
८. सौवर्ण, पृ. ४९
९. अतिमा, पृ. २४
१०. वही, पृ. २८
११. किरण वीणा, पृ. १९१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(१२) जुट स्यार चीखते
हू, हू ![1]

(१३) कूँ–कूँ डर से रोते बन्दर[2]

(१४) संजो रही कोयल रट कू–कू ।[3]

ऊपर के उदाहरणों में (१) अत्यन्त भाव-व्यंजक ध्वनि-चित्र है । सारंग समाज की दीनता एवं हीनता 'पी-पी' ध्वनि में बिम्बित करता है । (२) में केकी की मृदुल ध्वनि को रूपायित किया गया है । (३) में पक्षियों के झुण्ड के संयुक्त स्वर को मूर्तित करने के लिए 'कल कंठ हिलोर' सशक्त एवं भावगर्भित प्रयोग है । (४) में झिल्लियों की ध्वनि का सार्थक प्रयोग है । (५) में 'मधुपों के गुंजन' और 'पिक के कल कूजन' से श्रुति-बिम्ब के साथ ही वसन्त का बिम्ब भी अंकित किया है । (६) में संध्याकालीन झुट-पुट में बाँग लगाते मुर्गे का श्रव्य बिम्ब अत्यन्त स्वाभाविक है । (७) में भू के रोदन को अप्रस्तुत झिल्ली की ध्वनि के द्वारा मूर्तित करने का प्रयास किया है । (८) में प्रेततुल्य जटिल समस्या जैसे अमूर्त विषय के प्रभाव को प्रभावशाली बनाने के लिए श्रव्य-बिम्ब की योजना की गयी है । वैज्ञानिक चमत्कार में उलझी मानव की भ्रान्त बुद्धि अनेक विभीषिकाओं की जननी है । उससे निर्मित मानव-मानस को उद्वेलित करती समस्याओं के प्रभाव को 'अरण्य रोदन' एवं 'झिल्ली सी झींख-झींख कर' जैसे प्रयोगों से बिम्बित करने का सफल प्रयास किया गया है । 'झींख-झींख' में रह-रह उत्पन्न समस्याओं का श्रव्य बिम्ब सजीव हो गया है । (९) में आया बिम्ब अत्यन्त भावाकुल है । कनफटे के पास जा कर 'भन-भन' की ध्वनि करने पर उसको जो क्रोध एवं क्षोभ उत्पन्न हो सकता है, उसकी भी व्यंजना यहाँ की गयी है । (१०) में जो श्रव्य बिम्ब आया है, वह मानव के अंधविश्वासों पर आधारित है । बहुधा यह माना जाता है कि किसी अतिथि के आगमन की सूचना में कौआ 'काँव-काँव' करता है । अतः 'काँव-काँव' की ध्वनि के द्वारा वह अतिथि का स्वागत कर रहा है । कौए का यह श्रव्य बिम्ब भाव व्यंजक है । उद्धरण (११) में 'दिवस' के बीत जाने के भाव का अध्यवसान चहक कर फुर-फुर उड़ती चिड़ियों पर किया गया है । दिवस के जल्दी-जल्दी भाग जाने की तुलना चिड़ियों के उड़ जाने की क्रिया से की गयी है । 'फुर-फुर' में पंख फड़-फड़ाकर एक साथ उड़ जाती चिड़ियों की ध्वनि निक्षिप्त है । वैसे ही उद्धरण १२, १३ व १४ में क्रमशः सियार, बन्दर और कोकिल के श्रव्यबिम्ब अत्यन्त स्वाभाविक हैं ।

पन्तजी ने कई ध्वनियों का मिश्रण करके श्रव्य-बिम्बों को अत्यन्त भाव-

---

१. पतझर, पृ. २६३ २. पतझर, पृ. २६४
३. वही, पृ. २६४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

व्यंजक एवं प्रभावकारी बनाया है। ऐसे श्रव्य बिम्बों से बहुधा किसी भाव-दशा, क्रिया-व्यापार या वातावरण का प्रभाव अंकित करने का प्रयास किया गया है। उदाहरण के लिए निम्न पंक्तियों में चातक की पी-पी ध्वनि और झरने के 'झर-झर' की ध्वनि को मिश्रित कर एक विशेष अवस्था का बोध कराया है—

पर, जब पी–पी ध्वनि सुनकर,
अविरल पिघल–पिघल झर–झर,
गिरते हैं बन हिम सीकर वे
तब कहलाते निर्मल जल ![1]

इस अवतरण में श्रव्य-बिम्ब एक विशेष भाव-दशा का बोधक है। चातक एवं मेघ का प्रेम कवि-समय है। चातक की 'पी-पी' ध्वनि सुनकर मेघ का हृदय पिघल-पिघल कर झर-झर बरस पड़ता है। प्रेम का प्रभाव इन पंक्तियों में स्पष्ट प्रकट किया गया है।

पन्तजी के श्रव्य बिम्बों में निम्नलिखित श्रव्य बिम्ब का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है—

पपीहों की पीन पुकार,
निर्झरों की भारी झर–झर,
झींगुरों की झीनी झनकार
घनों की गुरु गंभीर घहर,
बिन्दुओं की छनती छनकार
दादुरों के वे दुहरे स्वर।[2]

कवि ने 'पपीहों की पीन पुकार', निर्झरों की भारी झर झर, झींगुरों की झीनी झनकार, घनों की गंभीर घहर, बूँदों की छनकार और दादुरों के दुहरे स्वर के द्वारा पावस ऋतु का संश्लिष्ट बिम्ब अंकित किया है।

बाँसों के झुरमुट में सन्ध्या समय झुंडों में चहकती चिड़ियों की यथार्थ ध्वनि का पन्तजी ने चित्र अंकित किया है, पन्तजी की यह अति सूक्ष्म ध्वनि-संवेदना उनके बिम्ब को ऐन्द्रिय बनाती है और पाठकों के हृदय में संध्या के वातावरण का चित्र अंकित करती है—

बाँसों का झुरमुट–
सध्या का झुटपुट–
लो, चहक रहीं चिड़ियाँ
टी–वी–टी–टुट्–टुट्।[3]

---

१. वीणा–ग्रंथि, पृ. २२ २. पल्लव, पृ. ६९
३. युगपथ, पृ. २५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मनोभावनाओं से संवलित पन्त के कुछ श्रव्य बिम्ब मोहक एवं रमणीय हैं। निम्न पंक्तियों में चिड़ियों और मधु मक्खियों को अपना सहचर बनाने के लिए लालायित नादान शिशु की नादान कल्पना से समन्वित श्रव्य बिम्ब अपनी सहजता एवं स्वाभाविकता के कारण पाठक पर अमिट प्रभाव डालने में सक्षम है —

चूँ चूँ करती चिड़ियाँ सुन्दर
फूल पाँखुड़ी उड़ती फर् फर्
उन्हें बनाने निज सुख सहचर
पास बुलाता वह इंगित कर !
सोच रहा ज्यों एकटक नयन,
मौ माखी क्या कहती भन भन
कानों में भर गुंजन।[1]

चूँ चूँ करती चिड़ियाँ, फर् फर् उड़ती फूलपाँखुड़ी, कानों में भन भन का गुंजन करती 'मौ माखी' कमनीय श्रव्य बिम्ब प्रस्तुत करती हैं।

विभिन्न जीवों की श्रुत्य संवेदना का अद्भुत परिचय देनेवाले वर्षाकाल का एक सुन्दर चित्र 'स्वर्ण धूलि' में आया है, जिसमें दादुर की टर टर, झिल्ली की झन झन, मोर का म्याँउ म्याँउ, चातक का पिउ पिउ, मेघ का घुमड़ घुमड़ कर गर्जन सब मिलकर वर्षा का समा बाँधते हैं –

दादुर टर टर करते, झिल्ली बजतीं झन झन,
म्याँउ म्याँउ रे मोर, पिउ पिउ चातक के गण !
उड़ते सोन बलाक आर्द्र स्वर से कर क्रंदन,
घुमड़ घुमड़ घिर मेघ गगन में भरते गर्जन ![2]

महानाश से त्रस्त जीव-जन्तुओं का श्रव्य-बिम्ब, जिसमें सिंह, हाथी, कपि आदि की ध्वनि-संवेदना का परिचय मिलता है, इस प्रकार है—

सिंह गुहाओं में दहाडते महात्रास से,
गज चिंघाडते जल सीकर बरसा सूँडों से,
दीप्त धूम्र शृंगों से आहत ऋक्ष कूदते,
गिर गिर पड़ते विहग, रुदन करते कपि कँप-कंप ![3]

(इ) जड़ प्रकृति पर आधारित श्रव्य बिम्ब

प्रकृति के प्रति पन्तजी की आत्मीय भावना रही है। वे प्रकृति के प्रत्येक

---

१. स्वर्ण किरण, पृ. ९७
२. स्वर्ण धूलि, पृ. ८४
३. रजत शिखर, पृ. ६५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कंपन-स्पंदत से परिचित हैं। उनके काव्य में नदी-नालों, सरिता, झरना, विभिन्न ऋतुएँ, आंधी-पानी, आदि के श्रव्य बिम्ब बड़ी मात्रा में पाये जाते हैं।

पन्तजी का सरिता के प्रति विशेष आकर्षण रहा है और उसके प्रवाह के अनेक श्रव्य बिम्ब उनके काव्य में अंकित हैं, जैसे—

(१) कैसा ऊँचा नीचा पथ है
मा ! उस सरिता का अविरल
तेरे गीतों को वह जिसमें
गाती है टल् टल् छल् छल् ![1]

(२) एक भाव से अपने सुख दुख
तुझे सुनाती है कल् कल् ![2]

(३) यह कैसा जीवन का गान
अलि कोमल कल कल टलमल ?
अरी शैल बाले नादान,
यह अविरल कल कल छल छल ?
झरमर कर पत्रों के पास,
रणमण रोड़ों पर सायास,
हँस हँस सिकता से परिहास
करती हो अलि, तुम झलमल ![3]

उपर्युक्त उदाहरणों में सरिता और झरने का बिम्ब ध्वनियों द्वारा अंकित किया गया है। तृतीय उद्धरण सक्षम बिम्ब-योजना का उदाहरण है, जिसमें निर्झरणी के प्रवाह को कल कल टल मल, कल कल छल छल जैसे ध्वन्यर्थ व्यंजक शब्दों से रूपायित किया गया है। उसके प्रवाह में कभी पत्रों से होकर जाना पड़ता है तो कभी उसके मार्ग पर कई रोड़े अटकते हैं। पत्रों पर झरमर, रोड़ों पर रणमण तथा सिकता पर झलमल की ध्वनियाँ सूक्ष्म ध्वनि-संवेदना के द्योतक हैं।

सागर और तरंगों का श्रव्य बिम्ब निम्न पंक्तियों में अंकित है—

जीवन का जलनिधि डोल-डोल
कल–कल छल–छल करता किलोल ![4]

'डोल-डोल' में सागर के उमड़ने तथा 'कल–कल छल–छल' में तरंगों के एक दूसरे को धक्का देते उठने-गिरने की ध्वनि का मूर्त चित्र है। वैसे ही यमुना के तट पर लहरों का आश्लेष करने तथा कगारों की बालू का पानी में गिरने का स्वर 'छप् छप्' में मूर्तित हुआ है—

---

१. वीणा-ग्रन्थि, पृ. ३६ २. वीणा-ग्रन्थि, पृ. ३७
३. पल्लव, पृ. १२५ ४. गुंजन, पृ. ७७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

बदल गया सहसा जल का फेनिल छाया पट,
छप् छप् टूट रहा चाँदी सा बालू का तट।[1]

वर्षाकालीन घन, आँधी, बिजली के श्रव्य बिम्ब भी पन्त-काव्य में प्रचुरता से प्राप्त होते हैं,

(१) उमड़ घुमड़ गर्जन भर
झरते घन, बन जल कण।[2]

(२) झम झम झम झम मेघ बरसते रे सावन के,
छम छम छम गिरतीं बूँदें तरुओं से छन के !
चम चम बिजली चमक रही छिप उर में घन के,
थम थम दिन के तम में सपने जगते मन के ![3]

(३) बिजली वन में काँप रही थर थर थर
आँधी वन में टूट रही हर हर हर ![4]

ऊपर के उद्धरणों में प्रथम में वर्षाकालीन मेघों के उमड़-घुमड़ कर पानी रूप में झरने का बिम्ब है। द्वितीय में सावन का चित्र अंकित है। 'झम झम झम झम' में घनघोर वर्षा करते मेघों का दृश्य सामने आता है। 'छम छम छम' में तरुओं से छनकर गिरती बूँदों का दृश्य अंकित है। 'चम चम' में बिजली के कौंधने का स्वरूप सामने आता है। तृतीय उद्धरण बिजली और आँधी का बिम्ब प्रस्तुत करता है। 'थर थर थर' में घन में काँपती बिजली तथा 'हर हर हर' में वृक्षों की शाखाओं को झकझोर कर आगे बढ़ती आँधी का बिम्ब है।

पवन एवं आँधी पर आधारित श्रव्य बिम्बों में से एकाध उदाहरण नीचे दिये जा रहे हैं—

(१) सर्-सर् मर्-मर् झन्-झन् सन्-सन्-
गाता कभी गरजता भीषण,
बन-वन, उपवन,
पवन, प्रभंजन ![5]

(२) झूम झूम, झुक झुक कर
भीम नीम तरु निर्भर
सिहर सिहर थर् थर् थर्
करता सर् मर्
चर् मर् ![6]

---

१. युगपथ, पृ. १५६
२. वाणी, पृ. २९
३. स्वर्णधूलि, पृ. ८३
४. उत्तरा, पृ. ७४
५. ज्योत्स्ना, पृ. १६
६. युगवाणी, पृ. ९३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(३) अंधड़ आया
धूल धुंध के रथ पर चढ़कर
गिरि कंधों से कूद
रेणु-अश्वों पर बढ़कर !
ढहते तृण-तरु सिहर,
झर रहे पत्ते झर झर !
भरी धूल आँखों में, मुँह में,
थू, थू ![1]

प्रथम अवतरण में पवन के मृदु एवं उग्र रूप के बिम्ब अंकित हैं। 'झन्-झन्, सन्-सन्' में उसका गाता हुआ मृदुल रूप है, तो 'सर् सर्, मर् मर्' में वृक्षों के हिलाने, कंपाने घर्षण करने का भयंकर रूप है। द्वितीय में झंझा में हिलते-डुलते, सिहर-सिहर काँपते, नीम का भीषण दृश्य ध्वनियों के सहारे प्रस्तुत किया गया है। तृतीय में आँधी का मानवीकरण करते हुए उसके आगमन और प्रभाव का दृश्य सामने रखा गया है।

'सी सी सी सीटी बजती बाँसों के वन में',[2] प्रलय में हृदय दाह से थर थर कँपती धरती,[3] ठन ठन ठन करता घंटा[4] सब पृथक्-पृथक् श्रव्य बिम्ब प्रस्तुत करते हैं। निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि पन्त-काव्य नाना प्रकार की ध्वनि-संवेदनाओं का भण्डार है।

स्पृश्य बिम्ब

ऐन्द्रिय संवेदना का यह स्थूल और प्रत्यक्ष स्तर है। इसमें स्पर्शजन्य संवेदना द्वारा बिम्ब-निर्माण होता है। "पेशल या कोमल, कर्कश, कठोर आदि विशेषण इस प्रकार के स्पर्श-बिम्बों के वाचक हैं, जिनके बिम्बात्मक रूप अति प्रयोग के कारण जड़ बन गये हैं।"[5] छायावादी काव्यों में स्पृश्य बिम्बों की ओर कवियों का उतना लगाव दिखाई नहीं देता। प्राकृतिक वस्तुओं के एकाध स्पृश्य बिम्बों को ढूँढ़ा जा सकता है, किन्तु मानवीय स्पर्शजन्य मांसल अनुभूति के चित्रों का प्राय: अभाव ही है। कारण यह है कि छायावादी कवियों की नारी और उसके प्रति प्रेम पार्थिव धरातल का न होकर काल्पनिक एवं मनोजगत् का रहा। छायावादी नारी कल्पना की रानी है और उसके प्रति प्रेम शारीरिक भूख न होकर एक काल्पनिक स्वप्न मात्र है। फलत: छायावदी कवियों को नारी के शारीरिक प्रेम की अभिव्यक्ति का अवकाश नहीं रहा। यही बात पन्तजी के संबंध में भी कही जा सकती है। उनके यहाँ प्राकृतिक पदार्थों की स्पर्शजन्य अनुभूति के ही

---

१. पतझर, पृ. २६२
२. पतझर, पृ. २६२
३. उत्तरा, पृ. ६९
४. युगवाणी, पृ. ५३
५. डॉ० नगेन्द्र—काव्य-बिम्ब, पृ. ९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अधिकतर चित्र मिलते हैं और ऐसी वस्तुओं की स्पर्श-संवेदनाओं से ही वे परिचित हैं। सघन, गीला, स्निग्ध, चटुल, चिकना, मृदुल, मसृण, रेशमी, मखमली, मार्दव, तप्त आदि उनकी स्पर्श-संवेदना को व्यक्त करते हैं। पन्तजी की दृष्टि सघन गगन में अपना भीमाकार रूप धारण किये दुर्बल मेघों पर पड़ती है तो वे लिखते हैं—

विलोड़ित सघन गगन में आज
विचर रहा है दुर्बल घन भी
धर कर भीमाकार,—[1]

'सघन गगन' में गगन जैसे शून्य पदार्थ को भी स्पर्श-संवेदना से मूर्तित करने का प्रयास है। सघन में 'घनत्व' की स्पर्श-संवेदना है। इससे शून्य गगन हमारे लिए सघन स्पृश्य वस्तु रूप में अनुभूत होती है।

पन्त की स्पर्श-अनुभूति वृक्षों के पत्तों के अधरों की मृदुलता एवं कोमलता से परिचित है —

हिला–हिला निज मृदुल अधर
कहते कुछ तरुदल मर्–मर्[2]

यहाँ वृक्ष जैसी अचेतन वस्तु को चेतन-सी कल्पित किया गया है और उसमें अधरों की स्पर्श-संवेदना की अनुभूति कराकर वृक्ष को पूर्ण ऐन्द्रिय बनाने का प्रयत्न हुआ है।

पन्तजी ने 'स्मिति,' 'हास' जैसी अमूर्त वस्तुओं को भी स्पर्श-संवेदना से भरकर मूर्त रूप प्रदान किया है—

सजल स्निग्ध स्मिति, मधुर मंद गति री
इंदु किरण अमृतोज्वल।
चटुल लहर पर चपल लास कर
मुकुल अधर पर मृदुल हास भरतीं
चूम–चूम स्वप्निल–दल।[3]

इंदु किरणों की स्मिति को 'सजल स्निग्ध' बनाकर उसकी स्पर्श-संवेदना का अनुभव कराया गया है। यही नहीं इन्दु किरण चटुल लहर पर लास करती है तो मुकुलों के अधर पर मृदुल हास भी करती है। 'चटुल-लहर' में 'चटुल' स्पर्श-बिम्ब का निर्माण करता है। मुकुल-अधरों के हास को 'मृदुल' कहकर उसको स्पर्शजन्य बनाया गया है। उसके स्वप्निल दल अर्थात् स्वप्निल पलकों को

---

१. वीणा-ग्रन्थि, पृ. ४६
२. वीणा–ग्रंथि, पृ. ३८
३. ज्योत्स्ना, पृ. ३६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

चूम-चूम कर स्पर्श सुख से पुलकित एवं प्रसन्न कर दिया गया है। इस प्रकार मानवीकरण के द्वारा जड़ पदार्थों की स्पर्शजन्य संवेदनाओं के अनेक चित्र पन्त-काव्य में मिलते हैं।

नव वसन्त के सरस स्पर्श से
पुलकित वसुधा बारंबार।[१]

यहाँ वसन्त और वसुधा का मानवीकरण उनकी स्पर्श संवेद्य अनुभूतियों का बिम्ब प्रस्तुत करता है।

देखता हूँ, जब पतला
इन्द्रधनुषी हल्का
रेशमी घूँघट बादल का
खोलती है कुमुद कला।[२]

यहाँ कुमुद-कला का नारी चित्र प्रस्तुत है, जो बादल का घूँघट ओढ़ती है। इसमें पतला, हल्का, रेशमी आदि शब्द स्पृश्य संवेदना के वाचक हैं। 'पतला' से बारीक, 'हल्का' से कम भारी एवं 'रेशमी' से मसृण एवं चिकने घूँघट का स्पृश्य बिम्ब मूर्तित हो उठता है। वैसे ही 'मृदुल मसृण छायांचल'[३] 'सुरंग रेशमी पंख,'[४] 'मसृण सुरंग छाया पट से छन तन की शोभा,'[५] 'सरिता की जाँघों से सरका लहरा रेशम-सा जल,'[६] आदि में स्पृश्य बिम्ब देखे जा सकते हैं।

रेशमी और मखमली स्पृश्य संवेदना के प्रति पन्तजी की विशेष रुचि है। इसका परिचय कई स्थलों पर मिलता है —

(१) गंध तुहिन से ग्रथित रेशमी पट-सा मसृण समीरण
रंग–रंग के वन फूलों से गुँफित मखमल के शाद्वल।[७]

(२) फूले बहु मखमली, रेशमी, मृदुल गुलाबों के दल।[८]

(३) पीत क्षौम का मसृण भार।[९]

(४) स्वर्ण हरित मखमली शस्य।[१०]

(५) जन धरणी की हरीतिमा लगती
मखमल ज्वाला सी जीवन माँसल।[११]

---

१. पल्लव, पृ. ८३
२. पल्लव, पृ. ६७
३. गुंजन, पृ. ९६
४. गुंजन, पृ. ९६
५. युगपथ, पृ. १११
६. स्वर्ण किरण, पृ. ५१
७. अतिमा, पृ. २६
८. ग्राम्या, पृ. ७६
९. लोकायतन, पृ. ९
१०. लोकायतन, पृ. ९
११. वही, पृ. ४२८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(६) क्षौम-मसृण हो नील चंदोबा
कढा मनोहर ।[1]

इन उद्धरणों में 'रेशमी' शब्द मृदुता, कमनीयता एवं चिकनाहट, 'मखमल' स्निग्धता एवं मृदुलता का सामंजस्य लिये हुए है और इसका प्रभाव स्पृश्य अनुभूति के बिम्बों की सृष्टि करता है ।

पन्तजी ने स्निग्ध फूलों की स्पृश्य संवेदना के द्वारा अपनी मनोरम मित्र बालिका की मृदलता, कोमलता एवं सान्द्रता का बिम्ब दिया है—

रंगीले गीले फूलों-से
अधखिले भावों से प्रमुदित
बाल्य सरिता के कूलों से
खेलती थी तरंग सी नित ।[2]

'दुग्ध फेन' के प्रति कवि का मोह भी देखने लायक है। पन्तजी को 'शारद ज्योत्स्ना' 'दुग्ध-फेन'[3] सी लगती है तो प्रभात का चाँद 'दुग्ध फेन-सा नव कोमल'[4] । दुग्धफेन का पुलकोज्वल स्पर्श-सुख जिसको हुआ है, वह चाँद के स्पर्श का सहज ही अनुभव कर सकता है । 'नीरव पौ फटने का सा मार्दव है मुख पर'[5] बताते हुए कलाकार के मुख की स्निग्धता, मृदुता एवं चिकनाहट समन्वित स्पर्श-संवेदना की अनुभूति जाग्रत की गयी है ।

शीत का मृदुल स्निग्ध त्वच स्पर्श
अलस सुख का करता संचार ।[6]

इन पंक्तियों में स्पृश्य-संवेदना का प्रोज्वल रूप है । शीतकाल की ठंड से कँपते शरीर पर मृदुल स्निग्ध त्वक् स्पर्श की संवेदना अनुभवगम्य है । जिस किसी ने भी इस संवेदन का अनुभव किया है, वह कवि की स्पर्श-संवेदना की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकता ।

घ्रातव्य बिम्ब

साहित्य में घ्रातव्य बिम्ब बिरले ही पाये जाते हैं। गन्ध एक सूक्ष्म एन्द्रिय संवेदना है और यह किसी दृश्य को प्राणवन्त बनाने में अत्यन्त सहायक होती है । कवि दो प्रकार से घ्रातव्य बिम्बों की सृष्टि कर सकता है—गंध-संवेदना से एवं गंध-रूपों के प्रतीक फूलों से । किन्तु गंध रूपों के प्रतीक फूलों आदि के द्वारा निर्मित बिम्बों की बिम्बता बहुत कुछ रूढ़ हो जाती है ।[7] पन्तजी के

१. पतझर, पृ. ३८
२. पल्लव, पृ. ५६
३. गुंजन, पृ. ९७
४. स्वर्ण किरण, पृ. ६८
५. सौवर्ण, पृ. २२
६. लोकायतन, पृ. ३११
७. डॉ. नगेन्द्र—काव्य-बिम्ब, पृ. ९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

काव्य में घ्रातव्य बिम्ब अल्पमात्रा में हैं, और वे सारे बिम्ब खण्ड-बिम्ब की कोटि में ही आते हैं। पन्तजी ने मानव-शरीर की गंध एवं प्रकृति-वस्तुओं की गंध की संवेदनाओं को लेकर घ्रातव्य बिम्बों का निर्माण किया है। पहले मानव-गंध संवेदना पर आधारित बिम्बों का उल्लेख किया जा रहा है—

उड़ता है जब प्राण !
तुम्हारी साड़ी का सित छोर,
सौ वसन्त, सौ मलय
हृदय को करते गंध-विभोर ![1]

प्रस्तुत पंक्तियों में प्रेयसी को गंध का साकार रूप सिद्ध किया गया है। उसकी साड़ी के छोर के उड़ते ही सैकड़ों वसन्त एवं मलय की सुवास उड़ती है, जो कवि के हृदय को गंध-विभोर कर देती है। लाक्षणिक शैली में कवि ने यह प्रतिपादित किया है कि प्रेयसी सैकड़ों वसन्तों में विकसित नाना पुष्पों की सम्मलित सुगंधि एवं मलय पर्वत के चंदन की सुवास से युक्त है। कवि प्रेयसी की इस सुवास में अलि-सा गंध-अंध हो जाता है। इधर केवल घ्रातव्य बिम्ब ही नहीं है। वसन्त का भी एक बिम्ब नयनों के सम्मुख छा जाता है। मलय में स्पृश्य संवेदना भी प्रकट होती है। इस प्रकार शीतल स्निग्ध सुगंधपूरित वातावरण का एक सजीव बिम्ब उपर्युक्त पंक्तियों में अंकित है।

तुम्हारा पी मुख-वास तरंग,
आज बौरे भौंरे, सहकार।[2]

वसन्तकालीन नाना पुष्पों की सुगन्ध से अंधे वाचाल भ्रमर काव्य में पाये जा सकते हैं, किन्तु नारी के मुख-वास तरंग से 'बौरे भौंरे' केवल पन्त की सौन्दर्य कल्पना की उपज हैं। संपूर्ण प्रकृति में कवि प्रेयसी के अनुपम सौन्दर्य की छटा और सुवास पाता है और नायिका के मुख-वास को आम्र मंजरियों की गंध सिद्ध करता है, क्योंकि भौंरे बौरे हो गये हैं।

भक्ति का मानवीकरण करते हुए उसकी देह से उड़ती चंदन की महक से भी कवि परिचित है—

तप्त कनक द्युति देह, सहज चंदन सी वासित,[3]

कवि ने यौवन की मांसल गंध का भी परिचय प्राप्त किया है और उसको स्वस्थ गंध घोषित किया है, प्रेमी-प्रेमिका यौवन के मांसल स्वस्थ गंध पर जीवनोत्सर्ग तक कर बैठते हैं—

१. पल्लविनी, पृ. २४६
२. गुंजन, पृ. ५७
३. स्वर्णकिरण, पृ. ६१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

यौवन की मांसल, स्वस्थ गंध,
नव युग्मों का जीवनोत्सर्ग ![1]

कवि ने प्राकृतिक वस्तुओं की गंध-संवेदना से भी अपने को परिचित कर रखा है और कहीं-कहीं उसकी सूक्षम गंध-संवेदना पाठकों को विमुग्ध कर देती है। कवि ने गंध-संवेदना के आधार पर प्रकृति का उद्दीपनकारी चित्रण कर उसके प्रभाव का सूक्ष्म दर्शन किया है।

उस विकसित, वासित वन में
कुसुमों के अस्फुट अधरों पर
सिहर रहा है कौन विकल
अति चंचल होकर पल पल ![2]

विकसित पुष्पों के वासित वन में मधु-पान के लिए चंचल उड़ते मधुप का यह चित्रण अतीव कमनीय है। वासित वन मधुप में चंचलता भरता है और उसे विकल बना देता है।

कनक छाया में जब कि सकाल
खोलती कलिका उर के द्वार
सुरभि-पीड़ित मधुपों के बाल
तड़प बन जाते हैं गुंजार ![3]

प्रातःकालीन सुनहली आभा में अपने उर के द्वार खोलती कलिकाओं की मादक सुरभि से पीड़ित गुंजन करते मधुप-बालों की विकलता, तड़प आदि का यहाँ सुन्दर चित्रात्मक वर्णन हुआ है। चाक्षुष और श्रव्य बिम्बों से संयुक्त यह घ्रातव्य बिम्ब उल्लेखनीय है।

गंध-गुंजित कुंजों में आज
बँधे बाँहों में छायालोक ![4]

प्रस्तुत पंक्तियों में गंध-संवेदना की एक नयी कल्पना की गयी है। यहाँ कवि गंध की गूँज सुन पाता है, जो सौन्दर्य-बोध की एक नयी दिशा है। गंध-गुंजित कुंज में मादन सुगंधि से ओतप्रोत छायालोक को गलबाँही दिये पड़े दिखाकर कवि ने गंध-संवेदना के प्रभाव का परिचय भी दिया है। अतः डॉ. केदारनाथसिंह का यह कथन कवि पन्त की गंध-संवेदना के सम्बन्ध में बहुत कुछ ठीक उतरता है—"......इन कवियों ने गंध का वस्तुगत चित्रण कम, और उसके प्रति उठने वाली मानसिक प्रतिक्रियाओं का चित्रण अधिक किया है।"[5]

---

१. युगपथ, पृ. ४९
२. वीणा-ग्रन्थि, पृ. ५०
३. पल्लव, पृ. ९१
४. गुंजन, पृ. ६१
५. डॉ० केदारनाथसिंह—आधुनिक हिन्दी कविता में बिम्ब-विधान, पृ. २०७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पन्तजी की गंध-संवेदना में अन्य ऐन्द्रिय संवेदनाओं को भी उचित स्थान मिला है। अन्य संवेदनाओं को गंध-संवेदनाओं से मिलाकर कवि ने उसे प्रगाढ़ रूप प्रदान किया है। जैसे—

शत हर्षित ध्वनियों से आहत
बढ़ा गंधवह नभ की ओर।[१]

'ध्वनियों से आहत गंधवह' एक कमनीय कल्पना है और अमूर्त वस्तु को मूर्तरूप में प्रस्तुत करने का नया उद्यम भी। इसी भावना से प्रेरित हो कवि ऊष्म गंध की भी परिकल्पना करता है—

रोमिल तन की ऊष्म गंध
नासा पुट में भर![२]

कवि कबूतर की ऊष्म गंध का अनुभव करता है और यह 'ऊष्म-गंध' गंध-संवेदना की सूक्ष्मतम पर्त की सूचना देता है।

पन्त-काव्य में प्राकृतिक वस्तुओं से संबंधित घ्रातव्य बिम्ब सुलभ हैं, जैसे—

(१) भीनी चंपा नव भावों की।[३]

(२) गंध पवन में धरती भीनी साँस ले रही,
जाग रहीं वन छायाएँ अँगड़ाई भरतीं।[४]

(३) उड़ता पराग पंखी समीर
भीनी वन सौरभ से भर मन।[५]

(४) उसके नासा पुट में उड़
पैठी सुगन्ध भू-मादन,
फूली थी मधुर करौंदी
महके मद भीने वन![६]

(५) मदिर वनैली गंध, मधुर भीनी महकों से गुंफित
नासा रंध्रों में घुसकर, प्राणों को कर सुख मूर्छित,
शत शत अस्फुट सुमनों की मधु स्मृति उर में भर
लाती![७]

(६) भीनी भीनी भाप सहज ही साँसों में घुलमिलकर
एक और भी मधुर गंध से हृदय दे रही है भर![८]

---

१. पल्लव, पृ. ८४
२. पतझर, पृ. २५
३. स्वर्णधूलि, पृ. १६०
४. रजतशिखर, पृ. ५३
५. लोकायतन, पृ. ६१८
६. वही, पृ, २१०
७. अतिमा, पृ. ११२
८. ग्राम्या, पृ. १०६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(७) उड़ती भीनी तैलाक्त गंध
फूली सरसों पीली–पीली ।[1]

(८) मिट्टी की सोंधी सुगंध से
मिली सूक्ष्म सुमनों की सौरभ ।[2]

उपर्युक्त सभी उद्धरणों में पूरा वातावरण सुरभित हो रहा है। 'भीनी चंपा' की प्रगाढ़ महक प्रसिद्ध है। पूरे बातावरण को वह अपनी गंध से भर देती है। द्वितीय उद्धरण में गंध पवन में भीनी साँस ले रही धरती और अंगड़ाई भरती वन-छायाएँ पूरा बिम्ब उतार देती हैं। तृतीय उद्धरण में मानवीकरण का प्रोज्वल रूप अपनाकर आनंदोल्लासमय वातावरण का चित्र अंकित किया गया है। 'पराग पंखी समीर, मानवी करण की सजीव कल्पना है। चतुर्थ उद्धरण में करौंदी की महक से मदभीने वन का मोहक चित्रण है। पंचम उद्धरण में नाना प्रकार की मधुर महकों के समुच्चय का अमिट प्रभाव देखा जा सकता है। शत-शत अस्फुट सुमनों की मधुर स्मृति से मुग्ध कर डालती हैं। छठे उद्धरण में वर्षा के उपरांत स्निग्ध धूल से उड़ती भाप एक विशेष गंध की अनुभूति कराती है। सप्तम में पीली-पीली सरसों के फूलने पर महक उठती तैलाक्त गंध की सूक्ष्म अनुभूति है। अष्टम में मिट्टी की सौंध और सुमनों की सुगंधि मिलकर मिश्रित गंध-संवेदना उत्पन्न करती है।

आस्वाद्य बिम्ब

आस्वद्य बिम्ब रसनेन्द्रिय संवेद्य बिम्ब हैं। "दृश्य को स्वाद के स्तर पर अनुभव करना तथा कराना कल्पना-व्यापार का सबसे कठिन कार्य है।"[3] यही कारण है कि आस्वाद्य बिम्बों की सृष्टि में बहुत कम कवि सफल हुए हैं। छायावादी कवि सूक्ष्म के प्रति इतने आकृष्ट थे कि स्थूल आस्वाद्य बिम्बों की ओर उनका अधिक आकर्षण नहीं रहा। इसलिए छायावादी काव्य में आस्वाद्य बिम्ब प्रचुर मात्रा में नहीं मिलते।

पन्त-काव्य में मदिरा, मधु, अमृत, गरल आदि के आस्वाद्य बिम्ब प्रचुरता से प्राप्त होते हैं और उनके द्वारा सुन्दर भाव-व्यंजना हुई है, जैसे—

(१) हुई मुझको ही मदिरा आज
हाय क्या गंगा जल की धार !![4]

(२) पिला–पिला जिसको, नयनों की
तू ने प्यास बढ़ाई है;

१. ग्राम्या, पृ. ३५
२. उत्तरा, पृ. १३९
३. डॉ० केदारनाथ सिंह–आधुनिक हिन्दी कविता में बिम्ब-विधान, पृ. २१०
४. वीणा-ग्रंथि, पृ. ७०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उसे तुझी में पाकर तुझको
अपना नव यौवन दे दूँ ![1]

(३) कपोलों की मदिरा पी, प्राण !
आज पाटल गुलाब के जाल ।[2]

(४) छू दिया हृदय का अंधकार !
यह रे किस छवि का मदिर तीर ।[3]

(५) आज उर के स्तर–स्तर में, प्राण !
सजग सौ–सौ स्मृतियाँ सुकुमार,
मर्म में मदिर स्पृहा का भार ![4]

(६) पीकर तिक्त मधुर मधु ज्वाला
रिक्त किया जीवन का प्याला ।[5]

उपर्युक्त उद्धरणों में मन्दिरा की रस्य संवेदना के आधार पर बिम्ब-सृष्टि हुई है। प्रथम उद्धरण में पुनीत प्रेम के असफल होने का चित्रण है। पहले जो प्रेम गंगा-जल की धारा के समान पुनीत-सा लगा, वही विरह-दशा में मदिरा के समान विषैला एवं उन्मादक बन गया। मदिरा तीखी होती है और उसके पान से मनुष्य सुध-बुध खो बैठता है। विरही व्यक्ति के लिए प्रेम उन्मादक एवं तिक्त है क्यों कि वही उसके लिए प्राणलेवा बन जाता है।

द्वितीय उद्धरण में यह बताया गया है कि प्रिय का दर्शन करते रहने पर भी नयनों की प्यास बढ़ती है, जैसे कि शराबी को शराब की मादकता में कभी तृप्ति नहीं होती।

तृतीय में यह सिद्ध किया गया है कि प्रिया के कपोलों की लालिमा रूपी मदिरा पी-पीकर गुलाब पुष्प लाल रंग के हो गये हैं। मदिरा पीने से आँख, गाल, मुख सब लाल-लाल हो उठते हैं। अतः प्रिया के कपोलों की मदिरा पी कर गुलाबों का लाल हो जाना स्वाभाविक है।

चतुर्थ में तीर को भी मदिर बताया गया है। अंधकार को भेदकर प्रकाश फैलानेवाली सुनहली किरणें मदिर हैं। जैसे मदिरा के पीने से मनुष्य का रंग परिवर्तित हो जाता है, वैसे ही मदिर तीर के लगते ही अंधकार के स्थान पर सुनहला प्रकाश फैल जाता है। इस प्राकृतिक परिवर्तन को मदिरा के आस्वाद्य बिम्ब द्वारा स्पष्ट किया गया है।

---

१. वीणा-ग्रंथि, पृ. ७
२. गुंजन, पृ. ५६
३. गुंजन, पृ. ३२
४. वही, पृ. ५२
५. अतिमा, पृ. १२९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पंचम अवतरण में प्रेम की स्पृहा की तीक्ष्णता दिखाने के लिए 'मदिरा' की रस्य-संवेदना का सहारा लिया गया है। 'मदिरा' के द्वारा प्रेमी के हृदय की मस्ती, अतृप्ति एवं विकलता व्यक्त की गयी है।

छठे उद्धरण में मधु पीकर रिक्त किये गये प्याले का चित्र है। 'तिक्त मधुर' कहकर मदिरा की रस्य-सवेदता को मूर्त रूप प्रदान किया गया है।

ऐसे ही 'मदिरा' की रस्य-संवेदना पर अधृत अनेक बिम्ब पन्त-काव्य में मिलते हैं। गरल की रस्य संवेदना के सहारे भी कवि ने कई बिम्बों की सृष्टि की है—

(१) कलह, क्रोध, ईर्ष्या, स्पर्धा का गरल पान कर
हम जीवन का भार बँटाएंगे जन भू पर![1]

(२) प्रेमामृत से गरल घृणा को अपहृत करके।[2]

प्रथम उद्धरण में कलह, क्रोध, ईर्ष्या, स्पर्धा को गरल के समान कटु, एवं घातक सिद्ध कर इनसे मुक्त होने की कामना है। द्वितीय में अमृत और गरल को साथ-साथ रखकर मिश्रित रस्य संवेदना का प्रभाव दिखाया गया है। ऐसे ही मिश्र रस्य-संवेदनाश्रित बिम्ब निम्न पंक्तियों में भी देखा जा सकता है, जहाँ जीवन के सुखद अनुभवों के लिए अमृत और दुखद अनुभवों के लिए विष प्रतीक रूप में प्रस्तुत हैं—

रिक्त अमृत-विष के महकों-से मीठे तीते,—
चौवन मधु निदाघ अब बीते![3]

वैसे ही दुग्धामृत, सुधा मधु की मिठास आदि पर आधृत बिम्ब भी रस्य-संवेदना के द्वारा वस्तु के मूर्तीकरण का सफल प्रयास है—

(१) दुह सुहस्त गोधुक् कोई, सुदुधा गो को नित
हमें पिलाये सविता का रस, ऋत दुग्धामृत![4]

(२) अंतर्नभ के दुग्धामृत
भरें पुनः वे इनमें जीवन![5]

(३) या फूलों से भी अनिल-कुसुम।
तुमने मन के मधु की मिठास?[6]

'जीवन संघर्षण का तीखा कडुआ अनुभव'[7], 'सामूहिक संहार तिक्त विषफल है जिसका'[8], 'जीवन विमुख, विरक्त, तिक्त हो उठता जग में,'[9] 'वनैले खटमिट्ठे

१. रजतशिखर, पृ. ३३
२. रजत शिखर, पृ. ११०
३. अतिमा, पृ. २९
४. स्वर्णधूलि, पृ. ९
५. स्वर्ण किरण, पृ. ६
६. युगपथ, पृ. ५१
७. शिल्पी, पृ. ५३
८. शिल्पी, पृ. ६३
९. रजत शिखर, पृ. ३६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

फल'[1] 'खटमिट्ठे वन-मेवे'[2] 'मीठे अमरूद'[3] आदि में तीखी, कड्डई, तिक्त, खट-मिट्ठे आदि रस्य-संवेदनाओं का पता चलता है।

मिश्रित बिम्ब

इस प्रकार के बिम्बों में विभिन्न इन्द्रियानुभवों का सामंजस्य है। "ये बिम्ब स्वभाव से ही मिश्रगशील और समीकरण प्रधान हुआ करते हैं। इस तरह के बिम्ब-विधान में प्रवृत्त कवि के लिए मानवीकरण, बोध-विपर्यय, सादृश्य-स्थापन इत्यादि सुन्दर साधन सिद्ध होते हैं। साथ ही, इसमें अनेक प्रकार के संवेदनों अथवा इन्द्रिय-बोधों के बीच किसी एक की प्रधानता रहती है और शेष बोध या संवेदन गौण रहकर उसके उपकारक बन जाते हैं।"[4] कई संवेद-नाओं के प्रगाढ़ अनुभवों से बोझिल ये बिम्ब प्रकृति से संश्लिष्ट होते हैं और पाठक पर व्यापक प्रभाव छोड़ जाते हैं। पन्तजी ने कई संश्लिष्ट बिम्बों की अवतारणा करके वस्तु या स्थिति का शब्द-चित्र खींचा है।

प्रकृति-बिम्ब के प्रसंग में गंगा का बिम्ब-विधान अपनी चारुता, रम्यता, पवित्रता, निर्मलता, मृदुलता एवं कोमलता के कारण अत्यन्त मोहक एवं कमनीय है, जो कवि की उर्वर कल्पना-शक्ति एवं मूर्त अभिव्यंजना-पाटव का द्योतक है। गंगा का कितना नयनाभिराम चित्रण है —

सैकत-शय्या पर दुग्ध धवल, तन्वंगी गंगा, ग्रीष्म विरल
लेटी है श्रान्त, क्लान्त, निश्चल।
तापस बाला गंगा निर्मल, शशि-मुख से दीपित मृदु करतल
लहरें उर पर कोमल कुन्तल
गोरे अंगों पर सिहर-सिहर, लहराता तार तरल सुन्दर,
चंचल अंचल-सा नीलांबर!
साड़ी की सिकुडन सी जिस पर, शशि की रेशमी विभा से भर,
सिमटी है वर्तुल, मृदुल लहर![5]

दुग्ध धवल तन्वंगी (कृश गात्र) गंगा सैकत-शय्या पर श्रान्त, क्लान्त एवं निश्चल लेटी है। गंगा तापस बाला है और उसका मृदु करतल शशि-मुख से दीपित हो रहा है। (हथेली पर मुख धारण किये बैठी है।) उसके उर पर लहरों के कोमल कुन्तल (काले-काले घुंघराले बाल) लहरा रहे हैं। उसके अंग गोरे हैं, जिनपर तार-तरल (तारांकित) सुन्दर नीलांबर सिहर-सिहर चंचल

---

१. पतझर, पृ. ३१
२. अतिमा, पृ. २३
३. ग्राम्या, पृ. ३६
४. डॉ० कुमार विमल—छायावाद का सौन्दर्यशास्त्रीय अध्ययन, पृ. २१३
५. गुंजन, पृ. १०१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हो रहा है। उसी नीलांचल पर वर्तुल मृदुल लहरों की साड़ी की सिकुड़न शोभा दे रही है। तापस बाला गंगा, सैकत-शय्या, शशि-मुख, लहरें उर पर कोमल कुन्तल, चंचल अंचल-सा नीलांबर, साड़ी की सिकुड़न-सी वर्तुल मृदुल लहर, गोरे अंग, मृदु करतल, सब मिलकर साँगरूपक, मानवीकरण, उपमा, श्लेष आदि से गंगा का सजीव नारी-रूप प्रस्तुत हुआ है। यहाँ प्रस्तुत में गंगा का वर्णन है तो अप्रस्तुत में तापस बाला का सजीव बिम्ब। 'तन्वंगी' में शारीरिक कृशता व्यक्त है तो श्रान्त, क्लान्त, निश्चल में शारीरिक थकान, उदासी जैसी अमूर्त वस्तुएँ मूर्त हो उठी हैं। दुग्ध धवल, दीपित, सैकत और गोरे में श्वेत रंग की संवेदना स्पष्ट है। अतः यहाँ चाक्षुष बिम्ब हैं। मृदु, तरल, रेशमी, मृदुल में स्पृश्य बिम्ब की अवतारणा हुई है; कोमल, सुन्दर, निर्मल में आस्वाद्य बिम्ब है। प्रयुक्त शब्दावली तथा वर्ण-विन्यास उल्लेखनीय है।

ऐन्द्रिय संवेदनाओं पर आधृत उदात्त बिम्ब देखना हो तो 'परिवर्तन' कविता पर विचार किया जा सकता है, जिसमें विश्व की हलचल, कोलाहल और तांडव के सजीव चित्र उतारे गये हैं। संसार के निष्ठुर परिवर्तन को सहस्र फणवाले वासुकि का उपमान देकर कवि ने परिवर्तन से उत्पन्न भीकरता, सशंकता आदि की ओर भी संकेत किया है—

अहे वासुकि सहस्र फन !
लक्ष अलक्षित चरण तुम्हारे चिह्न निरन्तर
छोड़ रहे हैं जग के विक्षत वक्षःस्थल पर !
शत-शत फेनोच्छ्वसित, स्फीत फूत्कार भयंकर
घुमा रहे हैं घनाकार जगती का अंबर
मृत्यु तुम्हारा गरल दन्त, कंचुक कल्पांतर
अखिल विश्व ही विवर
वक्र कुंडल
दिङ्मंडल ![1]

परिवर्तन रूपी वासुकि सर्प अपने सहस्रफण को फैलाये जग के विक्षत वक्षःस्थल पर लक्ष-अलक्षित चरणों से निरंतर प्रहार कर रहा है, उसके शत-शत फूत्कार संसार को बहरा बना देते हैं। वह संसार को घनाकार घुमा रहा है। उसका रूप ही भयानक है—मृत्यु उसका गरल दन्त है, कल्पांतर उसके कंचुक हैं, अखिल विश्व ही उसका विवर (बिल) है और क्षितिज-रेखा ही उसका वक्र कुण्डल है। 'वासुकि सहस्र फण', 'मृत्यु का गरल दन्त', 'कंचुक कल्पांतर', 'विश्व-विवर', वक्र कुण्डल दिङ्मण्डल—साँगरूपक अलंकार एवं मानवीकरण के सहारे परिवर्तन का उदात्त बिम्ब-विधान किया गया है। फेन, वक्र में चाक्षुष बिम्ब,

---

१. पल्लव, पृ. १५०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

घनाकार और स्फीत स्पृश्य बिम्ब, उच्छ्वसित और 'फूत्कार' में श्रव्य बिम्ब, 'गरल' में आस्वाद्य बिम्ब हैं। 'लक्ष-अलक्षित', 'विक्षत वक्षःस्थल', 'शत-शत फूत्कार', 'घुमा रहे हैं घनाकार' आदि में अनुप्रास एवं ध्वनि-साम्य के सहारे बिम्ब अत्यन्त सजीव एवं प्रभावजनक है। पूरे छन्द में कई बिम्बों की अवतारणा से संश्लिष्ट बिम्ब अंकित है।

नारी-सौन्दर्य के रूप-चित्रण में पंतजी ने मिश्रित संवेदनाओं का सहारा लिया है। 'स्वर्णधूलि' की 'नव-वधु के प्रति' कविता में नववधू के अंग-लावण्य का बिम्ब इस प्रकार है—

दुग्ध पीत अधखिली कली सी
मधुर सुरभि का अन्तस्तल,
दीप शिखासी, स्वर्ण करों के
इन्द्रचाप का मुख मंडल !
शरद व्योम सी, शशि मुख का
शोभित लेखा लावण्य नवल,
शिखर स्रोत सी, स्वच्छ, सरल,
जो जीवन में बहता कल कल ![१]

नववधू का रूप-सौन्दर्य प्रकाम्य है। उसका रंग दुग्ध पीत है। 'दुग्ध पीत' में रंग-संवेदना की बारीकी दर्शनीय है। दुग्ध पीत रंग सात्विकता का प्रतीक है और मोहक भी। नववधू पूर्ण तारुण्य में नहीं पहुँची है। उसके अर्धविकसित यौवन के लिए 'अधखिली कली' का उपमान पर्याप्त भाव-व्यंजक है। उसके शरीर से अतीव रूप-लावण्य झलकता है, इसलिए वह दीप-शिखा के समान द्युतिमान है। फिर दीप-शिखा पावनता की व्यंजक भी है। उसके द्वारा कवि नववधू की सात्विक कोमलता व्यंजित करता है। 'इन्द्रचाप का मुखमण्डल' सौन्दर्य की पराकाष्ठा है और फिर इन्द्रचाप भी 'स्वर्ण करों' से युक्त है। नायिका मुखमण्डल से कांति की किरणें विकीर्ण कर आसपास के वातावरण को ज्योतिर्मय बना रही है। चारों ओर लावण्य की व्याप्ति से शरद व्योम का आभास होता है। वह पन्त की जीवन-सहचरी है। कल-कल बह निकलते शिखर-स्रोत के समान वह उसके जीवन को संगीतमय बनाती है। उसकी शरीरयष्टि जहाँ अधखिली कली के समान है, वहाँ उसका अन्तस्तल मधुर सुरभि से सुवासित है। इस प्रकार नववधू अन्दर-बाहर सुन्दर, मोहक एवं प्रकाम्य है। दुग्ध पीत, स्वर्ण, इन्द्रचाप, दीपशिखा, शरद व्योम, शशिमुख आदि में रूप-रंग की संवेदना प्रकट होती है तो 'मधुर सुरभि' में आस्वाद्य एवं घ्रातव्य संवेदनाओं का मिश्रण है। 'कल कल' में श्रव्य संवेदना निक्षिप्त है। इस प्रकार नाना संवेदनाओं का मिश्रण करके नववधू का बिम्ब प्रस्तुत किया गया है।

१. स्वर्णधूलि, पृ. ८८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

चतुर्थ अध्याय

पन्त-काव्य में वस्तुगत बिम्ब—मानव-बिम्ब

काव्य भाव या वस्तु का शब्द-चित्र है।[1] काव्यगत वस्तु में मानव और प्रकृति सम्मिलित हैं क्यों कि ये दो काव्यात्मक अनुभूति के प्रेरक तत्व हैं और इन्हीं के चित्र काव्य में अंकित किये जाते हैं। अंग्रेजी कवि विलियम वर्ड्स्वर्थ ने ठीक ही कहा है कि काव्य मानव तथा प्रकृति का बिम्ब है।[2] इस प्रकार वस्तुगत बिम्ब के दो भेद किये जा सकते हैं—मानव-बिम्ब और प्रकृति-बिम्ब। कवि अपने काव्य के लिए आवश्यक सामग्री मानव एवं प्रकृति से ग्रहण करता है। वह बिम्ब-निर्माण के लिए प्रकृति से वातावरण, धार्मिक जीवन, परंपरा, संस्कृति, सामाजिक जीवन, धार्मिक भावना, दैनिक जीवन, ग्राम्य जीवन, पौराणिक एवं ऐतिहासिक सामग्री लेता है।

मानव—बिम्ब

आधुनिक काल में मानव काव्य का मुख्य प्रतिपाद्य विषय है। यह उसकी सबसे बड़ी विजय है। आज सामान्य मानव की आशा-निराशा, हर्ष-शोक, उच्छ्वास-आँसू को कवि-वाणी का प्रसाद प्राप्त है। या यों कहा जा सकता है कि आज साहित्य का मुख्य स्वर मानवतावादी है। इसके पीछे प्रतिक्रिया का एक लंबा इतिहास है, जिसपर संक्षेप में विचार करना अप्रासंगिक न होगा।

मानवतावाद अठारहवीं शताब्दी के अंतिम दशकों के नवजागरण का परिणाम है। इसका स्वर यूरोप में मुखरित हुआ। मध्ययुगीन यूरोपीय समाज रोमन कैथोलिक चर्च के उग्र प्रभाव, नैतिकवाद एवं रूढ़िगत धार्मिक भावना से आक्रान्त हो कूप मंडूकता की दशा में था। धर्म और चर्च का जीवन पर इतना बुरा प्रभाव था कि मनुष्य की दृष्टि धर्म-निरपेक्ष जीवन-मूल्यों को महत्व नहीं दे सकी। फलतः समाज की जीवन-शक्ति जड़ीभूत एवं कुंठित हो गई। समाज में आभिजात्य वर्ग आदर पाता था और सामान्य जनता निर्दयतापूर्वक कुचली जा रही थी। साहित्य में ईश्वर एवं धर्म का अखण्ड राज्य था। पुरानी रूढ़ियों, रीति-नीतियों का अंधानुकरण हो रहा था। इसलिए उसमें आभिजात्य जीवन के स्वर मुखरित हो उठे। किन्तु यह दुरवस्था अधिक दिन तक चली नहीं। इसकी प्रतिक्रिया-स्वरूप अठारहवीं शताब्दी के यूरोप में बुद्धि-वाद का प्रचार बढ़ा। धर्म और अध्यातम की युगानुरूप व्याख्या प्रस्तुत की

---

१. डॉ० शंभुनाथ सिंह—छायावाद-युग, पृ. २४२

२. वर्ड्स्वर्थ—इंग्लीश क्रिटिकल एसेस, नायन्टीन्थ सेंचुरी, पृ. १४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गयी, कला और विज्ञान की नयी साधना आरंभ हुई, राजनीति एवं समाज-व्यवस्था में मौलिक क्रान्ति का सूत्रपात हुआ । ईश्वरीय सत्ता पर प्रश्न-चिह्न लगाये गये और पूर्ण मनुष्य को मनुष्य का प्रतिमान घोषित किया गया । सन् १७८९ की फ्रांसीसी राज्य-क्रान्ति ने यूरोप की प्राचीन संस्कृति को पूर्णतः बदला, जीवन-मूल्यों में क्रान्तिकारी परिवर्तन किये और जीवन-दृष्टि में युगान्तर उपस्थित किया । इस क्रान्ति के अग्रदूत रूसो ने मानव स्वतंत्रता पर बल देकर स्वतंत्रता, समता एवं भ्रातृत्व का संदेश दिया । अठारहवीं शताब्दी के अंतिम दशक और उन्नीसवीं शती के आरंभ में यूरोप में एक नवीन साहित्यिक धारा का उन्मेष हुआ, जिसे रोमान्टिसिज्म कहा गया । उसका इस राज्य-क्रान्ति से गहरा सम्बन्ध है । यह साहित्यिक नव जागरण था और इस नवजागरण के फलस्वरूप व्यक्ति का 'अहं' जागृत हुआ । व्यक्ति में अधिकार और शक्ति की भावना बलवती हुई । उसने परंपरागत रूढ़ि-रीतियों को तोड़ने का प्रयत्न किया ।[1] इस काव्य-धारा ने आभिजात्य के स्थान पर सामान्य को काव्य-विषय बनाया । इसमें व्यक्ति को प्रधानता मिली ।

उन्नीसवीं शती यूरोप में विज्ञान का युग था । कई नये आविष्कारों ने लोगों के धार्मिक और अध्यात्म-चिन्तन पर चोट पहुँचायी । जीवन में ईश्वर का महत्व घट गया । मानव की अद्भुत शक्ति एवं विज्ञान के चमत्कार ने परम्परागत धारणाओं की जड़ ही उखाड दी । मानवता को चिर सत्य मानकर कवियों में आत्म सापेक्ष दृष्टि का विकास हुआ, जहाँ कवि अपनी भावना के रंग में संसार को देखता है । इंग्लैंड की व्यावसायिक क्रान्ति ने भी वहाँ के सांस्कृतिक जीवन में परिवर्तन उपस्थित किये । रोमान्टिसिज्म को इससे भी प्रेरणा मिली । स्वच्छन्दतावाद का प्रचार हुआ । साहित्य विषय से हटकर विषयी प्रधान हो गया ।

काव्य में मानवतावाद को जन्म देनेवाले तत्वों में पूँजीवादी प्रतिक्रिया भी एक रही है । "उत्पादन के साधनों पर वैयक्तिक अधिकार के सिद्धान्त पर आधारित एवं सामन्तशाही ध्वंस पर प्रतिष्ठित अर्थ-व्यवस्था पूँजीवाद के नाम से प्रसिद्ध है ।"[2] उत्पादन के साधनों पर एवं आर्थिक व्यवस्था पर थोड़े से लोगों का अधिकार हो गया । पूँजीपतियों ने अपने स्वार्थ-लाभ के लिए मानवता को पीसना आरंभ किया । उसने समाज को दो वर्गों में विभक्त किया—पूँजीपति एवं शोषित । शोषितवर्ग में अपने मानवाधिकारों की रक्षा की भावना प्रबल होती गयी ।

उन्नीसवीं शताब्दी के चिन्तकों और दार्शनिकों ने भी मानवतावाद को प्रोत्साहित किया । कार्ल मार्क्स (१८१८ से १८८३) के द्वन्द्वात्मक भौतिक-

---

१. जे. टी. शिप्ले—ट्रेंडस इन लिटरेचर, पृ. ५८

२. हिन्दी साहित्य कोष—भाग १, पृ. ५००

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वाद एवं वर्ग-संघर्ष के सिद्धान्त ने श्रमिकों को संगठित होने तथा शोषक पूँजीवाद का डटकर मुकाबिला करने की प्रेरणा दी। लियो टाल्सटाय (१८२८–१९१०) मानववादी दार्शनिक थे और उनके धार्मिक विश्वासों का मूलभूत आधार था—मानव की अन्तरात्मा का प्रकाश। वे जीवन में प्रेम-पूर्ण न्याय-संगत व्यवहार के समर्थक थे और धन पर व्यक्तिगत अधिकार के कटु निंदक थे। डार्विन के विकासवाद एवं फ्रायड़ के मनोविश्लेषण सिद्धान्त ने मानव के अस्तित्व को नयी गति दी। इन सब का प्रभाव साहित्य पर भी पड़ना अवश्यंभावी था। अतः "उन्नीसवीं शताब्दी की राजनीतिक और औद्योगिक अनुसंधानों, मनोवैज्ञानिक उपलब्धियों, डार्विन के विकासवाद, मार्क्स के द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद, फ्रायड़ के स्वप्नवाद सभी ने जन-जीवन और साहित्य दोनों में पर्याप्त परिवर्तन उपस्थित कर दिया। साहित्य जीवन के अधिक निकट आ गया।"[1]

हिन्दी काव्यधारा में मानवतावाद का विकसित रूप छायावाद-काल में दिखाई देता है। डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार हमारी यह आधुनिक दृष्टिभंगी यूरोपियन संसर्ग का फल है।[2] अंग्रेज़ी शिक्षा-दीक्षा के फलस्वरूप भारतीय कवियों का संपर्क पाश्चात्य साहित्य से हुआ अवश्य, किन्तु छायावादी व्यक्ति-भावना एवं मानवतावाद को अकेले पाश्चात्य साहित्य का प्रभाव नहीं माना जा सकता। रोमान्टिसिज्म एक स्वतन्त्र राष्ट्र में उत्पन्न साहित्यिक धारा है, जब कि छीयावाद एक परतन्त्र राष्ट्र में पनपा काव्य है। दोनों की उत्स-भूमि भिन्न रही। अतः छायावादी मानवतावाद का जन्म इसी देश की परिस्थितियों की प्रतिक्रिया-स्वरूप हुआ, वह पाश्चात्य साहित्य की नकल या अन्धानुकरण नहीं है। उसके उद्‌भव के कारणों को खोजते हुए डॉ० रांगेय राघव का विचार है कि "छायावाद ऐसे देश में जन्मा था, जहाँ इंग्लैंड की-सी स्वतन्त्रता नहीं थी, वरन् भारत परतंत्रता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था। यह परतन्त्रता केवल राजनीतिक ही नहीं थी, इसके साथ एक सामन्तीय जर्जर व्यवस्था भी थी जो संपूर्ण रूप से भारत की असंख्य-असंख्य जनता में फैली हुई थी, क्योंकि अंग्रेज़ों ने मध्यवर्गीय उत्थान तथा मशीनों के साथ-साथ भारत में पदार्पण करने पर भी यहाँ का सामन्तीय जीवन सुरक्षित छोड़ दिया था।"[3] अतः सामन्तीय रूढ़ि-रीतियों के प्रति विद्रोह ने छायावादी मानवतावाद को जन्म दिया। डॉ० रांगेय राघव ने एक महत्वपूर्ण तथ्य का उद्‌घाटन किया है। छायावाद का मानवतावाद सामन्ती संस्कृति के प्रति आक्रोश का परिणाम था। छायावादी कवियों के

---

१. डॉ० शान्तिस्वरूप गुप्त - पाश्चात्य काव्यशास्त्र के सिद्धान्त, पृ. ४
२. डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी—साहित्य-सहचर, पृ. २९
३. डॉ० रांगेयराघव—आधुनिक हिन्दी कविता में विषय और शैली, पृ. २६-२७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मानवतावाद से यह बात स्पष्ट हो जाती है। सामन्ती संस्कृति विलासिता एवं भोग-लिप्सा से सड़ चुकी थी। इस सड़ी संस्कृति का पूरा घाटा नारी को उठाना पड़ा था। नारी केवल भोग्या या 'शय्या का क्रीड़ा-कंदुक' मात्र रह गयी थी। वह पुरुषों के समान अपने अधिकार की माँग नहीं कर सकती थी। उसका शारीरिक मूल्यांकन मात्र हुआ करता था। उसको मानवी प्रतिष्ठित करने का प्रयत्न नहीं हुआ था। अतः छायावादी कवि पन्त ने 'निद्रा भय मैथुन आहार'[१] में जीवन की सार्थकता समझनेवाले तथा नारी को केवल 'क्रीड़ा कन्दुक'[२] और 'बंदिनी काम कारा की'[३] समझने वाले सामन्ती संस्कृति के नराधमों को डाँटा-फटकारा है। यही मानव-प्रेमी कवि सामन्ती संस्कृति के प्रतीक स्वरूप 'ताज', जो मनुष्य के मोहान्ध हृदय में घर किये हुए है, की भर्त्सना करता है।[४]

काव्य में अभिव्यक्त इस व्यापक मानवतावाद के प्रेरणास्रोत विवेकानन्द, कवीन्द्र रवीन्द्र, महात्मा गाँधी एवं योगीराज अरविन्द हैं। स्वामी विवेकानन्द सर्वधर्म-समन्वयवादी और विश्वमानवतावादी थे किन्तु उन्हें भारतीय चिन्तन-परम्परा पर कम आस्था नहीं थी। रवीन्द्र विश्व-कुटुंब के प्रवक्ता थे, विश्वमानवता के शुभाकांक्षी थे। रवीन्द्र ने अपनी कविता में इसी चिन्ताधारा को प्रश्रय दिया। उन्होंने भक्ति को कर्मयोग और मानव-सेवा का रूप देने का कार्य किया और ईश्वर का ईश्वरत्व मानवत्व में देखा। गाँधीजी ने मानव में निहित मानवत्व को प्यार करने का संदेश दिया। अरविन्द मानवता के विकास की कल्पना अतिमानव रूप में करके भू-स्वर्ग बसाने के इच्छुक थे। अरविन्द ने सब को ब्रह्म माना। ब्रह्म-सागर ही अपनी गति के आन्दोलन से जीव रूपी तरंगों को जन्म देता है। सर्वत्र अकेला ब्रह्म है और ब्रह्म से ही सब की अवस्थिति है क्यों कि सब कुछ ब्रह्म ही है। यही वह सत्य है जो सत्य हम चेतन और प्रकृति में पाते हैं।[५] सृष्टि शिव की आनन्दमय लीला का परिणाम है। सत् लीलामय आनन्द के लिए अपनी चित् शक्ति को बहिर्मुख करता है। "इस विराट् सृष्टि के यदि दो अर्ध माने जाएँ तो परार्द्ध में सत् चित् आनंद एवं सुपरमैन एवं अधीनस्थ शक्ति के रूप में अपरार्द्ध में उन्हीं के प्रतिबिम्ब क्रमशः जड़, प्राण, चैत्य-पुरुष एवं मन हैं। इस प्रकार सत् यदि अपने को प्रकाशित करना चाहता है तो उसे जडात्मक आवरण धारण करना ही होगा।"[६] अरविन्द की मान्यता है, मनुष्य आत्मिक साधना

१. युगवाणी, पृ. २८
२. युगवाणी, पृ. ४९
३. वही, पृ. ६६
४. युगपथ, पृ. ४७
५. अरविन्द—दि लाइफ डिवाइन, भाग २, पृ. ४५
६. तुलसीदल, अरविंद विशेषांक-अगस्त १९७०, पृ. १२७-१२८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

करके और दिव्यानुग्रह पाकर मन के स्तर से ऊपर उठकर अतिमानव के धरातल तक पहुँच सकता है। उनके दर्शन में व्यक्ति को बहुत ऊँचा स्थान प्राप्त है। उनकी मान्यता है कि मानव अपनी साधना के द्वारा एक दिन भगवान बन सकता है।[1]

आधुनिक युग की इन्हीं विचारधाराओं ने छायावादी मानवतावाद को जन्म दिया। छायावादी मानवतावाद मनुष्य को अध्यात्म का प्रतिबिम्ब मानता है। उसने व्यक्ति के अहं को मान्यता दी। वह प्राचीनता का विरोधी और नवीनता का समर्थक रहा। उसने सर्वप्रथम पुरानी जर्जरित रूढ़ियों, सामाजिक एवं सांस्कृतिक मान्यताओं का प्रतिरोध किया और संसार में स्वतंत्रता, समता एवं विश्वबंधुत्व के स्वर को मुखर किया।[2] पहले प्रकृति-सौन्दर्य के सामने नारी-सौन्दर्य की उपेक्षा करनेवाले कवि पन्त इसी मानवतावाद से प्रेरित होकर कहते हैं—

सुन्दर है विहग, सुमन सुन्दर
मानव ! तुम सबसे सुन्दरतम।[3]

'मानव प्रेमी' कहकर कवि मानव-भू को स्वर्ग बनाकर तथा जन्म-मरण के दुःखों से पीड़ित मानव को दिव्य-चेतना का सन्देश दे अमरासन पर बैठाना चाहता है।

छायावादी कवियों का ध्यान नारी को सांस्कृतिक सुषमा से मंडित करने की ओर रहा। सामन्ती संस्कृति में शोषिता नारी को 'देवि, मा, सहचरी, प्राण, के रूप में प्रतिष्ठित करने का श्रेय इन कवियों को प्राप्त होता है। पन्तजी के शब्दों में 'तप्त भोग-लालसा से मर्दित, पुष्पों की शय्या पर लेटी, विलुलित केश, स्वेदसिक्त, नख क्षत अंकित, रीतिकाव्य की मध्य युगीन ह्रासोन्मुखी राग-प्रवृत्ति की देहमूर्ति निशाभिसारिका नारी को छायावाद ने गुह्य संकेत स्थलों से प्रकृति के मुक्त लीला-प्रांगण में बाहर निकालकर दूतियों की चाटु-कारी तथा परकीयत्व के कलंक से मुक्त कर तथा मध्ययुगीन कुंजों की सडांध भरे केलि-कर्दम से ऊपर उठाकर, उसके अर्धनग्न रूप को अपनी पवित्र भाव-नाओं के अकलुष सौन्दर्य से मंडित कर, उसे पुरुष के समकक्ष बिठाकर, स्वतंत्र सामाजिक व्यक्तित्व की शील गरिमा प्रदान की है।'[4] पन्तजी के लिए नारी का शारीरिक रूप उतना वास्तविक नहीं, जितना अशरीरी। इसीलिए उन्होंने अपनी कल्पना-नारी को सदैव प्रकृति के उपादानों से अलंकृत किया है।

---

१. अरविन्द दि सूपरमैन, पृ. १४
२. डॉ. प्रेमलता बाफना—पन्त का काव्य, पृ. १०२
३. गुंजन, पृ. २१
४. छायावाद : पूनर्मूल्यांकन, पृ. ३५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पन्त अपने मानव को अन्दर-बाहर से सुन्दर एवं सुसंस्कृत बनाना चाहते हैं। उनका विश्वास है कि आन्तरिक उन्नयन एवं समदिक् विकास के संतुलन से मानवता दिव्य रूप प्राप्त कर सकती है। "व्यक्ति को अपने भीतर एक नये मानव के रूप में बदलने के साथ ही बाहर से भी एक नवीन सामाजिक प्राणी के रूप में बदलना है, मेरी यह धारणा सशक्त तथा समृद्ध होती गयी।"[१] अतः पन्त ने मानव के आन्तरिक एवं बाह्य परिवेश से संबंधित नाना बिम्बों की अवतारणा अपने काव्य में की है, जिन पर आगे विचार किया जाएगा।

रूप-सौन्दर्य बिम्ब

पन्तजी के काव्य में मानव-सौन्दर्य के कई बिम्ब हैं। उन्होंने पुरुष एवं नारी के बाह्य सौन्दर्य एवं भाव-सौन्दर्य के बिम्ब प्रस्तुत किये हैं। भाव-सौन्दर्य के बिम्ब भाव-बिम्बों के अन्तर्गत आते हैं उन पर अगले अध्याय में पृथक् विचार किया जाएगा। यहाँ केवल बाह्याकार एवं शारीरिक सौन्दर्य से संबंधित बिम्बों की चर्चा की जाएगी। पन्त-काव्य में पुरुष-बिम्ब अल्पमात्रा में उपलब्ध होते हैं।

भारतीय ग्राम दीनता, निर्धनता एवं करुणा से भरे हुए हैं। यहाँ आबाल-वृद्ध जनता नारकीय जीवन बिता रही है। न भर पेट खाने को मिलता है, न ओढ़ने को स्वच्छ वस्त्र। फलतः ग्राम के लोगों का रूप विकृत एवं अशोभन है। पन्तजी ने निर्धनता के प्रतीक भारतीय ग्रामों में पले लड़कों के विकृत रूपों का परिचय इस प्रकार प्रस्तुत किया है—

मिट्टी से भी मटमैले तन,
अधफटे, कुचैले, जीर्ण वसन,—
ज्यों मिट्टी के हों बने हुए
ये गँवई लड़के—भू के धन!
कोई खंडित, कोई कुंठित,
कृश बाहु, पसलियाँ रेखांकित
टहनी सी टाँगें, बड़ा पेट
टेढ़े मेढ़े, विकलांग घृणित![२]

प्रस्तुत पद्यांश में गाँव के लड़कों के विकलांग घृणित बाह्य रूप का बिम्ब स्पष्ट है। सीधे-सादे सरल शब्दों के माध्यम से अंकित है। उनके शरीर मटमैले हैं। 'मटमैले' शब्द से लड़कों के रंग का परिचय होता है, और यह भी विदित होता है कि वे धूलधूसरित हैं। फिर उनके शरीरों पर पड़े हुए वस्त्र अधफटे, कुचैले और जीर्ण हैं। मटमैले शरीर और जीर्ण फटे-पुराने वस्त्र, दोनों

१. साठ वर्ष : एक रेखांकन, पृ. ४९
२. ग्राम्या, पृ. २७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ग्रामीण लड़के की कुरूपता उभार देते हैं। मटमैले वस्त्रों एवं मटमैले शरीर से युक्त लड़के मिट्टी से निर्मित मालूम पड़ते हैं। उनकी बाहुएँ कृश हैं और पसलियाँ रेखांकित हैं। पसलियों पर उभरी-नसें जो जाल बिछाये हैं, ऐसी जान पड़ती हैं मानो पसलियों पर रेखाएँ खींची गयी हों। टाँगों के लिए टहनी का उपमान उनके पतलापन एवं टेढ़ापन दिखाने के लिए प्रस्तुत किया गया है। पेट आगे को बढ़ा हुआ है। इस प्रकार मैले-कुचैले वस्त्रों से आवृत्त, कृशबाहु, टहनी-सी टाँगों तथा बड़े पेट से युक्त गाँव के लड़कों का बिम्ब दरिद्रता का प्रतीक है।

शिष्ट युवक थे बल पौरुष प्रतिनिधि
वंश-प्ररोहों से दृढ़, ऊर्ध्व, अभय,
पुष्ट पेशियाँ, नम्य स्नायु, मृदुत्वच,
स्त्रीवत् गरिमा, हृदय शौर्य तन्मय ![1]

प्रस्तुत पंक्तियों में वंशी के कला-संस्कृति केन्द्र के युवकों के रूपाकार का बिम्ब प्रस्तुत है। 'बल पौरुष के प्रतिनिधि,' वंश-प्ररोहों से दृढ़, ऊर्ध्व, अभय, पुष्ट पेशियाँ, नम्य स्नायु, मृदुत्वच आदि शब्द-प्रयोगों के द्वारा युवक के आभिजात्य स्वरूप का बिम्ब उतर आया है।

भारतीय जीवन में तापस का महनीय स्थान है। हमारे मंत्र-द्रष्टा ऋषि लोग तापस थे, उन्होंने अपने वचनामृत से भारतीय जन-जीवन को सात्विक बनाया। वे बाह्य-जगत् से निर्विकार एवं आत्मकेन्द्रित हो योग-साधना में तल्लीन रहते थे। 'सौवर्ण' में पन्त ने ऐसे एक तापस का बिम्ब प्रस्तुत किया है—

यहाँ आत्मद्रष्टा तापस बैठे निर्जन में
पद्मासन स्थित, केंद्रित दृग नासाग्र भाग में,
आरोहण कर रहे ऊर्ध्व श्रेणियाँ मनस की
प्राणों की सतरंग छायाएँ छील कर निखिल,
तन्मय, विश्वविरत, अखण्ड ब्रह्माण्ड सत्य को
बौने—सा अंगुष्ठ मात्र पा, आप्त काम मन।[2]

यह तापस का शब्द-बिम्ब है। इस बिम्ब-निर्माण में कवि ने भाषा के चित्र-धर्म का सदुपयोग किया है, दूरारूढ़ कल्पना एवं अप्रस्तुत-योजना आदि से बिलकुल स्वतन्त्र यह बिम्ब प्रभावकारी है, हमारे सम्मुख निर्जन में पद्मासन स्थित, नासाग्र भाग में दृष्टि केन्द्रित, मन का ऊर्ध्वसंचरण करते तापस का बिम्ब प्रस्तुत है। जैसे हम ऊपर चढ़ने के लिए सीढ़ियों का उपयोग करते हैं, वैसे ही मन के स्तर-सोपानों को एक-एक पार कर वह तपस्वी ऊर्ध्वगमन कर रहा है

१. लोकायतन, पृ. ४५०
२. सौवर्ण, पृ. १६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

और 'प्राणों की सतरंग छायाएँ' प्रतीक है, जो ऐन्द्रिय प्रलोभनों की ओर संकेत करता है। ऐसे ऐन्द्रिय प्रलोभनों से विरत वह ब्रह्माण्ड सत्य में तल्लीन है, उसका मन आप्त काम है।

पन्तजी अपनी सौन्दर्यानुभूति एवं कोमल कल्पनाओं के लिए पूरे हिन्दी काव्य में प्रसिद्ध हैं। उनके काव्य में नारी-सौन्दर्य के अनेक छायाचित्र सहज ही उपलब्ध हैं। किन्तु पन्त-काव्य में नारी के बाह्याकार सौन्दर्य के चित्र विरले ही प्राप्त होते हैं। परम्परागत बाह्य सौन्दर्य के वर्णन, जो रीतिकाल की विशेषता थी, बँधे-बँधाये पथ पर चलकर बासी हो गये थे। कोई आकर्षण नहीं रह गया था। अतः कवियों को नवीन सौन्दर्य की खोज करनी पड़ी। सामाजिक ढाँचे के बासी सौन्दर्य से ऊबकर वे प्रकृति की ओर मुड़े और प्रकृति के नये सौन्दर्य-वैभव को संचित कर उससे प्रणयिनी की रूप-सज्जा की, जिससे नारी-चित्रण में नवीन शालीनता आ गयी। "छायावादी युग के लज्जालु, जन-भीरू कल्पना-प्रवण व्यक्तिवादी कवि कभी भी खुलकर नारी-चित्रण का साहस नहीं कर सके, उन्होंने सदैव प्रकृति का सहारा लिया और उसके सहारे अपनी कल्पना-परी का चित्र खींचा।"[1] दूसरे छायावादी कवियों ने नारी के प्रेयसी रूप से आगे बढ़ने का प्रयास नहीं किया। इसलिए नारी के मातृ-रूप आदि पर उनका ध्यान कम गया। इन कवियों की नारी विषयक भावना की एक मुख्य विशेषता की ओर संकेत करते हुए डॉ० कृष्णलाल शर्मा ने लिखा है—"छायावादी कवियों की प्रियाएँ सदैव स्वकीयाएँ रही हैं और अवस्था में मुग्धा से आगे न बढ़ सकीं।"[2] इन मुख्य नारी विषयक प्र वृत्तियों को दृष्टि में रखकर ही पन्तजी के नारी-बिम्ब की परीक्षा की जानी चाहिए।

पन्तजी ने भाव-प्रवण मुग्धा का एक खंडित बिम्ब प्रस्तुत किया है –

तुम मुग्धा थीं, अति भाव प्रवण,
उकसे थे अंबियों-से उरोज,
चंचल, प्रगल्भ, हँसमुख, उदार
मैं सलज्ज, – तुम्हें था रहा खोज
छनती थी ज्योत्स्ना शशिमुख पर,
मैं करता था मुख सुधा पान,—[3]

मुग्धा नायिका में यौवन का नव संचार होता है, वह लज्जाशीला रति-भावना से परिचित होती है। शारीरिक सुन्दरता, चंचलता, विभ्रमता आदि

---

१. डॉ० रामयतनसिंह 'भ्रमर'—आधुनिक हिन्दी कविता में चित्र-विधान, पृ. ९५
२. डॉ० कृष्णलाल शर्मा—आधुनिक हिन्दी कविता में ध्वनि, पृ. १७७
३. युगपथ, पृ. ३८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उसके विशेष गुण हैं। पन्तजी ने ऐसी ही मुग्धा का बिम्ब प्रस्तुत किया है। यह मुग्धा भाव-प्रवण है। वह रति-भावना का अनुभव कर रही है। उसके नव-यौवनागमन को सूचित करने के लिए 'उकसे थे अंबियों-से उरोज' का प्रयोग किया गया है। उरोज के लिए अंबियों का उपमान परम्परागत है, फिर भी 'उकसे' क्रिया जोड़कर उसके विकास की ओर संकेत किया गया है। 'हँसमुख' और 'शशिमुख' शब्द मुग्धा के रूप-लावण्य की ओर संकेत करते हैं। 'उभरी हुई छाती' और 'हँसमुख' स्थूल बाह्य सौन्दर्य को प्रकट करते हैं तो 'भाव-प्रवण' 'चंचल', 'प्रगल्भ', आदि में उसकी भाव-चेष्टाएँ भी प्रकट होती हैं।

नायिका के नादान नयनों के लिए 'वारि विनिर्मित वारिद दल' का अप्रस्तुत एक खण्डित बिम्ब प्रस्तुत करता है—

ये तो हैं नादान नयन !
वारिविनिर्मित वारिददल ।[१]

'नादान नयन' में विशेषण-विपर्यय अलंकार है, नायिका की सरलता की ओर संकेत किया गया है। नादान नयन की वारिविनिर्मित वारिद दल से तुलना केवल गुण-साम्य पर आधारित है। वारिद भी पानी बरसाता है और नयन भी। वारिद और नयन में रंग-साम्य भी है।

पन्तजी ने 'मृगेक्षिणी' संज्ञा पद का प्रयोग करके नायिका की चंचल चितवन की ओर संकेत किया है।[२] वैसे ही 'विनत शुक नासा'[३] 'प्रणय-हंसिनी'[४], तन्वि,[५] 'लाज के जल की मीन'[६] आदि बिम्बात्मक हैं जो क्रमशः नारी की लंबी झुकी नासिका, गति, कृश-शरीर एवं चंचल नेत्रों के बिम्ब प्रस्तुत करते हैं। प्रेम के वशीभूत हो रूप-सुधा पान के लिए चंचल हो उठती ज्ञात यौवना नारी की चल चितवन के लिए 'मीन के लघुबाल' का अप्रस्तुत सादृश्य एवं साधर्म्य पर आधारित है।[७]

मंद चलकर, रुक अचानक, अधखुले
चपल पलकों से हृदय प्राणेश का
गुदगुदाया हो नहीं जिसने कभी
तरुणता का गर्व क्या उसने किया ![८]

इसमें प्रणय-विदग्धा नायिका के अनुभावों, क्रिया-कलापों का गत्यात्मक रूप बिम्ब है। मंद चलना, अचानक रुकना, अधखुली चपल पलकों से देखना, प्रेमी को गुदगुदाना सब प्रणय-विदग्धा नारी की क्रियाएँ हैं।

---

१. वीणा-ग्रन्थि, पृ. २१
२. वीणा-ग्रन्थि, पृ. १०३ व गुंजन, पृ. ६२
३. गुंजन, ५६
४. गुंजन, पृ. ६३
५. गुंजन, पृ. ६४
६. वही, पृ. ६४
७. वीणा-ग्रन्थि, पृ. १०८
८. वही, पृ. ११७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मिला लालिमा में लज्जा की
छिपा एक निर्मल संसार,
नयनों में निःसीम व्योम औ'
उरोरुहों में सुरसरि धार ![1]

पन्तजी ने उपर्युक्त पंक्तियों में सात्विक नारी की मूर्ति अंकित की है। लज्जा नारी का आभूषण है। लज्जा की लालिमा से वेष्टित सुन्दरी कमनीय हैं। फिर कवि उसके नीले विशाल नेत्रों का रूप अंकित करता है। उसके लिए 'निःसीम व्योम' अप्रस्तुत प्रयुक्त हुआ है। 'व्योम' नीलिमा एवं विशालता दिखाने के लिए रखा गया है। उसके उरोरुहों में पवित्र दूध भरा हुआ है और उसकी स्वच्छता एवं पवित्रता दिखाने के लिए 'सुरसरि-धार' का प्रयोग हुआ है। इस प्रकार सात्विक लज्जामयी नारी का कमनीय एवं पावन रूप नेत्रों में छा जाता है।

प्रथम प्रिय समाग मके लिए पति के सम्मुख खड़ी नवोढ़ा वधू का बिम्ब स्वाभाविक, यथार्थ एवं सरस है। कवि ने उसकी लज्जा, संकोच, पुलक, रोमांच, मानसिक उल्लास आदि भावों का अंकन भी किया है—

अरे वह प्रथम मिलन अज्ञात !
विकम्पित मृदु-उर, पुलकित गात,
सशंकित ज्योत्स्ना-सी चुपचाप,
जड़ित पद, नमित-पलक-दृग्-पात,
पास जब आ न सकोगी, प्राण !
मधुरता में सी मरी अजान,
लाज की छुईमुई-सी म्लान ![2]

विकम्पित मृदु उर, पुलकित गात. सशंकित एवं मौन, जड़ित पद, नमित पलक-दृगपात, मधुरता में सी मरी और लाज की छुईमुई जैसे सार्थक एवं भावानुकूल शब्द-प्रयोग से पुरुष-समागम के लिए उत्सुक, किन्तु लज्जावनत नवोढ़ा का स्वाभाविक रूप चित्रित हुआ है। नायिका सशंकित और मौन तो है ही, किन्तु झिझक ने सौन्दर्य की ज्योत्स्ना ही छिटका दी। उसने उसको सौन्दर्य-धाम बना दिया। 'मधुरता में मरी' और 'लाज की छुईमुई' उसके भाव एवं स्वरूप को मूर्तिमान करने में अतीव सफल हैं। वह मधुरता में मर रही है, पर बाहर से वह लाज की छुईमुई हो रही है।

पन्तजी के रूप-चित्रण में एक विशेष बात द्रष्टव्य है। नारी की कमनीयता, मृदुता, सरसता आदि का बिम्ब अंकित करने के लिए वे अनेक अमूर्त

१. पल्लव, पृ. ८४
२. गुंजन, पृ. ४३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अप्रस्तुतों को लाते हैं। अमूर्त अप्रस्तुत चाक्षुष-संवेदना में सहायक एवं सक्षम न भी हों, उनके कारण पाठक के मन में नारी-सुलभ सुकुमारता का काल्पनिक बिम्ब अंकित हो जाता है। मूर्त के लिए अमूर्त अप्रस्तुतों की झड़ी लगाने की छायावादी प्रवृत्ति के पीछे कवियों का यही मोह दिखाई देता है।

पन्त की प्रेयसी की सुकुमारता का वर्णन द्रष्टव्य है—

तारिका सी तुम दिव्याकार,
चन्द्रिका की झंकार !
प्रेम-पंखों में उड़ अनिवार
अप्सरा सी लघु-भार ![1]

'चन्द्रिका की झंकार' में छायावादी सूक्ष्म गुंफन अपनी सफलतम अभिव्यक्ति कर सका है। 'चन्द्रिका की झंकार' और 'अप्सरासी लघुभार' में सुकुमारता टपकी पड़ती है तो 'प्रेम-पंख' में चंचलता, मृदुता की अभिव्यक्ति है। पन्तजी ने मूर्त के लिए मूर्त एवं अमूर्त उपमानों के मिश्रण से भी बिम्ब-विधान किया है, जैसे—

नवल मधु ऋतु निकुंज में प्रात
प्रथम कलिका सी अस्फुट गात,
नील नभ-अंतःपुर में, तन्वि !
दूज की कला सदृश नवजात,
मधुरता, मृदुता सी तुम प्राण ![2]

कवि ने पहले अपनी कल्पना-किशोरी के लिए दो मूर्त उपमान प्रस्तुत किये हैं– नवल मधु ऋतु निकुंज में प्रातःकाल शोभित कलिका का और नील नभ-अंतःपुर में नवजात दूज की कला का। ये दोनों उपमान प्रेयसी की शरीरयष्टि की सुकुमारता, मृदुलता एवं सूक्ष्मता दिखाने के लिए प्रयुक्त हुए हैं। 'कलिका' जहाँ मृदुलता की द्योतक है, वहाँ अस्फुटता की ओर भी संकेत करती है। प्रेयसी सुकुमारी है, किशोरी है, उसका यौवन-विकास अभी नहीं हुआ है। 'दूज की कला' भी कृशता एवं सूक्ष्मता का संकेत करती है। 'नभ-अंतःपुर' का प्रयोग सोद्देश्य है। कवि की कल्पना-किशोरी अंतःपुर में ही बैठती है, वह अभी तक बाहर प्रकट नहीं हुई है। फिर उसकी कोमलता के लिए दो अमूर्त उपमान— 'मधुरता' एवं 'मृदुता' लाये गये हैं। सारांश में अपने घर के अंतःपुर में कैशोर के द्वार पर कदम रखती कृशगात्री एवं कोमलाँगी बालिका का बिम्ब कवि ने प्रस्तुत किया है।

१. गुंजन, पृ. ६३
२. वही, पृ. ४०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रकृति के माध्यम से प्रेयसी के रूप-विधान की दृष्टि से निम्न पंक्तियाँ महत्वपूर्ण हैं—

खोल सौरभ का मृदु कच जाल
सूँघता होगा अनिल समोद,
सीखते होंगे उड़ खग-बाल
तुम्हीं से कलरव, केलि, विनोद;
चूम लघु पद चंचलता, प्राण !
फूटते होंगे नव जल स्रोत,
मुकुल बनती होगी मुस्कान,
प्रिये ! प्राणों की प्राण ![1]

कवि की सुकुमारी प्रेयसी प्रकृति की शिक्षिका है। उसके बालों की सुगंधि अनिल में गति भरती है, उसी के केलि-विनोद एवं संगीत की स्वर-धारा से प्रेरणा पाकर खग-बाल कलरव एवं केलि-विनोद करते हैं। जलस्रोत प्रेयसी के चंचल लघुपदों का स्पर्श कर झरने की शिक्षा पाते हैं और उसकी मुसकान का सौन्दर्य लेकर मुकुल खिलते हैं। इस प्रकार प्रकृति का आधार लेकर प्रेयसी का बिम्ब प्रस्तुत किया गया है। 'सौरभ' में घ्रातव्य संवेदना, 'मृदु' और 'चूम' में स्पर्श्य संवेदना, 'कलरव' में श्रव्य संवेदना, 'लघु' और 'मुकुल' में चाक्षुष संवेदना प्रकट हुई है। इस प्रकार यह बिम्ब ऐन्द्रिय संवेदना की दृष्टि से समर्थ है।

'तुम्हारी मधुर मूर्ति छविमान, लाज में लिपटी उषा समान'[2], 'मृदूर्मिल सरसी में सुकुमार अधोमुख अरुण सरोज समान'[3], 'उषा-सी स्वर्णोदय पर भोर दिखा मुख कनक किशोर'[4] आदि में लजीली नारी का खंडित बिम्ब है।

पन्त जहां नारी के सात्विक स्वपरू के उपासक एवं प्रशंसक हैं, वहाँ अंग्रेज़ी फैशन में पली चंचल वृत्ति की आधुनिकाएँ उनकी कटु निन्दा से बच नहीं सकीं। भारतीय संस्कृति के महान आदर्शों से अनुप्राणित नारी के प्रति उनके पूज्य भाव स्थान-स्थान पर प्रकट हुए हैं, लेकिन उस संस्कृति की अपनी थाती को ठुकरा कर पाश्चात्य सभ्यता के पाश में फँसकर क्षणिक सुख के लोभ में मार्जार वृत्ति का अनुसरण करती आधुनिकाओं के प्रति उनकी सद्भावना कभी नहीं रही। उनके बाह्याडंबरप्रिय जीवन की भर्त्सना करते हु उन्होंने लिखा है—

लहरी सी तुम चपल लालसा श्वास वायु से नर्तित,
तितली सी तुम फूल–फूल पर मंडराती मधुक्षण हित !
मार्जारी तुम, नहीं प्रेम को करती आत्म समर्पण

१. गुंजन, पृ. ४२
२. वही, पृ. ४०
३. गुंजन, पृ. ४३
४. वही, पृ. ६३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तुम्हें सुहाता रंग प्रलय, धन पद मद, आत्म प्रदर्शन !
तुम सब कुछ हो, फूल, लहर, तितली, विहगी, मार्जारी,
आधुनिके, तुम नहीं अगर कुछ, नहीं सिर्फ नारी ![1]

अंग्रेजी शासन-काल का प्रभाव ही समझिए कि भारत में पाश्चात्य सभ्यता की एक लहर चल पड़ी और उसमें हमारी आधुनिकाएँ बह गई। ये आधुनिकाएँ चंचल नर्तित लहरियां हैं, जो मांसलदाह की संतृप्ति के लिए उछल-कूद करती हैं। वासनातृप्ति के आवेग में पड़कर वे चपल होती जा रही हैं। कवि आगे उनके लिए 'तितली' का उपमान प्रयुक्त करता है। तितली मधु चोर है। जिस प्रकार रंग-बिरंगे पंखों से उड़कर मधु-लोभी तितली अनेक पुष्पों के पास पहुँचती है, वैसे ही ये आधुनिकाएँ काम-लुंठिताएँ हैं और बहुरंगी आभूषणों से लदकर अपनी चपल वृति से कई पुरुषों को मुग्ध करती भटकती हैं। इनके लिए 'मार्जारी' उपमान सार्थक है, क्यों कि ये गुप्त प्रेम की लोभिन हैं। धन और पद के मद में रंग-प्रलय मचाती एवं आत्म-प्रदर्शन करती ये आधुनिकाएँ आत्म-समर्पण वाली सच्ची प्रीति से अनभिज्ञ हैं और क्षणिक वासना-तृप्ति को स्वर्ग समझती हैं। कृत्रिम सौन्दर्ययुक्त ये आधुनिकाएँ बाहर से 'फूल' के समान मृदुल, कोमल एवं आकर्षक हैं, किन्तु स्वभाव एवं वृत्ति से लहर, तितली और मार्जारी हैं। इन्हें नारी की संज्ञा देना ही अपराध है। इस प्रकार पन्तजी ने विविध उपयुक्त उपमानों के द्वारा आधुनिकाओं के बाह्य एवं आभ्यन्तरिक रूप का बिम्ब प्रस्तुत किया है।

एक अन्य स्थान पर भी कवि ने भारतीय संस्कृति के प्रतिकूल भागती मनहीन तन की काम लुंठिता आधुनिका नारी का रूप-बिम्ब नाना अप्रस्तुतों के द्वारा प्रस्तुत किया है। उसका कृत्रिम शारीरिक सौन्दर्य और सुवास फूलों की टक्कर लेती है। वह चंचल एवं चपल है। उसका पद-विन्यास लहरों के लास की शोभा पाता है। वह शशि का मधु-सुधा हास ओंठों में भरे चलती है। उसके भ्रू-विलास में विद्युत् की तीव्र गति है। इस प्रकार रूप-शिखा बनी आधुनिका का स्वाभाविक बिम्ब निम्न पंक्तियों में अंकित है—

फूलों की तन–सुवास,
लहरों का चरण लास,
शशि का मधु सुधा हास
विद्युत् का भ्रू विलास
रूप–शिखा ![2]

'सुवास' में घ्राणीय संवेदना, फूल, शशि और विद्युत् में चाक्षुष संवेदना, 'मधु

१. ग्राम्या, पृ. ८३
२. स्वर्णधूलि, पृ. १४९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सुधा' में रस्य संवेदना से युक्त यह बिम्ब पूणतया ऐन्द्रिय है। आगे की पंक्तियों में कवि ने उसके लिए गोरी भोरी परियों, अस्ताचल की अप्सरियों, मधु मुखर प्रणय की निर्झरियों, ज्योति उजागरियों के उपमान देकर उसे प्रीतिशिखा के रूप में रूपायित किया है।[1]

'लोकायतन' काव्य में प्रान्तीय विशेषताओं से अनुप्राणित नारियों के जो बिम्ब प्रस्तुत किये गये हैं, वे महत्व के हैं। उनमें प्रत्येक प्रान्त की नारी के रूपाकार, वेष-भूषा, कला-निपुणता एवं भाव-गरिमा से मंडित बिम्ब अंकित किये गये हैं।[2] 'मखमल साटन ज्वाला में लिपटी' रक्त-गौर रंग की पंजाबी युवती सौन्दर्यशिखा है और गुलाब-सी स्मिति उसके अधरों पर नाच रही है। रूप-गर्विता एवं मृदुस्मिता राजस्थानी वधू का मुख आभिजात्य गरिमा से मंडित है। वह दीप्ति लतिका, गोरी एवं तन्वी है। बंग युवती प्रीति-प्राण है और 'जलविहगों सी स्नेह स्निग्ध' उसकी चितवन है। गुजराती बाला श्री-निर्मल, सौम्य, सुघर संस्कारों से विभूषित कला-रंगिणी एवं मार्दवता की लतिका है। महाराष्ट्र कन्या सुगठित अंग-लावण्य से अत्यन्त आकर्षक है। ऊर्ध्व रीढ़, श्री-संयोजित अवयव, दीप्तानन, दीपशिखा-सी तेजस्वी तनिमा, उसके सौन्दर्य के प्रसाधन हैं। पन्तजी ने काश्मीरी मुग्धा का जो रूप-सौन्दर्य चित्रित किया है, आकर्षक एवं मंजुल है। 'नीलारुण रवि किरणों से लालित' काश्मीरी मुग्धा 'विधि-कर विरचित' है। उसकी 'हिम श्रृंगों सी अनिन्द्य गरिमा' है। मणि-निर्झर सी उसकी गति है। उसने पार्वतीय पुष्पों की कोमलता पायी है तो वायुओं से चंचल यौवन भी। वह 'सद्य खिली निसर्ग प्रतिमा' है और उसकी नील अपलक चितवन रसमय है। दक्षिणीवामा नृत्यभंगि निपुणा है और उसके गीत-कठ में 'जलधि-तरल लय-स्वर' मुखरित है। वह धीर एवं अकुंठित है। यवन-नारियों का रूप-चित्रण हृदयाकर्षक है। सद्यःस्मित यवन नारियाँ मेघों से निकली शशिबाला-सी मोहक हैं। उनकी स्वप्न-भरी विस्मित चितवन मुग्ध-कारी है। 'लाज लता सा खिला लचीला तन', 'शोभा-गुंठित' 'करौंदई, पिस्तई, लाजवंती रग' आदि प्रयोग उनकी लाज-भरी सुकुमारता, दीप्तिमत्ता, मंजुलता एव सविशेष रंग के द्योतक हैं। मुग्ध मदिर स्वर में बुलबुल-सी गाती यवन-नारियाँ शिष्ट-शील प्रतिमाएँ हैं। सारांश यह कि पन्तजी ने विविध देशों की नारियों के रूपाकार-सौष्ठव का कमनीय चित्रण कर अपने पर्यवेक्षण का परिचय दिया है।

पन्तजी के इन नारी-बिम्बों में मांसल पंकिलता नहीं है। वाह्य सौन्दर्य-बिम्ब में आन्तरिक सौन्दर्य अधिक झलकता है। उसमें कवि की सौन्दर्य-मुग्धता

---

१. स्वर्णधूलि, पृ. १५१

२. लोकायतन, पृ. ४४९–४५०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

एवं स्नेह-परायणता का आभास मिलता है। कवि ने नारी सम्बन्धी जो बिम्ब अंकित किये हैं, उनमें से अधिकांश काल्पनिक हैं, क्योंकि उसे न माता का वात्सल्य मिला, न प्रेयसी का प्रेम मिला। कोई नारी उसे सहचरी रूप में भी नहीं मिली। पन्तजी के अंतरंग मित्र बच्चनजी ने इस ओर संकेत करते हुए लिखा है—"जब उन्होंने प्राकृतिक सौन्दर्य को जी भर कर छक लिया और यौवन ने उनकी कल्पना को गुदगुदाना आरम्भ किया—प्राय: लोगों के जीवन में तूफान बनकर आता है और नस-नस झकझोर डालता है—तब एक आदर्श नारी का अमूर्त रूप उसके दिमाग में चक्कर काटने लगा, पर इसके रक्त और मांसवाली प्रतिमूर्ति को ढूँढ़ने, पाने, अपनाने का उन्होंने कभी प्रयास नहीं किया। कल्पना कल्पना में ही उसका भोग कर वे उससे विरक्त भी हो गये।"[1]

अमूर्त वस्तुओं के रूप-बिम्ब

पन्त-काव्य में प्राप्त मानव-रूपाकार संबंधी बिम्बों की परीक्षा ऊपर की गयी है। ये सारे बिम्ब मूर्त वस्तुओं के हुए। किन्तु पन्तजी ने मानव-जीवन से सम्बन्धित अनेक अमूर्त वस्तुओं, जैसे मन, प्राण, बुद्धि, भाव, चेतना, शान्ति, विद्या, ज्ञान, पाप, पुण्य, प्रतिभा, मुक्ति, सत्य, पराजय, काल, परिवर्तन, सभ्यता, संस्कृति, आदर्श, युग-संध्या आदि को मूर्त बिम्बों में प्रस्तुत कर प्रभावकारी बनाने का प्रयास किया है। अमूर्त वस्तुओं को मूर्तिमत् रूप में प्रस्तुत करने की कला में पन्तजी संभवत: हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं।

भारत-पाकिस्तान विभाजन एक ऐतिहासिक घटना है और उसके फल-स्वरूप दोनों देशों के असंख्य लोग विस्थापित हो शरणार्थी बने। इस समय मार-काट और लूट-पाट का तांडव मचा था और भूतल श्मशान-सा भाँय-भाँय करता था और मानव-हृदय निर्जन मरु-स्थल-सा साँय-साँय कर रहा था। दुख पीड़ित एवं आश्रयरहित मानव-हृदय के लिए मरुस्थल का अप्रस्तुत देते हुए पन्त ने उसे बिम्ब रूप में प्रकट किया है—

> भाँय भाँय करता था तब भूतल श्मशान सा,
> साँय साँय करता था उर निर्जन मरुथल सा।[2]

चारों ओर के अत्याचारों, अन्यायों से त्रस्त, भावी जीवन की आशा से रहित मानव-हृदय के लिए मरुभूमि का बिम्ब सार्थक है। मरुभूमि में एक भयावह शान्ति छायी रहती है ओर उसी प्रकार भावना रहित मानव-हृदय भी भयानक शान्ति से आतंकित था।

जहाँ आतंकित हृदय मरुभूमि है, वहाँ आध्यात्मिक आनंद, शोभा एवं प्रीति से प्लावित मन मधुकर बन गुंजन भरता है।

---

१. डॉ० हरिवंशराय बच्चन—कवियों में सौम्य संत, पृ. ७१

२. रजतशिखर, पृ. २९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सौरभ से उन्मन हो उठता
उर का मधुकर,
आनंद प्रीति शोभा रज पी
भरता गुंजन ।[१]

जिस प्रकार मधुकर सौरभ और मधु पीकर उन्मन हो वाचाल हो उठता है, वैसे ही मानव-हृदय आध्यात्मिक आनंद-सिंधु में निमज्जित हो चंचल हो जाता है और गुदगुदी का अनुभव करता है। अतः हृदय के लिए गुंजन करते मधुकर का अप्रस्तुत प्रदान कर उसे रूपायित करने का प्रयास किया गया है। हृदय के लिए कमल का बिम्ब कई स्थानों पर दिया गया है।[२]

नवचेतना के आश्लेष से इंद्रिय-लोलुपता में बंदी मन जागृत और स्वर्णिम प्रभात में उन्मन हो उठता है। इस प्रकार इंद्रिय जीवन को त्यागकर सात्विकता की ओर अग्रसर होते मन को रूपायित करने के उद्देश्य से पन्तजी ने उसे मुँद कमल पुट को त्याग कर उन्मन हो उड़ते मधुकर का बिम्ब दिया है।

इंद्रिय कमल पुटों में निद्रित
मुग्ध, विषय मधुरज में मज्जित,
जाग उठा, लो, नव प्रभात में
मन मधुकर स्वप्नों से उन्मन ![३]

भ्रमर मधुरज में मुग्ध हो कमल-पुटों में बंदी हो जाता है और सारी रात उन्हीं को आश्लेष किये सोता है। प्रातःकाल होते ही मुक्ति के स्वप्न में उन्मत्त हो वह जाग उठता है और कमल-दलों को तिरस्कृत करता है। यही बात मन की भी है। विषय-सुख के मधुरज में मज्जित मन इंद्रिय-कमल पुट में नींद ले रहा था। किन्तु नव प्रभात में रात के स्वप्नों से चंचल हो वह जाग उठता है और ऐन्द्रिय जीवन को तिलांजलि देकर नव अरुणोदय का स्वागत करता है। नवचेतना में मन के जागरण का यह बिम्ब कमनीय है।

'मति' एक सूक्ष्म अमूर्त वस्तु है। पन्तजी ने उसे मूर्त रूप दिया है। विश्व के ह्रास से आहत मति के लिए क्षुब्ध क्रुद्ध बिच्छू का अप्रस्तुत है—

विश्व ह्रास के कर्दम सागर में
कृमियों सा रेंगेगा जन जीवन,
क्षुब्ध क्रुद्ध बिच्छू सी आहत मति
घृणा द्वेष के देगी विष दंशन ![४]

कवि ने पहले नव-जीवन के लिए कृमियों का उपमान दिया है। जैसे कर्दम में

१. उत्तरा, पृ. १२६
२. रजत शिखर, पृ. ९८, १०१
३. अतिमा, पृ. १८
४. लोकायतन, पृ. ४४०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कीड़े रेंगते हैं, उसी प्रकार विश्व ह्रास में मानव जीवन रेंगेगा। इस जीवन से आहत मति घृणा-द्वेष के विष ही फैलाएगी। आहत मति और घृणा-द्वेष के लिए क्षुब्ध क्रुद्ध बिच्छू और विष अप्रस्तुत है। बिच्छू क्रुद्ध-क्षुब्ध होकर विष दंशन करता है, जिससे अत्यन्त पीड़ा होती है। साधर्म्य पर आधारित यह उपमान आहत मति को बिम्बात्मक रूप में प्रस्तुत करने में समर्थ है।

प्राणों की गुहाएँ
आनंद निर्झरों से
गूँज उठती हैं।[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में प्राणों के लिए गुहा और आनन्द के लिए निर्झर उपमान रखकर प्राण एवं आनन्द जैसे अमूर्त तत्वों को मूर्तिमत् बनाया गया है। प्राणों के लिए गुहाओं का उपमान उसकी गहनता एवं गहराई का द्योतक है। आनन्द के लिए निर्झर उपमान भी भाव व्यंजक है।

ज्ञान, विद्या, भावना, स्वर आदि को बिम्बों में बांधने का प्रयास किया गया है। जैसे—

(१) खोलता पुरुष ज्ञान प्रभु चक्षु,
विनत फन तमस, शक्ति मद सर्प![2]

(२) विद्या का सित तीर्थ बने भू-मन
खुले ज्योति अमरत्व लोक भीतर![3]

(३) भाव सहस्रों जलते—बुझते
फुलझड़ियों—से मन में।[4]

(४) भावों से क्या होगा?
वे हैं मनोबाष्प भर,
स्वप्न-नीडवासी, नभचारी
सुरधनु के पर![5]

प्रथम अवतरण में रूपक के द्वारा ज्ञान के उदय एवं उसके प्रभाव का बिम्ब है। ज्ञान को प्रभुचक्षु कहा गया है, जो तेजोमय एवं दीप्तिमय है। 'प्रभुचक्षु' कहते ही शिव के नेत्रोन्मीलन एव कामदहन की पौराणिक घटना का बिम्ब भी अंकित हो जाता है। जैसे शिव के तीसरे नेत्र के खुलते ही काम-देव जलकर भस्म हो गया, उसी प्रकार ज्ञान के उदय के साथ ही शक्ति-मद के सर्प का तमस रूपी फण विनत हो जाता है। शक्ति मद के लिए फण फैलाये

१. कला और बूढ़ा चाँद, पृ. २१
२. लोकायतन, पृ. ४१०
३. लोकायतन, पृ. ४९४
४. वाणी, पृ. ६६
५. पतझर, पृ. २६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सर्प तथा तमस के लिए फण का रूपक बांधा गया है। ज्ञान के साथ ही मनुष्य का शक्ति-मद दूर हो जाता है और अज्ञान का अन्धकार मिट जाता है। इसको सर्प एवं विनत फन के द्वारा मूर्त रूप दिया गया है।

द्वितीय अवतरण में विद्या के लिए 'मित तीर्थ' अप्रस्तुत रखकर जहाँ उसको मूर्त किया गया है, वहाँ उसकी सात्विकता, पावनता एवं पवित्रता की भी व्यंजना दी गई है।

तृतीय एवं चतुर्थ उद्धरणों में भावों को मूर्त किया गया है। मन में असंख्य भाव उद्दीप्त होते हैं और विलीन होते हैं। निरन्तर उद्दीप्त होने और विलीन होनेवाले भावों को 'फुलझड़ियों' के उपमान द्वारा बिम्बात्मक बनाया गया है। फुलझड़ियों के असंख्य स्फुलिंग उठते हैं, बुझ जाते हैं। चतुर्थ अवतरण में भावों की अमूर्तता, स्वच्छन्दता, वायवीयता एवं आकर्षण की व्यंजना की गयी है। भावों के लिए 'बाष्प' का उपमान अमूर्तता का द्योतक है। 'स्वप्ननीडवासी', 'नभचारी' एवं 'सुरधनु के पर' द्वारा कल्पनाशीलता, वायवीयता एवं रमणीयता दिखाई गई है। भाव के लिए 'अप्सरा' का उपमान भी कवि ने कई स्थानों पर दिया है।[1] भाव के लिए 'अप्सरा' उपमान चंचलता, क्षिप्रता, मोहकता एवं वायवीयता को व्यंजित करता है।

आगे पाप, शान्ति, स्वाधीनता, उच्छ्वास, प्रतिभा, मुक्ति, सत्य, श्रेय, आध्यात्मिकता आदि अमूर्तों के रूपात्मक बिम्बों पर विचार किया जायगा।

लोट रहे अघ अजगर रज पर
खल मुँह बाए,–खाँव, खाँव।[2]

पाप को भयकर अजगर का रूप दिया गया है। अजगर जीव को ग्रस लेता है। पाप भी जीव को ग्रस लेने की क्षमता रखता है। अजगर के रूप में पाप की कल्पना करके उसके भारी रूप एवं भयकरता दर्शायी गयी है।

मुक्त रुपहले पंख खोलकर तथा स्वर्णिम स्मिति बरसाते हुए भू पर पदार्पण करती शान्ति का मानवीकरण किया गया है—

मुक्त रुपहले पंख खोल, बरसा स्वर्णिम स्मिति
विचरे भू पर शान्ति, शान्ति प्रिय हो जन संमृति।[3]

शान्ति का आगमन संसार के लिए सुखद एवं संतोषप्रद है। इसलिए शान्ति को रुपहले पंखवाली तथा स्वर्णिम स्मितिवाली बताया गया है। कवि ने रंग-संवेदना के द्वारा अपने बिम्ब को चाक्षुष बनाया है। शुभ्र शान्ति के लिए

---

१. सौवर्ण, पृ. ६८, कला और बूढ़ा चाँद, पृ. ६३
२. वाणी, पृ. ५१
३. रजतशिखर, पृ. ८६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

राजमरालों का उपमान प्रस्तुत कर और राजमरालों का उत्कर्ष दिखाने के लिए उनकी तुलना श्वेत सरोरुह मालाओं से करते हुए एक बिम्ब 'वाणी' काव्य-संग्रह में द्रष्टव्य है।[1] लोकचेतना (स्वाधीनता) का नारी रूप में चित्रण अत्यंत कमनीय है।

> महानाश के खंडहर पर जन मन उन्मादिनी
> नाच रही है विद्युत् वसना लोक चेतना
> अट्टहास भर, शत स्फुलिंग बरसा अंबर से,
> नव जीवन के अग्नि प्ररोहों में रोमांचित !
> गाती है उन्मत्त गीत वह मंद्र स्तनित भर ![2]

महानाश के खंडहर पर लोकचेतना नृत्य निरत है। वह विद्युत् वसना है, जन-मन को उन्माद में भर रही है। वह अट्टहास भरती है और आकाश से शत स्फुलिंग बरसा रही है। वह मादक गीत बरसा रही है। नृत्य-गीत निरत विद्युत् वसना लोक-चेतना का गंभीर एवं उदात्त रूप-बिम्ब प्रभावकारी है। विद्युत् से रंग-संवेदना प्रकट होती है। 'अट्टहास' में श्रव्य बिम्ब है।

मुक्ति और सत्य का कमनीय बिम्ब 'स्वर्ण किरण' काव्य में उपलब्ध होता है। इनका नारी-पुरुष रूप में चित्रण हुआ है। मुक्ति के वक्षस्थल पर हाथ धर कर सोये हुए सत्य का बिम्ब यौन-भावना को उद्दीप्त करते हुए भी सुन्दर है—

> तरुण सत्य के अर्ध विवृत जघनों पर शिर धर
> लेटी थी वह दामिनी सी रुचि गौर कलेवर,
> गगन भंग-से लहराए मृदु कच अंगों पर,
> वक्षोजों के खुले घटों पर लसित सत्य कर ![3]

श्रेय का समाधिस्थ रूप भगवान शंकर का स्मरण कराता है। यह विराट् बिम्ब पाठक को मन्त्रमुग्ध कर देता है—

> समाधिस्थ था श्रेय, सत्य आरूढ़ निरन्तर
> धरे अंक में भू को, सुरजल स्रोत शीर्ष पर;
> ताप गले में, सुधा शान्ति मस्तक पर भास्वर
> लिपटा तन से विभूति, अभाव भोगधर ![4]

प्रतिभा का बिम्ब भी कम मोहक नहीं है। ज्वलित अर्चियों की प्रतिभा तडित् सी रक्त घनों की दीप गुहा से स्फुरित है और वह मानस-लहरों पर आलोक विकीर्ण करती हुई दौड़ती है। उसके स्वर सुरंग खगों के कलरव की

---

१. वाणी, पृ. १३
२. रजतशिखर, पृ. ८२
३. स्वर्णकिरण, पृ. ६३
४. स्वर्ण किरण, पृ. ६३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

समता करते हैं। उसका शरीर कई रंगों की गलित विभा से स्रवित है। चपल चौकड़ी भरता शशि-मृग उसका सहचर है। मारुत-पंखों पर तिग्म सुरभि के समान वह उड़ती है। उसके मुख पर दिव्य-प्रेरणा किरणों की जाली पड़ी हुई है।[१] यहाँ रंग, नाद, आस्वाद सम्बन्धी संवेदनाओं का सहारा लेकर प्रतिभा का नारी-बिम्ब प्रस्तुत किया गया है।

धर्म ने संसार में जो अहित किया, वह सर्व-विदित है। धर्म ने मानवता की दृष्टि संकुचित कर दी। इस प्रकार का धर्म मानवता के लिए हानिकारक था। उसका समाप्त होना अवश्यंभावी था। आध्यात्मिकता को संकुचित घेरे में बाँध रखने वाले जीर्ण धर्म की इस विकसित युग में कोई महत्ता नहीं है। आज के युग में उसकी उपेक्षा हुई है, क्यों कि वह अंध आस्था को प्रश्रय दे रहा था। इस प्रकार अन्ध आस्था सिखानेवाले जीर्ण धर्म को त्याग कर मानव मंगल के लिए आगे निकल आयी आध्यात्मिकता का साँगरूपक द्वारा एक बिम्ब निम्न पंक्तियों में प्रस्तुत है—

जीर्ण धर्म की केंचुल झाड़, निखिल मंगल हित,
आध्यात्मिकता आगे निकल गई निःसंशय
अंधी आस्था के गोपद-बिल से बाहर हो![२]

आध्यात्मिकता एक सर्प है, जीर्ण धर्म केंचुल था। अन्धी आस्था उसका गोपद बिल था। सर्प जीर्ण केंचुल छोड़कर नया रूप ग्रहण करता है। इसी आधार पर कवि ने आध्यात्मिकता के विकास का बिम्ब प्रस्तुत किया है। आध्यात्मिकता जीर्ण धर्म की केंचुल झाड़ आगे बढ़ गयी। वह शंकराचार्य रूपी बछड़ों के गोपद-बिल में समा नहीं सकी।

मृत्यु की तुलना प्रेत से करके उसकी भयंकरता की ओर संकेत किया गया है।[३] प्रेत एक काल्पनिक वस्तु है, जिसका कोई रूप स्पष्ट व्यजित नहीं होता। किन्तु कवि ने 'शिल्पी' में महानाश की तुलना महाव्याल से करके उसके भयावह रूप का बिम्ब अंकित किया है, जो अत्यन्त प्रभावकारी है—

महाव्याल सा शत सहस्र फन तान गगन में
महानाश फूत्कार भर रहा वज्र घोष कर।
गरल फेन के उगल लहकते धूमिल बादल
महामृत्यु के कुंडल मार दिशाओं में वह
झाड़ रहा युग केंचुल भीषण अन्धकार की![४]

---

१. स्वर्ण किरण, पृ. ६२
२. किरण वीणा, पृ. २१६
३. खड़ी प्रेत सी मृत्यु छाँव—वाणी, पृ. ५१
४. शिल्पी, पृ. ६४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

महानाश रूपी काल सर्प अपने शत सहस्र फणों को गगन में तानकर फूत्कार भर और वज्र घोष कर संसार को विकंपित कर रहा है। उसके मुंह से उगलता गरल फेन ही धूमिल बादल है। वह सारी दिशाओं में महामृत्यु का कुंडल मार कर बैठा है और भीषण अन्धकार की युग-केंचुल झाड़ रहा है। इस प्रकार महानाश की तुलना व्याल से करके उसके फूत्कार, गरल, कुंडल, केंचुल की कल्पना करके जो बिम्ब प्रस्तुत किया गया है वह महानाश के भयंकर रूप को आँखों के सम्मुख प्रस्तुत करता है। 'फूत्कार' और 'वज्र घोष' में श्रव्य बिम्ब है तो 'गरल' में आस्वाद्य बिम्ब। 'धूमिल बादल', 'भीषण अन्धकार' में रंग-संवेदना दर्शनीय है। उपमा एवं साँगरूपक अलंकारों पर आश्रित यह बिम्ब उदात्त बिम्ब-कल्पना का उदाहरण है।

'किरण वीणा' में नरक का एक स्वप्न-बिम्ब आया है जिसमें यह दिखाया गया है कि डार्विन की मृत्यु पर धर्म के ठेकेदार पोप महोदय स्वप्न में नरक लोक की यात्रा करते हैं और खोजते हैं कि भौतिकवादी डार्विन किस नरक में स्थान पा सके हैं। उस यात्रा में वे छठे नरक में पहुँचते हैं। स्वप्न में देखा रूप कवि प्रस्तुत करता है—

गन्धक के पर्वत गलते थे
छठे नरक में—
घोर घृणित दुर्गन्ध वायुओं में थी फैली।
सड़े माँस के अंबारों से
गलित पीप की नदियाँ बहतीं
माखन सी ही गीली पीली।
काले कल्मष के
मोटे चमड़े-से बादल
छाए थे—[1]

नरक एक भयावह स्थान है। उसकी कल्पना बहुत कुछ मनुष्य की स्मृति में अंकित है। उस कल्पनाश्रित नरक को रूपायित करना कुशल कलाकार का काम है। पन्तजी ने सरल भाषा में अपने बिम्ब धर्मी विशेषणों के सहारे उसका बिम्ब प्रस्तुत किया है जो हमारे सम्मुख नरक का घृणित रूप अंकित करता है। वहाँ छठे नरक में गन्धक के पर्वत जलते थे और उनसे निकलती घोर घृणित दुर्गन्ध वायु में फैलकर पूरे वातावरण को कलुषित एवं असह्य कर रही थी। सड़े माँस के अंबारों से मक्खन सी गीली-पीली गलित पीप की नदियाँ बहती थीं और काले कल्मष के मोटे चमड़े-से बादल छाये हुए थे। कवि ऐन्द्रिय संवेदनाओं को जगाकर पाठक के मानस में नरक का बिम्ब अंकित करता है। 'गन्धक',

१. किरण वीणा, पृ. १७३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

'दुर्गन्ध', 'सड़े माँस' आदि पाठक की घ्रातव्य संवेदना को उद्दीप्त करते हैं। गन्धक के पर्वत, माँस के अंबार में रूप-संवेदना को जागृत करने की अपार क्षमता है। पीप की नदियों के लिए 'माखन सी ही गीली पीली' कहकर मिश्रित संवेदनाओं को उकसाया गया है। 'माखन' चाक्षुष ही नहीं स्पृश्य भी है। फिर 'पीली' कहकर उसके प्रति हमारी रंग-संवेदना आकृष्ट की गई है। छाये हुए बादल के लिए काले कलमष के मोटे चमड़े का अप्रस्तुत कम ऐन्द्रिय संवेद्य नहीं है। 'कलमष' को 'काली' रंग-संवेदना द्वारा रूप प्रदान किया गया है। बादल काले कलमष के चमड़े हैं और चमड़े भी मोटे हैं। 'मोटा' स्पृश्य बिम्ब को अंकित करता है। इस प्रकार मिश्रित ऐन्द्रिय संवेदनाओं के सहारे नरक का बिम्ब प्रस्तुत करने का प्रयास श्लाघ्य है।

बीसवीं शताब्दी युद्ध, मारकाट, हलचल एवं अशान्ति लेकर आयी है। वैज्ञानिक प्रगति ने एक ओर जहाँ नर-हत्या सरल कर दी है तो दूसरी ओर मानव-जीवन को अनेक सुविधाएँ भी प्रदान की हैं। अतः एक ओर संसार में उसका पदार्पण दुखदायक हुआ और दूसरी तरफ लाभ भी हुआ। अतः उसका आगमन सुख-दुखमय है। उसके इस द्विधामूलक प्रभाव को दृष्टि में रखते हुए कवि ने उसका नारी-बिम्ब प्रस्तुत किया है—

कौन कौन तुम निष्ठुर हासिनि ?
महाकाल के मुक्त वक्ष पर
      नग्न नृत्य करती उन्मादिनि !
दक्षिण कर पीयूष पात्र स्मित
वाम हस्त विष ज्वाल विकंपित,
विचर रही है निर्मम अबाध तुम
      विश्व विषादिनि, लोक प्रसादिनि ![1]

बीसवीं शती के विनाशकारी एवं जीवनदायिनी उभय रूपों को दृष्टि में रखते हुए कवि का कथन है कि वह निष्ठुर हासिनी है। कवि का विश्वास है-विनाश निरता यह विंशशती विनाश के अतल गर्भ से नवयुग का जीवन-ज्वार लाएगी। 'निष्ठुर हासिनि' विरोधमूलक शब्दों के द्वारा कवि उसके दोनों रूपों का संकेत देता है। वह उन्मादिनी है और महाकाल के मुक्त वक्ष पर उसके नग्न नृत्य के पद-संचार पड़ रहे हैं, जिससे संसार कुचलता जा रहा है। उसके दक्षिण हस्त में पीयूष-पात्र और वाम हस्त में विष ज्वाला विराजमान है। इस प्रकार उभय करों में पीयूष और विष के पात्रों को लिये अबाध गति से विचरती यह विंश-शती नृत्यनिरता नारी रूप में हमारे सामने आती है। वह अपनी संहार-मुद्रा से विश्व को विषादमय कर रही है तो सृजन-चेतना से लोक को

१. रजतशिखर, पृ. ८०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अनुग्रहित भी। 'पीयूष' एवं 'विष' में आस्वाद्य बिम्ब की योजना है और उसके द्वारा विंश-शती के मधुर एवं तिग्म स्वभाव का परिचय दिया गया है। कवि का यह बिम्ब मानवीकरण पर आधारित है। यहाँ किसी अप्रस्तुत का सहारा नहीं लिया गया है।

विंशशती के नारी-बिम्ब के बाद सन् १९५१ का पुरुष-बिम्ब भी द्रष्टव्य है। सन् १९५१ का प्रौढ़ व्यक्तित्व अंकित किया गया है। बीसवीं शती ने अब तक पचास वर्ष बिताये हैं और जीवन के नाना अनुभवों को भोगा है। जीवन को लंबी आयु पारकर वह आगे बढ़ रहा है। अब तक के पचास वर्षों के कुहासों को उसने काट डाला है। अब उसकी गति में मंदता है, पूर्वकालीन चचलता अब उसमें नहीं रह गयी है। लंबे अनुभवों को भोगकर उसके व्यक्तित्व में पर्याप्त प्रौढ़ता आ गयी है और वह अब मौन होकर कदम बढ़ा रहा है। उसका मस्तिष्क प्रौढ़ है, विचार परिपक्व हैं और प्रौढ़ विचारों के प्रतीक स्वरूप उसके बाल बहुत-कुछ सफेद हैं। आज वह चिन्तनशील एवं मननशील है। उसके प्रौढ़ भाल पर चिन्तन की रेखाएँ अंकित हैं। चिन्तन की रेखा से अंकित प्रौढ़ भाल के लिए नवल क्षितिज का उपमान प्रस्तुत किया गया है। गत पचास वर्षों के अस्पष्ट विचारों के कुहासों से निकल कर प्रौढ़ एवं परिपक्व चिन्तन के क्षितिज में उसके पदार्पण की ओर संकेत किया गया है —

इन पचास वर्षों के निबिड़ कुहासों से कढ़
सन् इक्यावन मौन बढ़ रहा धीरे सम्मुख !
अर्धपक्व केशों के उसके प्रौढ़ भाल पर
चिन्तन की रेखा है अंकित, नवल क्षितिज सी ![1]

सन् इक्यावन का एक प्रौढ़ विचारशील पुरुष के रूप में मानवीकरण पर आधारित यह बिम्ब अत्यन्त स्वाभाविक है। सन् इक्यावन के बहाने कवि ने पचास वर्ष की आयु पारकर इक्यावन की ओर बढ़ते हुए अपने कवि-व्यक्तित्व का ही बिम्ब प्रस्तुत किया है। कवि मानव-जीवन संबंधी समस्याओं के समाधान स्वरूप कई विचारों के कुहासों में अब तक उलझा हुआ था। कभी उसने भारतीय उपनिषदों की शरण ली, तो कभी बौद्धों के दुखवाद की ('परिवर्तन' कविता में बौद्धों के दुखवाद का प्रभाव स्पष्ट है।), कभी मार्क्स के पीछे दौड़ा तो कभी गाँधीवाद के पीछे। इस प्रकार विभिन्न विचारों में बुरी तरह उलझे हुए कवि को अपनी अनुभूतियों के लिए किसी प्रकार के बौद्धिक एवं आध्यात्मिक अवलम्ब की आवश्यकता थी, जो उसे अरविन्द के 'भागवत जीवन' में प्राप्त हुआ। पन्तजी ने लिखा है—"अपनी नवीन अनुभूतियों के लिए, जिन्हें मैं अपनी सृजन-चेतना का स्वप्न-संचरण या काल्पनिक आरोहण समझता था, मुझे

१. रजत शिखर, पृ. ८७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

किसी प्रकार के बौद्धिक तथा आध्यात्मिक अवलम्ब की आवश्यकता थी। इन्हीं दिनों मेरा परिचय श्री अरविन्द के 'भागवत जीवन' (दि लाइफ डिवाइन) से हो गया। उसके प्रथम खण्ड को पढ़ते समय मुझे ऐसा लगा, जैसे मेरे अस्पष्ट स्वप्न-चिन्तन को अत्यन्त सुस्पष्ट, सुगठित एवं पूर्ण दर्शन के रूप में रख दिया गया है।"[१] अतः अरविन्द के 'भागवत जीवन' के संपर्क में आकर पन्तजी के जीवन-दर्शन में सुस्पष्टता आई और उत्तर पन्त एक विचारक एवं चिन्तक रूप में परिणत हुए।

पन्त-काव्य में संस्कृति, सभ्यता, आदर्श जैसी अमूर्त वस्तुओं को भी मूर्त करने का प्रयास हुआ है। ऐसे कई बिम्ब उपलब्ध होते हैं। भवसंस्कृति का मानवीकरण करते हुए उसका नारी रूप में बिम्ब निम्न पंक्तियों में अंकित है—

तुम हरित कंचु
सित ज्योति किरण छवि वसना,
भव संस्कृति की नव प्रतिमा
x x x
संहार मग्न, शुभ सृजन लग्न,
कर राष्ट्र वर्ग बल भेद भग्न
भरती समत्व जगती में, तुम दिशि-रसना,
नवयुग की गौरव गरिमा।[२]

कवि नवयुग की गौरव-गरिमा स्वरूप भव-संस्कृति की बिम्ब-कल्पना करता है। संस्कृति विश्व जनीन वस्तु है और लोकमंगल उसका लक्ष्य है। इसलिए उसका चित्रण हरित कंचुकी पहने, शुभ्र ज्योति किरण-छवि-वसना के रूप में हुआ है। वह शुभ्र ज्योति की किरणें विकीर्ण करती छवि रूपी वस्त्र पहने है। दिशाएँ उसकी रसनाएँ हैं और संसार में समत्व की स्थापना करना उसका अंतिम लक्ष्य है। हरित, सित ज्योति, आदि में रंग-संवेदना है। 'हरा' रंग उत्कर्ष एवं समृद्धि का प्रतीक है तो 'श्वेत' रंग सात्विकता का सूचक है।

भव-संस्कृति का जो आदर्श है, उसको समझे बिना मानव अपने अवचेतन की हिंस्र वृत्तियों को प्रकट कर दानवता का रूप अपना रहा है। मानव को दानव की ओर बढ़ते देखकर विश्व-सभ्यता झोंक उठती है—

अतल गर्त में पड़ी, झोंकती विश्व सभ्यता,
उमड़ रही छल हिंस्र वृत्तियाँ अवचेतन की,
मनुष्यत्व का रक्त चूसकर कृमि सा मानव
दानव बनकर रेंग रहा दिग् भ्रष्ट रीढ़ पर![३]

---

१. उत्तरा, प्रस्तावना', पृ. २२-२३
२. युगवाणी, पृ. ७६
३. शिल्पी, पृ. ७२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

यहाँ विश्व-सभ्यता का मानवीकरण किया गया है। वह अतल गर्त में पड़ी कराह उठती है क्योंकि मानव ने दानव का रूप धारण किया है। वह मनुष्यत्व का रक्त चूसकर कृमि के समान अपनी रीढ़ पर रेंग रहा है। मानव का बिम्ब दानव-रूप में देकर उसकी आन्तरिक वृत्ति का भाव-बिम्ब अंकित किया गया है। फिर उसके लिए रीढ़ के बल रेंगते कृमि का उपमान देकर जो रूप-बिम्ब प्रस्तुत किया गया है, वह बहुत ही समर्थ एवं चाक्षुष है।

'लोकायतन' काव्य में नव मानव-संस्कृति के लिए चित् किरणों से आलोकित स्वर्णिम स्फटिक सौध का अप्रस्तुत है—

स्फटिक सौध नव मानव संस्कृति का
स्वर्णिम चित् किरणों से आलोकित ![1]

कवि की कामना है कि नव मानव दिव्य रूप धारण करेगा और उसकी संस्कृति अंतः चेतना की किरणों से अभिषिक्त होगी। अंतः चेतना की दिव्य किरणों से मंडित संस्कृति के लिए स्वर्णिम किरणों से आलोकित स्फटिक सौध का बिम्ब नयनाभिराम है। 'स्फटिक' एवं 'स्वर्णिम' में सूक्ष्म रंग-संवेदना द्रष्टव्य है।

कवि ने 'आदर्श' को निधि रूप में बिम्बित कर उसको परखने की ओर संकेत किया है—

.........अतुल आदर्शों की निधि
संचित कर नित, उन्हें कसौटी में कस उर की,
मैंने विविध प्रयोग किये जन के जीवन में—[2]

यहाँ बिम्ब लोकोक्ति पर आधारित है। स्वर्ण को खरा या खोटा प्रमाणित करने के लिए कसौटी पर कसा जाता है और खरा जानने के बाद उसका प्रयोग होता है। वैसे ही कवि ने इधर-उधर से मानव-आदर्शों की निधि एकत्रित की और उन्हें हृदय रूपी कसौटी पर कसकर खरापन जानी और उनके विविध प्रयोग किये।

जीवन में परिवर्तन होते ही रहते हैं। ये परिवर्तन अवश्यंभावी हैं और उन पर मनुष्य का कोई नियंत्रण नहीं है। परिवर्तन को नृशंस राजा के रूप में दिखाया गया है

तुम नृशंस नृप-से जगती पर चढ़ अनियंत्रित
करते हो संसृति को उत्पीडित, पद दलित,
नग्न नगर कर, भग्न भवन, प्रतिमाएँ खंडित,
हर लेते हो विभव, कला, कौशल चिर संचित ![3]

---

१. लोकायतन, पृ. ४४३ २. सौवर्ण, पृ. ७१-७२
३. पल्लव, पृ. १५१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

संसार का इतिहास इस बात का साक्षी है कि अनेक नृशंस राजाओं ने दूसरे राज्यों पर आक्रमण कर लूट-पाट और हत्या-व्यवसाय से जनता को पीड़ित किया, नगरों को नष्ट-भ्रष्ट, सुन्दर भवनों को धराशायी, सुन्दर मूर्तियों को खंडित तथा साहित्यकला-कौशल को नष्ट कर दिया है। मुहम्मद गौरी, मुहम्मद गज़नवी, नादिरशाह जैसे नृशंस आक्रमणकारियों ने भारत का जो अहित किया है, वह इतिहास के विद्यार्थियों से छिपा नहीं है। उपर्युक्त अवतरण में कवि ने 'परिवर्तन' को एक ऐसे ही नृशंस राजा का रूप दिया है, जो स्वच्छन्द होकर संसार पर अनियंत्रित आक्रमण करते हैं, संसृति को पीड़ित करते हैं, मानवता को पैरों तले कुचल डालते हैं, शिल्प-सौन्दर्य एवं कला-कौशल को तोड़-फोड़ देते हैं तथा लूट-खसीट कर वैभवों का अपहरण करते हैं।[1]

इसी परिवर्तन के लिए इन्द्रजाल, मायाकर, विश्वमंच के नायक नटवर, सूत्रधार, अनन्त हृत्कम्प आदि उपमान दिये गये हैं।[2]

जीवन सम्बन्धी अनेक अमूर्त वस्तुओं के रूप-चित्र पन्त-काव्य में देखे जा सकते हैं। कहीं पराजय का मानवीकरण कर उसे पागलपन बन उपहास करते दिखाया गया है।[3] और कहीं सुख-दुःख को छाया-प्रकाश के उपमान द्वारा रूपायित किया गया है।[4] विश्व और संस्कृतियों को क्रमशः अधोमूल अश्वत्थ तथा शाखाओं के रूप में चित्रित किया गया है।[5] यह उपनिषद् की विचार धारा की छाया लिये हुए है। गीता में विश्व को ऊर्ध्वमूल अश्वत्थ कहा गया है—

ऊर्ध्वमुलमधः शाखामश्वत्थं प्राहुरव्ययम्।
छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित्॥[6]

२. सामाजिक बिम्ब

इस कोटि में वे सारे बिम्ब आते हैं, जिनका सम्बन्ध मानव के सामाजिक जीवन, मान्यताएँ, रीति-रिवाज़, आचार-विचार आदि से है। पन्त-काव्य में भारतीय सामाजिक जीवन के अनेक बिम्ब प्राप्त होते हैं। भारतीय सामाजिक जीवन में बड़ी विषमता है। हमने बाह्य परिवेश को सजाकर रखा है। गृह, तोरण, गुंबद, मीनारें सब दीप की ज्योति से प्रकाशमय हैं, किन्तु मानव का मन-मन्दिर भीतर से तमसावृत है। जीवन असंगठित है और फलतः चारों ओर अन्धकार छाया हुआ है। अन्धकार का दुर्ग दृढ़ है, जब कि जीर्ण जातिगत भावनाओं का मन खंडहर बना हुआ है—

गृह तोरण गुंबद मीनारें
दीपों की रेखा छवि से स्मित

---

१. पल्लव, पृ. १५१
२. वही, पृ. १६२–१६४
३. वीणा-ग्रंथि, पृ. ७४
४. युगपथ, पृ. २१
५. ग्राम्या, पृ. ५३
६. गीता, १५–१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हँसती,–मानव उर का मंदिर
कबसे भीतर से तमसावृत !
असंगठित जग जीवन का तम
आज चतुर्दिक रहा ज्यों बिखर
अंधियाले का दुर्ग बना दृढ़
जीर्ण जातिगत मन का खंडहर ![1]

कवि ने मन को तमसावृत मन्दिर का बिम्बत्व प्रदान किया है। मन्दिर भले ही पवित्र स्थान हो, जब तक वह ज्योतिर्मय नहीं, अवश्य ही भयावना लगता है। यही स्थिति मानव-मन की है। जातिगत भावनाओं से जीर्ण मन खण्डहर है और उसके चारों ओर अन्धेरे का दुर्ग बना हुआ है।

'स्वर्णधूलि' में सामाजिक जीवन की नारकीयता का वर्णन करते हुए कवि ने लिखा है—

गत युग के जन पशु जीवन का जीता खण्डहर
वह छोटा सा राज्य नरक था इस पृथ्वी पर !
कीड़ों से रेंगते अपाहिज थे नारी नर,
मूल्य नहीं था जीवन का कानी कौड़ी भर ![2]

कवि ने नरकतुल्य सामाजिक जीवन की वीभत्सता का बिम्ब प्रस्तुत करते हुए यह दिखाया है कि गत युग—सामन्ती युग में मानव-मूल्य नकारात्मक था। वहाँ मानव को पशुजीवन बिताने के लिए विवश किया जाता था। उसी के जीते खण्डहर के समान पृथ्वी पर एक छोटा सा राज्य है। वहाँ नर-नारी पंगु हैं, कीड़ों के समान वे नरक की वीभत्सता में रेंग रहे हैं। वहाँ जीवन का कानी कौड़ी भर मूल्य नहीं है। पशु-जीवन, खण्डहर, नरक, कीड़ों से रेंगते अपाहिज, कानी कौड़ी–ये सारे प्रयोग चित्र उपस्थित करते हैं। सामाजिक जीवन का चित्र हमारी आँखों के सामने नाचने लगता है।

भारतीय जन-जीवन अशोभन है। यहाँ सब कहीं विषमता, अशान्ति एवं घोर निराशा छायी हुई है। जन-समाज अनेक मत-मतांतरों, वादों, जातियों, वर्णों और वर्गों में खण्डित है और अनेक खाइयाँ खुदी हुई हैं। उनके ऊपर यंत्रों का पृथक् शोषण हो रहा है। जनता भूख-प्यास एवं श्रम से पीड़ित है। लोग अविद्या के अन्धकार में मूर्छित पड़े हैं। युग-मानव महानाश के घोर वृत्त में घूम रहा है। इस प्रकार सब प्रकार की विषमताओं से पीड़ित युग-मानव को भग्न पीठ पर रेंगते अहि के रूप में चित्रित किया गया है।

---

१. युगपथ, पृ. १००–१०१
२. स्वर्णधूलि, पृ. ७७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तर्कों, वादों, वर्गों के भेदों में खण्डित,
यंत्रों से शोषित, जन तंत्रों के आन्दोलित,
क्षुधा, तृषा, श्रम पीड़ित, तमस अविद्या मूर्छित,
रेंग रहा युग भग्न रीढ़ पर आहत अहि-सा
घूम घूम फिर घोर वृत्त में महानाश के।[1]

युग-मानव अपनी भग्न रीढ़ पर रेंगता, घूमता महानाश के वृत्त में पड़ रहा है। इसके लिए कवि ने आहत सर्प का अप्रस्तुत बिम्ब दिया है। सर्प आहत होकर घोर वृत्त बनाकर घूमता है और अपनी भग्न पीठ पर रेंगता हुआ मंद-मंद चलता है।

एक समय था जब कि भारत आध्यात्मिक गुरु था और यहाँ के आध्यात्मिक सन्देश विदेशों तक में पहुँच गये थे। भारतीय संस्कृति विश्व की सस्कृतियों में सबसे महान समझी जाती थी। सामाजिक जीवन के हमारे भव्य आदर्श थे। धर्म, नीति, आचार दूसरों के लिए प्रेरणादायक एवं स्फूर्तिदायक थे। किन्तु आज न वह पुरानी संस्कृति रही, न वे आदर्श। आज भारतीय जनता अपनी संस्कृति एवं आदर्श को भूलकर भौतिक सुख की ओर दौड़ रही है, और वहाँ से भी निराश लौट रही है। पन्त ने इस स्थिति का चित्र इस प्रकार अंकित किया है —

ध्वस्त हो रहे संस्कृतियों के सौध रत्न-स्मित,
भू लुंठित स्मृतिशिखर ज्योतिमुख आदर्शों के,
नष्ट-भ्रष्ट संगठन सचेतन मानव मन के !
धर्म, नीति, आचार गिर रहे औंधे मुँह हो,
हँसमुख तम से भरे अतल कामना-कूप में !
बुद्धि भ्रान्त, जीवन के आवेशों से चंचल,
भाग रहा मन बहिर्जगत के जलते मरु में
मृग मरीचिका पीड़ित, चल जल छाया मोहित ![2]

गत वैभवशाली संस्कृति के लिए रत्नस्मित सौध का अप्रस्तुत मूर्त रूप प्रदान करता है। प्राचीन आदर्श ज्योतिर्मुख थे, किन्तु उनकी बची-खुची स्मृति के शिखर भी आज भू-लुंठित हो गये। मानव-मन का संगठन आज नष्ट-भ्रष्ट हो गया। प्राचीन धर्म, नीति एवं आचार के नष्ट होने की बात को 'औंधे मुँह गिरना' कहकर बिम्ब रूप दिया गया। वे जाकर गिरे हैं तम से भरे अतल कामना के कूप में कामना को 'हँसमुख' तथा 'तम से भरे' कहा गया है। 'कामना' हँसमुख इसलिए है कि वह मानव-मन को लुभाती है। किन्तु कामना के पाश में फँसा मनुष्य

१. रजतशिखर, पृ. ९६
२. सौवर्ण, पृ. २०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जो धर्म, नीति एवं आचार की बात सोच ही नहीं सकता, अपने जीवन को कारुणिक बना देता है और फिर वहाँ से लाख प्रयत्न करने पर भी मुक्त नहीं हो पाता। इसलिए 'कामना' के 'अतल कूप' का अप्रस्तुत पर्याप्त भाव-बोधक है। मानव-मन आज बुद्धि-भ्रान्त है, जीवन के चंचल आवेशों से प्रेरित हो वह बाह्य जगत् के जलते मरु में अपने आवेशों की तुष्टि खोज रहा है। बाह्य जगत् के ऐन्द्रिय सुख को 'जलते मरु' का उपमान पर्याप्त भाव-व्यंजक है। जलते मरु में किसी की प्यास कभी शान्त नहीं होती, वह मन की कामना बढ़ाता रहता है। बाह्य जगत् के इन्द्रिय-सुख की 'चल जल छाया' मृग-मरीचिका है, जहाँ पहुँचकर मानव-मन अत्यधिक पीड़ित है। भौतिकवाद एवं इन्द्रिय सुखों के पीछे लपकते मानव-समाज का यह बिम्ब कवि पन्त के महान सन्देश का वाहक है। रूपक, मानवीकरण एवं रूपकातिशयोक्ति पर आधारित यह बिम्ब विचार-गर्भित है।

युग-मन की अस्त-व्यस्तता, कुरूपता एवं बेढंगेपन की मूर्ति-कल्पना निम्न-पंक्तियों में दर्शनीय है—

टूटे फूटे,दीमक के खाये खानों का,
धूल भरे कागज पत्रों में लिपटा,
कटे-छंटे अखबारों के पन्नों से बिखरा,
बड़े-बड़े खातों, भारी भरकम पोथों से
भरा ठसाठस, युग का मन है? रीढ़ झुकाए
जीर्ण पुलिन्दों के बोझों से!! सच कहती हो!
अस्त-व्यस्त, कूडा कचरा......यह युग का मन है?[१]

मानव-मन कितना अस्त-व्यस्त, कूडा-कचरा बन गया है। 'दीमक के खाये खानों का', 'धूल भरे कागज पत्रों में लिपटा' कहकर युग-मन की क्रम-हीनता, विरूपता एवं मलिनता का रूप बिखाया गया है। असंगठित मन के लिए 'कटे-छंटे अखबारों के पन्ने' का उपमान सार्थक है। जिस प्रकार अखबारों के पन्नों के कटे-छंटे टुकडों के बिखरने से वातावरण गंदा दिखता है, वैसे ही इधर-उधर की बातों, काम-काजों में बिखरा मन बिलकुल गंदा है। आधुनिक युग-मन बड़े-बड़े खातों, भारी-भरकम पोथों में उलझा है। वह केवल आर्थिक-लाभ की चिन्ता में डूबा हुआ है। 'रीढ़ झुकाए जीर्ण पुलिन्दों के बोझों से' विशेषण युग-मन का बिम्ब प्रत्यक्ष अंकित करता है। प्रत्येक शब्द में युग-मन के प्रति कवि का असंतोष प्रकट होता है।

शोभा-जीवी कलाकार का कोमल मन सामाजिक कुरूपता के प्रति भय-विह्वल है। उसको सांसारिक जीवन की कुरूपता शत फण फैलाये नागिन-सी डँसती रहती है।

---

१. शिल्पी, पृ. ५२-५३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शोभा जीवी उर को जीवन की कुरूपता
नागिन सी डँसती रहती शत फन फैलाए ।[१]

'लोकायतन' काव्य में सुन्दरपुर के सामाजिक जीवन का एक बिम्ब प्रस्तुत किया गया है। वंशी वहाँ सांस्कृतिक जीवन के पुनरुद्धार के कार्यों में लग जाता है, किन्तु वंशी के महान संकल्पों एवं आदर्श स्वप्नों को हृदयंगम करने की क्षमता रूढ़ियों में आबद्ध समाज को नहीं थी। इस बात को कवि पंजरबद्ध पंखहीन एवं अधीर कीर के बिम्ब के द्वारा समझाता है—

जगत था कृषियुग खंडहर मात्र,
मनुज मृत आदर्शों का कीर,
रूढ़ियों के पिंजर में बद्ध
प्राण-पंखों से हीन अधीर ।[२]

जगत् कृषियुग की निम्न चेतना का खंडहर मात्र था। मनुज मृत आदर्शों का कीर था जो प्राण-पंखविहीन, अधीर एवं रूढ़ियों के पिंजर में आबद्ध था। पिंजर में बद्ध पंखहीन एवं अधीर कीर का रूपक रखकर कवि ने मृत आदर्शों, रूढ़ियों में बुरी तरह फँसे प्राणहीन एवं मृत संकुचित सामाजिक जीवन का रूप हमारे सम्मुख रख दिया है। ऐसे ही समाज को निष्क्रिय जीवन बिताने की प्रेरणा देनेवाले जन्म, कर्मफल सिद्धांत को कर्दम, रूढ़ि-रीति को उसमें रेंगते कृमि तथा धार्मिक विधि-निषेध को तम के अप्रस्तुत द्वारा प्रकट करने का प्रयास किया गया हैं।[३] समाज में प्रचलित जाति-भेद प्रेत हैं और उनमें बंटे नर पशु हैं।[४] कामद्वेष की एषणाओं से विजित लोकजीवन भू-कर्दम में कृमि-सा रेंग रहा है।[५]

अंधपरंपराओं, धार्मिक ढकोसलों एवं वर्ग-भेद की खाइयों से पीडित सामाजिक जीवन कभी उन्नति नहीं पा सकता। वह समाज निरा पंगु है। वहाँ महापुरुषों, महाकवियों की वाणी कोई सुन नहीं पाता। समाज की मनोभूमि वंध्या है।[६] रूढ़ि-रीतिगत अभ्यासों से चिपटा, जाति-पाँतियों में बहुखंडित समाज पथराया-सा रहता है।[७] नियतिवाद के वश में पड़े समाज को कवि कठपुतले का बिम्ब देता है—

तुच्छ मोह ममता में डूबे, परम्परागत
कठपुतलों से नाच रहे, विधिलिपि पर निर्भर ।[८]

'कठपुतला' उपमान सार्थक है। कठपुतले का पृथक् व्यक्तित्व नहीं है, वह

१. शिल्पी, पृ. ११०
२. लोकायतन, पृ. ३६५
३. वही, पृ. ४३७
४. वही, पृ. ४३८
५. लोकायतन, पृ. ४६२
६. सौवर्ण, पृ. ७६
७. सौवर्ण, पृ. ८२
८. वही, पृ. ८२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इंगित पर नाचता है। वैसे ही मोह-ममता में डूबे, भाग्यरेखा के भरोसे नाचते समाज को 'कठपुतला' कहना उचित है।

शून्यवाद, जड़ क्षणिकवाद ने
घेर लिया जन-मन गगनांकण,
रिक्त वारि, सिकता रज से घन
दुर्लभ चातक हित जीवन कण![1]

कवि भारतीय धार्मिक संप्रदायों, मतवादों को निरर्थक एवं निष्प्रयोजन समझता है। इन धार्मिक संप्रदायों ने जनता की तुष्टि नहीं की। इस सन्दर्भ में बौद्ध-धर्म की निःसारता पर भी व्यंग्य-बाण छोड़ते हुए कवि का कथन है कि एक समय था जब कि बौद्धों के शून्यवाद एवं क्षणिकवाद ने जन-मन-गगनांकण को घेर लिया था। किन्तु उसको निष्प्रयोजन सिद्ध करने के लिए कवि का कथन है कि वह सिकता रज का घन था, जिसमें पानी नहीं था। भला, जो धूलिकण उठते हैं, वे प्यासे चातक को जीवन-कण कहाँ से दे सकते हैं! शून्यवाद एवं क्षणिकवाद के प्रति मन में आस्था लिये, उनसे सुखद जीवन पाने की कामना करनेवालों के लिए धूल के मेघों से पानी की आशा रखने वाले प्यासे चातक का अप्रस्तुत सुन्दर है। रूपक एवं श्लेष का चमत्कार द्रष्टव्य है।

सदियों के खंडहर में देह-मन-प्राण औंधे मुँह लटके हैं—

ये सदियों के खंडहर हैं!
जहाँ देह मन प्राण
बाँसी अंधकार की सडाँध में
दिवांधों-से
औंधे मुंह लटके हैं![2]

सामाजिक रीति-नीति सदियों के खंडहर हैं। वे बासी अंधकार की सडांध हैं। इस अंधकार की सडांध में दिवांधों के समान देह-मन-प्राण औंधे मुँह लटके दिखाये गये हैं। पथ-भ्रष्ट मानवता तथा कदम-कदम पर उसकी सफलता का इससे सुन्दर बिम्ब दुर्लभ है।

मानव-जीवन की विषमता इतनी है कि एक वर्ग सुख-संपत्ति लूट रहा है तो दूसरा वर्ग अपार निर्धनता से पीड़ित है। धनिकों-श्रमिकों के ये वर्ग सामाजिक खाई को गहन बना रहे हैं। इस सामाजिक विषमता को बिम्ब रूप में नीचे व्यक्त किया गया है।

एक ओर प्रासाद खड़े हैं स्वर्ग विचुंबित,
चारों ओर असंख्य घिनौनी झाड़ फूँस की
बौनी झोंपडियाँ हैं, पशुओं के विवरों सी,—
घोर विषमता छायी है मानव जीवन में![3]

---

१. वाणी, पृ. ९४ २. कला और बूढ़ा चाँद, पृ. ७५ ३. सौवर्ण, पृ. ६३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्वर्ग विचुंबित प्रासाद धनिक वर्ग का प्रतीक है, तो उनके चारों ओर फैली असंख्य पशुओं के विवरों-सी झाड़ फूँसी बौनी झोपड़ियाँ पीड़ित वर्ग का प्रतीक है। 'स्वर्ग विचुंबित' विशेषण धनिक वर्ग का उत्कर्ष एवं वैभव-सूचक है, तो झोपड़ियों की तुलना पशुओं के विवरों से करके निर्धनों की तुच्छता, अभाव एवं जघन्य जीवन का परिचय दिया गया है। प्रासाद एवं झोंपड़ी के बिम्बों द्वारा धनिक एवं पीड़ित वर्ग के चित्र उतारे गये हैं।

'युगवाणी' में धनपति को जोंक[1] कहकर उन को जन के श्रम-बल से पोषित दिखाया गया है। भू उनसे शोषित होती जा रही है। आगे नर-पशु के रूप में चित्रित करते हुए बताया गया है—

शय्या की क्रीड़ा कन्दुक है जिनको नारी
अहंमन्य वे, मूढ़, अर्थबल के व्यभिचारी !
सुरांगना, संपदा, सुराओं से संसेवित,
नर पशु वे : भू भार : मनुजता जिनसे लज्जित ![2]

उपर्युक्त पंक्तियों में अहंमन्य मूढ़, अर्थबल के व्यभिचारी धनपतियों को नर-पशु रूप में चित्रित कर बताया गया है कि उनकी दृष्टि में नारी का कोई मानवीय मूल्य नहीं है। उनके लिए नारी शय्या की क्रीड़ा-कन्दुक है। नारी को 'क्रीड़ा कन्दुक' दिखाकर कवि ने धनिकों की स्वच्छन्द वृत्ति, विलासिता और अहंभाव की ओर संकेत करने के साथ ही उनकी दृष्टि में नारी की तुच्छता भी व्यंजित की है। उनके लिए नारी केवल मांसल प्रेम का उपकरण या भोग्या मात्र है, उससे बढ़कर उसका कोई अस्तित्व या मूल्य नहीं है। नर-पशु और नारी रूपी क्रीड़ा-कन्दुक इन दो बिम्बों को प्रस्तुत कर कवि ने धनिकों की पाशविक भोगवृत्ति की ओर संकेत किया है।

भारत कृषिप्रधान देश है और किसान भारत की रीढ़ है। वही भारतीय जनता को भोजन-सामग्री उपलब्ध करता है। उसी के श्रम पर यह सभ्य समाज निर्भर है। किन्तु भारतीय कृषक की अपनी स्थिति अत्यन्त असंतोषजनक है। इस परिवर्तनशील समाज में वही एकमात्र स्थिर है। वह अशिक्षा, असभ्यता का शिकार है। सभ्यता से कोसों दूर रहकर वह सुस्त, आलसी, दुराग्रही, भीरु, भयाकुल, शंकाकुल एवं वृषल है। मूढ़ कृषक का एक स्वाभाविक चित्र निम्न पंक्तियों में उपलब्ध होता है—

स्थावर स्थितियों का शिशु, स्थावर स्थाणु कृशीवल,
दीर्घसूत्र, अतिदुराग्रही, सशंक और वृषल।[3]

---

१. युगवाणी, पृ. ४९
२. वही, पृ. ४९
३. वही, पृ. ५१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कृषक के लिए 'स्थावर स्थितियों का शिशु' उसकी अपरिवर्तनशीलता, स्थिरता, अटलता, भोलापन को व्यंजित करता है।

कृषक-समाज की दीनता एवं दरिद्रता की साकार प्रतिमा वहाँ के लड़के हैं। उनको देखते ही भारतीय सामाजिक जीवन की विषमता एवं विवशता का आभास मिल जाता है। 'युगवाणी' की 'दो लड़के' शीर्षक कविता की निम्न पंक्तियों में उनके घृणित रूप का परिचय प्राप्त होता है--

नंगे तन, गदबदे, साँवले, सहज छबीले,
मिट्टी के मटमैले पुतले,--पर फुर्तीले।[1]

'मिट्टी के मटमैले पुतले' कहकर दो लड़कों का मूर्त रूप प्रस्तुत किया गया है। नंगे तन, गदबदे, साँवले आदि विशेषण उनके रूप को और भी सजीव एवं स्पष्ट कर देते हैं। मिट्टी के मटमैले, साँवले होते हुए भी दोनों लड़के फुर्तीले हैं।

अशिक्षा एवं असभ्यता, रूढ़िवादिता से आक्रान्त ग्रामीण समाज में नारी की सबसे अधिक दुर्दशा है। फिर वह विधवा-युवती हो तो पति-गृह में वह पति घातिन कहकर दुत्कारी जाती है और पितृ-गृह में ननद और भौजाइयाँ उसपर अपने क्रोध के तीर मारती रहती हैं। इस प्रकार दोनों ओर से तिरस्कृत एवं अपमानित विधवा युवती या तो मानव की पशुवृत्ति की शिकार बनती है या फिर आत्महत्या का साधन ढूँढ़ती है। इस प्रकार समाज के निष्ठुर प्रहारों से ऊबकर कुएँ में गिर आत्महत्या कर अपने सामाजिक जीवन का प्रायश्चित्त करती हुई एक विधवा युवती का चित्र निम्न पंक्तियों में सजीव हो उठा है—

घर में विधवा रही पतोहू
लक्ष्मी थी, यद्यपि पतिघातिन
पकड मंगाया कोतवाल ने,
डूब कुए में मरी एक दिन।
खैर पैर की जूती, जोरू,
न सही एक, दूसरी आती,
पर जवान लड़की की सुध कर
साँप लौटते फटती छाती![2]

अन्तिम चार पंक्तियों में कवि ने विधवा युवती की आत्महत्या के प्रति निश्चित निष्ठुर हिन्दू-समाज पर तीखा व्यंग्य किया है। उसके मरने का किसी को शोक नहीं है क्योंकि स्त्री पैर की जूती है, जो बार-बार बदली जा सकती है। अगर लड़का जीवित रहता तो एक नहीं दूसरी स्त्री मिल जाती। अतः माता-पिता को अपनी बहू की चिन्ता नहीं है, चिन्ता एवं क्रोध इस बात का है

---

१. युगवाणी, पृ. ३३
२. ग्राम्या, पृ. २५-३६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कि उसने जवान लड़के को खा लिया। यह सोचकर उनकी छाती पर साँप लोटते हैं। 'छाती पर साँप लोटना' तथा 'छाती फटना' मुहावरों के द्वारा माता-पिता के बहू के प्रति द्वेष तथा पुत्र-वियोग में शोक का बिम्ब उतारा गया है।

भारतीय समाज के अंकगणित में नारी का मूल्य इकाई का नहीं, शून्य का है। वह स्वतंत्र अस्तित्व नहीं रखती, वह पुरुष पर अवलंबित है। कवि ने अंकगणित पर आधारित स्त्री का एक बिम्ब यहाँ प्रस्तुत किया है—

> वह समाज की नहीं इकाई,—शून्य समान अनिश्चित
> उसका जीवन मान मान पर नर के है अवलंबित !
> मुक्त हृदय वह स्नेह प्रणय कर सकती नहीं प्रदर्शित,
> दृष्टि, स्पर्श संज्ञा से वह हो जाती सहज कलंकित ![1]

समाज में स्त्री का मूल्य शून्य का है। शून्य का कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है। वह अपने आप मूल्यहीन है। शून्य का मूल्य पहले जुड़ती इकाई पर अवलंबित है। इसलिए शून्य का मूल्य सदा अनिश्चित है। वैसे ही पुरुष का अवलंब पाकर स्त्री को अपना मूल्य-निर्धारण करना पड़ता है। फिर समाज में वह मुक्त हृदय अपना स्नेह-प्रणय प्रदर्शित नहीं कर सकती। उसकी मर्यादाएँ समाज निश्चित करता है। किसी पर-पुरुष को देखने या स्पर्श करने मात्र से वह कलंकित हो जाती है। स्त्री की इससे अधिक परवशता क्या हो सकती है!

सन् १९४७ को भारत स्वतंत्र हुआ और स्वाधीनता के साथ ही युग-परिवर्तन के संकेत मिलने लगे। इस युग-परिवर्तन में पुराने आदर्श मिट रहे हैं, बदल रहे हैं। इस प्रकार रूप-बदलती रूढ़ि-रीतियों का चित्र है—

> कँप कँप उठती युग युग की शंका, कायरता,
> हिल हिल पड़ते मनोलोक, गत आदर्शों के
> शिखर बिखरते, धँसती भूमि में रूढ़ि-रीतियाँ
> शत कृमि कीटों से जर्जर, स्वार्थों से स्थापित।[2]

स्वाधीनता के पीछे युग-परिवर्तन के फेर में पड़कर परम्परागत शंका एवं कायरता कंपित हो उठती है, मनोलोक हिलते-डुलते नज़र आते हैं। प्राचीन आदर्शों के शिखर टूट रहे हैं तथा स्वार्थों पर स्थापित जर्जर रूढ़ि-रीतियाँ शत कृमि-कीटों के समान भूमि में धँसती जा रही हैं। मानवीकरण, रूपक एवं उपमा का सहारा लेकर सामाजिक परिवर्तन का दिशा-बोध कराया गया है।

पन्तजी मानव के उज्ज्वल सामाजिक जीवन के पक्षधर हैं और उनकी कल्पना है कि वर्तमान सामाजिक स्थिति में परिवर्तन आ जाएगा। जाति, वर्ग,

---

१. ग्राम्या, पृ. ८५
२. रजत शिखर, पृ. १३१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

संप्रदाय, धर्म के नाम पर जो बर्बर रक्तपात हो रहा है, उसका अंत होगा। मनुष्य पारस्परिक प्रेम भाव से गुँथकर स्वर्गीय सुख लूटेगा और आत्मिक सौन्दर्य पाकर विश्व-विजयी बनेगा। मनुष्य का मनुष्य से, समाज का समाज से, राष्ट्र का राष्ट्र से मिलन होगा और यह पृथ्वी समस्त जनता का वासस्थान बन जायगी। इसके लिए मनुष्य को हृदयवान, सुसंस्कृत एवं परस्पर स्नेही बनना होगा। 'परकीया' कविता में पन्तजी की सामाजिक चेतना मुखरित हो उठती है। एक वेश्या रोटी के लिए अपना शरीर बेचती है। उसपर आसक्त एक व्यक्ति जब प्रेम-प्रस्ताव करता है तो वह नारी अपनी दुश्चरित्रता स्वीकार कर लेती है। तब उस युवक की वाणी में कवि पन्त की नारी-विषयक सामाजिक चेतना बोल उठती है कि स्वकीया या परकीया, सब समाज की परिभाषाएँ हैं। सत्य का संबंध रूढ़ि से नहीं, हृदय से है। पंकिल जीवन में पंकज-सी नारी देह से ऊपर आत्मिक धरातल पर शोभित है।[1] कवि की पूर्ण आस्था है—मानव नव-युग के चेतना-ज्वार में नव मन, नव-जीवन सौन्दर्य धारण करेगा। वर्तमान सामाजिक परिस्थिति में युगांतर होने को है क्योंकि क्षितिज में नवयुग की किरणें फूटने लगी हैं। भावी उज्ज्वल सामाजिक जीवन के प्रति आस्थावान कवि ने अपने काव्य में आदर्श समाज की परिकल्पना करते हुए कुछ बिम्ब प्रस्तुत किये हैं, जिनके संबंध में आगे विचार किया जाएगा।

कवि चाहता है कि सामाजिक विषमता को ध्वस्त कर भू की अपराजेय चेतना उन्मद पद-चालन से मृत्यु-भय, संशय को कंपित कर जीवन गरिमा को बरसाए। इस उद्देश्य से प्रेरित हो चेतना को दुर्गा के रूप में प्रस्तुत किया गया है—

रूढ़ि रीति के मुंद हृदय में,
    ज्योति खड्ग हो कर में,
पद तल पर नत युग दानव हो,
    अरि का रुधिर अधर में !
रक्त पात्र से फिर नव चेतन
    अमृत ज्वाल छलकाओ ![2]

कवि की आशा है कि मानवता का सामाजिक जीवन एकतामय एवं कर्ममय हो तथा उसका संगठित रूप मधुमखियों के छत्ते के समान हो, जिसमें स्वर्ग-फूलों का मधु, युवकों के स्वप्न, मानव-हृदय की करुण ममता, मिट्टी की सौंधी गन्ध-भरा प्रेम का अमृत तथा प्राणों का रस, सब का समन्वय हो।

---

१. स्वर्णधूलि, पृ. १२०
२. युगपथ, पृ. ९२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मानवता की रचना
तुम्हारे छत्ते सी हो !
जिसमें स्वर्ग फूलों का मधु,
युवकों के स्वप्न
मानव हृदय की
करुण ममता,—
मिट्टी की सौंधी गन्ध भरा
प्रेम का अमृत,
प्राणों का रस हो ![१]

आज का जीवन मन के खूँटे से बन्धी धेनु का-सा है ।[२] भू जीवन-विकास का मार्ग टेढ़ा है, उसके लिए वक्र भुजंग का उपमान दिया गया है ।[३] वैसे ही अन्धपरम्परा पर आश्रित जीवन को पंक में फँसे रथ का रूपक सार्थक है ।[४] सामाजिक जीवन के समान राष्ट्र-जीवन भी असंतोषजनक है । पश्चिमी राष्ट्र भौतिकवादी है । उनके मन की परिधि केवल राष्ट्र जीवन तक व्याप्त है । इस संकुचित राष्ट्र-प्रेम से प्रेरित उनके विश्व मंगल के स्वप्न निरर्थक सिद्ध करने के लिए डोरहीन पतंग का अप्रस्तुत है—

राष्ट्र-जीवन का निर्मम प्रेम
बन गया मन की सीमा घोर
विश्व मंगल का इनका स्वप्न
चंग—जिसमें न प्रेरणा डोर ![५]

कवि को रूस का वर्गहीन सामाजिक जीवन आकर्षक लगता है । लोक-सागर दिक्-व्याप्त है, उसमें वर्ग-मानव बुद्बुदों के समान हैं, जिनका क्षणिक अस्तित्व है । रूस का लोकजीवन इतना विस्तृत है कि उसमें वर्ग-मानव के बुद्बुद लीन हो गये हैं । प्रस्तर-युग का क्षीण चैतन्य एवं बर्बरता, जो अब तक रूस को आच्छादित किये हुए थी, आज समाप्त हो चुकी है और वहाँ चेतना आलोक फैला रही है । वर्गहीन सामाजिक व्यवस्था से युक्त रूस के लिए बुद्बुद रहित निश्चल सागर का विम्ब आकर्षक है—

वर्ग मानव बुद्बुद् हो लीन
लोक सागर उर में दिग् व्याप्त,
क्षीण प्रस्तर युग का चैतन्य
खर्ब बर्बर हो स्वतः समाप्त ।[६]

---

१. कला और बूढ़ा चाँद, पृ. २५
२. लोकायतन, पृ. ४३
३. पौ फटने से पहिले, पृ. ९६
४. लोकायतन, पृ. ५७२
५. वही, पृ. ४०८
६. वही, पृ. ४०२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

३. राजनैतिक बिम्ब

इसके अन्तर्गत वे सारे बिम्ब लिये जा सकते हैं, जो किसी न किसी राजनैतिक समस्याओं, परिस्थितियों पर आधारित हैं। कोई भी साहित्यकार अपने चारों ओर की राजनैतिक स्थितियों के प्रति उदासीन नहीं रह सकता। जाने-अनजाने वे स्थितियां किसी न किसी रूप में साहित्य में स्थान पा लेती हैं। पन्त जी के काव्य में राजनैतिक बिम्ब अपेक्षाकृत कम हैं, तो भी उनका सर्वथा अभाव नहीं है। सामयिक राजनैतिक दशाओं के कुछ बिम्ब पन्त-काव्य में आ गये हैं। उनके राजनैतिक बिम्ब साम्राज्यवाद, पूँजीवाद एवं सामयिक शासन पर आधारित हैं।

राष्ट्रों की साम्राज्यवादी भावना ने संसार में अनेक हलचलें मचा दीं और अनेक भीषण युद्ध करवाये। उसने मानवता को इतना पीड़ित किया कि उसकी क्रूरता की कहानी इतिहास में भरी हुई है। महाभारत कालीन घटनाओं, पात्रों के सहारे कवि ने साम्राज्यवादी आतंक का एक बिम्ब इस प्रकार अंकित किया है—

साम्राज्यवाद था कंस, बंदिनी
मानवता पशुबलाक्रांत,
शृंखला दासता, प्रहरी बहु
निर्मम शासन-पद शक्ति भ्रांत,
कारागृह में दे दिव्य जन्म
मानव आत्मा को मुक्त कांत
जन-शोषण की बढ़ती यमुना
तुम ने की नत, पद-प्रणत, शांत ![1]

यहाँ ब्रिटिश साम्राज्यवाद के आतंक से पीडित पराधीन भारत का बिम्ब है। कंस ने अपनी बहिन देवकी को कारागृह में शृंखलाबद्ध कर असंख्य पहरेदारों को उसकी देखरेख के लिए नियुक्त किया था। वैसे ही ब्रिटिश साम्राज्यवादी कंस ने भारतीय मानवता रूपी देवकी को अपने पशुबल से पीडित कर बंदिनी बनाया और उसपर दासता की शृंखला डाल दी और शासन-पद एवं शक्ति-भ्रांत अनेक प्रहरियों को देखरेख के लिए तैनात कर दिया। कंस के निर्मम शासन-अत्याचारों से जनता का उद्धार करने के लिए भगवान श्री कृष्ण का दिव्यावतार बन्दीगृह में हुआ था, जिन्होंने कंस की हत्या कर अनीति एवं अत्याचार से पीड़ित प्रजावर्ग की रक्षा की तथा देवकी को मुक्त किया।। वैसे ही अंग्रेजी दुर्दम काली शासन-नीति एवं साम्राज्याद से भारत माता को मुक्त करने के लिए महात्मा गांधी जी का परतन्त्र भारत में जन्म

१. युगपथ, पृ. ६१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हुआ और उनका आत्मिक विकास बंदीगृह के मलिन प्रकोष्ठ में। उन्होंने साम्राज्यवादी कंस की निरंकुशता से भारत माता को मुक्त करने का संकल्प किया। उन दिनों जन-शोषण यमुना नदी के समान बढ़ता चला जा रहा था। किन्तु गांधीजी ने अपने पवित्र चरणों के कोमल स्पर्श से जन-शोषण रूपी यमुना को शान्त, नत एवं पद प्रणत कर दिया। प्रस्तुत अवतरण में प्रस्तुत एवं अप्रस्तुत दोनों के बिम्ब स्पष्ट एवं सजीव हैं। एक ओर अंग्रेज़ी साम्राज्यवाद की निष्ठुर लीला एवं उससे पीड़ित भारतीय मानवता का बिम्ब है तो दूसरी ओर कंस, उसके पशुबल, बंदिनी देवकी, कारागृह, बंदीगृह में श्रीकृष्ण का जन्म और कंस की हत्या कर जनता के परित्राण का बिम्ब भी मार्मिक है। बिम्ब-निर्माण में साँगरूपक की योजना की गयी है।

साम्राज्यवाद जन-साम्य-योजना का घोर शत्रु है। वह अपनी मद-लिप्सा से भव्य जनतंत्रों को भी सैन्य शिविर बना रहा है। इस कारण निस्सहाय पृथ्वी युद्ध के घोर भँवर में घूमती अपनी दुर्गति कर रही है। साम्राज्यवाद के हाथों में भयंकर अणु-दानव है जो भू-व्यापी संहार एवं प्रलय छेड़ने की ताक में खड़ा है—

लोकराष्ट्र की भूल बृहद् जन साम्य योजना
आज नवल साम्राज्यवाद की मद लिप्सा से
बना रहे हैं सैन्य शिविर निज जन तंत्रों को,—
घूम रही है धरा समर के घोर भँवर में !
दम साधे है खड़ा भयंकर अणु का दानव
भू व्यापी संहार, प्रलय हुँकार छेड़ने !![1]

साम्राज्यवाद की घोर मद-लिप्सा से समर की ओर घूम रही पृथ्वी का बिम्ब कमनीय एवं सूक्ष्म कल्पना का द्योतक है। भँवर में वस्तु घूमकर अतल गर्त में चली जाती है और फिर उसका पता नहीं चलता। समर को भँवर का उपमान देकर उसमें घूमकर अपने विनाश के अतल गर्त में जाने के लिए तैयार पृथ्वी का चित्र खींचा गया है। अणु के लिए दानव का अप्रस्तुत उसकी भयंकरता का व्यंजक है। 'दम साधे खड़ा' क्रिया के द्वारा संहार के लिए कटिबद्ध अणु-दानव का भयंकर चित्र प्रस्तुत करता है। 'प्रलय हुँकार' भयावने वातावरण का चित्र है। बिम्ब-निर्माण में कवि की कलात्मकता ने पर्याप्त सहयोग दिया है।

साम्राज्यवाद अपनी शोषण-नीति पर खड़ा है और वणिक वृत्ति पर आधारित है। वह भू देश रूपी सीधी-सादी गायों को दुहकर मोटा होता जा रहा है। गोदोहन पर आधारित साम्राज्यवाद के शोषण का बिम्ब खंड चित्र ही प्रस्तुत करे, फिर भी सुन्दर है—

---

१. रजतशिखर, पृ. ९२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वणिकों का साम्राज्यवाद था
भू देशों को दुहकर जीवित ।[१]

साम्राज्यवाद ने राष्ट्रों में पारस्परिक स्पर्धा को जन्म दिया। प्रत्येक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र में अपने माल की बिक्री के लिए बाजार खोजने लगा। फलतः राष्ट्रों में अधिक उपनिवेशों की स्थापना की स्पर्धा बलवती हुई। इसी स्पर्धा को वह्नि तथा भूजन को ईन्धन का रूपक देते हुए एक चित्र है—

सुखद साम्राज्यवाद के स्वप्न
देखने लगे नवोदित राष्ट्र,
धधक फैली स्पर्धा की वह्नि
खपे भूजन बन ईन्धन काष्ठ ।[२]

यह कितने घोर दुख की बात है कि राष्ट्रों की स्पर्धा से सामान्य जनता कष्ट उठाती है। उनकी स्पर्धा की धधकती अग्नि-ज्वाला में सामान्य जनता ईन्धन-वत् जलकर समाप्त होती है।

साम्राज्यवाद के दुष्परिणामस्वरूप द्वितीय युद्ध छिड़ गया। साम्राज्यवाद के विरुद्ध सत्यकामी राष्ट्रों को अपने अस्तित्व के लिए विवश लड़ना पड़ा। 'सन् १९४०' पर लिखी कविता में इसी युद्ध का चित्र है

इधर अडा साम्राज्यवाद, शतशत विनाश के ले आयोजन,
उधर प्रतिक्रिया रुद्ध शक्तियाँ क्रुद्ध दे रहीं युद्ध निमंत्रण !
सत्य न्याय के बाने पहने, सत्य लुब्ध लड़ रहे राष्ट्रगण,
सिन्धु तरंगों पर उठ गिर क्रय विक्रय स्पर्धा करती नर्तन।[३]

यूरोप में औद्योगिक क्रान्ति के परिणाम स्वरूप पूंजीवाद ने सिर उठाया और वह मशीनों, खानों, वाणिज्यों, व्यवसायों, उद्योगों आदि पर एकछत्र अधिकार स्थापित करने का दुर्मोह लिये आगे बढ़ता गया। पूँजीपति राष्ट्रों के राजनीतिक स्वार्थों के कारण युद्ध की विभीषिका तथा प्रलयंकारी विनाश का समय आ गया। विश्वभर के राष्ट्रों पर शासन करने के उनके दुर्मोह ने शांति भंग की और संसार को समर की ओर खदेड़ा।

पूँजीवाद उठा हिंसा का धूमकेतु ध्वज
लिये लोक संहार घोर अणु मुष्टि में विकट
फिर ललकार रहा धरती की हरित शांति को,
जन समुद्र के उर की नभ चुंबी लहरों पर
दुरभिसंधि से शासन करने ! हाय दुराशा !![४]

---

१. वाणी, पृ. १२३
२. लोकायतन, पृ. ३७५
३. ग्राम्या, पृ. ८७
४. रजत शिखर, पृ. ९१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

संसार के क्षितिज पर हिंसा का धूमकेतु ध्वज उठाये पूँजीवाद ने जन्म लिया। धूमकेतु अनिष्टसूचक ग्रह है। पूँजीवादी राष्ट्र लोक-संहार की दुर्भावना से प्रेरित हो अणुबम का प्रयोग करके विश्व-शांति को ललकार रहे हैं। कवि ने शांति के लिए 'हरित' विशेषण प्रस्तुत कर यह सुझाया है कि शांति वैभव एवं समृद्धि के लिए आवश्यक है। ऐसी शांति को ललकार कर पूँजीवादी राष्ट्रों ने सुख-वैभव पर आधारित शांति को भंजित करने का दुस्साहस किया है। उनमें विश्व जनता के उर की नभचुंबी लहरों पर एकाधिकार करने की दुराशा कार्य कर रही है। विश्व-जनता को 'समुद्र' तथा उनकी उच्च भावनाओं को नभ चुंबी लहरों का उपमान दिया गया है। कवि ने व्यंग्यरूप से यह संकेत किया है कि जिस प्रकार नभचुंबी उत्ताल लहरों के सागर पर विहार करने का जहाज का स्वप्न पूर्ण नहीं होगा, उसी प्रकार विश्वजनता की स्वतंत्रता की ऊँची भावना को दबाकर उसपर शासन करने की पूँजीपति राष्ट्रों की आशा पूर्ण नहीं हो सकती। लोकराष्ट्रों पर एकाधिकार का दुःस्वप्न देखनेवाले पूँजीपति राष्ट्रों की उत्ताल लहरों से मर्दित सागर के वक्षस्थल पर चलनेवाले जहाजों-सी कल्पना करके कवि ने उनके डूबने की संभावना व्यक्त की है।

पूँजीवादी राष्ट्रों के कारण छिड़े विश्व युद्ध की कल्पना धूमकेतु एवं विषधर के रूप में करते हुए दो बिम्ब निम्न पंक्तियों में देखे जा सकते हैं।

दैव दग्ध ऐसे ही क्षण में
पश्चिम के नभ में बलदर्पित
धूमकेतु उद्दंड जगा नव,
राष्ट्रों को करने आतंकित !
पूँजीवादी युग के बिल का
उद्धत फण, दारुण मणि विषधर
साम्राज्यों को लगा निगलने
दानवीय धर आकृति दुर्धर ![1]

विश्वयुद्ध की कल्पना पश्चिम के नभ में उदित बलदर्पित धूमकेतु के रूप में की गयी है। धूमकेतु का उदय राष्ट्रों पर संभावित विपत्ति का सूचक है। यह एक खण्ड-चित्र हुआ। आगे विश्वयुद्ध को उद्धत फणवाले विषधर रूप में कल्पित कर एक सुन्दर बिम्ब प्रस्तुत किया गया है। बिल से निकले, उद्धत फण फैलाये एवं दुर्धर दानवीय आकृति धारण किये विषधर के रूप में महायुद्ध का बिम्ब अंकित किया गया है। यह विषधर पूँजीवादी युग रूपी बिल से निकला है और अपने दानवीय रूप रखकर राष्ट्रों को एक-एक करके निगल रहा है। विश्व-युद्ध को धूमकेतु और विषधर रूप में कल्पित करने से उल्लेख अलंकार

१. लोकायतन, पृ. १०२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हुआ है। पूंजीवादी युग का बिल, विश्व युद्ध का विषधर और साम्राज्यों का ग्रास इस प्रकार सांगरूपक के द्वारा युद्ध एवं उसके फलस्वरूप एक-एक कर नष्ट होते राष्ट्रों का बिम्ब अंकित हुआ है। प्रयुक्त विशेषण जैसे उद्धत, दारुण, दानवीय, दुर्धर आदि विश्वयुद्ध की भयंकरता, विभीषिका एवं विनाश को मूर्त करने में सक्षम हैं। वैसे ही जन-भू के स्वर्ण सुहाग को लूटते लुटेरे के रूप में पूँजीवाद का एक खंडित बिम्ब 'लोकायतन' में आया है।[1]

मुखियों, कुलपतियों, सामन्तों, महन्तों के वैभव के बहुराजतंत्र जैसे विलीन हो गये, वैसी ही पूँजीवादी निशा साम्राज्यवाद का रजत स्वप्न नयनों में लेकर अपनी अन्तिम घड़ियाँ गिनने लगी। उपमा एवं रूपक के द्वारा राजतंत्र एवं पूँजीवाद के समाप्त होने के दो खंडित बिम्बों की व्यंजना द्रष्टव्य है।

मुखियों के, कुलपति, सामन्त, महन्तों के वैभव क्षण
बिला गये बहु राज तन्त्र,—सागर में ज्यों बुद्बुद् कण !
रजत स्वप्न साम्राज्यवाद का ले नयनों में शोभन
पूँजीवाद निशा भी है होने को आज समापन ![2]

संसार में अनेक राजतन्त्र उदित हुए और अस्त हुए। वे राजतन्त्र उच्च वर्गीय जनता के वैभवों के दिन थे। किन्तु उनके उदित होने एवं अस्त होने की प्रक्रिया के लिए सागर के बुद्बुदों की उपमा दी गयी है। जिस प्रकार सागर में असंख्य बुद्बुद उत्पन्न होते और क्षणिक अस्तित्व के बनाये रखने के उपरांत विलीन हो जाते हैं वैसे ही बहुराजतन्त्र अपने क्षणिक अस्तित्व बनाये रखकर समाप्त हो गये। आज उन राजतन्त्रों का नामोनिशान तक नहीं है। उसके बाद पूँजीवाद का उत्कर्ष हुआ। किन्तु वह भी स्थायी नहीं रह सका। पूँजीवाद निशा है जो साम्राज्यवाद का सुख-स्वप्न देखकर आज समाप्त होने जा रही है। 'स्वप्न' के लिए 'रजत' विशेषण जहाँ रंग-संवेदना पर आधारित है, वहाँ भाव गर्भित भी है।

अधिनायकवाद (फासिज्म) ने सभी लोकतन्त्रीय भावनाओं का सत्यानाश कर दिया। वह साम्य भावना का प्रबल शत्रु था। उसके अनुसार 'राष्ट्र की आत्मा का अवतार दल तथा, अन्ततोगत्वा, अधिनायक के रूप में होता है।'[3] वह प्रभुत्व की अपरिमेय वासना से आक्रान्त है। जर्मनी के अधिनायक हिटलर विश्वविजेता बनने की मोहक कल्पना करता था और उसने रूस को पराभूत कर इंग्लैण्ड पर भी अपना अधिनायकत्व स्थापित करने का संकल्प लेकर युद्ध

१. लोकायतन, पृ. ३७५
२. युगवाणी, पृ. ४६
३. हिन्दी साहित्य कोष, भाग–१, पृ. २३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

छेड़ा । अतः द्वितीय विश्वयुद्ध का मुख्य कारण हिटलर था । इसी अधिनायकवाद की युग-प्रहरी मणिधर नाग रूप में कल्पना नीचे की गयी है —

साथ आया अधिनायकवाद
विश्वयुद्धों की भड़का आग,—
ह्रास विघटन के शत फन खोल
बना युग प्रहरी मणिधर नाग ![१]

पूंजीवाद का साथी बनकर अधिनायकवाद आया और विश्वयुद्ध की आग चारों ओर भड़क उठी । कवि ने पतन एवं विघटन को शत फण खोले मणिधर नाग के रूप में चित्रित कर उससे उत्पन्न विष-ज्वाला का बिम्ब अंकित किया है ।

संसार की राजनैतिक स्थिति असंतोषजनक है । आज भू-जीवन घोर शिविरों में बँटा है । उनमें पारस्परिक द्वेष, कलह एवं स्पर्धा उग्र होती जा रही है । वे वादी, अवसरवादी हिंसक, वासना-लोलुप सब कुछ हैं । कवि ने अनुयोग्य अप्रस्तुतों के सहारे शिविरों में बँटे राष्ट्र-जीवन का स्वभाव निर्दिष्ट किया है । आज भूजीवन शिविरों में बँटा हुआ है । उनके चारों ओर घृणा, द्वेष, स्पर्धा के दारुण दुर्ग बनाये गये हैं । हिंस्र प्रचारों के झींगुर उग्र मतों, कटुतर्कों, वादों के झनझन कर चीत्कार कर रहे हैं । । उनमें कुछ अवसरवादी हैं जो गिरगिट के समान बार-बार रंग बदलते रहते हैं । कुछ अर्ध पठित दादुर टरटर करते जा रहे हैं । उनमें आवेशों के भुजंग लोटते हैं, बार-बार अपने फण खोलकर फूत्कार कर जनमन को विषाक्त करते हैं । सबके सब रुद्ध वासना के घोंघे, केंचवे और सरीसृप हैं जो धरा-नरक के निश्चेतन तम में रेंग रहे हैं ।[२]

कवि ने भारतीय शासक वर्ग को भी आड़े हाथों लिया है । जनता के शासक अपने कर्तव्य से विमुख हो आलसी, सुखभोगी एवं निद्राभोगी हैं । उनमें शक्ति एवं पद का मोह घर किये हुए है और उसी के स्वप्न देखते हैं । देश में फैले अनाचारों, सन्तापों के प्रति निश्चित हो कुंभकर्णी नींद में पड़े शासकों का बिम्ब अत्यन्त मोहक एवं वास्तविक है—

कुंभकर्ण से सोये आज हमारे शासक
सुख संपत्ति सुलभ सुविधाओं की शय्या पर
शक्ति मोह, पद मद की स्वप्न भरी निद्रा में
अनाचार सन्तापों की गहरी छाया में ।[३]

आलसी एवं निद्रा-लोलुप शासकों के लिए कुंभकर्ण का उपमान पूरा बिम्ब स्पष्ट करता है । रावण के भाई कुंभकर्ण ने निरंतर शयन करते रहने का वर

१. लोकायतन, पृ. ३७५
२. सौवर्ण, पृ. ३४
३. किरण वीणा, पृ. २२४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ब्रह्मा से माँगा था और उसकी नींद छह महीने में एक बार टूटा करती थी।[१] हमारे शासक भी सुख-सुविधाओं की शय्या पर गाढ़ी निद्रा में तल्लीन हैं कि उन्हें बाहर प्रजा-वर्ग के दुखों की काली छाया का अनुमान तक नहीं है। प्रजा की पुकार उनके कानों में नहीं पहुँच पाती है।

आज राजनैतिक स्तर पर पार्टीबाजी एवं पद हडपने का लोभ प्रबल होता जा रहा है। प्रत्येक राजनैतिक दल अपने अधिकार की रक्षा तथा शासन पद पाने के लिए परस्पर लड़ रहा है और यह पद-मोह एवं पद-मद इतना घृणित रूप धारण कर चुका है कि एक दल प्रतिपक्षी पर गालियों की बौछार करता है और कीचड़ उछालता है। इस बुराई से कांग्रेस-नेता भी बच नहीं पाये हैं। भारत माता की हड्डी के लिए कुत्तों से लड़ते कांग्रेस-नेता का चित्र उपहास्य होता हुआ भी कितना यथार्थ है—

धिक् यह पद मद, शक्ति मोह ! कांग्रेस नेता भी
मुक्त नहीं इससे,— कुत्तों से लड़ते कुत्सित
भारत माता की हड्डी हित ! ......[२]

अधिकार के लोभ में लड़ते-झपटते कांग्रेस-नेताओं के लिए हड्डी के टुकड़ों पर टूटते कुत्तों का बिम्ब वस्तुस्थिति का बोधक है।

४. ऐतिहासिक बिम्ब

ऐतिहासिक जीवन तथा पात्रों, घटनाओं एवं वातावरण के चित्र इस कोटि में आते हैं। पन्त-काव्य में शुद्ध ऐतिहासिक बिम्ब बिरले ही मिलते हैं। महात्मा गान्धी भारतीय इतिहास में अमर हैं और उन्होंने अंग्रेजी शासन से भारत को मुक्त कराने के लिए जो भी कार्य किये, वे भारतीय इतिहास की अमर घटनाएँ हैं। गाँधीजी की दांडी-यात्रा और नमक-सत्याग्रह भारतीय इतिहास की प्रसिद्ध घटनाएँ हैं। गाँधीजी की दांडी-यात्रा का एक बिम्ब इस प्रकार है—

वह प्रसिद्ध दांडी यात्रा थी
जन के राम गए थे फिर वन,
सिंधु तीर पर लक्ष्य विश्व का
दांडी ग्राम बना बलि प्रांगण !
लवण द्वीप में थी सागर के,
लोक मुक्ति बंदिनी, विमूर्छित,
अत्याचार, अनय, शोषण के,
रक्त खड्ग दैत्यों से परिवृत्त ![३]

---

१. हिन्दी कथा कोष, पृ. ३९ २. किरण वीणा, पृ. २१९
३. लोकायतन, पृ. ८३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

त्रेतायुग में श्री रामचन्द्रजी वनवास को गये थे क्योंकि दैत्यों से लोक-मुक्ति बंदिनी बनायी गयी थी और वह खड्गधारी दैत्यों से परिवृत्त थी। फलतः रामजी ने अपना लक्ष्य सिंधु-तीर की लंकापुरी की ओर केन्द्रित किया और सिंधु-तीर असंख्य राक्षसों का बलि-प्रांगण बन गया। इस पौराणिक आख्यान के आधार पर गांधीजी की दांडी-यात्रा संबंधी ऐतिहासिक घटना का बिम्ब-निर्माण हुआ। जैसे राम ने बंदिनी लोकमुक्ति का उद्धार करने के लिए वन का गमन किया था, वैसे ही जन के राम गाँधीजी ने भी दांडी-यात्रा की, क्योंकि शोषक अंग्रेज रूपी दैत्यों के द्वारा भारत की लोक-मुक्ति लवणद्वीप बंदिनी बनायी गयी थी। अत्याचार, अनय एवं शोषण के रक्तरंजित खड्गधारी अंग्रेज-दैत्यों से उसका उद्धार करना आवश्यक था। इस प्रकार पौराणिक कथा पर आधारित यह ऐतिहासिक बिम्ब पौराणिक बिम्ब की कोटि में भी रखा जा सकता है।

गाँधीजी ने दक्षिण आफ्रिका में प्रवासी भारतीयों के लिए सत्याग्रह का प्रथम प्रयोग किया। इस बात को तलवार सानने के बिम्ब द्वारा समझाया गया है—

यहीं प्रथम सत्याग्रह असि को
युग नायक ने धरा सान पर,[१]

युद्ध आदि के लिए पहले तलवार को सान पर चढ़ाकर तेज बनाया जाता है और फिर उसका प्रयोग किया जाता है। वैसे ही गाँधीजी ने भारत में जो सत्याग्रह चलाये थे, उनका प्रयोग-स्थल दक्षिण आफ्रिका था। वहाँ सत्याग्रह रूपी तलवार को सान पर चढ़ाकर तेज बनाया गया था और वहीं उसको तेज बनाकर उसका प्रयोग भारत में अंग्रेज़ों के विरुद्ध किया।

यहाँ गांधी जी के नेतृत्व में सत्याग्रह-आन्दोलन हुए, अंग्रेज़ों की गोली के शिकार बनकर कई वीरों ने अपना रक्त बहाया। उसी रक्त में स्नान कर भू स्वर्ग-धौत बन गयी, बलवती हुई—

स्वर्ग धौत, बलवती बनी भू
सत्याग्रह में रक्त स्नान कर,
हुए गौरवान्वित निरस्त्र जन
मुक्ति यज्ञ हित आत्मदान कर।[२]

भूमि का मानवीकरण किया गया है। उसे धुले हुए स्वर्ग का रूप दिया गया है क्यों कि उसने रक्त-स्नान किया है। और भारतीय जनता भी मुक्ति-यज्ञ के उपलक्ष्य में आत्मदान कर गौरवान्वित हुई।

---

१. लोकायतन, पृ. ८५
२. वही, पृ. ९५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भारतीय स्वतंत्रता-आन्दोलन को कुचलने के प्रयत्न में अंग्रेजों ने घोर-दमन-नीति अपनायी। पशु-बल के द्वारा भारतीय स्वतंत्रता-आन्दोलन को दबाने में सन्नद्ध अंग्रेज़ों को शत कुंडल बांधे बैठे काल सर्प के रूप में दिखाया गया है।

पशु-बल के शत कुंडल बाँधे
काल सर्प साधे हो आसन ![1]

यहाँ दमन-चक्र चलाने के लिए अटल बैठे अंग्रेज़ों का खण्ड चित्र प्रस्तुत किया गया है।

सन् १९४७ ई. में भारत स्वतंत्र हुआ, साथ ही भारत का विभाजन भी हुआ। इससे जो सांप्रदायिक विद्वेष की आग भड़की, उसमें असंख्य निरीह लोग मारे गये, कई लोगों को वासहीन एवं वस्त्रहीन बन शरणार्थी होना पड़ा। चारों ओर धार्मिक विद्वेष फैल गया। इस त्रास का दृश्य निम्न पंक्तियों में प्रस्तुत किया गया है। भाषा बिलकुल सीधी-सादी है—

कस-मसक नग्न अंगों को,
स्तन काट, ठठा हँसते खल,
बच्चों को चीर, पटक झट
द्वेषाग्नि बुझाते पागल !
भगदौड़ आग, कोलाहल,
बनते पुर गृह पथ निर्जन;
मन्दिर मसजिद के ईश्वर—
अल्ला संत्रस्त, व्यथित मन ![2]

सांप्रदायिक विद्वेष में उन्मत्त हिन्दू एवं मुसलमान अपनी नृशंसता का परिचय देते रहे। स्त्रियों-बच्चों तक पर घोर अत्याचार हुए। स्त्रियों के नग्न अंगों को कस कर एवं स्तन काटकर दुष्ट हँसने लगे। अपनी द्वेषाग्नि को बुझाने के लिए निरीह बालकों को चीर कर नीचे पटकने लगे। चारों ओर संत्रस्त जनता भागने लगी। चारों ओर आग धधक उठी, कोलाहल मच गया। फलतः पुर, गृह और पथ सब सुनसान हो गये। लोगों के इस पागलपन को देखकर मन्दिरवासी ईश्वर और मसजिद के अल्ला संत्रस्त हो उठे और मन ही मन व्यथित हुए। कस-मसक, ठठा हँस, चीर, पटक झट आदि क्रियाएँ चित्रात्मक एवं नाटकीय हैं। भारत-विभाजन के फलस्वरूप पैदा हुए संत्रस्त वातावरण का भयंकर दृश्य सामने रख देने में कवि की सामर्थ्य प्रशंसनीय है। आगे हिन्दू-मुस्लिम संघर्ष को साँडों का द्वन्द्व दिखाकर बताया गया है कि दोनों लड़कर रक्त-पंकिल हो

१. लोकायतन, पृ. ९८
२. लोकायतन, पृ. १२१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ऐसे गिरते हैं, जैसे मदमत्त साँड लड़-भिड़कर रक्ताहत हो भू पर गिर जाते हैं। हिन्दू-मुस्लिम संघर्ष के लिए साँडों का उपमान सार्थक है। साँडों की लड़ाई तब तक समाप्त नहीं होती जब तक कि दोनों रक्ताहत गिर नहीं पड़ते।

मदमत्त साँड लड़ भिड़ ज्यों
गिरते भू पर रक्ताहत ![1]

कवि ने रोम, यूनान, मिश्र आदि देशों के ऐतिहासिक जीवन को रूपायित कर उनका मूर्त रूप हमारे सामने प्रस्तुत किया है। ग्रीस प्राचीन संस्कृति का केन्द्र था। उसीने होमर जैसे महाकवि तथा सुकरात जैसे उच्च दार्शनिक को जन्म दिया। वह देश सभ्यता एवं संस्कृति में आगे रहा तथा उसने दूसरे देशों को भी प्रभावित किया। यही नहीं डेल्फी की दैवज्ञ, जो भविष्यवाणी करने में प्रसिद्ध थी, प्राचीन ग्रीस का आकर्षण थी। कवि का कथन है कि आज भी उसकी गंभीर गिरा ग्रीस में गूँज रही है—

दिया होमर को जिसने जन्म,
जहाँ विचरे द्रष्टा सुकरात,
सभ्यता संस्कृति का जो देश
जगत में लाया स्वर्ण प्रभात !
प्रथित थी डेल्फी की दैवज्ञ
गूँजती अब भी गिरा गंभीर—[2]

ग्रीस का प्राचीन वैभव इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित है। वह देव-दुर्लभ देश था, जो आज ध्वंसों में खोया पड़ा है। कवि की स्मृति में ग्रीस अपना प्राचीन वैभव लेकर आता है। उसको लगता है कि ध्वंसों में भग्न ग्रीस अँगड़ाई भर रहा है—

रोम के सँग ही स्मृति में ग्रीस
जगा, अँगड़ा ध्वंसों में भग्न,
देवप्रिय यह पौराणिक भूमि
खड़ी अकलुष शोभा में भग्न ।[3]

ग्रीस का मानवीकरण करके उसकी अँगड़ाई भरने, जगने, अकलुष शोभा में नग्न खड़ा होने का चित्रण किया गया है। मध्ययुग में रोमन साम्राज्य में राज्यों के बीच कटु संघर्ष आरंभ हुआ। अधिकार-मोह शासकों में बढ़ता गया। रोम के शासकों में जुलियस सीज़र का महत्वपूर्ण स्थान था। उसने पोम्पे का वध कर

१. लोकायतन, पृ. १२१
२. वही, पृ. ३९१
३. वही, पृ. ३९१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्वयं शासन अपने हाथ में लिया था। किन्तु सीज़र को अपनी महत्वाकांक्षा एवं क्रूरता का फल भोगना पड़ा। सीज़र के विरुद्ध एक दल संगठित हुआ और ब्रूटस, कास्का आदि ने मिलकर उसकी हत्या की। इस ऐतिहासिक घटना की ओर निम्न पंक्तियों में संकेत किया गया है—

मध्य युग से ही रहा अजस्र
यहाँ राज्यों में कटु संघर्ष
मिले सीज़र को उसका दाय,—
न्याय का रहा लौह आदर्श।[1]

५. पौराणिक बिम्ब

पौराणिक पात्रों, घटनाओं को आधार बनाकर कवि पन्त ने अनेक बिम्ब बनाये हैं। इन बिम्बों में से कुछ प्रस्तुत रूप में आये हैं, और कुछ का संबंध अप्रस्तुत से है। ये बिम्ब हमारा ध्यान भारतीय पौराणिक घटनाओं की ओर आकृष्ट करते हैं। पन्तजी के पौराणिक बिम्बों का संबंध कृष्ण, राम, शिव, कामदेव, जैसे पौराणिक पात्रों और उनके संबंध में हमारी आस्था एवं विश्वास से है।

श्रीकृष्ण और उनके जीवन से संबंधित वस्तुएँ हमारी आस्था को उद्दीप्त करने में सहयोग देती हैं। यमुना नदी के कछारों पर मुरली-वादन करते हुए गोप-बालाओं के साथ रासलीलारत श्रीकृष्ण और उनके चरणों के पावन स्पर्श से पवित्र बने वृन्दावन का भारतीय जन-जीवन से गहरा संबंध है। उन्हीं का सहारा लेकर कवि ने प्रतीकात्मक रूप में अपनी उच्छ्वास की बालिका के रूप-सौन्दर्य एवं भाव-सौन्दर्य का चित्र अंकित किया है—

रूप का राशि राशि वह रास,
दृगों की यमुना श्याम;
तुम्हारे स्वर का वेणु विलास,
हृदय का वृन्दाधाम।[2]

उच्छ्वास की बालिका रूप-सौन्दर्य की दृष्टि से अतीव कमनीय है। उसका रूप रासनृत्य-निरता राधिका का अनुस्मरण कराता है। उसकी नीली आँखें नीली यमुना एवं श्यामल कोमल कृष्ण को स्मृति-पथ में सहसा लाती हैं। उसके मंजुल एवं सुरीले स्वर में श्रीकृष्ण का मुरली-रव भरा हुआ है और उसका हृदय पावनता स्वरूप वृन्दावन-धाम है। इस प्रकार कवि बालिका में राधा-कृष्ण, रास, यमुना, मुरलीवादन एवं वृन्दाधाम सब का समन्वित रूप पाता है।

---

१. लोकायतन, पृ. ३९१ २. पल्लव, पृ. १३५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

श्रीकृष्ण के द्वारा कालिय-मर्दन एक पौराणिक घटना है। कालिय यमुना के दह में रहता था, जिसके विष से दह का पानी विषैला बन गया था। इससे गोप-गोपियाँ और गौएँ मरने लगीं तो कृष्ण ने उस दह में जाकर कालिय-मर्दन किया। इस पौराणिक घटना का सहारा लेकर कवि ने यह बताया है कि मुरलीधर के श्रीचरणों पर आत्मसमर्पण करने से मानसिक वृत्तियाँ कालिय के समान मर्दित हो शान्त होती हैं और फिर वे अपना प्रभाव मनुष्य पर नहीं डाल पातीं। अतः ईश्वर पर आत्मार्पण कर शान्त हुई वृत्तियों के लिए श्रीकृष्ण से मर्दित हो शान्त हुए कालिय का बिम्ब अमूर्त की मूर्त कल्पना का सुन्दर उदाहरण है।

मुरलीधर के श्रीचरणों पर आत्मार्पण कर
शांत वृत्तियाँ हो जातीं, कालिय-सी मर्दित।[1]

मन रूपी कालिय फण को दुबारा नाथने की आवश्यकता पर ज़ोर देते हुए एक बिम्ब दूसरे स्थान पर आया है।[2]

भारतीय राजनीति अंग्रेज़ों के घोर अत्याचार से दूषित थी और चारों ओर घोर अंधकार एवं निराशा का वातावरण था। अंग्रेज़ गाँधीजी के सहयोगियों का दमन कर रहे थे। वे उन्हें कारावास में ठूँसकर सत्याग्रह-आन्दोलन को शान्त करने का प्रयत्न कर रहे थे, जैसे कि कंस ने अपनी भावी आपत्ति से रक्षा पाने के लिए देवकी को कारा में डाल दिया था। सारा भारत कारागृह बना था। अस्वतन्त्र भारत में गाँधीजी के जन्म की घटना की, द्वापर युग में कंस के कारावास में श्रीकृष्ण भगवान के जन्म के द्वारा रूपायित कर सुन्दर मूर्ति-कल्पना की है। उधर कृष्ण के जन्म का वृत्तान्त न कंस को विदित था न पहरेदारों को। वैसे ही कारावास तुल्य भारत में भारतोद्धारक गाँधीजी के जन्म का पता अंग्रेज़-शासकों को नहीं लगा था।

ज्ञात न उसको भारत-माता
जनमी कारागृह के भीतर,—
बाहर भी बंदी ही थे जन,
उन्हें न था कृष्णायन का डर ![3]

भारत-विभाजन के फलस्वरूप सांप्रदायिक विद्वेष की भावना प्रबल हो उठी। उस विद्वेष के प्रलय में नवशासन डाँवाडोल हुआ तो लोकपुरुष गाँधीजी ने अपनी छिगुनी पर गिरि को धारण कर जनता को आश्वस्त किया। इस घटना को इन्द्र के कोप के कारण भयभीत गोकुलवासियों को बचाने के लिए

---

१. शिल्पी, पृ. २९
२. पौ फटने के पहिले, पृ. १४४
३. लोकायतन, पृ. ९०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

श्रीकृष्ण के द्वारा गोवर्धन पर्वत को छिगुनी पर धारण करने की पौराणिक घटना से अधिक प्रभावकारी बनाया गया है—

उस प्रलय बाढ़ में करता
जब ऊब-डूब नव शासन
तब किया लोक-नर ने उठ
फिर छिगुनी पर गिरिधारण ![1]

परिवर्तन का भयंकर रूप दिखाने के लिए महाभारत की घटना का सहारा लिया गया है—

वहा नर शोणित मूसलधार,
रुंड-मुँड की कर बौछार,
प्रलय घन सा घिर भीमाकार
गरजता है दिगंत संहार।
छेड़ खर शस्त्रों की झंकार
महाभारत गाता संसार ![2]

परिवर्तन का भयंकर रूप देखिए। नर-रक्त की मूसलधार वृष्टि हो रही है, भूमि-रुंड-मुंडों से भर गयी है। दिगंत प्रलयकालीन भीषण घोष कर संहार करने लगा है। चारों ओर खर शस्त्रों का निर्मम घोष मुखरित है, मानो संसार में महाभारत छिड़ गया हो। इस प्रकार महाभारतकालीन अस्त्र-शस्त्रों की झंकार, रथों का घोष, रुंड-मुंड, रक्त-प्रवाह सब युद्ध-दृश्यों के सहारे परिवर्तन को मूर्तित कर दिया गया है।

महर्षि अरविन्द को जन-मन के कुरुक्षेत्र के युग सारथी के रूप में चित्रित किया गया है—

धन्यव अनि, अवतरित हुए जो तुम अतिमानव लोक विधायक,
जन-मन के चिर कुरुक्षेत्र के युग सारथि क्रम में अतिनायक ![3]

निम्न पंक्तियों में महाभारत युगीन जर्जर-पीडित मानव-समाज, पारस्परिक संघर्ष, एवं जीर्ण-शीर्ण संस्कृति से आहत भारत का बिम्ब प्रस्तुत किया गया है—

वृद्ध महाभारत का होगा
जर्जर पंजर,
संस्कृति खण्डहर
आहत भारत !

१. लोकायतन, पृ. १२३ २. पल्लव, पृ. १५५
३. युगपथ, पृ. १३०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

राज्यों संघों में शत खंडित,
मंत्रों तंत्रों से षड्यंत्रित,
जाति पाँतियों तर्कों वादों में विशीर्ण श्लथ ![1]

महाभारत-युग जर्जर पंजर रह गया था। उस काल के आहत भारत का वृद्ध रूप में वर्णन किया गया है। उस समय की संस्कृति खण्डहर मात्र थी। भारत राज्यों, संघों में शतशः खंडित, मंत्रों-तंत्रों से षड्यंत्रित, जाति-पाँति, तर्कों-वादों से पीडित था। महाभारत-युग का यह प्रस्तुत बिम्ब है, जिसमें आलंकारिक भाषा का सर्वथा अभाव है।

इन्द्रधनुष की व्यापकता एवं अंतहीनता की व्यंजना करने के लिए द्रौपदी के चीर का रूपक बाँधते हुए कल्पना की गयी है—

यह इंद्रधनुष
द्रौपदी का चीर है,
इसका अशेष छोर,
शुभ्र किरण थामे हैं—
जो हाथ नहीं आती।[2]

इन्द्रधनुष को द्रौपदी का चीर बताया गया है। दुःशासन के द्वारा चीर-हरण के समय द्रौपदी ने लाज बचाने के लिए वस्त्र का छोर हाथ में संभाला था। शुभ्र किरण से रंजित इंद्रधनुष को देखकर ऐसा लगता है मानो द्रौपदी के हाथ में शोभित वस्त्र हो।

युग की चेतना के उभय रूप को दुःशासन एवं कृष्ण के द्वारा व्यक्त करता हुआ एक बिम्ब इन पंक्तियों में भी प्रस्तुत है—

यह युग की चेतना आज जो मुझमें बहती,
बुद्धिमना, अतिप्राणमना यह सब कुछ सहती !
एक ओर युग का वैभव है, एक ओर युग तृष्णा,
एक ओर युग दुःशासन औ' एक ओर युग कृष्णा ![3]

प्रस्तुत पंक्तियों में दुःशासन तृष्णा तथा कृष्णा अनंत वैभव के प्रतीक रूप में आई है। अनंत वैभव को देखकर युग-तृष्णा बढ़ती जा रही है और वह वैभव को प्राप्त करने के लिए अनधिकार चेष्टा कर रहा है।

वंशी ने जो सांस्कृतिक केन्द्र खोला था, माधो गुरु और उसके अनुयायी उसपर बराबर आरोप लगाते रहे। उस केन्द्र की निन्दा करते हुए माधो के

१. लोकायतन, पृ. ९२
२. कला और बूढ़ा चाँद, पृ. १३७-१३८
३. स्वर्णधूलि, पृ. ९८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अनुयायी केन्द्र को मगर और उससे प्रभावित जनपद को गज का रूपक देते थे। पूर्वकाल में गजेन्द्र तालाब में स्नान करता हुआ ग्राह से पकड़ा गया था। उसी प्रकार जनपद वंशी के केन्द्र से इतना प्रभावित हुआ कि वह उसके आकर्षण से छूट नहीं पा रहा था। माधो के अनुयायी उस केन्द्र रूपी मगर की पकड़ से जनपद रूपी गज को छुड़ाने की चिंता में थे—

कुछ उपाय करना होगा निश्चय
कवि का दिग् भ्रम मिटे, छंटे उर तम,
केन्द्र-ग्राह से छूटे जनपद गज,
टूटे नहीं सनातन-जीवन क्रम ![1]

परंपरित रूपक पर आधारित यह पौराणिक बिम्ब 'गजेन्द्र मोक्ष' की पुरानी कहानी प्रत्यक्ष कर देता है।

'युगपथ' काव्य-संग्रह की 'आवाहन' कविता आद्यन्त बिम्बात्मक है। प्रतीकों पर आधारित यह कविता सामयिक पृष्ठभूमि पर रामायण की संपूर्ण कथा का चित्र हमारे सामने उपस्थित करती है। कवि त्रेतायुग के भगवान राम को वर्तमान समय में भारत में पुनः अवतीर्ण होने का आह्वान करता है, क्योंकि संसार धर्म-ग्लानि से पीडित है, चारों ओर नग्न वासना एवं उच्छृंखलता का राज्य है। मनुष्य की चेतना शापग्रस्त अहल्या के समान शिलावत् जड़ हो गयी है। जैसे पूर्वकाल में अपने चरणरज के स्पर्श से पत्थर बनी अहल्या का राम ने उद्धार किया था, उसी प्रकार जड़ बनी मानव-चेतना का उद्धार करने के लिए राम का पुनः अवतार लेना आवश्यक है। जैसे भगवान शिव का त्र्यंबक जीर्ण हुआ था, उसी प्रकार यह युग-चाप जीर्ण हो चुका है। उस जीर्ण चाप को तोड़ने के लिए संसार वीरहीन हो गया था, उसी प्रकार आज पृथ्वी वीरहीन हो गयी है। अतः पृथ्वी रूपी चेतना को चाप तोड़ वरण करने के लिए भगवान राम को सन्नद्ध होना है। आज मनुष्य की कुमति विमाता कैकेई बनी है। राम के समान सत्य वनवासी हो गया है। परिवार के लोग सब छली हो गये हैं। जैसे सीता को मारीच ने कंचनमृग बन मोहित किया था, उसी प्रकार जग के दुर्बल मन को भौतिक मद का कंचन मृग मोहित कर रहा है। लक्ष्मण-रेखा के समान विनाश की रेखा चारों ओर खींच दी गयी है। दुर्मद रावण के समान आततायी मानव, साधु वेश धारण कर मानव के श्रीहीन हृदय रूपी पंचवटी से लोक-चेतना रूपी सीता का अपहरण कर रहा है। मनुष्य की श्रद्धा-वृत्ति जटायु के समान पंख कटी बन गयी है, उसे मुक्ति देनी है। निर्ममता रूपी वाली की हत्या करके शरणागत सुग्रीव के समान मानव का कल्याण करना है। दुस्तर एवं अशांत जीवन-वारिधि को उद्वेलित होते देखकर जन-मन विह्वल

---

१. लोकायतन, पृ. ५१७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हो रहा है। अतः नव चेतना का सेतु बांधकर सत्य की सेना को पार पहुँचाना है। आज मन के विश्वास को लक्ष्मण के समान शक्ति लग गयी है। शक्तिमान हनुमान के समान संजीवनी बूटी लाकर उसे प्राणदान देना है। अणुदानव मेघनाद-सा गर्जन भर हृदय को कंपा रहा है। हे भगवान राम, कुंभकर्ण के समान नींद में सोये युग को पुनः जागृत करो। आज दशमुख रावण के समान घृणा अपना मस्तक उठा अट्टहास करती है। मन में द्वेषानल जल उठा है। उसे नष्ट कर मानव को एकता के सूत्र में आबद्ध करना है। मानव-चेतना सीता के समान मुक्त हो अपने प्रिय राम को प्राप्त करे। हे जनमंगलदायी राम ! तुम फिर जन-हृदय में राज्यारोहण करो और राम-राज्य की स्थापना करो।[1]

सारांश में यह कहा जा सकता है कि 'आह्वान' कविता में रामायण की कथा का संपूर्ण ढाँचा आ गया है और रामायण की प्रमुख घटनाएँ पाठक के दृष्टिपथ में चलचित्र के समान एक के बाद एक घूमती हैं। साँगरूपक के द्वारा अनेक खंडित बिम्बों की माला तैयार की गयी है। अनेक खंडित बिम्ब एकत्र हो रामायण-कथा का एक संश्लिष्ट बिम्ब प्रदान करते हैं। कवि ने इस संश्लिष्ट बिम्ब-निर्माण में अपनी कलात्मक सामर्थ्य का परिचय दिया है। साँगरूपक का प्रभाव बढ़ाने के लिए उपमा भी सहायक हुई है।

पुरानी संस्कृति के आदर्श, मानव को आज भी इतने मोहित कर रहे हैं कि मानव उनको छोड़ने के लिए तैयार नहीं है। पुराने आदर्शों को माया मोहक पंचवटी का रूप दिया गया है, जो मानव-मन को नित्य नये-नये स्वर्ण मृगों के पीछे दौड़ा रही है—

ध्वंस भ्रंश कर देंगे हम इस आदर्शों के
माया मोहक पंचवटी को, भटकाती जो
मानव मन को नित नव स्वर्ण मृगों के पीछे।[2]

यहाँ पंचवटी, स्वर्णमृग, राम का उसके पीछे भटकना आदि का पौराणिक बिम्ब चित्रित किया गया है। साथ ही जीर्ण-शीर्ण प्राचीन आदर्शों के छल एवं उनके पीछे भटकते लक्ष्यहीन मानवों का चित्रण भी हुआ है।

'शिल्पी' काव्य-रूपक में कलाकार के द्वारा युग-परिवर्तन का संकेत कराया गया है। संसार में नया चैतन्य, नया अध्यात्म जन्म ले रहा है और वह मनुज-हृदय की निखिल क्षुद्रता एवं अहंता को स्वर्णिम किरणों के वैभव में मज्जित कर रहा है। इस प्रक्रिया में मानव के अवचेतन मन का गाढ़ तम उद्वेलित हो उठा है। वह गाढ़ तम विरोध की शिखर तरंगों में भुजंग-सा

---

१. युगपथ, पृ. १२५-१२७
२. रजतशिखर, पृ. ६५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आलोडित हो अपना फण ऊपर उठाकर फूत्कारें भर रहा है और अचेतन के नरकों का असीम गरल फेन उगल रहा है। इसे देखकर कलाकार का कथन है कि आज नये राम का अपने शतमुख, शीशों से नया अभिवादन करने के लिए नये रावण उत्पन्न हो चुके हैं। विश्व-मानव के मन में देवासुर संग्राम छिड़ रहा है और जीवन-प्रांगण अश्रुत चापों से गुंजित हो रहा है। धरा-चेतना स्वयंवरा बन खड़ी है। जीर्ण मान्यताओं का जर्जर चाप तोड़कर धरा-चेतना को वरण करने के लिए नये लोक-पुरुष प्रकट हो रहे हैं। नये जीवन की श्री-शोभा को वरने हेतु आज पुनः मानव-मन चंचल है।[1] इन पंक्तियों में अवचेतन के तम को भुजंग का रूपक दिया गया है। फिर रावण, राम, स्वयंवरा, लोक-पुरुष, देवासुर सग्राम आदि के द्वारा रामायणकालीन तथा पौराणिक कथाओं की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट किया गया है। कवि की जीवन के प्रति मगलाशा भी यहाँ प्रकट हुई है। उसका विश्वास है कि आगे राम और रावण में द्वन्द्व नहीं होगा, रावण राम का अभिवादन ही करेगा।

वंशी ने एक नये उद्देश्य से प्रेरित होकर सांस्कृतिक केन्द्र का प्रवर्तन किया। परन्तु माधो गुरु के विरोधी स्वर ने वंशी के कवि-चेतस् को ध्वस्त कर दिया। उससे कवि का प्रतिभा रूपी रवि-मंडल अस्त हुआ, मानो मंत्र के शूल से लक्ष्मण को शक्ति लग गयी हो।

तमस से आवृत हो तत्काल
हुआ प्रतिभा रवि मंडल अस्त !
लगी हो फिर लक्ष्मण को शक्ति
मर्मभिद् विंधा मंत्र का शूल,[2]

माधो गुरु के वचन-बाण से बिंधा हुआ कवि वंशी ऐसा हसप्रभ एवं श्री हीन हो गया मानो तमस के फैलने से रवि अस्त हो गया हो। तमस से आवृत्त रविमंडल के द्वारा कवि ने वंशी के मुख-मंडल पर छायी ग्लानि एवं निराशा का बिम्ब प्रस्तुत किया है। फिर माधो गुरु के मर्मभेदी कठोर वचनों से पीड़ित वंशी को शक्ति लगने से मूर्छित पड़े लक्ष्मण के रूप में दिखाकर कवि ने प्राचीन कथा की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है।

भारतीय जन-जीवन को पथभ्रष्ट करने वाले ढोंगी साधुओं की खिल्ली उड़ाते हुए एक बिम्ब 'किरण वीणा' काव्य-संग्रह में है। भारत देश चमत्कार-वादी जन का दिशा-भ्रष्ट देश है। यहाँ कंचन-मृग से छलने वाले अनेक साधु हैं और लोग उन साधुओं के प्रति आकर्षित हो अपना अनिष्ट कर रहे हैं। जैसे रावण ने कंचनमृग के पीछे राम को भगाकर साधुवेष में सीता को धोखा दिया,

---

१. शिल्पी, पृ. १०३–१०४
२. लोकायतन, पृ. ३५७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उसी प्रकार अनेक ढोंगी साधु धार्मिक अंध-परम्परा के कंचन-मृग के पीछे मन की वृत्ति को दौड़ाकर जनता को धोखा दे रहे हैं। ये साधु विद्याहीन देश की मनोविकृति के फोड़े हैं। ये मनुष्य को जीवन से विमुख करते हैं। मत आदर्शों के मधुर सन्देश देने वाले ये साधु कंचनघट में विष भर रहे हैं। निरीह जनता कंचन घट को देखकर भ्रमित होती है, इसलिए उसके अन्दर भरे विष की ओर ध्यान नहीं देती—

चमत्कारवादी जन का दिग् भ्रांत देश यह,
जो कंचन-मृग-छली साधुओं के प्रति आकर्षित,
फोड़े विद्याहीन देश की मनोविकृति के,
विमुख जनों को करते जीवन से, अतीत के
मृत सन्देश सुनाकर, कंचन घट में विष भर ![1]

महर्षि अरविन्द चैतन्य स्वरूप, तेजोज्वल एवं दिव्य पुरुष थे। लोकमंगल की भावना से ओतप्रोत अरविन्द का मन चित् भावना को धारण किए था। मन में चित् भावना से परिपूर्ण अरविन्द की मूर्ति-कल्पना मौलि पर गंगा की धारा को धारण किये मंगलस्वरूप भगवान शिव के रूप में की गयी है—

कैसा था वह दिव्य अवतरण,—
(धन्य आज का ज्योति दिवस क्षण !)
चिदापगा का अतुल वेग चिर दुर्धर
मनश्चूड़ पर किया देव ने था जब धारण,—
जिज्ञासा से पुलकित अन्तर ![2]

पन्तजी ने कार्ल मार्क्स के प्रति भी स्तवन अर्पित किया है। मार्क्स का विश्व मंच पर तब उदय हुआ था, जब कि सारा विश्व अंधकार-कवलित था। मार्क्स के आगमन से विश्व-जनता की नयी आशा बंधी और उनके भौतिकवाद ने एक नयी हलचल मचा दी। उन्होंने यह अनुभव किया कि जीवन की समस्या आर्थिक है और उसके समाधान के बिना समाज का अस्तित्व डाँवाडोल हो जाएगा। पन्तजी मार्क्स को ज्ञानी एवं पारदर्शी मानते हैं और उनको भगवान शिव के ज्ञान-चक्षु के समान प्रलयंकर सिद्ध करते हैं—

धन्य मार्क्स ! चिर तमच्छन्न पृथ्वी के उदय शिखर पर,
तुम त्रिनेत्र के ज्ञान-चक्षु से प्रकट हुए प्रलयंकर ![3]

'फूलों का देश' नामक काव्य-रूपक में कवि मनःचक्षु के सम्मुख क्रान्ति-काल की छायाओं को नाचते हुए देखता है। अवचेतन के प्रेत अट्टहास भर रहे

१. किरण वीणा, पृ. २१५   १. युगपथ, पृ. १३१
३. युगवाणी, पृ. ४४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हैं और गत युग के लोभी असुरों से पीड़ित मानवता अपना कातर बनरोदन छोड़कर एकत्र होती है और हुंकार भरती हुई ललकार उठती है—

भूत के कंकाल हैं हम,
क्रुद्ध रुद्ध कराल हैं हम !
कंठ से लिपटे त्रिशूली के
भयंकर व्याल हैं हम ![1]

पीड़ित मानवता अपना भयावना रूप प्रस्तुत करती हुई कहती है कि वह भूत का कंकाल है और स्वभाव से क्रुद्ध, रुद्ध एवं कराल है। वह अपने को त्रिशूली भगवान शंकर के कंठ से लिपटा भयंकर व्याल सिद्ध करती है। त्रिशूली एवं उसके गले के व्याल पौराणिक कल्पना को उद्बुद्ध करते हैं।

मानव का वैज्ञानिक चमत्कार अणुशक्ति के रूप में मूर्त हुआ है। अणुशक्ति का विकट रूप विश्वयुद्ध में देखा गया है। वह प्रलयकारिणी है। अणुशक्ति से विश्व का संहार होते देख कवि की कल्पना है कि रुद्र अपना अग्निचक्षु खोलकर उसकी ज्वाला में भू के कलमष को भस्म कर रहे हैं—

आज रुद्र निज अग्निचक्षु फिर खोल प्रज्वलित
भस्म कर रहे भू का कलमष दृष्टि ज्वाल से ![2]

अपना तीसरा नेत्र खोलकर उसकी भीषण ज्वाला में संसार का दहन करने वाले संहारमूर्ति रुद्र की कल्पना आकर्षक है। साधर्म्य पर आधारित यह पौराणिक बिम्ब मानव-मन के विश्वास पर केन्द्रित है। कामदेव ने भगवान शंकर का ध्यान भंग करने का दुस्साहस किया और उनकी क्रोधाग्नि में वह भस्मीभूत हो गया। इस प्रकार शिव ने काम को जलाकर मृत संस्कारों को मर्दित किया। वैसे ही राम ने त्रेतायुग में मृत-संस्कार स्वरूप धनुष-यज्ञ में धनुष को तोड़कर प्रीतिनत धरा-चेतना का वरण किया था। काम-दहन एव धनुष-यज्ञ के दो खंडित बिम्बों का निम्न पंक्तियों में अवतरण हुआ है—

जिसको वेधा ऊर्ध्व-प्राण-शर-हर ने,
स्मर ने सहज नवाया मधु सायक धर,
जिसे राम ने उभय छोर अतिक्रम कर
किया प्रीतिनत धरा चेतना को वर ![3]

वंशी के एकान्त जीवन का वर्णन करते हुए उसके रूप-सौन्दर्य की तुलना सौन्दर्य के प्रतीक काम से तथा उसके कर्म-सौन्दर्य की तुलना शिव से की गयी है—

---

१. रजतशिखर, पृ. ६० २. शिल्पी, पृ. ६३
३. लोकायतन, पृ. ७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तट के भीटे पर, तरुवन में,
निभृत कुंज था धूप छाँह स्मित,
स्वप्न नीड़ युग द्रष्टा पिक का
प्रेम नाम, वंशी जन-प्रचलित !
तरुण मदन साधना निरत हो,
युग का विषम कलुष विष पीकर,
अमृत कला धर यशः भाल पर
भस्महीन हो नव युग शंकर ![1]

यहाँ वंशी के लिए प्रयुक्त तीन उपमान हैं। 'युगद्रष्टा पिक' जो तरुवन में निभृत कुंज के स्वप्न-नीड़ में निवास करता है। युगद्रष्टा, पिक, तरुवन, निभृत कुंज एवं स्वप्न नीड़—इन शब्दों से यह स्पष्ट हो जाता है कि वंशी सांसारिक माया-मोह से कोसों दूर स्वप्न-द्रष्टा कवि है और उसकी आत्मचेतना जागरूक कवि की है क्यों कि वह युग-द्रष्टा है। अपने युग-दर्शन से वह जनप्रिय भी है। वह तरुण है, सौन्दर्य से वह कामदेव है, किन्तु साधना से शंकर का अवतार है, जिसने युग का कलुष विष पीकर अमृत-कला को अपने मस्तक पर धारण किया है। शिवजी ने समुद्र-मंथन के समय वासुकि सर्प के मुँह से उगल पड़े विष को स्वयं पीकर अपने लोक-कल्याणकारी रूप का परिचय दिया और यशस्वी भाल पर अमृत ज्योत्स्ना की वर्षा करनेवाली चन्द्रकला को धारण किया। वंशी भी युग की कालिमा स्वयं पीकर विश्व-मानवता के कल्याण कार्य में तल्लीन है। अपनी साधना एवं कार्यों से वह शंकर है, किन्तु शारीरिक सौन्दर्य की गरिमा के कारण उसको भस्महीन शंकर कहा गया है। मदन, कालकंठी शिव, मौलि पर चन्द्रकला—ये सब भारतीय जनजीवन के विश्वासों पर आधारित हैं। इस प्रकार वंशी के बहाने कामदेव एवं शिव के बिम्ब प्रस्तुत किये गये हैं।

'स्वर्ण किरण' में 'इन्द्रधनुष' (जीवन-निर्माण) कविता में कामदेव और उनके फूलों के बाणों पर आधारित बिम्ब की अवतारण हुई है, जिसमें कवि ने यह आशा व्यक्त की है कि जीवन-निर्माण में स्त्री-पुरुष युग्म प्रीति के लिए प्राणों की आहुति चढ़ाने को तैयार हों तथा पंचशर के हित मोहक ज्योति-व्यूह की रचना करें। जीवन मधु फूलों के बाणों से संचित करें तथा यौवन के तोरण में युवक-युवती मुस्कान करते स्वच्छन्द विचरें।[2] 'लोकायतन' काव्य में वसन्त का वर्णन करते हुए अप्रस्तुत रूप में कामदेव के द्वारा शिवजी की समाधि को विचलित करने का बिम्ब प्रस्तुत किया गया है। वसन्तकाल मधु-मादन सौरभ

१. लोकायतन, पृ. ४२
२. स्वर्ण किरण, पृ. १८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

से वातावरण को सुगन्धित तथा कल कूजन से वातावरण को गुंजित कर सारे विश्व को उन्मत्त कर रहा है, जैसा कि अपने दहन के पूर्व धृष्ट स्मर ने शिवजी को समाधि से विचलित करने का प्रयास किया था —

मदन दहन के पूर्व धृष्ट स्मर ज्यों
शंकर को करता समाधि विचलित,
मधुमादन सौरभ, कल कूजन से
दिशि क्षण को कर नव वसन्त कुसुमित ![१]

प्रस्तुत पंक्तियों में प्रकृति के माध्यम से पौराणिक बिम्ब की योजना की गयी है। वसन्त के लिए कामदेव का अप्रस्तुत साधर्म्य पर आधारित है। 'मधुमादन' विशेषण द्वारा सौरभ को आस्वाद्य बनाया गया है तथा 'कल कूजन' में श्रव्य संवेदना को उद्दीप्त करने की क्षमता है। वसन्त के लिए कामदेव का उपमान देकर मादन भाव को जगाने का प्रयत्न किया गया है। ऐन्द्रिय संवेदना को प्रबुद्ध करनेवाले शब्दों के द्वारा प्रस्तुत एवं अप्रस्तुत की सुन्दर बिम्ब-योजना हुई है।

माघ संस्कृत के शीर्षस्थ कवियों में एक थे। वे अर्थ-गौरव, उपमा एवं पद-लालित्य के लिए संस्कृत साहित्य में विख्यात थे। यह तो हुई उनके कवि व्यक्तित्व की बात। वैयक्तिक जीवन में वे प्रसिद्ध दानी थे। उनके दान-वैभव को दिखाने के लिए कर्ण, शिवि एवं हरिश्चन्द्र की दानशीलता के उदाहरण प्रस्तुत कर एक साथ तीन पौराणिक बिम्बों का नियोजन किया है। महाभारत के प्रसिद्ध पात्र कर्ण अपनी दानवीरता के लिए प्रख्यात थे और आज भी दानशील व्यक्ति को कर्ण कहने की परम्परा है। राजा शिवि की दानशीलता की परीक्षा इन्द्र तथा अग्नि ने क्रमशः बाज और कबूतर के वेष में की थी। कबूतर को बचाने के लिए अपने शरीर का मांस देकर शिवि ने अपनी दानशीलता का परिचय दिया था। प्रसिद्ध सूर्यवंशी राजा हरिश्चन्द्र ने वचनबद्ध हो विश्वामित्र को सारा राजपाट दान में दे दिया तथा दक्षिणा चुकाने के लिए स्त्री-पुत्र तथा स्वयं को पण्य रखा। उन्होंने चंडाल के यहाँ श्मशान की देखभाल का कार्य भी किया। माघ कवि अपनी दानशीलता में कर्ण, शिवि एवं हरिश्चन्द्र के समान थे, जिन्होंने अपनी सारी संपत्ति याचकों को दान में दे दी। अन्त में रिक्त कोष एवं धनहीन बनकर कुटी में भूखों मर गये—

सुनाते आत्म दर्प के साथ
माघ कवि का वैभव गुण गान —
कर्ण शिवि हरिश्चन्द्र की भाँति
याचकों को जो देते दान !

---

१. लोकायतन, पृ. ६०१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शनैः स्वाहा कर सब संपत्ति
बो वह रिक्त कोष, धन-हीन
क्षुधा पीड़ित, मन से संतुष्ट
कुटी में मरे रोग से क्षीण ![1]

'स्वर्णधूलि' काव्य-संग्रह की 'जन्म-भूमि' कविता में अनेक पौराणिक बिम्ब देखे जा सकते हैं। जन्म-भूमि की गरिमा दर्शाने के लिए चलचित्र की भाँति अनेक पौराणिक घटनाओं के बिम्ब प्रस्तुत किये गये हैं। राम, लक्ष्मण, सीता, कृष्ण और गीता, सावित्री एवं राधा, अहल्या का शाप और उससे मुक्ति से सम्बन्धित अनेक बिम्बों की एक माला पिरोकर जन्मभूमि की प्रशस्ति की गयी है।[2]

कवि ने विश्व-संस्कृति की परिकल्पना करते हुए अन्तर्बाह्य समन्वय की आवश्यकता सुझायी है। बाह्य जगत् अंतःशोभा में ढलकर प्रकाम्य बनेगा। बाह्य जगत् त्याज्य नहीं है, उसका महत्व अनुपेक्षणीय है। किन्तु बाह्य सत्य ही सब कुछ नहीं है। वह आत्ममुक्ति के सौम्य-सृजन आनंद में निरत होकर श्रेयस्कर बनेगा। अंतःशोभा में ढले बाह्य जगत् की तुलना देह-सत्य रूपी मूषक पर बैठ गणपति से की गयी है—

वही विश्व संस्कृति का
नव आधार बनेगा !—
अतिक्रम कर
जड़ यंत्र-सभ्यता संघर्षण, नर
आत्म मुक्ति के
सौम्य सृजन आनंद में निरत
बाह्य जगत्—
अंतः शोभा में ढाल सकेगा !—
देह–सत्य–मूषक पर
आरोही गणपति—सा ![3]

'लोकायतन' काव्य में इन्द्र का बिम्ब प्रभावकारी है। उनका मुख रोहित पावक में लिपटे मेघों में स्मित शशि-सा शोभन है। माथे पर भावों के आलोक से द्युतिमय चिन्मणि किरीट है, मंदार कुसुमों के मधुरज से रंजित उनका उत्तरीय सुन्दर है। उनके हाथ में प्रेरणा रश्मि है, वे अधिमानस के स्वर्णिम रथ पर आरुढ़ हैं। मधु और काम उनके सहचर हैं अर्थात् आसव एवं अप्सरा की

१. लोकायतन, पृ. ३४०
२. स्वर्ण किरण, पृ. ९२
३. पतझर, पृ. ८८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

खुमारी में वे लोट-पोट रहते हैं। दुःख के अंधकार को सिर पर धारे ऊपर उठने के लिए तपते मानव को वे भू पर पटक देते हैं।[१] उपमा एवं रूपक के सहारे इन्द्र की कल्पना सजीव है। रोहित पावक, स्मित शशि, आलोक, मंदार रज, स्वर्णिम तम आदि में रंग-संवेदना की सूक्ष्मता द्रष्टव्य है। चाक्षुष एवं रस्य संवेदनाओं को उत्तेजित कर तथा अलंकारों की सुन्दर कलात्मकता से परिपुष्ट कर इन्द्र का उदात्त बिम्ब बनाया गया है। आगे माघ कवि के भोग-वैभव एवं त्याग-भाव को मूर्तरूप देने के लिए अप्रस्तुत रूप में क्रमशः इन्द्र और दधीचि के बिम्ब रखे गये हैं

इन्द्र थे विभव भोग में माघ
त्याग में अपर दधीचि समान।[२]

विभव-भोग में स्वर्गाधिपति इन्द्र से माघ की तुलना सार्थक है। वे त्याग में दधीचि के समान थे। दधीचि ने शरीर की हड्डियाँ देकर देवताओं की सहायता की थी। विश्वकर्मा ने उनकी हड्डियों से वज्रायध बनाया था, जिससे वृत्रासुर को मारकर इन्द्र ने देवताओं की रक्षा की। दधीचि त्याग के प्रतीक बन गये। दधीचि का प्रतीकात्मक एक बिम्ब 'रजत-शिखर' में मिलता है।[३]

सूर्यवंशी राजा त्रिशंकु विश्वामित्र की सहायता से सशरीर स्वर्ग गया था, किन्तु इन्द्र ने क्रुद्ध हो उसे नीचे फेंक दिया। क्रुद्ध होकर विश्वामित्र उनके लिए एक नये स्वर्ग का निर्माण करने लगे। इसपर देवों ने घबराकर विश्वामित्र से समझौता कर लिया। त्रिशंकु अधोमुख आकाश और पृथ्वी के मध्य लटक गये।[४] इस पौराणिक कथा के आधार पर पन्तजी ने अपना यह विचार प्रकट किया है कि जो अध्यात्म पर विश्वास रखकर जीवन-सत्य का ग्रहण करता है, उसका जीवन भू पर स्थिर है। किन्तु भौतिकवाद को अपनाकर, मृगतृष्णा के पीछे भागनेवाला त्रिशंकु की तरह निराधार रह जाएगा और जीवन-सुख खो बैठेगा—

जो अदृश्य विश्वास सरणि से
करते जीवन सत्य नित ग्रहण,
जो न त्रिशंकु सदृश लटके हैं,
भू पर जिनके गड़े युग चरण।[५]

१. लोकायतन, पृ. २०६–२०७
२. वही, पृ. ३४२
३. रजतशिखर, पृ. ५९
४. हिन्दी साहित्य कोष, भाग–२, पृ. २२४
५. स्वर्णधूलि, पृ. १०६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

'सौवर्ण' में यह बताया गया है कि मनुष्य असंभव इच्छाओं की बलि का अज है। वह अन्न-प्राण-मन के प्रिय भुवनों का अतिक्रम कर अधिमन के शिखरों पर अटक गया है। ऐसे मनुष्य को त्रिशंकु जैसा चित्रित कर उसका एक कमनीय बिम्ब अंकित किया गया है। असंभव इच्छाओं के वशीभूत मनुष्य के लिए बलि के अज का उपमान कितना भाव व्यंजक है। जैसे बलि के अज को अपनी भावी का ज्ञान नहीं है, तथा किसी भी क्षण मृत्यु का ग्रास बन सकता है, वैसे इच्छाओं में भटका भोला मनुष्य अपने भविष्य से अनभिज्ञ है। फिर उन्हीं इच्छाओं से प्रेरित होकर अतिमन की साधना से अधिमन के शिखरों पर पहुंचता है तो वहाँ आकर उसकी गति रुक जाती है और वह न ऊपर जा सकता है, न नीचे। शून्य में लटके त्रिशंकुवत् उसकी दशा करुणा-जनक है।

पुराणों के अनुसार भस्मासुर ने शिव से वर प्राप्त किया था कि जिसके सिर पर हाथ रखेगा, वह भस्म हो जाएगा। वर के बाद वह पार्वती पर मोहित हुआ। अतः शिव को जलाने के लिए उनके सिर पर हाथ रखने चला। वर मिल चुका था, अतः शिव लाचार होकर भागे। अन्त में विष्णु ने शिव का संकट देख मोहिनी-रूप धारण किया, जिस पर आकर्षित होकर भस्मासुर ने नाचने की मुद्रा में एक हाथ अपनी कटि पर और एक हाथ अपने सिर पर रखा। इस प्रक्रिया में वह स्वयं जल मरा।[१] मनुष्य ने वैज्ञानिक प्रगति करके अणुबल का वरदान प्राप्त किया और उसी वरदान से वह भस्म हो रहा है, विज्ञान की भस्मासुर रूप में अवतारणा निम्न पंक्तियों में की गयी है—

आः, तो भौतिक युग की विज्ञान मूर्ति है !...
दूर, दूर हट जाओ,...इसकी वज्र देह को
अणु विस्फूर्जित विद्युत् किरणें गला रही हैं !
श्लथ नथुनों से निकल रहीं विष की निःश्वासें,
वाम हस्त में रुज् कृमियों से भरा पात्र है !
दक्षिण कर का संजीवन घट फूट गया है !
भस्मासुरसा, अणु बल का वरदान प्राप्त कर
वह अपने ही वरद हस्त से भस्म हो गया ![२]

विज्ञान का मानवीकरण करके उसको अपने ही वरदहस्त से नष्ट होता दिखाया गया है। विज्ञान की मूर्ति का वज्र कठोर शरीर अणु विस्फूर्जित विद्युत् किरणों से गल रहा है। उसके श्लथ नथुनों से विष के निःश्वास निकल रहे हैं। उसके वाम हस्त में कृमियों से भरा पात्र है तो दक्षिण कर का संजीवन घट फूट गया है। विज्ञान ने वरदान रूप में अणुबल प्राप्त किया और उसी वरदान से

१. हिन्दी साहित्य कोष, भाग–२, पृ. ३८०
२. शिल्पी, पृ. ७३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वह भस्मासुर के समान भस्म हो रहा है। बहुदर्शी जड़ विज्ञान प्रकृति का अजेय वरदान पाकर मूढ भस्मासुर के समान उन्मत्त हो प्रलय का आह्वान कर रहा है।[१]

माधो गुरु ने अपने अनुयायियों से वंशी का बड़ा अहित कराया और उसके मन को ठेस पहुँचायी। अपने कृत्य की सफलता पर माधो गुरु आनंदित हो रहा था। उसका मानस-शशि उन्मेषपूर्ण, प्रकाशमय एवं आलोकित था। किन्तु धीरे-धीरे उसके मन का उन्मेष कम होता गया। उसका मन किसी अप्रत्याशित व्याधि का शिकार होता गया। इस मानसिक परिवर्तन को राहु ग्रसित शशि का बिम्ब दिया गया है—

शोषण कर युग कवि के चेतस का
रस प्रकाश से हो नव उन्मेषित
श्रेष्ठ सर्जना कर, गुरु मानस शशि
हुआ शनैः फिर राहु कबंध ग्रसित ![२]

महात्मा गांधी जी ने नमक पर लगाये गये लगान के विरोध में सत्याग्रह कर विजय पायी थी। गाँधी जी को दांडी यात्रा पर बढ़ते हुए देख कर उनकी कल्पना अगस्त्य के रूप में की गयी है। देवासुर-संग्राम में जब दानव सागर में जाकर छिप गये और सागर ने भी अगस्त्य को क्षुब्ध कर दिया तो वे सागर को ही पी गये।[३] गाँधीजी अगस्त्य ऋषि के समान लवण सिन्धु को अंजलि पुट में भर हँसते हुए पी गये—

कौन चल रहा वह नर भूधर
जन धरणी पर ऊर्ध्व चरण धर ?
ऋषि अगस्त्य सा लवण सिंधु को
पी हँस हँस, अंजलि पुट में भर ![४]

पन्तजी के पास पौराणिक परिकल्पनाओं का अक्षय भंडार है। दैववश पराधीनता के वश में पड़ कर कष्ट अनुभव करते भारत देश को दलदल में फँसे ऐरावत[५] का बिम्ब दिया गया है तो मानस की गहराई में पड़े अन्धकार के पर्वत को समुद्र की गहराई में पैठे मैनाक[६] का रूप प्रदान किया गया है। विद्युल्लताओं के लिए रंभा एवं उर्वशी[७] का उपमान प्रयुक्त हुआ है। मानव में अद्‌भुत जीवनशक्ति का सागर उद्वेलित हो रहा है और युग-चेतना को उसका मंथन करता दिखा कर प्राचीन समुद्र-मंथन का स्मरण कराया गया है।[८] समुद्र-

---

१. लोकायतन, पृ. २७४
२. लोकायतन, पृ. ५११
३. हिन्दी कथा कोष, पृ. ३
४. लोकायतन, पृ. ८२
५. लोकायतन, पृ. ४८
६. कला और बूढ़ा चाँद, पृ. १२८
७. वही, पृ. १२९
८. स्वर्ण धूलि, पृ. ९८–९९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मंथन से सम्बन्धित बिम्ब कई स्थानों पर देखे जा सकते हैं।[1] समुद्र-मंथन से प्राप्त अमृत घट को मोहिनी रूप में भगवान ने दानवों से छीन कर देवों को पिलाया था। इस पौराणिक घटना का बिम्ब 'सौवर्ण' में आया है।[2] सन् १९६३ में चीन का हिमालय प्रदेश में जो आक्रमण हुआ था, उसे रावण के द्वारा हर-गिरि को हिलाने का पौराणिक बिम्ब दिया है।[3] पन्त काव्य में प्राप्त ये सारे पौराणिक बिम्ब कवि के गम्भीर अध्ययन, मनन-चिन्तन एवं आस्था के प्रतीक हैं। ऊपर के विवेचन से यह स्पष्ट होगा कि पन्त ने पौराणिक कल्पना का प्रत्यक्ष उपयोग बहुत कम किया है और उस वर्ग की उपमाएँ एवं उत्प्रेक्षाएँ अधिक अपनायी हैं।

६. सांस्कृतिक बिम्ब

छायावादी काव्य मूलतः सांस्कृतिक काव्य है। उसमें भारतीय संस्कृति के प्रति चिरन्तन आस्था एवं पूज्य भाव प्रकट हुआ। छायावादी कवियों में पन्त का भारतीय संस्कृति के प्रति गाढ़ अनुराग है। यही कारण है कि उनके नारी-चित्रण में बाह्य-सौन्दर्य की अपेक्षा सांस्कृतिक सौन्दर्य का उद्घाटन अधिक हुआ। भारतीय सांस्कृतिक जीवन, धार्मिक भावना, वेष-भूषा, आचार-विचार से सम्बन्धित अनेक मानव-बिम्बों की उन्होंने अवतारणा की है।

भारतीय संस्कृति में नारी के प्रति पूज्य भाव निहित है। उसे सात्विकता का साकार रूप माना गया है। नारी का स्पर्श जीवनदायक है और उसका संसर्ग पाकर पुरुष पुण्य-लाभ करता है—

तुम्हारे छूने में था प्राण,
संग में पावन गंगा स्नान;
तुम्हारी वाणी में कल्याणी!
त्रिवेणी की लहरों का गान।[4]

कवि की नायिका के कर-स्पर्श में असीम जीवनी-शक्ति है, वह मृतक को भी स्पर्श की संजीवनी शक्ति से प्राण दे सकती है। उसकी संगति से पुरुष पावन, पवित्र एवं शान्त भाव से युक्त हो जाता है, जैसे कि गंगा-स्नान से मनुष्य का मल दूर होता है और वह सात्विक बन जाता है। गंगा-स्नान मोक्ष का साधन है। नायिका के संग में कवि अनिर्वचनीय आनन्द प्राप्त करता है। उसकी वाणी मंगलदायिनी, मृदुल एवं पावन है लगता है त्रिवेणी की लहरों

---

१. लोकायतन, पृ. ६, ५७१
२. सौवर्ण, पृ. २५
३. लोकायतन, पृ. १७५
४. पल्लव, पृ. ७२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

की मृदुल ध्वनि हो। इसमें 'त्रिवेणी' एवं 'गंगा-स्नान' भारतीय संस्कृति एवं धार्मिक भावना के उपकरण हैं।

कवि नारी-सौन्दर्य की विराटता, पावनता एवं सुकुमारता से परिचित है। वह अपने लघु रूप में अनन्त सिंधु की विराटता लिये है। उसकी सुरीली वाणी में समस्त संगीत का स्वर-लय समाहित है। वह एक छोटी-सी कलिका है, जिसमें अखिल वसन्त की सुगन्धि, मधु, सौन्दर्य एवं रमणीयता का वास है। वह इस पृथ्वी में स्वर्ग का साकार रूप है। स्वर्गीय सुषमा, आनन्दानुभूति एवं पावनता लिये वह धरा पर विचर रही है, संसार में स्वर्ग की आभा फैला रही है—

बिन्दु में थी तुम सिन्धु अनन्त
एक सुर में समस्त संगीत;
एक कलिका में अखिल वसन्त
धरा में थी तुम स्वर्ग पुनीत ![1]

सुर, संगीत आदि भारतीय सांस्कृतिक उपकरण हैं और स्वर्ग की पुनीत कल्पना भारतीय धार्मिक विश्वास पर आधारित है। अतः कवि ने नारी की सांस्कृतिक गरिमा का बिम्ब अंकित किया है। 'सिन्धु-अनन्त' एवं 'अखिल वसन्त' मूर्ति-कल्पना में सहायक तत्व हैं। किन्तु 'संगीत' और 'स्वर्ग' अमूर्त उपकरण हैं, इन उपमानों से नारी की सात्विकता का प्रभाव मन पर पड़ता है।

कवि ने अपनी भावी पत्नी की मोहक कल्पना करके उसके शैशव का बिम्ब अंकित किया है—

जननि अंचल में झूल सकाल
मृदुल उर कम्पन सी वपुमान,
स्नेह सुख में बढ़ सखि ! चिरकाल
दीप की अकलुष शिखा समान।[2]

कवि की भावी प्रेयसी अभी शिशु है, जो अपनी माता के अंचल में खेलती-कूदती सुख अनुभव कर रही हैं। उसका शरीर 'मृदुल उर कंपन' सा है। शरीर के लिए 'उर कंपन' अमूर्त उपमान कोई मूर्त रूप खड़ा नहीं करता, किन्तु उसके द्वारा शरीर की मृदुलता, कोमलता का आभास प्राप्त होता है। उसके शारीरिक विकास को 'दीप की अकलुष शिखा' का उपमान दिया गया है। दीपशिखा पवित्र ज्योति का प्रतीक है। दीपशिखा अंधकार को मिटाकर प्रकाश फैलाती है। वैसे ही नायिका अपने स्नेह-प्यार से तथा भोले सौन्दर्य से वातावरण

१. पल्लव, पृ. ७३
. गुंजन, पृ. ३९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

को प्रभावित कर रही है, तथा दीपशिखा के विकास के समान वह भी अपने निर्मल शरीर का विकास पा रही है। जननि अंचल, दीप आदि भारतीय सांस्कृतिक जीवन के अंग हैं। जीवन में यह बहुधा देखा जाता है कि घर की स्त्रियाँ दीपशिखा को अंचल की ओट किये बुझने से बचाती हैं। वैसे ही नायिका माता के अंचल की ओट में अपना चिर विकास पा रही है।

नववधू भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग है। भारतीय संस्कृति में उसे लक्ष्मी का पद प्राप्त है। उसके आगमन से घर में सुख-शान्ति छा जाती है, ऐश्वर्य बढ़ता है। वह शोभा, सुख एवं शांति की मंगल किरणें बरसाती हुई ससुराल में आती है। उसका सेंदुर शाश्वत सुहाग का प्रतीक है। वह पति की सहचरी एवं पथ-प्रदर्शिका है। भारतीय संस्कृति में नववधू को जो स्थान प्राप्त है, वह इतर संस्कृति में दुर्लभ है। कवि ने भारतीय संस्कृति के अनुरूप नववधू की कल्पना इस प्रकार की है—

श्री शोभा सुख स्नेह शांति को
मंगल किरणें बरसाओ !
प्रभु का आशीर्वाद तुम्हें, सेंदुर
सुहाग शाश्वत पाओ,
संगच्छध्वं के पुनीत स्वर
जीवन में प्रति पग गाओ ![1]

श्री, शोभा, सुख, स्नेह, शांति की मंगल किरणों से प्रोज्वल, ईश्वर के आशीर्वाद से शाश्वत सुहाग के सेंदुर से शोभित एवं जीवन पर्यन्त पति का साथ न छोड़ने की प्रतिज्ञा से आबद्ध नववधू की मूर्ति-कल्पना भारतीय संस्कृति के सर्वथा अनुकूल है।

(१) सिर से आँचल खिसका
मृदु वेणी लहराती
जब तुम आती
छाया वीथी से
नत सिर, स्मित मुख ।[2]

(२) ऊषा का अवगुंठन पहने
क्या जानें खग पिक से कहने
मौन मुकुल सी, मदु अंगों में
मधु ऋतु बंदी कर लाई थी ![3]

१. स्वर्णधूलि, पृ. ८९
२. किरण वीणा, पृ. १०३
३. स्वर्ण किरण, पृ. ३८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(३) द्वार पर
पीतल के चमचमाते
जल भरे कलश लिए,
सिर पर अंचल दिए
युवती बहू खड़ी है,—
अनत यौवना
बहू ![1]

उपर्युक्त प्रथम अवतरण में सिर पर संभाले आँचल के खिसकने से मृदु वेणी को लहराते नत सिर एवं स्मित मुख नायिका के आगमन का सांस्कृतिक बिम्ब है। सिर का आँचल भारतीय नारी की शोभा है और उसकी पवित्रता का द्योतक भी। वह नम्रता की प्रतिमूर्ति है, इसलिए उसका सिर नत है। स्मित मुख नारी भारतीय सौन्दर्य की साक्षात् प्रतिमा है।

द्वितीय अवतरण में ऊषा का अवगुंठन पहने मौन मुकुल-सी मृदुल अंगों की श्री-शोभा से युक्त यौवना नारी का सांस्कृतिक बिम्ब है। मुकुल का उपमान उसके रूप-लावण्य को व्यंजित करता है, साथ ही उसके तारुण्यागमन का भी द्योतक है। उसके मृदु अंगों में मधु ऋतु—यौवन-वसत का प्रवेश हो गया है। अवगुंठन, मुकुल, मृदु अंग, मधु ऋतु आदि के द्वारा नारी के रूप-सौन्दर्य का मोहक बिम्ब अंकित होता है।

तृतीय अवतरण में प्रातः काल में उठकर पीतल के कलश को धोकर और उसे पानी से भरकर द्वार पर खड़ी किसान की पत्नी का बिम्ब है। भारतीय संस्कृति में घर की बहुओं का पनघट पर जाकर पानी भर लाने का क्रम है। किसान की युवती पत्नी सिर पर आँचल डाले पीतल का चमचमाता जल-भरा कलश लिये हुए है। आँचल, कलश आदि सांस्कृतिक उपकरण हैं।

'युगवाणी' की 'नारी' कविता सामन्ती संस्कृति में पत्नी पति की अनुचरी नारी का रूप प्रस्तुत करती है। उसको सहचरी, सहधर्मिणी एवं अर्द्धांगिनी का पद प्राप्त नहीं हुआ है। सामन्ती संस्कृति ने नारी को शोषिता बना दिया है। वह युग-कारा में बंदिनी है। वह मुख पर अवगुंठन डालकर घर के कोने में खड़ी की गयी प्रतिमा है। अवगुंठन में छिपी, पुरुष की वासना से पीड़ित यह नारी केवल भोग्या है। पुरुष की स्वच्छन्द प्रकृति ने उसपर नैतिकता के आभूषण डाले हैं। उसकी आत्मा नष्ट हो गयी है और कोमल त्वचा मात्र शेष है। गृह के कोने में बैठाई गयी नारी पशु के बंधन सहती है।[2]

---

१. कला और बूढ़ा चाँद, पृ. ८१
२. युगवाणी, पृ. ६४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वह नर की छाया नारी !
चिर नमित नयन, पद विजड़ित,
वह चकित, भीत हिरनी सी
निज चरण चाप से शंकित !
मानव की चिर सहधर्मिणी,
युग-युग से मुख अवगुँठित,
स्थापित घर के कोने में
वह दीपशिखा सी कंपित
करती वह जीवन यापन
युग युग से पशु सी पालित,
बंदिनी काम कारा की
आदर्श नीति परिचालित ।[1]

वैदिक संस्कृति ने जिस नारी को सहधर्मिणी पद पर अभिषिक्त किया था, वही नारी सामन्ती संस्कृति की काम-कारा में बंदिनी है । वह नर की अनुचरी है और आदर्श एवं नीति से परिचालित है । युग-युग से उसके मुख पर अवगुंठन पड़ा है । वह पालित पशु है, उसपर नर का एकाधिकार है । 'नर की छाया' मात्र नारी का रूप प्रस्तुत करते हुए कवि ने कहा है कि उसके नयन नमित हैं, पद विजड़ित हैं । वह चकित, भीत हरिणी-सी रहती है । वह अपने चरण-चाप से भी शंकित है । जैसे हरिणी किसी भी ध्वनिमात्र से शिकारी का अनुमान कर भयविह्वल हो उठती है, वैसे ही नारी अपने ही चरण-चाप से शंकित है । नैतिकता के बोझिल आभूषणों से लदी नारी को स्वच्छन्द चलने का अधिकार नहीं है । उसको चलने-फिरने में भी सतर्क रहना पड़ता है ताकि कोई उसकी गति पर आपत्ति न उठाए तथा शंका न करे । फिर भी 'दीपशिखा' के समान अपनी इच्छाओं एवं कामनाओं को जलाकर वह घर को शोभित करती है, पति एवं बाल-बच्चों को सुखी बनाती है । नर की छाया, नमित नयन, विजड़ित पद, चकित भीत हिरनी, निज चरण चाप से शंकित, मुख अवगुंठित, दीपशिखा-सी कंपित, पशु-सी पालित, काम-कारा की बंदिनी, आदर्श नीति परिचालित आदि इतने सार्थक प्रयोग हैं कि नारी के असहाय, विवश, परतंत्र, कातर स्वरूप का बिम्ब प्रस्तुत करते हैं । 'दीपशिखा' का उपमान उसके निरंतर जल मिटने तथा घर को प्रकाशित करने का रूप सामने लाता है । पालित पशु का उपमान उसकी परतंत्रता, निस्सहायावस्था एवं सामाजिक बंधन का द्योतक है । भीत-हरिणी का उपमान उसकी कातरता, भय-विह्वलता, चंचलता का परिचय देता है । सामन्ती संस्कृति की नारी का इससे स्पष्ट बिम्ब शायद ही कहीं मिल

१.युगवाणी, पृ. ६६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जाएगा। नारी के प्रति इसी भोगवादी दृष्टिकोण का दूसरा बिम्ब नीचे की पंक्तियों में उपलब्ध होता है—

तुम क्या नर थे, मैं क्या नारी,
वधू अधीना, पति अधिकारी,
तुम ने मेरी फूल देह पर
तप्त लालसा सेज सजाई ![1]

पति-पत्नी का संबंध समानता का नहीं, अधिकारी और अधीना का है। नर नारी पर अपना अधिकार स्थापित करता है और उसके स्वतंत्र अस्तित्व को मिटा देता है। उसे केवल वासना-तृप्ति का साधन बनाया जाता है। नर उसकी फूल-देह पर तप्त लालसा की सेज सजाकर कामाग्नि में जला देता है। यहाँ नर की वासना-ज्वाला में स्वयं मर मिटती नारी का सजीव बिम्ब है।

अदेह संदेह के कारण वियुक्त प्रेमी को प्रिया का दर्शन सुदर्शन चक्र के समान डरावना लगता है—

घूमता है सम्मुख वह रूप
सुदर्शन हुए सुदर्शन चक्र
ढाल सा रखवारा शशि आज
हो गया हा ! असि सा चक्र ![2]

वियुक्त प्रेमी के नेत्रों के सम्मुख प्रिया का रूप सुदर्शन चक्र-सा घूम रहा है। मिलन के समय उसका दर्शन सुखद था, किन्तु आज वियोग में उसका रूप सुदर्शन चक्र के समान भयदायक लगता है। संयोग के समय जो चन्द्र ढाल के समान सुखद था, वही चन्द्र वियोग में तलवार के समान प्राणघातक बन गया है। विरह को दीप्त करनेवाले चन्द्र का वर्णन सूर ने भी किया है,[3] किन्तु प्राचीन उपकरण को नवीन बनाकर कहने की पन्त की कला प्रशंसनीय है। यमक एवं उपमा-अलंकार बिम्ब-योजना में सहायक हुए हैं। सुदर्शन चक्र, ढाल और असि भारतीय सांस्कृतिक उपकरणों से गृहीत हैं।

भारतीय संस्कृति में स्त्रीत्व की चरम परिणति मातृत्व में होती है। मातृत्व को पाकर स्त्री अपनी मृदुल इच्छाओं को साकार करती है। उसमें अद्भुत परिवर्तन होता है। उसके उरोज अपनी नवजात संतान के लिए पयोधर बनते हैं। जन्म के थोड़े समय के उपरान्त पुत्र से वंचिता कातर माता का एक बिम्ब इन पंक्तियों में देखा जा सकता है—

---

१. स्वर्ण धूलि, 'मानसी', पृ. १४४
२. पल्लव, पृ. ६२-६३
३. दधि-सुत किरनि भानु भई भुंजें।—सूरसागर सार, पृ. १८७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रात ही तो कहलायी मात,
पयोधर बने उरोज उदार,
मधुर उर इच्छा को अज्ञात
प्रथम ही मिला मृदुल आकार;
छिन गया हाय, गोद का बाल,
गड़ी है बिना बाल की नाल ![1]

गोद के बाल से वंचिता हो सकोच एवं दुःख में गड़ी माता के लिए 'बिना बाल की नाल' उपमान सादृश्य पर आधृत है। पयोधर, गोद का बाल आदि भारतीय मातृरूप को स्पष्ट करते हैं।

'परिवर्तन' कविता में नव-विवाहिता युवती के सहसा विधवा हो जाने की भयावह स्थिति का एक संश्लिष्ट बिम्ब देखा जा सकता है, जिसमें कवि ने चुंबन शून्य कपोलों वाली नववधू के संसार के नष्ट होने का चित्र अंकित किया है और उसे वात-हत-लतिका के समान छिन्नाधार होकर भूमि पर पड़ा अंकित किया है—

अभी तो मुकुट बंधा था माथ,
हुए कल ही हल्दी के हाथ,
खुले भी न थे लाज के बोल,
खिले भी चुंबन-शून्य कपोल;
हाय ! रुक गया यहीं संसार
बना सिंदूर अँगार !
वात-हत-लतिका वह सुकुमार
पड़ी है छिन्नाधार !![2]

प्रस्तुत अवतरण में सांस्कृतिक वस्तुओं के द्वारा स्त्री के सुहाग एवं वैधव्य दोनों दिखाये गये हैं। विवाह के समय वर-वधू के माथे पर मुकुट बाँधे जाते हैं। वधू के हाथ पर मेहँदी लगायी जाती है। प्रथम दो पंक्तियों में वधू के कल ही घटित परिणय का चित्र अंकित होता है। 'खुले भी न थे लाज के बोल' में पति के समीप लज्जा नम्र-मुखी खड़ी वधू का रूप-चित्र है। 'खिले भी चुंबन-शून्य कपोल' से पति-समागम के पूर्व की वधू का रूप प्रस्तुत होता है। किन्तु तुरन्त ही 'बना सिंदूर अंगार' की प्रतीक शैली देखते-देखते विधवा बनी नारी का चित्र लाती है। परिणय का चिह्न सिंदूर वैधव्य के समय अंगार जैसा दग्ध बन गया। वैधव्य की भूमि पर पड़ी तड़पती नारी के लिए वात-हत-छिन्नाधार लतिका का उपमान सादृश्य पर आधारित है। सद्यःपरिणीता वधू के तुरन्त वैधव्य का

१. पल्लव, पृ. १५४
२. वही, पृ. १५४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

संश्लिष्ट बिम्ब प्रभावकारी है। रूपकातिशयोक्ति अलंकार के द्वारा विधवा का रूप अंकित किया गया है। वैसे ही 'सौवर्ण' काव्य-संग्रह में पैरों से लिपटी छाया, छिन्न लता, आदि प्रयोगों के द्वारा वैधव्य की दीन-अवस्था में पड़ी नारी की मूर्ति द्रष्टव्य है।[1]

पन्त-काव्य में पुरुष के कुछ ही सांस्कृतिक बिम्ब देखे जा सकते हैं। महात्मा गाँधी भारतीय सांस्कृतिक व्यक्तित्व से प्रोद्भासित महापुरुष थे। वे दिव्य चेतन युग-पुरुष थे, जो जीर्ण जाति-मन के खंडहर का अंधकार हरण कर अन्तर्मुख हो गये। उनके निधन को नक्षत्र-पतन का रूप दिया गया है—

अंतर्धान हुआ फिर देव विचर धरती पर,
स्वर्ग रुधिर से मर्त्यलोक की रज को रंग कर!
टूट गया तारा, अंतिम आभा का दे वर,
जीर्ण जाति मन के खंडहर का अंधकार हर
अंतर्मुख हो गई चेतना दिव्य अनामय
मानस लहरों पर शतदल सी हँस ज्योतिर्मय![2]

इस अवतरण में गाँधीजी के जीवन तथा मृत्यु के अनेक खण्ड बिम्ब रखे गये हैं। गाँधीजी देवोपम व्यक्तित्व लिये हुए थे। उन्होंने स्वर्ग रुधिर से मर्त्यलोक की रज को रंग दिया। वे एक नक्षत्र थे जो संसार को अपनी अंतिम आभा का वर देकर टूट गया। उन्होंने अपनी आभा में जीर्ण जातियों में जकड़े मन के खंडहर का अंधकार दूर किया। उनकी दिव्य-चेतना मानस लहरों पर ज्योतिर्मय शतदल के समान हँसकर अन्तर्मुख हो गयी। उनकी चेतना दिव्य एवं अनामय है।

महात्मा गांधीजी के समान ही महर्षि अरविंद भी दिव्य चेतन थे। वे संसार को दिव्य जीवन देने आये थे। वे ज्योतिस्वरूप एवं ज्ञानी थे। उनका बिम्ब देखिए—

स्वर्मानस के ज्योतित सरसिज,
दिव्य जगत जीवन के वरद्विज,
चिदानन्द के स्वर्णिम मनसिज,
ज्योतिधाम,
सज्ञान प्रणाम।[3]

श्री अरविंद के लिए ज्योतित सरसिज, जीवन के वरद्विज, ज्योतिधाम आदि उपमान प्रयुक्त हुए हैं। वे चित्-आनन्द स्वरूप स्वर्णिम कमल थे और दिव्य

१. सौवर्ण, पृ. ८२
२. युगपथ, पृ. ६७
३. स्वर्णधूलि, पृ. ४६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जगत्-जीवन के वरद्विज थे। ज्योतित सरसिज, स्वर्णिम मनसिज, ज्योतिधाम आदि के द्वारा उनका तेजोज्वल स्वरूप दर्शाया गया है। श्लेष, रूपक एवं उल्लेख के द्वारा अरविंद का देवतुल्य व्यक्तित्व प्रकट किया गया है।

भारतीत संस्कृति में तापस का श्रेष्ठ स्थान है। हमारी संस्कृति का उद्गम-स्रोत एकान्त वनप्रदेश में तपस्यालीन ऋषियों के ज्ञानदर्शन से ही हुआ है। इसलिए भारतीय संस्कृति आर्ष संस्कृति के नाम से प्रख्यात हुई। तपस्या के द्वारा मन का ऊर्ध्व संचरण कर दिव्य ज्ञान-ज्योति प्राप्त करना हमारी संस्कृति का ध्येय रहा है। एक तापस के बिम्ब की अवतारणा की गयी है—

यहाँ आत्मद्रष्टा तापस बैठे निर्जन में
पद्मासन स्थित, केन्द्रित दृग नासाग्र भाग में,
आरोहण कर रहे ऊर्ध्व श्रेणियाँ मानस की
प्राणों की सतरंग छायाएँ छीलकर निखिल,
तन्मय, विश्व विरत, अखण्ड ब्रह्माण्ड सत्य को
बौने - सा अंगुष्ठ मात्र पा, आप्त काम मन।[१]

पहले कवि तापस का रूप-वर्णन करते हुए कहता है कि निर्जन में आत्मद्रष्टा तापस बैठे हैं। वे पद्मासन स्थित हैं और उनके दृग नासाग्र भाग पर केन्द्रित हैं। इस आत्म-साधन के फलस्वरूप वे प्राणों की सतरंग छायाओं का अतिक्रमण कर मन के स्तर-सोपानों का ऊर्ध्व संचरण कर रहे हैं। मन के अंतिम स्तर पर पहुँचकर ब्रह्म सत्य का बौना-सा रूप पाकर दिव्य ज्योति में लीन हो गये एवं विश्वविरत हो गये। उनके मन की संपूर्ण कामनाएँ शान्त हो गयीं। ब्रह्म सत्य के सूक्ष्मतम रूप को मूर्तित करने के लिए 'बौने-सा अंगुष्ठ मात्र' का उपमान प्रस्तुत किया गया है। इस प्रकार निर्जन में दृग को नासाग्र पर टिकाए पद्मासनस्थ आत्मद्रष्टा एवं आप्तकाम योगी भारतीय संस्कृति के अभिन्न अंग हैं।

महात्मा गान्धी के नेतृत्व में अहिंसात्मक सत्याग्रह-आन्दोलन ज़ोरों पर चल रहा था तो अंग्रेज़ों का दमनचक्र भी भीषण रूप ले रहा था। एक ओर विनत अहिंसा थी तो दूसरी ओर पशु का दर्प था। विनत अहिंसा की वीर नर-बलि होती जा रही थी और जैसे-जैसे नर-बलि होती गयी वैसे-वैसे अंग्रेज़ों का पशु-दर्प उत्तेजित होता गया। इस बात को धार्मिक प्रतीकों के द्वारा बिम्ब रूप में यों प्रस्तुत किया गया है

चरु की स्निग्ध घृताहुति पा ज्यों
हो उठती मखवह्नि प्रज्वलित,
विनत अहिंसा की नर बलि पा
पशु का दर्प हुआ उत्तेजित।[२]

---

१. सौवर्ण, पृ. १२

२. लोकायतन, पृ. ९०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अहिंसात्मक प्रतिरोध में लगी भारतीय जनता की निर्दय बलि पाकर अंग्रेज़ों का पाशविक अहं ऐसे उत्तेजित होता गया जैसे स्निग्ध घृताहुति पाकर मख-वह्नि प्रज्वलित होती है। चरु, घृताहुति, मख-वह्नि आदि भारतीय संस्कृति के उपकरण हैं। 'विनत अहिंसा' में विशेषण-विपर्यय का सौन्दर्य देखने लायक है। नर-हत्या में तल्लीन अंग्रेज़ों के लिए पशु का उपमान साधर्म्य को दृष्टि में रखकर दिया गया है। पर बढ़ती हुई पशुवत्ति के लिए धार्मिक भावना पर आधारित मख-वह्नि के प्रज्वलन का बिम्ब औचित्य का निर्वाह नहीं कर पाता।

झाँझ डफ-चंग मुरज बज संग
हृदय में भरते मुक्त उमंग,
थिरकते लतिका से लच अंग
ठुमकते पद बन नृत्य तरंग !
लोल लहरों का हो लघु लास
झलकते धूप छाँह के रंग,[1]

प्रस्तुत अवतरण में सांस्कृतिक केन्द्र के छात्र-छात्राओं के नृत्य-वाद्य-संगीत के कार्यक्रमों का चित्रण हुआ है। झाँझ, डफ, चँग, मुरज आदि वाद्ययंत्र भारतीय संस्कृति से संबंधित हैं। नृत्य-निरत उनके अंग लतिकाओं के समान थिरकते थे। 'लोल लहरों का लघु लास' में वर्णाश्रित श्रुति मधुरता है। 'धूप-छाँह' में रंग-संवेदना, 'लोल' में स्पर्श्य संवेदना एवं झाँझ, डफ, चंग, मुरज में श्रव्य संवेदना के मिश्रण से साँस्कृतिक बिम्ब को ऐन्द्रियता प्रदान की गयी है।

वंशी के स्वदेशागमन पर उनके भव्य स्वागत का आयोजन किया गया। शंख-ध्वनि बजाकर उनका अभिवादन हुआ। स्त्री-पुरुषों का सम्मिलित स्वागत-गायन संपन्न हुआ। उनकी अगवानी के लिए मार्ग कुसुमित बंदनवारों से तथा केन्द्र का प्रांगण मंगल घट से सजाया गया। शंख, अभिवादन, गायन, बंदनवार एवं मंगल घट जैसे साँस्कृतिक उपकरणों पर आश्रित उनके स्वागत का चित्र देखिए—

शंख ध्वनि से कर सित अभिवादन
गाया स्त्री नर ने स्वागत गायन,
कुसुमित वंदनवारों से रच पथ
मंगल घट से सँजो शिविर प्रांगण।[2]

अभिवादन को 'सित' बनाकर रंग संवेद्य कर दिया गया है। 'सित' रंग शुद्धता, पवित्रता एवं सात्विकता का सूचक है।

कवि ने नवमानवता की कल्पना की है। उसकी कल्पना है कि नव मानवता उच्च साँस्कृतिक धरातल पर पहुँच जाएगी, जहाँ स्त्री-पुरुष भौतिक-शारी-

---

१. लोकायतन, पृ. २८३ २. लोकायतन, पृ. ४३१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

रिक मोह से कोसों दूर आत्मिक सौन्दर्य के प्रेमी बनेंगे। ऐसी नवमानवता के आविर्भाव की कल्पना करते हुए कवि का कथन है—

वन-फूल-नग्न शोभा देही
तिरते पुष्करिणी में स्त्री नर
वे पद्म पत्रवत् जल में रह
रहते जल कर्दम से ऊपर ![1]

स्त्री-पुरुषों के पुष्करिणी तीर्थ में नग्न शोभा देही बन नीरांजन करने का यह बिम्ब है। वे जल में तैर रहे हैं, किन्तु आचरण से पवित्र हैं। जल में वे कमल पत्रवत् रहते हैं और जल कर्दम से ऊपर हैं। कमल कीचड़ में पैदा होता है, किन्तु उसके पत्र जल के ऊपरी तल में ही फैले रहते हैं, जिस कारण कमल-पत्रों पर कीचड़ का प्रभाव नहीं पड़ता। उसी कारण से नवमानवता में स्त्री-पुरुष कर्दम-जल में रहते हुए भी कर्दम से असंपृक्त रहेंगे। जल-कर्दम देह-बोध से ओतप्रोत संसार का प्रतीक शब्द है। पद्म-पत्र आत्मबोध का प्रतीक है। पुष्करिणी, पद्म आदि के द्वारा साँस्कृतिक बिम्ब की अवतारणा हुई है—

आओ, भू को आज बुहारें
युग-युग का अघ कर्दम झारें,
जीवन का गृह प्रथम सँवारें,
जन श्रम से शोभित हों दिक् ![2]

प्रस्तुत पंक्तियों में बिम्ब साँस्कृतिक जीवनगत रीति-रिवाज़ पर आधृत है। घरों में जब मैल अधिक हो जाता है तब झाडकर फर्श को बुहाकर स्वच्छ एवं शुद्ध कर दिया जाता है। इसी साँस्कृतिक प्रथा के आधार पर कवि का कथन है कि भूमि युग-युग के पाप रूपी कीचड़ से गंदी हो गयी है। अब उसको झाड़ना-बुहारना आवश्यक है। इस प्रकार जीवन के गृह को स्वच्छ संवारना है और जन-श्रम से दिशाओं को शोभित करना है।

७. साहित्यिक बिम्ब

इसमें साहित्यिक प्रवृत्तियों को मूर्तित करने का प्रयास किया जाता है। छायावादी मुक्त कल्पना की प्रतिक्रिया के रूप में साहित्य में गद्य-काव्य का प्रणयन आरंभ हुआ, जिसमें कवियों का ध्यान नये-नये बिम्बों को उभारने की ओर केन्द्रित होता गया। आधुनिक बिम्बवादियों पर प्रहार करते हुए निम्न पंक्तियाँ लिखी गयी हैं—

छायावादी मुक्त कल्पना
गद्यबद्ध बन गल्प जल्पना,
शाब्दिक रंगोली सँवार कर,

१. लोकायतन, पृ. ६५५ २. स्वर्णधूलि, पृ. १५७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

फूल बेल बूँटे उतार कर,
अनगिन बिम्बों को उभार कर
रचती नव अल्पना
शारदा के आँगन में ![1]

छायावादी मुक्त कल्पना के विरोध में काव्य को गद्यात्मक कोटि में परिणत किया गया, जिसको काव्य कहना भी हास्यास्पद है। छायावादी कविता-कामिनी फूल-बेल बूटों का परिधान पहने थी, जिनको उतार कर आजकल शाब्दिक रंगोली संवारने तथा अनगिनत बिम्बों को उभारने में कवियों की प्रवृत्ति जागरूक है। इस प्रकार शारदा के पवित्र प्रांगण में बकवास हो रहा है। छायावादी काव्य-प्रयोगों को फूल-बेल-बूटों के द्वारा चित्रात्मक बनाया तो परवर्ती बिम्बवादी प्रवृत्तियों के लिए शाब्दिक रंगोली का उपमान देकर उन्हें चित्र-सौन्दर्यमय कर दिया गया है। छायावादी 'मुक्त-कल्पना' के प्रति आस्था तथा परवर्ती 'गल्पना' तथा 'नव अल्पना' पर व्यंग्य स्पष्ट है। उसी में आगे वर्तमान लय-गतिहीन कविता को मंथर अति मंथर रेंगते कछुए-सा रूपायित किया गया है।[2]

रामचरण अवलंब बिना परमार्थ सिद्धि की—
पुण्याशा वारिद की गिरती बूँद पकड़कर
नभ में उड़ने की अभिलाषा सी मिथ्या है ![3]

यहाँ तुलसी-साहित्य की ओर संकेत है। तुलसी ने रामाचरण का आसरा लेकर परमार्थ सिद्धि का पथ प्रशस्त कर जनता के हृदय में भक्ति-गंगा बहायी और राम चरणों पर भक्ति रखे बिना परमार्थ सिद्धि की दुराशा लेकर चलने-वालों पर व्यंग्य करते हुए कहा है कि उनकी यह दुराशा वर्षा की गिरती बूँद पकड़कर नभ में उड़ने की अभिलाषा सी मिथ्या प्रमाणित होगी। वर्षा की गिरती बूँद पकड़कर कोई नभ में नहीं पहुँच सकता, उसी प्रकार राम के प्रति सच्ची प्रीति के बिना कोई मुक्ति पा नहीं सकता। लोकोक्ति मूलक यह बिम्ब राम-काव्य की उपदेशात्मक प्रवृत्ति का द्योतक है।

शबद अनाहद के कबीर यह, अकथ प्रेम का
गुड़ खाकर, गूँगे-से सदा रहे मुसकाते ![4]

कबीरदास गोरखपन्थ की योगसाधना का अनुसरण कर अनहद नाद में तन्मय होने तथा प्रेम-रस का पान करने का सन्देश देते रहे। वे ईश्वर को प्रेम

---

१. वाणी, पृ. ६७
२. वाणी, पृ. ६८
३. सौवर्ण, पृ. ७३
४. वही, पृ. ७४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्वरूप तथा ईश्वरानुभूति को 'गूँगे का गुड़' बता गये थे। अकथनीय प्रेम का गुड़ खाकर गूँगे-से मुस्कराते कबीर का उपर्युक्त बिम्ब व्यंगात्मक है। लोकोक्ति-मूलक बिम्ब-कल्पना का यह सुन्दर उदाहरण है।

कैसे कह दूँ इड़ा लुब्ध युग मनु से
श्रद्धा संग वह करे मेरु-नग रोहण,
आत्मबोध की निष्क्रिय समरस स्थिति को
जन भू-पथ पर करना सक्रिय विचरण ![1]

उपर्युक्त अवतरण में जयशंकर प्रसाद जी की 'कामायनी' की कथा को मूर्तित किया है। कामायनीकार ने यह दिखाया है कि मनु श्रद्धा को छोड़कर सारस्वत प्रदेश की रानी इड़ा पर लुब्ध हो गये तथा उसपर बलात्कार भी किया है। फलतः मनु का सारस्वत प्रदेश की जनता के साथ भयंकर संघर्ष हुआ और उसके उपरांत मूर्छित मनु को श्रद्धा ने अपनी सेवा से स्वस्थ बनाया तथा मनु श्रद्धा के संग हिमालय का आरोहण कर शिव-लीला की समरस स्थिति में लीन हो गये। पन्त जी की दृष्टि में मनु की समरस स्थिति आत्म-बोध की निष्क्रिय स्थिति है और इसका जनता में प्रचार करना व्यर्थ है।

'लोकायतन' में रामकथा की नयी व्याख्या प्रस्तुत कर उसका युगानुरूप बिम्ब प्रस्तुत किया गया है, जिसको साहित्य-बिम्ब की कोटि में रखा जा सकता है। संपूर्ण रामायण काव्य को कृषियुग का रूपक स्वीकार करते हुए तथा सभी पात्रों, घटनाओं को प्रतीक मानते हुए कवि ने यह दर्शाया है कि सीता जन भू-हृदय, राम जन के बल, प्रीति-प्रणत लक्ष्मण अनन्त पौरुष बल, शीलमूर्ति ऊर्मिला विरह-रस गागर है। भरत कृषि-युग का महत् आदर्श चक्र है। राजा दशरथ सत्य तथा जनक मनस्-स्थिति के प्रतीक रूप हैं। कैकेई कटु सापत्य का प्रतीक है। हनुमान प्राणों का अजेय पौरुष है। रावण अहंवृत्ति तथा लंका विषय-वासनाओं से परिचालित दुर्मति-गढ़ है, जहाँ हृदय की चित्वृत्ति सीता बंदिनी कर दी गयी थी। निशिचर, वनचर पशु-युग की क्रूरता स्वरूप हैं। हनुमत् प्रेरित जनमन में चेतना के जागते ही अविद्या का भय-तम मिट गया और सीता रूपी चित्-शक्ति मुक्त हो गई। धनुर्भंग एक सांस्कृतिक घटना है, जिसमें पत्थर-हृदय गलकर उर्वर अहल्या का जन्म हुआ। सोने का मृग मन से पावन मूक नारी के रजतन का मूल्यांकन मात्र है तथा लक्ष्मण-रेखा घर-आँगन की सीमा-रेखा है, जिसको पार करना लोक-दृष्टि का लांछन है।[2] इस प्रकार रामायण काव्य की युग-सापेक्ष व्याख्या प्रस्तुत कर साँगरूपक के द्वारा उसका एक बिम्ब तैयार किया गया है।

---

१. लोकायतन, पृ. ७
२. लोकायतन, पृ. १५–१६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

८. आर्थिक बिम्ब

आर्थिक स्थिति एवं अर्थ-व्यवस्था पर आधृत बिम्ब इस विभाग के अन्तर्गत आते हैं। भारतीय ग्राम आर्थिक विषमता से उत्पन्न निर्धनता एवं दीनता से अभिशप्त हैं। यहाँ का वातावरण म्लानता, उदासी एवं क्षुब्धता से परिपूर्ण है। लोग नारकीय कुत्सित एवं गर्हित जीवन बिताने के लिए बाध्य हैं—

जहाँ दैन्य जर्जर असंख्य जन
पशु जघन्य क्षण करते यापन
कीड़ों-से रेंगते मनुज शिशु
जहाँ अकाल वृद्ध है यौवन ![1]

यहाँ ग्रामीण लोगों का रूप जर्जर एवं दैन्य बताया गया है। दीनता एवं अभावों से पीड़ित हो जीवन-यापन करते लोगों के लिए 'पशु' उपमान आया है। 'पशु-जीवन' शब्द दीन लोगों का नग्न चित्रण प्रस्तुत करता है। उनके घर 'खोह' के समान गंदगी और मलिनता लिए हुए हैं। वहाँ चलने-फिरने को पर्याप्त जगह नहीं है। असभ्यता एवं पशुता का वासस्थान ग्राम जघन्य एवं नारकीय है। वहाँ जब शिशु चलते हैं तब ऐसा लगता है मानो कीड़े रेंग रहे हैं। यहां यौवन अल्पकाल में ही वृद्धावस्था की शरण लेता है। लाक्षणिक शैली में यह बताया गया है कि युवक युवतियाँ जीवन के अभावों में घिसते हुए असमय में ही वृद्धावस्था के शिकार बनते हैं। आगे कवि ग्रामीण जीवन को एक बृहत् ग्रन्थ के रूपक में प्रस्तुत करता है।

बृहद् ग्रंथ मानव जीवन का, काल ध्वंस से कवलित,
ग्राम आज है पृष्ठ जनों की करुण कथा का जीवित !
युग युग का इतिहास सभ्यताओं का इसमें सचित,
संस्कृतियों की ह्रास वृध्दि जन शोषण से रेखांकित
घर घर के बिखरे पन्नों में नग्न, क्षुधार्त कहानी
जन मन के दयनीय भाव कर सकती प्रकट न वाणी ![2]

मानव-जीवन की कल्पना ग्रन्थ रूप में की गयी है, जो समय की गति में पड़कर ध्वंस्त हो गया है। इस ग्रन्थ में ग्राम करुण कथा का पृष्ठ है, जिस पर युग–युग की सभ्यताओं का इतिहास लिखा हुआ है। संस्कृतियों का पतन उत्थान एवं जनशोषण उस पर रेखांकन हैं (पुस्तकों के पृष्ठों पर कुछ महत्वपूर्ण विषयों को रेखांकित किया जाता है।) ग्राम के इधर-उधर फैले घरों को छिन्न-भिन्न बिखरे पन्ने माना गया है, जिनपर नग्न क्षुधार्त कहानी लिखी हुई है। इधर-उधर फैले घरों को बिखरे पन्नों के रूप में कल्पित करके उनका दृश्य सजीव

१. ग्राम्या, पृ १३
२. ग्राम्या, पृ १४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हो उठा है और उन पृष्ठों को क्षुधार्त कहानी से भरा बताकर उन घरों में भूख से तड़पती मानवता की ओर संकेत किया गया है। सारांश में उपर्युक्त अवतरण ग्राम की आर्थिक दुःस्थिति का बिम्ब प्रत्यक्ष करता है।

ग्रामीण युवती का यौवन क्षणिक या अल्पकालिक होता है क्यों कि भर-पेट भोजन के अभाव में थोड़े दिनों में ही वह गलित यौवना हो जाती है। यौवन में ही जीवन के अभावों से जूझती हुई वह वृद्धा-सी दिखाई देने लगती है—

रे दो दिन का
उसका यौवन !
सपना छिन का
रहता न स्मरण !
दुखों से पिस
दुर्दिन में घिस
जर्जर हो जाता उसका तन !
ढह जाता असमय यौवन धन !
बह जाता तट का तिनका
जो लहरों से हँस खेल कुछ क्षण !![१]

लहरों से सिंचित तटवर्त्ती तिनके के साथ उसके अस्थायी यौवन की तुलना उचित कल्पना है। उसका यौवन एक क्षणिक सपना है, जो आगे स्मरण तक नहीं रह पाता। जीवन के दुखों, अभावों में पिसा तथा दुर्दिन में घिसा उसका तन जर्जर हो जाता है और यौवन असमय में ही ऐसा ढह जाता है, जैसे कि सरिता के तट का तिनका थोड़ी देर लहरों से हँस-खेलकर उसी में बह जाता है। दृष्टान्त अलंकार के द्वारा ग्राम-युवती के क्षणिक यौवन का बिम्बांकन किया गया है।

ग्रामीण जनता की आर्थिक अकिंचनता उसकी अन्दर को धँसी आँखें ही व्यक्त कर देती हैं। आर्थिक कठिनाई का धक्का खाकर उसकी आँखें अंधकार की अतल गुहा-सी डरावनी लगती हैं। समाज में जो वर्ग-सभ्यता का मन्दिर खड़ा है, उसके निचले तल के वातायन-सी वे आँखें बाह्य संसार को उसकी निर्ममता, निष्ठुरता एवं क्रूरता के रहस्य का भंडाफोड़ कर देती है —

अंधकार की अतल गुहा सी
अह, उन आँखों से डरता मन,
वर्ग सभ्यता के मंदिर के
निचले तल की वे वातायन।[२]

---

१. ग्राम्या, पृ. १९
२. ग्राम्या, पृ. २६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

'अंधकार की अतल गुहा' का उपमान अंदर को धँसी आँखों के लिए इतना सार्थक है कि वह आँखों की गहराई, अंधकार, भीकरता एवं निस्तेज को व्यक्त करती है। साथ ही वर्ग–सभ्यता के मन्दिर के निचले तल का वातायन कहकर कवि ने वर्ग–सभ्यता के खोखलेपन की भी व्यंजना की है।

'युगवाणी' में 'कृषक' पर जो कविता है, वह उसके आर्थिक पराभव का चित्रण है। वह कर की चक्की में पिसता जाकर जर्जर शरीर है, उसके सिर पर ऋण का भारी बोझ है। पैतृक संपत्ति के रूप में थोड़ी-सी भूमि उसके पास है, जिसपर उसका जीवन किसी न किसी तरह ढोया जा रहा है। वह संसार भर के दैन्य, दुर्भाग्य, दुरित यातना एवं दुःख का शिकार होता हुआ भी निरंतर श्रम करता है और धनिकों का वैभव उसके कठिन श्रम-जल का फल है। धनिक लोग पसीने का लाभ उठाकर धन-संचय करते हैं और उसे दुर्भाग्य भोगने को छोड़ देते हैं।

> कर जर्जर, ऋण ग्रस्त, स्वल्प पैत्रिक स्मृति भू-धन,
> निखिल दैन्य, दुर्भाग्य, दुरित, दुख का जो कारण।
> वह कुबेर निधि उसे, — स्वेद सिंचित जिसके कण,
> हर्ष शोक की स्मृति के बीते जहाँ वर्ष क्षण![1]

युगांत में श्रमजीवियों के भारी पैर धर लौटने का चित्र भी द्रष्टव्य है —

> ये नाप रहे निज घर का मग
> कुछ श्रम जीवी धर डगमग डग,
> भारी है जीवन! भारी पग![2]

'भारी है जीवन', 'भारी पग' श्रमजीवियों की दिनभर की थकावट एवं अस्त-व्यस्त शिथिलता का यथार्थ चित्र है। दिन भर के घोर अध्यवसाय एवं रिक्त पेट के कारण वे चलने में सर्वथा असमर्थ हैं, किन्तु संध्या तक उन्हें घर पहुँचना है, क्योंकि उनकी कमाई की प्रतीक्षा में घर के लोग बैठे हैं। इसलिए अशक्त होते हुए भी अपने डगमगाते भारी पैरों को बरबस खींचते-खींचते वे आगे बढ़ने के लिए प्रयत्नशील हैं। उनको धीमे से चलते देखकर लगता है कि वे घर का रास्ता अपने कदमों में नापते जा रहे हैं।

'रजतशिखर' में शोषित मानवता के कई बिम्ब अंकित हुए हैं। शोषित जनगण अभिशापित, हड्डियों के ढांचे, नग्न-क्षुधित, रक्तक्षीण, निष्ठुर, विषण्ण हैं,[3] वे भूत के कंकाल, अवचेतन के प्रेत, लोभी असुरों से पीड़ित है।[4] झाड-फूंस की झोंपड़ियाँ भग्न घरौंदों के समान दिखाई देती हैं। इनमें रहनेवाले युग-युग से दैन्य अविद्या के भीषण अंधकार से ग्रस्त एवं त्रस्त हैं। वे नंगे-भूखे

---

१. युगवाणी, पृ. ५१
२. युगपथ, पृ. २५
३. रजतशिखर, पृ. ५९
४. वही, पृ. ६०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अस्थिपंजर हैं और जीवन का भार ढोते हुए रेंग रहे हैं। यह ग्राम वर्ग-सभ्यता का निचला नरक है, जहाँ अनादि काल से अन्न-वस्त्र का घोर अभाव छाया हुआ है।

झाड फूँस के भग्न घरौंदों को, युग युग से
दैन्य अविद्या के तम से जो त्रस्त ग्रस्त हैं!
नंगे भूखे रुग्ण अस्थि पंजर गत युग के
जहां रेंगता भार ढो रहे भू जीवन का
वर्ग सभ्यता के उस निचले नरक में, जहाँ
अन्न वस्त्र का घोर अभाव रहा अनादि से,[1]

आर्थिक कठिनाइयों में पिसती मानवता का इससे अधिक विश्वसनीय चित्र अन्यत्र दुर्लभ है। बिना किसी अप्रस्तुत के, बिना किसी आलंकारिक भाषा के एकदम सरल सीधी भाषा में यह चित्र अंकित है कि पाठकों के दृष्टिपथ में साक्षात् ग्राम और उसका नारकीय जीवन घूमने लगता है।

'लोकायतन' में दरिद्रों और धनिकों का तुलनात्मक चित्र प्रस्तुत कर सामाजिक और आर्थिक वैषम्य का परिचय दिया गया है।

भू दारिद्र्य अशिक्षा के तम को
अर्पित मृत जन का विषण्ण जीवन!
रेंगा करता पाप पंक में नर
धनिकों हित था जन श्रम का वैभव,
ध्वंसास्त्रों में फुँकती भू संपद्
भौतिक युग का बौद्धिक शैशव![2]

निर्धन लोग दरिद्रता एवं अशिक्षा के तम में पड़े हुए मृत जीवन बिता रहे हैं। 'मृत-जन' कितना चित्रात्मक प्रयोग है। वे पाप-पंक में कृमियों-से रेंगा करते हैं और उनके श्रम का वैभव धनिकों की मुट्ठी में बन्द है, जिसका वे दुरुपयोग करते हैं। भू-संपद् संहारक अस्त्रों में फुंकती जा रही है। धनिकों की दृष्टि में संपत्ति का कोई मूल्य ही नहीं, इसलिए उसका वे दुरुपयोग करते हैं।

भारत स्वतंत्र हुआ, किन्तु भारत की आर्थिक स्थिति करुणाजनक है। मध्यवर्ग शासकों के कर-पद बनकर पिस रहा है तो शेष प्रजाजन अपनी प्रारंभिक आवश्यकताओं के लिए भी तरसते हैं।

मध्य वर्ग पिस रहा शासकों के कर-पद बन,
शेष प्रजाजन अन्न-वस्त्र गृह से भी वंचित,
भाग्य भरोसे बैठे कोसा करते विधि को!

१. रजतशिखर, पृ. ११४
२. लोकायतन, पृ. ५७८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आज घास की रोटी भी न सुलभ जनता को
अर्ध नग्न तन, भग्न हृदय, जीवन ढोने को
विवश लोक मल-कृमि, दुर्गन्ध भरे घर आँगन ![1]

मध्य वर्ग शासकों के अवलंब हैं। उन्हीं के सहारे और उन्हीं के बल पर वे शासक बने हैं। फिर भी वे विवशता की चक्की में पिसे जा रहे हैं। सामान्य जनता अन्न, वस्त्र और भवन से वंचित हो भाग्य-भरोसे विधि को कोसा करती है। उसे घास की रोटी भी सुलभ नहीं है। वह अर्ध नग्न, भग्न हृदय हो जीवन ढो रही है। घर-आँगन मल-कृमि दुर्गन्ध से भरे हैं। मुहावरों ने बिम्ब-निर्माण में योगदान दिया है। यहाँ घ्रातव्य संवेदना का भी महत्वपूर्ण योग रहा है। 'पतझर' में कवि-दृष्टि निर्मम जग में विचरते भूखे नर-कंकाल पर पड़ती है और उसे भू-जीवन में पग-पग पर अनाचार एवं अन्याय ही दीख पड़ता है।[2]

९. व्यावसायिक बिम्ब

विभिन्न प्रकार के काम-धंधों, व्यवसायों, कृषि आदि के बिम्ब इस वर्ग में रखे जा सकते हैं। पन्त जी ने स्वभावोक्ति अलंकार के द्वारा मज़दूरनी का यथार्थ चित्र यों अंकित किया है—

सर से आँचल खिसका है,—धूल धरा जूड़ा,—
अधखुला वक्ष,—ढोती तुम सिर पर धर कूड़ा !
हँसती बलखाती सहोदरा सी जन जन से
यौवन का स्वास्थ्य झलकता आतप सा तन से ![3]

वह मज़दूरनी सिर पर आँचल सँभाले थी, जो अब खिसक कर कंधे पर आ पड़ा है। सड़कों को झाड़ने का कार्य करने से उसका जूड़ा धूल धूसरित है। वह कूड़ा-करकट सिर पर ले जा रही है और उस गति में उसका वक्षस्थल अध-खुला रह गया है, जिसे सिर के भार के कारण संभाल नहीं पा रही है। वह उस ओर ध्यान ही नहीं देती, क्योंकि उसके लिए वह तो साधारण बात है। वह अन्य स्त्रियों के समान लोगों से बातें करते लज्जा अनुभव नहीं करती। वह जाने-पहचाने सभी लोगों से खुलकर बात करती है, हँसती है और बलखाती जाती है। वह सब की सहोदरा-सी आत्मीयता का बर्ताव करती है। निरन्तर प्रयत्न करती रहने से उसका शरीर स्वास्थ्ययुक्त है और यौवन की कांति आतप-सी झलकती है। यौवन के स्वास्थ्य को आतप की उपमा सादृश्य पर आधारित है। झिलझिलाते आतप के समान उसके शरीर से यौवन-सुलभ झलक प्रकट होती है। एक मज़दूरनी युवती का यथातथ्य रूप-बिम्ब स्वाभाविक एवं आकर्षक है।

---

१ किरण वीणा, पृ. २१२
२. पतझर, पृ. ७५
३. ग्राम्या, पृ. ५५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

रूप-चित्रण के साथ ही उसके भोलेपन एवं सरलता की भी व्यंजना की गयी है।

'कला और बूढ़ा चाँद' काव्य-संग्रह में भेड़ चराने का एक बिम्ब आया है। भेड़ों का बिम्ब अप्रस्तुत रूप में ही रखा गया है, फिर भी वह इतना व्यक्त एवं स्पष्ट है कि उसके आगे प्रस्तुत मंद पड़ जाता है—

भेड़ों के झुड़ सी
अवचेतन की
घाटियों में छिपी
परम्पराओं को
संस्कार
अपने अभ्यास की
पैतृक लाठी से
हाँक रहे हैं![1]

संध्या होते ही गड़रिया घाटियो में इधर-उधर बिखरी-छिपी भेड़ों को एकत्र कर उनका झुंड बनाता है और अपने हाथ की लाठी से उन्हें हाँकता हुआ घर लाता है। इधर संस्कार का मानवीकरण किया गया है, वही गड़रिया है। अचेतन की घाटियों में परम्पराओं रूपी भेड़ें छिपी थीं, जिन्हें अभ्यास रूपी अपनी पैतृक लाठी से वह हाँक रहा है। उपमा एवं रूपक के सहारे भेड़ हाँक कर चलने वाले गड़रिये का बिम्ब उभरता है।

महात्मा गाँधी का जुलाहे का बिम्ब सहज आकर्षक है। महात्मा जी ने स्वयं नग्न रहते हुए भी नग्नपशुता को मानव चोला पहनाया। कपड़ा बुनने के लिए पहले रुई को धुनकर फिर उसका सूत काता जाता है और ताने- बाने के सूतों पर कपड़ा बुना जाता है। गाँधीजी ने सदियों के दैन्य तमिस्र तूम को धुनकर उससे प्रकाश का सूत तैयार किया। सत्य और अहिंसा के ताने-बाने से जो वस्त्र बुना गया, उसीसे पशुता की नग्नता ढँकी गई।

इस भस्म काम तन की रज से
जग पूर्ण काम नव जग जीवन
बीनेगा सत्य अहिंसा के
ताने-बानों से मानवपन!

सदियों का दैन्य तमिस्र तूम
धुन तुमने कात प्रकाश सूत
हे नग्न! नग्न पशुता ढँक दी
बुन नव संस्कृत मनुजत्व पूत![2]

---

१. कला और बूढ़ा चाँद, पृ. २६ २. युगपथ, पृ. ५४-५५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कवि ने सांगरूपक के द्वारा यह बिम्ब-निर्माण किया है । इसमें कवि की कलात्मकता उत्कर्ष को पहुँची है । कपड़े बुनने के लिए आवश्यक सभी उपकरणों, प्रक्रियाओं का इसमें वर्णन हुआ है । कपड़ा बुनने का एक और बिम्ब 'युगवाणी' में आया है, जहाँ तन-मन के अन्धकार को कातकर नव प्रकाश के रजत-स्वर्ण बनाने और उससे नव-जीवन के तरुण पट बुनने का आग्रह किया गया है । रुई कतने से पहिले कुछ कृष्णता लिए रहती है । उसको बुनने के बाद स्वच्छ बनाया जाता है और स्वच्छ तथा रजत-स्वर्ण का सूत कतता है । उस रजत स्वर्ण से बुना वस्त्र ओढ़ने में सुखद लगता है । रूपक अलंकार एवं रंग-संवेदना के सहारे यह बिम्ब बनाया गया है ।[1] 'रजत शिखर' में भी मानवता के जीवन-पट की सुन्दर कल्पना की गयी है । विशशती महाकाल के वक्ष को कुचलती विनाश का तांडव करती आगे बढ़ रही है । इस भयंकर परिस्थिति में भी भारत एक ऐसा देश है जो रूढ़ि-रीतियों के पाशों से मुक्त हो नव शोभा, सुन्दरता, नव गौरव महिमा के स्वर्ण-रजत ताने-बाने से बिशद जन-मानवता क जीवत-पट बुन रहा है—

रूढ़ि-रीतियों के पाशों से मोह मुक्त हो
जीवन पट बुन रही विशद जन मानवता का
नव शोभा सुन्दरता, नव गौरव महिमा के
स्वर्ण रजत ताने-बाने से, नव मूल्यांकित ![2]

कवि का किसान रूप में बिम्ब 'ग्राम्या' में प्रस्तुत है । खेती करने के लिए पहले भूमि पर हल चलाया जाता है और खाद डालकर भूमि को समतल बनाते हैं । समतल भूमि में सुन्दर बीज बोने पर समयानुसार अंकुर उग आते हैं । कवि-कर्म और किसान के कार्य में समानता है । कवि अपनी प्रतिभा के हल से निष्ठुर मानव-अन्तर को जोतकर उदार एवं संवेदनशील बनाता है । फिर जीर्ण विगत आदर्शों की खाद डालकर हृदय को सुन्दर एवं भावुक बना देता है और काव्य-बीज बोकर उसे अंकुरित करने देता है । इसी समानता के आधार पर कवि का किसान रूप में बिम्ब प्रस्तुत है—

जोतो हे कवि, निज प्रतिभा के
हल से निष्ठुर मानव अंतर,
चिर जीर्ण विगत की खाद डाल,
जन भूमि बनाओ सम सुन्दर !

---

१. युगवाणी, पृ.१०९
२. रजतशिखर, पृ. ८३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

बोओ, फिर जन-मन में बोओ,
तुम ज्योति पंख नव बीज अमर,
जग जीवन के अंकुर हँस हँस
भू को हरीतिमा से दें भर ।[१]

मानव अन्तर रूपी खेत में सौन्दर्य रूपी धान्य को उत्पन्न करने का यह बिम्ब सांगरूपक के सहारे निर्मित है और इसमें कृषि संबंधी प्रत्येक उपादान तत्व जैसे हल, जोतना, खाद, निराना, सींचना, बीज बोना, अंकुर, फल सब का वर्णन यथावत् किया गया है और साथ ही कवि-कर्म का भी सुन्दर बिम्ब अंकित है। इस प्रकार लक्षित एवं उपलक्षित दोनों के बिम्ब अत्यन्त प्रभावकारी हैं। वैसे ही दासता के बंधन खो नव-जीवन के अग्नि-बीज बोकर मानवता रूपी स्वर्ण सत्य को लहराते देखने की कामना 'रजत-शिखर' में व्यक्त की गयी है।[२] 'शिल्पी' में सत्यों की बालू को हँसिये से काटने तथा स्वर्णिम दानों को भांड में भरने का बिम्ब अंकित हुआ है—

लुन लुन कर नित शस्यों के स्वर्णिम कण
हँसिये ने हँस भरा भांड में भू धन ![३]

पन्तजी की दृष्टि में मध्यकालीन भारत का आध्यात्मिक जीवन निरपेक्ष एवं अननुकूल रहा। कवि की मान्यता है कि वर्तमान मानव को एक नयी मानवता की सृष्टि करनी है। उसके लिए बहिरंतर संयोजित वैभव की रस संस्कृत परिणति की आवश्यकता है। मानवता के इस विकास को खेती-बाड़ी के बिम्ब द्वारा स्पष्ट करते हुए कवि का कथन है—

दिशा क्षेत्र रे, काल-बोध हल फल
शुभ्र ज्ञान विज्ञान वृषभ बलधर
साम्य उर्वरक, शस्य शांति-मंगल
ऐक्य बीज, चैतन्य स्वर्ण हलधर ![४]

दिशा खेती की भूमि है, काल-बोध ही हल है और चैतन्य हलधर है। चैतन्य रूपी हलधर शुभ्र ज्ञान-विज्ञान के बलिष्ट वृषभों के द्वारा दिशा-क्षेत्र को जोतकर खेती के योग्य बनाएगा। साम्य भावना खाद और ऐक्य भावना उसमें बोने का बीज है, जिससे शांति एवं मंगल के सस्य लहलहाएँगे। साँगरूपक का उचित निर्वाह कर खेती करने का चित्र यहाँ उतारा गया है। साँगरूपक की सहायता से थोड़े-से शब्दों में खेती-बाड़ी की संपूर्ण प्रक्रिया एवं उपकरणों-साधनों का वर्णन संभव हुआ। शब्दों का उचित सन्निवेश बिम्ब को औचित्य गुण से युक्त बनाता है।

---

१. ग्राम्या, पृ. १०२
२. रजत शिखर, पृ. ८४
३. शिल्पी, पृ. ४३
४. लोकायतन, पृ. ५७३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

१०. यौनबिम्ब

छायावादी काव्य में स्त्री-पुरुष के शारीरिक सौन्दर्य की अपेक्षा आत्मिक सौन्दर्य का खुलकर चित्रण हुआ। इस कारण उसमें यौन भावनाओं को प्रकट करने के लिए अधिक अवकाश नहीं रहा। यहाँ तक कि नारी भी उन कवियों के लिए विस्मयजनक रही है, जिस कारण उसके बाह्याकार एवं यौन-भावनाओं को उद्दीप्त करने वाले अंगों एवं शारीरिक वासनात्मक प्रेम की ओर कवियों का विशेष लगाव नहीं रहा। पन्त जी की काव्य-साधना में आद्यन्त उनका छायावादी संस्कार एवं व्यक्तित्व सजग रहा, जिस कारण मानव के यौन बिम्ब के निर्माण में उनकी विशेष रुचि दिखाई नहीं देती। हाँ, यह दूसरी बात है कि उन्होंने प्रकृति का मानवीकरण कर एकाध यौन चित्र बनाये हैं, जिनका उल्लेख प्रकृति-बिम्ब के प्रसंग में किया जाएगा।

'ग्रामयुवती' कविता में ग्राम-युवती के बाह्याकार का रूप-चित्रण यौन भावनाओं को उत्तेजित करने में सक्षम है। वह पनघट पर आकर गागर की रस्सी ऊपर खींच लेती है तो उसके साथ ही उसकी चोली से युगल रस भरे कलश के उभर-उभर कस कस बाहर निकलने तथा पानी के कलश के साथ चोली के अन्दर के कलशों को भी खींचने तथा उसके पानी लेकर जल छलकाती, रस बरसाती जाने का वर्णन पर्याप्त ऐन्द्रिय है—

पनघट पर
मोहित नारी नर!—
जब जल से भर
भारी पग
खींचती उबहनी वह, बरबस
चोली से उभर उभर कसकस
खिचते संग युग रस भरे कलश;—
जल छलकाती,
रस बरसाती,
बलखाती वह घर को जाती
सिर पर घट
उर पर धर पट![1]

निम्न पंक्तियों में धोबियों के नृत्य का यौन बिम्ब देखा जा सकता है, जिसमें नटी को काम शिखा-सी सिहरती हुई दिखाया गया है। नट की कटि ऐसी हिलती है मानो लालसा का भँवर घूम रहा हो। उसका कंपित नितंब घंटियों की ध्वनि में भर् भर् का रति-स्वर भर रहा है—

---

१. ग्राम्या, पृ. १८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वह काम शिखा सी रही सिहर,
नट की कटि में लालसा भँवर,
कँप कँप नितंब उसके थर् थर्
भर रहे घंटियों में रति स्वर,[1]

इसमें आये काम शिखा, कटि, नितंब, रति-स्वर आदि यौन-चित्र के उदाहरण हैं। आगे उसी कविता में नट की अतृप्त वासना को उकसानेवाली नटी की चोली के कंदुक का चित्रण किया गया है।[2]

'लोकायतन' काव्य में स्नान निरता कुसुम के शारीरिक सौन्दर्य का यौन-वर्णन इस प्रकार है—

आर्द्र वस्त्र,, गिरि वर्षा से भीगी,
ऊँच-नीच शोभाओं की द्रोणी,
शिखर कलश-से भाते उभरे स्तन
कृश कटि, पेशल जघन, पृथुल श्रोणी।[3]

स्नान निरता कुसुम का वस्त्र गीला होकर शरीर से ऐसा चिपट गया कि उसकी अंग-यष्टि स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। छाती की चोली शरीर से लगकर उन्नत उरोजों और बीच के तट को स्पष्ट करती है। उसके उरोज पर्वत-शिखर-से लगते हैं और बीच की छाती दो शिखरों के बीच की द्रोणी है। उसकी कृश कटि, पेशल जघन और पृथुल नितंब सब मिलकर चित्र को पर्याप्त ऐन्द्रिय बना देते हैं। 'आर्द्र', 'भीगी' और 'पेशल' स्पृश्य संवेदना को जगा देते हैं। ऊँच-नीच, शिखर, कलश, उभरे, कश, पृथुल आदि अत्यधिक चाक्षुष हैं।

आगे कवि ने अजित और कुसुम की रति-क्रीड़ा का भी खुल कर वर्णन किया है। जैसे ज्वार में फँसे दो फूल ऊब-डूब जाते हैं वैसे ही काम-वासना के स्फीत ज्वार में सुकुमार अजित और कुसुम ऊब-डूब रहे थे। वे दोनों जैविक भावनाओं से प्रेरित हो प्राण-सिंधु में तृणवत् देहों को विस्मृत कर चुके थे। दैहिक ज्ञान वे खो चुके थे। दोनों प्राण-सिन्धु में मुग्ध एवं आत्म विस्मृत थे। तिग्म काम-ज्वाला से परिवेष्ठित उनकी बलिष्ठ जांघें वज्र स्तम्भ के समान दिखाई देती थीं। उनके अवचेतन की काम-तृषा की लहरें उन्हें अहिदंशन-सी पीडित करती थीं। अन्त में रस का दुर्धर तड़ित पात् होता है, जो अग्निशूल-सा उर भीतर धँस जाता है। शत सहस्र अहिदंशों से पीड़ित एवं विह्वल अजित एवं कुसुम तड़ित पात् के बाद प्राण के शीतल मरकत सर में शान्ति

---

१. ग्राम्या, पृ. ३१-३२
२. वही, पृ. ३२
३. लोकायतन, पृ. ४७५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

खोजते हैं।[1] प्रस्तुत प्रसंग में काम-ज्वाला के लिए स्फीत ज्वार का उपमान सार्थक है। अजित और सुकुम के लिए ज्वार में ऊब-डूब करते दो फूलों का अप्रस्तुत सुन्दर कल्पना है। समागम में वे दोनों प्राण-सिन्धु की गहराई में पहुँचते हैं और दैहिक भाव समाप्त हो जाता है। देह की स्थिति को सिन्धु में पड़े तृण का उपमान भाव-व्यंजक है। बलिष्ठ जाँघों के लिये वज्र स्तम्भ का उपमान परम्परागत है। काम ज्वाला को 'तिग्म' रस्य संवेदना से पुष्ट किया गया है। काम-ज्वाला की लहरों के लिए नर्तित दृप्त भुजंग का उपमान अमूर्त भाव की मूर्त कल्पना है। रति-क्रीड़ा की चरम परिणति में शुक्ल-स्कलन को 'रस का दुर्धर तड़ित पात्' कह कर रूपायित किया गया है। काम-पीड़ा को 'शतसहस्र अहिदंश' से अधिक प्रभावकारी उपमान कोई दे ही नहीं सकता। रति-क्रीड़ा की परिणति के अवाच्य आनन्द को शीतल मरकत सर कहकर मूर्त रूप दिया गया है।

यौन-समाधि का बिम्ब भी कम मोहक नहीं है—

चन्द्र किरण पीकर स्मित अधरों की
सुधा तृप्त होता रस आकुल मन,
पर्वत माँसल उर घाटी में खो
पाता अपने को कृतार्थ यौवन![2]

यौन-समाधि में स्मित अधरों की चन्द्रकिरण पीकर रस आकुल मन ऐसा तृप्त होता है मानो सुधा-पान किया है। दो माँसल पर्वतों की उर-घाटी में अपने को खोकर यौवन कृतार्थ हो जाता है। 'स्मित अधरों की चन्द्र किरण' कह कर उसकी स्निग्धता, शीतलता एवं कांति की व्यंजना हुई है। अधर-चुम्बन को सुधा के समान तृप्त करनेवाला बताकर उसका आस्वाद्य बिम्ब बनाया गया है। 'पर्वत माँसल उर घाटी' उभरी हुई छाती एवं उन्नत उरोजों को व्यंजित करता है। रूपक अलंकार तथा लाक्षणिक प्रयोग के द्वारा बिम्ब प्रस्तुत किया गया है।

११. वैज्ञानिक बिम्ब

इस चर्चा में ऐसे वैज्ञानिक साधनों पर बने बिम्ब लिये जा सकते हैं, जिनका सम्बन्ध मानव-जीवन से है। पन्त जी विज्ञान की प्रगति, उसके वरदान एवं अभिशाप सबके प्रति सजग कलाकार हैं और विज्ञान से सम्बन्धित कई बिम्ब उनके इधर के काव्यों में उपलब्ध हैं।

मानव ने विज्ञान के सहारे बाष्प, विद्युत्, विश्व किरण सब पर अपनी प्रभुता स्थापित की। मातृ-प्रकृति ने मानव को अपना अपरिमित वैभव अर्पित

---

१. लोकायतन, पृ. ४७७-७८ २. वही, पृ. ४७७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कर लिया है। अब तक जो प्रकृति नियन्ता-शक्ति समझी जाती रही, वही आज मानव की मुट्ठी में बँधी है। आज विज्ञान का इतना विकास हुआ है कि आज वनस्पति एवं पशु-जगत् को मानव वर्धित कर सकता है। यही क्यों, विज्ञान का चमत्कार ही समझिए, मानव उसके सहारे गर्भाशय में अणु को ऊर्जित एवं गर्भित कर सकता है। दिशा और काल की सीमाएँ टूट गयी हैं—

> आज बाष्प कण, विद्युत, विश्व किरण मानव के वाहन,
> भूत शक्ति का मूल स्रोत भी अणु ने किया समर्पण,
> मातृ प्रकृति ने सौंप दिया मानव को विभव अपरिमित
> हरित नील जव भी भविष्य में कर लेगा वह संचित !
> आज वनस्पति पशु जग को कर सकता मानव वर्धित,
> गर्भाशय में जीवन अणु को ऊर्जित, विद्युत् गर्भित !
> भूत रसायन प्राणि वनस्पति शास्त्र विविध अब विकसित
> दिशा काल के परिणय का रे मानव आज पुरोहित ।[1]

अन्तिम पंक्ति में विज्ञान पर अपनी आस्था के चरण धर चलनेवाले मानव को दिशा-काल के परिणय का पुरोहित बताकर उसके सांस्कृतिक बिम्ब की अवतारणा भी की गयी है क्योंकि भारतीय विवाह-प्रथा के अनुसार पुरोहित का रहना आवश्यक है। आगे कवि ने विज्ञान पर आरूढ़ मानव के भविष्य के प्रति शंका प्रकट की है। विज्ञान की अपरिमेय शक्ति हाथ में लिये भूदेव मानव भू-दानव का सा विकराल रूप न अपनावें। सबसे बड़ी शंका यह है कि वह विज्ञान को लेकर मानव-संस्कृति का स्वर्ग बसाएगा, भीषण अणु का प्रलयंकर रौद्र रूप दिखाएगा। अगर मानव भूत-दैत्य से शासित हो जाए तो यह धरा शान्तिधाम न बनकर रक्त पंकिल रणक्षेत्र ही बन जाएगी। मनुष्य को यह सोचने का समय आया है कि उसे जीवन को अमृत तुल्य बनाना है या विष वह्नि के भयंकर विनाश का अखाड़ा।[2]

वैज्ञानिक शक्ति को हाथ में लिये मानव के भीषण एवं कराल रूप का चित्र निम्न पंक्तियों में अंकित है—

> आज निखिल विज्ञान शक्ति मानव हाथों में
> विश्व प्रलय कारिणी बन गई, लोक विनाशक !
> कापालिक बन गया मनुज है, जीवन बलि प्रिय,
> मानव शव का पूजक, साधक भू-श्मशान का !![3]

---

१. स्वर्ण किरण, पृ. १७

२. स्वर्णकिरण, पृ. १७

३. रजत शिखर, पृ. ७१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आज मानव के हाथ में विश्व प्रलयकारिणी एवं विश्व-विनाशक शक्ति है जिसका उपयोग वह नरमेध के लिए कर रहा है। उसको निष्ठुर नर-हत्या में कौतुक है, वह शव का पुजारी एवं भू-श्मशान का साधक है। अतः विज्ञान को हाथ में लिये मनुष्य कापालिक बन गया है। कापालिक, शव का पूजक एवं श्मशान का साधक आदि विविध रूपों में मानव का बिम्ब प्रस्तुत किया गया है। उल्लेख अलंकार के सहारे निष्ठुर मानव के कई रूप प्रस्तुत किये गये हैं।

विज्ञान ने संसार में दो विश्व-युद्धों का रूप दिखाया। गत महायुद्ध में अणु-दानव का रौद्र एवं संहारक रूप देखा गया। उसने हिरोशिमा एवं नागसाकी को धराशायी कर दिया। उसकी विषैली दुर्गन्ध से सारा वातावरण कलुषित हो उठा, अनेक निरीह लोगों की अकाल मृत्यु एवं असंख्य अपाहिजों का दीन रोदन उसी की देन है। अणु-युद्ध का एक रोमांचक चित्र नीचे दिया गया है—

खौल रहा अणु विगलित जड द्रव्यों का सागर
सूर्य खंड ज्यों टूट धँस गया हो धरती में !
उमड़ रहे दुर्गन्ध पूर्ण उच्छ्वास विषैले
धरा गर्भ की अग्नि फूट आई है बाहर,
गूँज रहा अह, महामृत्यु संगीत चतुर्दिक
चकाचौंध में बिखर रहे नक्षत्र पुंज हों !
उमड़ रहे दैत्यों-से भूधर धरा गर्भ से
हिल्लोलों-से उठ गिर, क्षण भर में विलीन हो !
महाप्रबल अणु के विघात से दीर्ण धरित्री
खंड खंड हो रही रिक्त मिट्टी के घट सी ![1]

मानव की निष्ठुर प्रतिहिंसा स्वरूप अणु-युद्ध का यह भीषण रूप है। अणु से विगलित जड़ द्रव्यों का सागर ही उमड़ रहा है, मानो सूर्य खंड ही टूट कर धरती में धँस गया है। पूरा वातावरण विषैला है। दुर्गन्धपूर्ण उच्छ्वास उमड़ रहे हैं। धरा के गर्भ में छिपी अग्नि फूट पड़ी है और चारों ओर महामृत्यु का संगीत गूँज रहा है। नक्षत्र बिखरकर टूट रहे-से जान पड़ते हैं। अणु ने पृथ्वी के गर्भ को फाड़ दिया और उसके गर्भ से दैत्यों-से भूधर उमड़ रहे हैं और सागर की हिल्लोरों के समान उठ-गिर एवं कंपित हो दूसरे क्षण विलीन हो रहे हैं। अणु के आघात से विदीर्ण पृथ्वी मिट्टी के घट-सी खंड-खंड हो रही है। उपमा के सहारे अणु-युद्ध के विनाश को मूर्त कर दिया गया है।

मनुष्य को वैज्ञानिक वस्तुवादी जगत् में भटकते कस्तूरी मृग का जो बिम्ब दिया गया है, वह उसके पथभ्रष्ट जीवन एवं मिथ्या-बोध का परिचय देता है। इसी के कारण पथ-पथ पर विनाश मनुष्य को निगल रहा है—

---

१. शिल्पी, पृ. ६१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

व्यर्थ न भटको बाहर
जड मरु में सौरभ मृग !
निगल न जाए तुम्हें
नाश की निशा अंधेरी
मृत्यु की नींद घनेरी !—[१]

कवि वैज्ञानिक भौतिक जगत् के मरु में शान्ति एवं सुख के अन्वेषक मानव को सौरभ मृग मानता है और उससे आग्रह करता है कि वह अपना व्यर्थ भटकना छोड़ दे क्योंकि उसे नाश की अंधेरी निशा एवं मृत्यु की घनेरी नींद निगलने के लिए खड़ी है। जड़वादी मनुष्य के लिए 'सौरभ मृग' का बिम्ब कितना भाव-व्यंजक है ! जिस प्रकार सौरभ मृग अपनी नाभि में स्थित सौरभ का अन्वेषण करता हुआ व्यर्थ वन-वन में भटकता है, उसी प्रकार मनुष्य सुख-शांति का अन्वेषण जड़-मरु में करता है, न कि आत्मिक चेतना में। जड़-मरु में भटकता हुआ वह नाश एवं मृत्यु का ग्रास बन रहा है।

विज्ञान पर आधारित सामयिक जीवन का एक दूसरा चित्र द्रष्टव्य है। विज्ञान ने अणुशक्ति के रूप में जो अमृत दिया, उसके कारण भू-देशों में भयंकर अत्याचार एवं विद्रोह हो रहे हैं। फलतः विज्ञान का अमृत गरल बन गया। मानव के पास कामधेनु के समान ईप्सित फलदायिनी अनेक मशीनें एवं यंत्र हैं। पर इन सबको पाकर भी मानव की तृष्णा शान्त नहीं हो रही है। वह शत फन फैलाये भुजंग-सी मानव को डँस रही है। विज्ञान के अमृत को गरलवत् बताकर उसके अनिष्टकारी प्रभाव की ओर संकेत किया गया है। अमृत एवं गरल में आस्वाद्य संवेदना बिम्ब-निर्माण में सहायक हुई है। यंत्र को कामधेनु का पौराणिक अप्रस्तुत देकर उसको बिम्ब रूप में सामने रखा गया है। अनेक यंत्रों की प्राप्ति पर भी मनुष्य की तृष्णा प्रबल होती जा रही है। यह तृष्णा उसको नष्ट कर ही देगी, इस विचार से प्रेरित होकर उसको शत फण वाले भुजंग के रूप में मूर्तित कर दिया है। तीन खंडित बिम्बों को संयुक्त कर विज्ञान-युग के सतृष्ण मानव का परिचय दिया गया है—

भू देशों में द्रोह भयंकर
विज्ञानाऽमृत बना गरलवत्,
कामधेनु बहु यंत्र सुलभ,—पर
मानव तृष्णा फन खोले शत ![२]

विज्ञान की देन रेल के युग-दैत्य को वन्य पशु-सी हिंस्र दहक भरते भागता दिखाया गया है।[३] तोपें दैत्यों-सी दहाड़ भरती हैं। मृत्यु खोह-सा मुंह बाए,

१. वाणी, पृ. ९०
२. वाणी, पृ. १३८
३. लोकायतन, पृ.२९३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

नथुने फैलाये गरजती है।[१] यांत्रिकता के दो पाटों के बीच में मानव-जीवन मर्दित हो रहा है।[२] किन्तु मनोजगत् के नायकों पर विद्युत् अणु का कुछ प्रभाव नहीं पड़ता। उनके सामने विद्युत् अणु नत फण हो जाता है।[३] पर विज्ञान को ही अपना एकमात्र साधन बनाकर अपने स्वार्थ-लाभ के लिए सब प्रकार के अनिष्ट कार्यों में तल्लीन मानव यांत्रिक युग का दानव है।[४]

विज्ञान की प्रगति ने मनुष्य को संसार का स्वामी बना दिया है। धरा उसके करतल का आमलक है,[५] हम घर बैठे संसार के सभी देशों की खबरें, गाने, भाषण सब कुछ सुन सकते हैं। इससे संसार के राष्ट्रों के बीच की दूरी भंग हो गयी और सभी राष्ट्र एक परिवार जैसे परस्पर एक-दूसरे के नज़दीक आ रहे हैं।

अब लंदन, न्यूयार्क पैठ कानों के भीतर
भन भन करते रहते बर्रों के छत्तों-से,[६]

कलों पर आधारित दो-तीन बिम्ब 'शिल्पी' में आये हैं। वहाँ यह बताया गया है कि दुर्मुख कलें घृणित जन्तुओं के समान विषमय फुफकार छोड़ती हैं तथा भुनगों के समान भुनभुनाकर और दादुरों के समान टर्राकर संसार को अमंगल पहुँचाती हैं—

.........ये दुर्मुख कलें निरंतर
घृणित जन्तुओं सी विषमय फुफकार छोड़ती ?
भुनगों सी भुन भुना, दादुरों-सी टर्रा कर ![७]

आगे उसी कल को विद्ध पक्षियों के समान पंख छटपटाकर तथा माथा ठोक-पीटकर आर्तभाव करते हुए दिखाया गया है।[८]

निष्कर्ष

मानव-जीवन एवं मानव-जगत् से सम्बन्धित वस्तु-बिम्बों का संक्षिप्त अध्ययन करने के उपरांत इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि पन्त का दृष्टिकोण मानव-जीवन के विविध स्तरों पर केन्द्रित रहा है। मानव-जीवन का कोई भी पहलू ऐसा नहीं रहा जिस पर कवि-दृष्टि न पड़ी हो और जिसको बिम्ब का विषय न बनाया हो। पन्त के मानव सम्बन्धी बिम्ब अधिकतर खंडित हैं, संश्लिष्ट बिम्ब अल्प संख्या में ही पाये जा सकते हैं। मानव सम्बन्धी लक्षित एवं उपलक्षित दोनों प्रकार के बिम्ब उनके यहाँ प्राप्त हैं और ऐसा

१. किरण बीणा, पृ. १५१
२. पतझर, पृ. ७६
३. उत्तरा, पृ. ४३
४. शिल्पी, पृ. ५५
५. शिल्पी, पृ. ५४
६. वही, पृ. ५४
७. वही, पृ. ५४
८. वही, पृ. ५४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

लगता है कि वे बिम्ब की भाषा में ही बोलना जानते हैं। उनके पास बिम्बों का अक्षय भण्डार है। उनके अधिकतर बिम्ब सज्जात्मक एवं आलंकारिक हैं और उपमा या रूपक पर आधारित हैं। ये बिम्ब मुख्यत: सरल हैं, घनात्मक एवं उदात्त बिम्बों का वहाँ प्राय: अभाव-सा है। किन्तु जहाँ तक ताजगी एवं नवीनता की बात है, पन्त के अधिकतर बिम्ब नित्य नवीन एवं चिरपरिचित हैं। उन्होंने जीवन के विविध क्षेत्र जैसे इतिहास, पुराण, संस्कृति, सामाजिक व्यवस्था एवं स्थिति, विज्ञान से सामग्री ली और उसके आधार पर बिम्ब-सृष्टि की। उनके बिम्बों में कल्पना की प्रचुरता एवं चित्रण का कौशल पाठक को मुग्ध कर देता है।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पन्त-काव्य में वस्तुगत बिम्ब—प्रकृति-बिम्ब

प्रकृति सम्बन्धी दार्शनिक दृष्टिकोण

मानव तथा प्रकृति का चिरन्तन एवं अविच्छेद्य संबंध है। सृष्टि के प्रारंभ काल से दोनों का सहवास होता आया है और प्रकृति के क्रोड़ में ही मानव ने विकास पाया है। प्रकृति अपनी शरद चाँदनी, कुसुमित मधुमय वसन्त, सुनहली आभा विकीर्ण करती उषा, असंख्य तारिकाओं का द्युतिमय अनन्त नीलाकाश, कलकल गाता बहता शान्त निर्झर, सरिता, सर-सरोवर आदि को लेकर मानव-मन को जहाँ मोहित एवं मुग्ध करती आयी है वहाँ अपनी गर्जन-तर्जन, बिजली की चकाचौंध, मूसलधार वृष्टि, ज्वार-भाटे, अग्नि-वर्षा आदि से कंपित एवं भय-विह्वल भी करती रही है। फलतः मनुष्य ने जहाँ अनंत प्रकृति की जड़ता का अनुभव किया, वहाँ उसकी चेतनता का भी आभास पाया, उसे जहाँ उसके रूप का बोध हुआ वहाँ उसके भाव का भी अनुभव हुआ। प्राचीन काल से मानव के मन में इस प्रकृति के प्रति जिज्ञासा का भाव अंकुरित रहा है। साथ ही उसके भीषण गंभीर रूप से संत्रस्त मानव ने प्राकृतिक वस्तुओं को देवता मानकर उनसे श्रेय एवं प्रेय के लिए प्रार्थना भी की। वैदिक ऋषियों ने जगत् पर विचार करते हुए इस जगत् में व्याप्त एक अलौकिक सत्ता का भी पता लगाया। उसे विश्वात्मा कहा गया है जिसके सभी देवता अंग हैं।[1] मुण्डकोपनिषद् के अनुसार जगत् ब्रह्म का रूप है और ब्रह्म ही उसके पिता, पालक एवं संहारक है। जिस प्रकार मकड़ी से जाल, पृथ्वी से औषधियाँ तथा पुरुष से केश और लोम उत्पन्न होते हैं, उसी प्रकार यह निखिल सृष्टि ब्रह्म से उत्पन्न हुई है—

> यथोर्णनाभिः सृजते गृह्णते च
> यथा पृथिव्यामोषधयः सम्भवन्ति।
> यथा सतः पुरुषात् केशलोमानि
> तथाक्षरात् सम्भवन्तोह विश्वम्॥[2]

इस दृष्टि से मानव और मानवेतर प्रकृति सहोदर-सहोदरा हैं। पाश्चात्य सर्व-वादी दार्शनिकों का मत है कि सृष्टि ब्रह्म से उद्भूत होती है, किन्तु उससे भिन्न नहीं है। मानव और प्रकृति ब्रह्म के वस्त्र-तुल्य हैं। ब्रह्म और सृष्टि में कोई

---

१. ऋग्वेद, १-८९-१०

२. मुण्डकोपनिषद्, १-१-७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भेद नहीं है, ब्रह्म सृष्टि में और सृष्टि ब्रह्म में है।[१] सांख्यदर्शन ने प्रकृति को सृष्टि का मूल कारण माना है। उसका विचार है कि इस संसार का कारण कोई अव्यक्त सत्ता अवश्य है, जिससे सृष्टि के समय जगत् का आविर्भाव होता है और प्रलय के समय वह उसी में विलीन हो जाता है। सांख्य के अनुसार यही मूल शक्ति प्रकृति है जो सृष्टि का कारण तत्व है और जगत् उसका कार्य है। प्रकृति सत्व, रज, तम इन तीन गुणों की साम्यावस्था है। वह प्रसवधर्मिणी है।[२] वह पुरुष के हृदय में भोगेच्छा उत्पन्न करती है और उसके साथ संभोग करती है। इस प्रकार पुरुष और प्रकृति के संयोग से सृष्टिक्रम चलता है। अतः सर्जनात्मक विश्व की अभिव्यक्ति प्रकृति है। इसके अनुसार मानव-शरीर, उसकी ज्ञानेन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, चित्त तथा अहंकार सभी प्रकृति के अन्तर्गत हैं।

गीता की प्रकृति संबंधी मान्यता भी सांख्य से मिलती-जुलती है। गीता में प्रकृति के दो रूप माने गये हैं—अपरा (जड़) प्रकृति और परा (चेतन) प्रकृति। अपरा प्रकृति के आठ रूप हैं—पृथ्वी तन्मात्रा, जल तन्मात्रा, अग्नि-तन्मात्रा, वायु-तन्मात्रा, आकाश-तन्मात्रा, मन का कारण भूत अहंकार, अहंकार का कारणभूत महत्तत्व और अविद्यायुक्त अव्यक्त।[३] यह सारा विश्व-प्रपंच अपरा प्रकृति का कार्य है। यह जड़, अनन्त दुखात्मक एवं बंधन रूपा है। शेष सब परा-प्रकृति है। दोनों के संयोग से जगत् की उत्पत्ति हुई। अपरा प्रकृति को अधिष्ठान मानकर भगवान सृष्टि करता है। इसलिए भगवान अपने को 'बीजप्रद पिता' कहते हैं।[४] इस प्रकार दर्शन ने प्रकृति के जड़ एवं चेतन दोनों में समन्वय-वादी दृष्टिकोण अपनाया है।

प्रकृति के प्रति कवि का दृष्टिकोण

भौतिक प्रकृति या दृश्यात्मक प्रकृति के विस्तार में मानव आ जाते हैं। मानव बाह्य प्रकृति और चेतन सत्ता ईश्वर की कडी है। बाह्य प्रकृति के रूप एवं भाव को समझने के लिए मनुष्य के पास शरीर (रूप) और मनस् (भाव) दोनों हैं और उनके समानान्तर वह समझ सका है कि प्रकृति का बाह्य रूप है और उसमें अन्तः भाव-रूप चेतना भी है।[५] उसका मनस् दृश्य-प्रकृति का द्रष्टा है। "मन इंद्रिय प्रत्यक्ष के दृश्य-जगत् को कल्पनामय भाव-जगत् में प्रतिबिम्बित कर उसका द्रष्टा बन जाता है।"[६]

---

१. थिल्ली एण्ड लेडजर वूड—ए हिस्टरी ऑफ फिलॉसफी, पृ. २०३
२. सांख्यकारिका, १०-११
३. गीता, ७/४-५
४. वही, १४/३-४
५. डा० रघुवंश—प्रकृति और काव्य, पृ. ५
६. वही, पृ. ६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

काव्य-सृष्टि सौन्दर्यानुभूति की प्रक्रिया है और उसका अन्तिम लक्ष्य रसास्वादन है। सौन्दर्यानुभूति का आधार वस्तु-जगत् (प्रकृति) है, किन्तु सौन्दर्य एक मानसिक अनुभूति या प्रतीति मात्र है, जिसे हम किसी विशेष परिस्थिति में अनुभव करते हैं।[१] इस आधार पर किसी क्षण में कोई वस्तु और किसी क्षण में अन्य कोई वस्तु सुन्दर लगती है। विषयीगत सौन्दर्य में द्रष्टा की मानसिक दशा मुख्य है, जिससे एक ही वस्तु दो भिन्न व्यक्तियों के लिए भिन्न प्रकार से अनुभूत हो सकती है। अतः देश-काल, व्यक्ति-व्यक्ति में सौन्दर्य भेद होता है। उदाहरण के लिए भारत में काले बाल सौन्दर्य के लक्षण माने जाते हैं, जबकि पाश्चात्य देशों में स्वर्णिम बाल। भारत में कमल सुन्दर पुष्प स्वीकार किया गया है, पर पाश्चात्य देश में 'लिली' सौन्दर्य का आदर्श माना गया है। अतः सौन्दर्य में रुचि भेद है। साथ ही यह भी स्वीकार करना पड़ता है कि भारत के सभी लोग कमल को और पाश्चात्य देश के लोग लिली को न्यूनाधिक मात्रा में सुन्दर मानते हैं। अतः प्रत्येक देश की रुचि उसकी परम्परागत संस्कृति की देन है और संस्कृति की एकता के रहते हुए भी सौन्दर्य की मात्रा में भेद वस्तु के रूप-गुण के प्रति तल्लीनता की मात्रा की भिन्नता है। सामान्य व्यक्ति की अपेक्षा कवि या कलाकार में वस्तु-जगत् के रूप-गुण के प्रति अधिक तन्मयीभाव है, क्योंकि उसमें संवेदना साधारण व्यक्तियों से अधिक है। दूसरी बात यह भी है कि प्रकृति तभी सुन्दर लगती है, जबकि हम कलाकार की दृष्टि से देखते हैं और एक सीमा तक प्रत्येक व्यक्ति कलाकार है। "काव्य की व्याख्या सौन्दर्य के रूप में ही पूर्ण है, और काव्यगत सौन्दर्य अनुभूति, अभिव्यक्ति तथा रसानुभूति के तीन स्तरों से सम्बन्धित है। कवि या कलाकार जिस प्रकार अपनी कल्पना से प्रकृति-सौंदर्य को विशेष रूप से ग्रहण करता है, उसी प्रकार अपनी काव्यानुभूति के रूप में परिवर्तित कर सकता है और अभिव्यक्ति द्वारा रसानुभूति का विषय बना सकता है।"[२] कहने का तात्पर्य यह है कि काव्य में तीन तत्व समान रूप से महत्वपूर्ण हैं — वस्तु-जगत् का प्रभाव-ग्रहण, काव्यानुभूति के रूप में परिवर्तित करना तथा सफल अभिव्यक्ति द्वारा रसानुभूति का विषय बनाना। प्रभाव-ग्रहण एवं काव्यानुभूति का सम्बन्ध काव्य के भाव-पक्ष से है तो अभिव्यक्ति का सम्बन्ध उसके रूप-पक्ष से है। काव्य के समुचित रसास्वादन के लिए रूप-विधान का सहज अथवा प्रबुद्ध ज्ञान अनिवार्य है। अतः काव्य में रूप केवल उसके सौष्ठव का कारण ही नहीं है, किन्तु वह आनन्द प्राप्ति का अनिवार्य साधन भी है। यह रूप-सौष्ठव-क्षमता हर व्यक्ति के पास नहीं होती। इसलिए मनुष्य मात्र में भले ही सौन्दर्य-भावना हो, परन्तु उस सौन्दर्य-भावना के रसास्वादन-योग्य अनिवार्य

१. समालोचक ('सौन्दर्यशास्त्र' विशेषांक), अंक-१ पृ. ५
२. डॉ. रघुवंश—प्रकृति और काव्य, पृ. २३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

रूप-तत्व नियोजन की क्षमता के अभाव में साधारण व्यक्ति कवि नहीं बन पाता। यहीं आकर साधारण व्यक्ति और कवि में भेद स्पष्ट हो जाता है।

प्रकृति काव्य का मुख्य विषय है और प्रकृति-सौन्दर्य के अभाव में काव्य अधूरा रह जाता है। किन्तु प्रकृति-सौन्दर्य के चित्रण के लिए कवि का प्रकृति की रम्यता एवं रमणीयता के प्रति आकृष्ट होना आवश्यक है। भारत के कवियों का यह सौभाग्य रहा है कि उन्हें प्रकृति को निकट से देखने-परखने का अवसर प्राप्त होता रहा क्योंकि भारत प्रकृति की क्रीड़ा-भूमि है। संस्कृत-काव्य प्रकृति-सौन्दर्य का अक्षय भण्डार है। बाह्य प्रकृति का सूक्ष्म निरीक्षण संस्कृत काव्यों में प्राप्त होता है। "वाल्मीकि के वर्णन में प्रकृति के दो उपयोग हैं— एक तो बिम्ब-विधान की प्रेरणा के रूप में और दूसरे शुद्ध वातावरण की रचना के रूप में। उनके काव्य की मुख्य देन दूसरे प्रकार के उपयोग में ही है।"[1] भारत की प्रकृति हमारे सांस्कृतिक एवं रागात्मक जीवन का एक अंग है। संस्कृत के कवि कालिदास, भवभूति आदि ने प्रकृति के अत्यन्त संश्लिष्ट रूप अपने काव्य में अंकित किये हैं। उनके काव्यों में कहीं तपःपूत तपोवन की निसर्ग-सिद्ध पावनता एवं सात्विकता का वातावरण है तो कहीं देवतात्मा हिमालय भूमि के मानदण्ड के समान फैला हुआ है। कहीं संध्या-कालीन रक्ताभ सूर्य-किरणों से अभिषेकित गन्धमादन पर्वत की अनुपम छटा उत्कीर्ण है, तो कहीं पुष्पों का स्तवक लिये ऋतुराज वसन्त अपनी मोहनी डाल रहा है। मणियों, धातुओं से विचित्र रंगाभावाले रैवतक पर्वत की विचित्र कल्पना है तो कहीं सोने के पंखोंवाले तथा नीलमणि के नयनोंवाले पक्षी अपने मधुर स्वर से हठात् अकर्षित करते हैं। अप्सराओं के नृत्य-गीत से मुखरित हिमालय की श्रेणियाँ, मेघों से घिरा हुआ इन्द्रकील पर्वत, मुक्तामणियों के समान निर्मल ओस-कणों से पूरित पत्तोंवाले पेड़-पौधे, कमल-वन, नदी-सरोवर, इस प्रकार प्रकृति के भव्य एवं अनुपम चित्र संस्कृत-काव्यों की विशेषता है। "संस्कृत के कवि सौन्दर्य तथा माधुर्य के उपासक होते हैं। उनका हृदय सौम्य भाव में विशेष रमता है। माधुर्य के उत्पादक दृश्यों के ऊपर दृष्टि विशेष रीझती है। वे मानव-हृदय के भावों के समझने तथा विश्लेषण में जितने कृत-कार्य हैं, उतने ही वे बाह्य प्रकृति के रहस्यों के परखने तथा उद्घाटन में समर्थ हैं।"[2]

कवियों के लिए प्रकृति अनुपम सौन्दर्य की निधि है। "मानव तथा प्रकृति की समग्र सृष्टि का सम्यक् विवेचन काव्यकार का लक्ष्य है और वह इस विषय में अपनी विभिन्न प्रकार की भावधाराएँ प्रस्तुत कर सकता है और करता है।

---

१. 'काव्य और परम्परा' शीर्षक लेख— विद्यानिवास मिश्र, रूपांबरा, पृ. ३७९
२. पं. बलदेव उपाध्य—संस्कृत साहित्य का इतिहास, पृ. १२४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कभी वह अपने विषय पर दार्शनिक दृष्टि बिन्दु से विचार करता है, कभी वैज्ञानिक रूप से दृष्टिपात करता है, कभी व्यावहारिक दृष्टिकोण से विवेचन करता है और कभी उसे विशुद्ध भावात्मक रूप में प्रस्तुत करता है; काव्य-संसार की वस्तु बनाने के लिए, काव्यात्मकता लाने के लिए, साहित्यिक अलंकृत शैली की नियोजना, कल्पना के वायवीय ताने-बाने, प्रतिभा के बहुरंगी वैभव, भाषा की समृद्धि तथा अपने हृदय की भावुकता का आश्रय लेता है।"[१] हिन्दी के प्राचीन कवियों की प्रकृति सम्बन्धी दृष्टि एकांगी रही है। उन्होंने प्रकृति के एकाध रूपों पर ही अपनी दृष्टि केन्द्रित रखी है। भक्तिकाल में कहीं प्रकृति पर दार्शनिक दृष्टिकोण से विचार किया गया तथा उसकी अनित्यता, क्षणिकता का प्रदर्शन किया गया तो कहीं उसके स्वतंत्र अस्तित्व की उपेक्षा कर उसके मानवीय भावनाओं के उद्दीपक रूप का चित्रण किया गया।[२] अन्य कहीं उसके द्वारा अपनी नीति एवं उपदेश की बातें समझायी गयीं।[३] रीतिकाल 'तंत्रीनाद कवित्त रस सरस राग रति रंग' का समय था, जहाँ कवियों ने प्रकृति के उद्दीपनकारी स्वरूप को अंकित किया या फिर उससे दूतिका का कार्य कराया।

आधुनिक काल में आते ही कवियों के प्रकृति-सम्बन्धी दृष्टिकोण में व्यापक विकास एवं विस्तार देखा गया। भावुक एवं रसस्निग्ध कवियों ने कहीं मानवीय भावनाओं से निरपेक्ष रखकर उसके मोहक सौन्दर्य का चित्रण किया[४] तो कहीं

---

१. डॉ. ललिताप्रसाद सक्सेना—हिन्दी काव्य में मानव तथा प्रकृति, पृ. ३०

२. बिनु गुपाल बैरिनि भई कुंजें।
तब वै लता लगति तन सीतल, अब भई विषम ज्वाल की पुंजैं
वृथा बहति जमुना, खग बोलत, वृथा कमल-फूलनि अलि-गुंजैं।
पवन पान, घनसार, सजीवन, दधि-सुत किरनि भानु भई भुंजैं।
—सूरसागर सार, पृ. १८७

३. बरषहिं जलद भूमि निअराएँ। जथा नवहिं बुध बिद्या पाएँ॥
बूंद अघात सहहिं गिरि कैसें। खल के बचन संत सह जैसें॥
—रामचरितमानस, किष्किंधाकांड, दोहा-१३, चौपाई २

४. दिवस का अवसान समीप था।
गगन था कुछ लोहित हो चला।
तरु-शिखा पर थी अब राजती
कमलिनी-कुल-वल्लभ की प्रभा॥
—अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध, प्रियप्रवास, पृ. १

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मानवीय भावनाओं की पृष्ठभूमि के रूप में अंकित किया,[१] कहीं उसके जाग्रत भावों के उद्दीपन रूप में उसका मूल्यांकन किया।[२] स्थूल प्रकृति के अनेक व्यापारों को उन्होंने उसी रूप में न देखकर अपने अन्तर्जगत् की प्रतिकृति मानकर उसमें चेतना का आरोप किया और उसको मानवों के समान हँसते-खेलते, उठते-बैठते देखने का प्रयास किया।[३]

कल्पना-प्रवण व्यक्तिवादी कवियों ने प्रकृति का सहारा लेकर अपनी कल्पना परी का रूप-सौन्दर्य अंकित किया और उसे रूप की रानी रूप में प्रस्तुत किया।[४] प्रकृति कभी कवि की शिक्षिका-उपदेशिका बनकर आती है[५] और उसे सन्मार्ग पर ले चलती है, तो कभी कवियों की कल्पना को अलंकृत करने का

---

१. वह विवर्ण मुख त्रस्त प्रकृति का
आज लगा हँसने फिर से।
वर्षा बीती, हुआ सृष्टि में
शरद विकास नये सिर से;
—जयशंकर प्रसाद, कामायनी, आशा सर्ग, पृ. २३

२. शैवलिनि ! जाओ, मिलो तुम सिंधु से,
अनिल ! आलिंगन करो तुम गगन को,
चंद्रिके ! चूमो तरंगों के अधर,
उडुगणो ! गाओ, पवन-वीणा बजा !
—सुमित्रानन्दन पन्त, वीणा-ग्रंथि, पृ. १२५

३. विजन-वन-वल्लरी पर
सोती थी सुहाग भरी—
स्नेह-स्वप्न-मग्न-अमल-कोमल-तनु तरुणी
जुही की कली,
दृग बन्द किये, शिथिल, पत्रांक में।
—निराला, अपरा, पृ. १४

४. मुग्ध स्वर्ण किरणों ने प्रात
प्रथम खिलाये वे जलजात !
नील व्योम ने ढल अज्ञात
उन्हें नीलिमा दी नवजात !
—सुमित्रानन्दन पन्त, गुंजन, पृ. ४७

५. निकल रही थी मर्म-वेदना,
करुणा विकल कहानी-सी;
वहाँ अकेली प्रकृति सुन रही,
हँसती-सी पहचानी-सी।
—जयशंकर प्रसाद, कामायनी, पृ. ४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

साधन बनती है।[१] कवि कभी प्रकृति की सुन्दरता में किसी अज्ञात सत्ता का रूपाभास पाकर विस्मय विमुग्ध होता है[२] तो कभी प्रकृति-वस्तुओं को किसी अज्ञात सत्ता के संधान में व्यावृत देखकर विस्मय प्रकट करता है।[३] हिन्दी काव्य में इस प्रकार कितने ही रूपों में प्रकृति का सहारा लिया गया है। कभी प्रकृति प्रतीकात्मक रूप में आकर कवि की भाव-व्यंजना को सुकर बना देती है तो माता, प्रेयसी, सखी, सहचरी रूप में अपना योग देती है। कभी मानव के साथ सहानुभूतिवश आँसू बहाती है तो कभी उसको हँसते देखकर प्रसन्न होती है।[४] कवि मानव-सौन्दर्य में प्रकृति का अध्यवसान कर मोहक चित्र भी अंकित करता है।[५] काव्य में इन सभी तत्वों का महत्व है।

आधुनिक काल में छायावादी कवियों के हाथों प्रकृति का जो उत्कर्ष हुआ वह अभूतपूर्व है। परम्परागत बाह्य सौन्दर्य का वर्णन बंधे-बंधाएँ पथ पर चलकर बासी हो गया था और उसमें कोई आकर्षण नहीं रह गया था। अतः छायावादी कवियों को नवीन सौन्दर्य की खोज करनी पड़ी। "सामाजिक ढाँचे के बासी सौन्दर्य से ऊबकर वह प्रकृति की ओर मुड़ा और वहाँ से नया सौन्दर्य-वैभव संचित कर कला को सौरभ मंडित तथा भावना-जगत् को सद्यः प्रस्फुटित कर सका।"[६] उसने प्रकृति को एक नया संदर्भ और अर्थ दिया जिस अर्थ में वह

---

१. रजत रश्मियों की छाया में धूमिल घन-सा वह आता;
इस निदाघ से मानस में करुणा के स्रोत बसा जाता!
—महादेवी वर्मा, आधुनिक कवि-१, पृ. २७

२. सघन मेघों का भीमाकाश
गरजता है जब तमसाकार,
दीर्घ भरता समीर निश्वास,
प्रखर झरती जब पावस धार
न जाने, तपक तड़ित में कौन
मुझे इंगित करता मौन!
—पन्त, पल्लव, पृ. ९०

३. महानील उस परम व्योम में, अंतरिक्ष में ज्योतिर्मान,
ग्रह, नक्षत्र और विद्युत्कण किसका करते से संधान।
—प्रसाद, कामायनी, पृ. २६

४. सरल तरल निज तुहिन कणों से हर्षित होती है,
अति आत्मीया प्रकृति हमारे साथ उन्हीं से रोती है।
—मैथिलीशरण गुप्त, पंचवटी, पृ. ९

५. सुमित्रानन्दन पन्त—गुंजन, पृ. ४१

६. पन्त—छायावाद : पुनर्मूल्यांकन, पृ. १६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पहले के सभी युगों से अलग रह जाता है।[१] छायावादी कवियों ने प्रकृति में सौष्ठव-संपन्न एवं रूप-संपन्न जो भी तत्व था, उसको लेकर अपने काव्य का अलंकार किया। प्रकृति-चित्रण की जो भी विधाएँ हो सकती हैं, उन सब रूपों में यहाँ प्रकृति-चित्रण हुआ। यहाँ आकर प्रकृति ने अपना स्वतन्त्र अस्तित्व पाया, मानव के समान वह अपनी रूप-सज्जा, भाव-सौन्दर्य एवं क्रिया-व्यापार दिखाने लगी। वह मानवीय धरातल पर खड़ी होकर समान भाव, गुण, कार्य, आकृति एवं वेष-भूषा से दर्शकों को चमत्कृत एवं विस्मय-मुग्ध करने लगी। निष्कर्ष यह कि आधुनिक काल में और विशेषकर छायावाद-युग में प्रकृति काव्य की मुख्य अधिष्ठात्री बन गयी और उसके मोहक सौन्दर्य से हिन्दी-काव्य विशेष परिपुष्ट एवं संपन्न हुआ।

पन्त और प्रकृति

समस्त छायावादी कवियों में पन्त प्रकृति-सौन्दर्य के चित्रण में अप्रतिम हैं। उन्होंने प्रकृति-रानी को असीम सौन्दर्य से युक्त कर काव्य-सिंहासन पर अभिषिक्त किया। हिमाचल के अंचल में जन्म लेने और पालित होने के कारण पन्तको प्रकृति का सूक्ष्म निरीक्षण करने और उसके प्रत्येक हृत्कंपन का अनुभव करने का प्रचुर सौभाग्य प्राप्त हुआ। स्वयं पन्त जी ने अपने प्रकृति-साहचर्य का उल्लेख किया है—"मेरे किशोर कवि-जीवन के अनेक सुनहली स्मृतियों में लिपटे प्रारंभिक वर्ष कौसानी और अल्मोडे में प्रकृति की एकांत छाया में व्यतीत हुए।"[२] कवि-जीवन के पूर्व भी वे घंटों एकांत में बैठकर प्राकृतिक दृश्यों को देखा करते थे और एक अज्ञात आकर्षण उनके भीतर एक अव्यक्त सौन्दर्य का जाल बुनकर चेतना को तन्मय कर देता था।[३] यही कारण है कि हिन्दी काव्य में पन्त सुकुमार एवं कोमल कल्पनाओं के कवि माने जाते हैं। उन्होंने प्रकृति को स्वतत्र सत्ता रखनेवाली नारी के रूप में देखा। वह कहीं माता, कहीं प्रेयसी, कहीं सहचरी के रूप में आती है। इतना ही नहीं जहाँ कवि ने प्रकृति से तादात्म्य का अनुभव किया है, उन्होंने अपने को भी नारी रूप में अंकित किया।[४] पन्त पर अंग्रेजी कवि वर्ड्स्वर्थ का भी प्रभाव स्वीकार करना उचित होगा क्यों कि वे प्रकृति को चेतन मानकर चित्रित करने के अतिरिक्त वर्ड्स्वर्थ के समान उसमें प्रेम के आदान-प्रदान का व्यापार भी देखते हैं।[५]

पन्त और प्रकृति एकात्म हैं। पन्त की दृष्टि प्रकृति के वीचि-विलास, उषा की सस्मित किरण, ज्योतिर्मय नक्षत्र, फूलों की मृदु मुस्कान, पत्रों के आनत

१. अज्ञेय (सं)—रूपाम्बरा, पृ. १०
२. सुमित्रानन्दन पन्त—साठ वर्ष : एक रेखांकन, पृ. २३
३. सुमित्रानन्दन पन्त—आधुनिक कवि-२, पर्यालोचन, पृ. ७
४. वही, पृ. ९
५. डॉ. रवीन्द्रसहाय वर्मा—हिन्दी काव्य पर आँगल प्रभाव, पृ. १६१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अधर, अपलक अनन्त, तन्वंगी गंगा, स्निग्ध ज्योत्स्ना, चाँदी के कगार, कल कल छल छल बहती निर्झरिणी, मेखलाकार पर्वत, लास्यनिरत लोल लहर, मंजु-गुंजरित मधुप, जैसी सहज सुन्दर वस्तुओं पर अधिक आकृष्ट रही। उनका कवि तरुण उषा की अरुण अधखुली आँखों से बिन्ध जाता है,[१] विजन निशा में खद्योतों से खेलता है। कुमुद-कला उसको किलकाती है,[२] तारावली उसे रिझाती है और मारुत उसकी अलकों में चंचल चुंबन उलझाता है।[३] वह हेमहासमय सुखद प्रात को जगत् का शृंगार करते देखता है।[४] तो पुष्पों के प्याले में भरकर मधुकर को अपना यौवन पिलाते ऋतुपति पर मुग्ध होता है।[५] वह कुमुद-कला को बादल का हल्का रेशमी इन्द्रधनुषी घूँघट खोलते देखता है[६] और मधुकरी से कुसुम-कटोरों में मधुपान कराने का आग्रह करता है।[७]

कवि पन्त ने प्रकृति के सुकोमल स्वरूप से हटकर परिवर्तन की 'शत शत फेनोच्छ्वसित स्फीत फूत्कार भयंकर'[८] ही नहीं सुनी है, उन्होंने ताँडव नर्तन, विश्व का करुण विवर्तन, नग्न नगर एवं भग्न भवन, आधि, व्याधि, अतिवृष्टि, वात उत्पात, वह्नि, बाढ़, भूकंप, आदि से होने वाले हृदय-विदारक परिवर्तनों को भी अपनी आँखों से देखा है।

उद्दीपनकारी प्रकृति-चित्रण का भी उनके काव्य में अभाव नहीं है। कवि का विरहाग्नि में जलता प्राण सारे संसार को जतुगृह-सा विकराल जलते अनुभव करता है।[९]

पन्त-काव्य में कहीं प्रकृति का संवेदनात्मक रूप अंकित है तो कहीं कवि प्रकृति को शिक्षिका, उपदेशिका एवं उपचारिका रूप में देखता है। वह विहग-कुमारी से मीठा गान सीखना चाहता है[१०] तो प्रकृति से क्षणिक जीवन को मुस्कान के साथ व्यतीत करने की शिक्षा पाता है।[११] प्रकृति में वह किसी अज्ञात रहस्य सत्ता का रूप भास पाकर मंत्रमुग्ध हो जाता है। वृक्ष-लतादि अपने पत्तों को हिलाकर गूढ संकेतों में उसे रहस्य की ओर उन्मुख करने का प्रयत्न करते हैं।[१२] सघन अंधकारमयी रात्रि में टिमटिमाते जुगनुओं के प्रकाश में, बिजली की चका-चौंध में, उमड़ते सागर की उत्ताल तरंगों में, जगमगाते तारों में उसको उस अज्ञात सत्ता का रूपाभास होता है।[१३] पन्त जी ने प्रकृति में चेतना का आरोप

---

१. वीणा-ग्रंथि, पृ. १
२. वीणा-ग्रंथि, पृ. ९
३. वही, पृ. १४
४. वही, पृ. २८
५. वही, पृ. ३०
६. पल्लव, पृ. ६७
७. पल्लव, पृ. ८०
८. वही, पृ. १५०
९. वही, पृ. ६६
१०. युगपथ, पृ. २६
११. गुंजन, पृ. ३१
१२. गुंजन, पृ. ७८
१३. पल्लव, 'मौन निमंत्रण' पृ. ९०-९२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

करके असंख्य चित्र अंकित किये हैं। कहीं उसी के सहारे दार्शनिक उद्भावनाओं को वाणी भी दी है। कहीं उनकी प्रकृति कविता की पृष्ठभूमि में आकर प्राकृतिक वातावरण को प्रस्तुत करती है तो कहीं कवि-कल्पना को अधिक प्रेषणीयता प्रदान करने के लिए अलंकार का रूप ग्रहण करती है। कहीं वह उपमान रूप में आकर भाव को अतिशय व्यंजक बना देती है तो कहीं प्रतीक रूप में आकर सूक्ष्म एवं गहन भावों को रूपायित करती है।

पन्त-काव्य में प्रकृति अपनी संभावित सभी विधाओं में उपस्थित है। प्रकृति-सौन्दर्य पर अत्यन्त तन्मय एवं तल्लीन होकर पन्त ने उसका वर्णन विविध भाव-भूमियों में किया है, जिसके कारण उनके काव्य में नैसर्गिक सुषमा का उत्कर्ष हुआ है। पन्त के प्रकृति-सौन्दर्य पर मुग्ध हो डॉ. नगेन्द्र जी ने लिखा है—"अल्मोड़े की चित्रित घाटी में पला हुआ यह भावुक कवि प्रकृति के रंगीन स्वरूप में घुल-मिल सा गया है—उसका सूक्ष्म से सूक्ष्म क्रिया-कंपन उसके हृदय में पुलक और प्राणों में स्पंदन भर देता है। कोमल प्रकृति के सूक्ष्म स्पन्दनों की पन्त जी को दिव्य अनुभूति है।"[१] पन्त जी के प्रकृति चित्रणों की विशेषता यह है कि उन्होंने बाह्य प्रकृति को अपने मन की भावनाओं से स्निग्ध कर अंकित किया है। उन्होंने प्रकृति के मंगलमय स्वरूप का चित्रण किया है। उन्होंने प्रकृति सुन्दरी को अपने प्राणों का रस उंड़ेल कर नूतन वेश प्रदान किया है। इस प्रकार प्रकृति के विविध तथा नित्य नूतन रूपों के चित्रण में पन्त जी अन्य कवियों से आगे हैं। "संभवतः पन्त जी पिछले बारह सौ वर्ष के हिन्दी-काव्य में प्रकृति के सब से बड़े कवि हैं। प्रकृति के प्रति ऐसा रागात्मक सम्बन्ध किसी दूसरे कवि का नहीं पाया जाता—प्रसाद, निराला और महादेवी का भी नहीं।"[२] सारांश यह कि पन्त ने सदैव ही अपना मानसिक और भाविक भोजन प्रकृति से पाया और प्रकृति के प्रति उनकी तृषा कभी शान्त नहीं हुई। "प्रकृति ही उनका घर, प्रेयसी और इष्ट है।"[३]

प्रकृति-बिम्ब

पन्त के प्रकृति-प्रेम एवं प्रकृति-सौन्दर्य में तन्मयता का उल्लेख ऊपर किया गया है। इसी प्रकृति-प्रेम के कारण पन्त-काव्य अनवद्य प्रकृति-बिम्बों का संग्रहालय ही है। पन्त-काव्य में जब प्रकृति के बिम्ब की बात उठायी जाती है, तब यह कहना पड़ेगा कि पन्त जी ने जड़ प्रकृति का वर्णन अत्यल्प मात्रा में किया है। बात यह है कि पन्त जी की दृष्टि में प्रकृति चेतन है। फिर भी वर्गीकरण की सुविधा के लिए पन्त-काव्य में उपलब्ध प्रकृति-बिम्बों की चार

१. डॉ. नगेन्द्र—सुमित्रानन्दन पन्त, पृ. २०
२. विश्वंभर मानव—काव्य का देवता : निराला, पृ. ३९
३. शान्ति जोशी—सुमित्रानन्दन पन्त : जीवन और साहित्य, पृ. ६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कोटियाँ मानी जा सकती हैं — (१) जड़ प्रकृति के बिम्ब (२) मानवीकृत प्रकृति-बिम्ब (३) मानवेतर चेतन प्रकृति पर आधारित बिम्ब (पशु-पक्षी, कीट-पतंगों पर आधारित बिम्ब) और (४) प्रतीकात्मक बिम्ब। वैसे तो पन्त के प्रकृति-बिम्बों के और भी दो प्रकार माने जा सकते हैं — लक्षित बिम्ब एवं उपलक्षित बिम्ब। प्रकृति का रूप-विधान जहाँ शुद्ध प्राकृतिक धरातल पर खड़ा किया गया है, वहाँ लक्षित बिम्ब होता है और जहाँ प्रकृति अप्रस्तुत रूप में आकर-बिम्ब निर्माण करती है, वहाँ उपलक्षित बिम्ब माना जा सकता है।

१. जड़ प्रकृति-बिम्ब

यहाँ बिम्ब प्रकृति के यथातथ्य रूप में अंकित होते हैं और मानवीय भावनाओं के आरोपों से स्वतन्त्र रहते हैं। इन बिम्बों के अन्तर्गत भूमिगत, जलीय एवं आकाशीय चित्र लिये जा सकते हैं।

पार्वतीय सौन्दर्य : कूर्माचल प्रदेश में जन्म लेने के कारण पन्तजी का उसभू-भाग के प्रति अपार प्रेम प्रकट हुआ है और वहाँ की अनिन्द्य शोभा का चित्र उन्होंने कई स्थानों पर उतारा है और वह चित्र इतना संश्लिष्ट है कि वहाँ की भूमिगत, जलीय एवं आकाशगत प्रत्येक वस्तु चाहे जड़ हो चाहे चेतन, का बिम्ब अंकित किया गया है। वास्तव में पन्त का सम्पूर्ण व्यक्तित्व और कृतित्व कूर्माचल के प्रति उनके तादात्म्य की अनुगूँज मात्र है।[1] कूर्माचल मातृभूमि का शीर्षरत्न है, जिसका शारद मस्तक ऊषा रश्मि स्मित, स्फटिक शुभ्र हिम किरीट से अलंकृत है। यह जन्मभूमि पुण्यधरा के स्वर्गोन्मुख सोपान पथ-सी विस्तृत है। उसके ऊपर सीपी के रंग का नभ है जो रजत नीलिमा गलित रोमिल घन से आच्छादित है, जिसमें इन्द्रधनुषी छाया का स्वप्न नीड़ चितवन के खग को बन्दी कर लेता है। आग्नेय सानुओं से बह निकलते स्फुलिंग के निर्झर, षड्ऋतु सुरबालाओं का नर्तन, वासन्ती किसलय, सौरभ-पंखों में उड़ती पर्वत-घाटी, उच्च प्रसारों में लेटा श्रान्त पान्थ-सा ऊँघता ग्रीष्म, सुरधनुओं के छाया-केतन, तडित-स्कलित गिरि-शृंग, नील पीत सित-लोहित विद्युल्लतिका, मरकत हरित प्रसार, फेनों के हीरक झरने, मुक्ताभ नीलिमा जल में राजहंस-सा तिरता शशि, हिम-परियों के निस्वर पदचापों से मुखरित दिशाएँ सब मनोमोहक हैं। नवपल्लव अंचल में लिपटी वनश्री, अनन्त का मुख बिम्बित रजत मुकुर-सरसि, तैलचित्र-सी उभरी शैल-श्रेणी, ताम्र हरित, स्वर्णिम शिखरों पर मंडराती हल्की कोमल परछाई, रजत तुषार सरों में भर्-भर् कंपता निर्मल अम्बर, कुढकते शशक, शाखा शृंगों-वाले वनमृग, मृदु कलरव भरते रंग-रंग के खग, चकित चौकड़ी भरते मृग, उन पर टूटते नाहर, मन में विस्मय-संभ्रम भरती उग्र कराल शिलाएँ और ऊपर भ्रू-विलास करती चपलाएँ[2] सब एक-एक बिम्ब बनकर आते हैं और सब परस्पर

---

१. शान्ति जोशी — सुमित्रानन्दन पन्त : जीवन और साहित्य, पृ. ७

२. अतिमा, 'कूर्माचल के प्रति', पृ. १४३–१५२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

संयुक्त बनकर पाठक के नेत्रों के सम्मुख पर्वत घाटी, उसकी वन-श्री, वहाँ के पशु-पक्षी तथा ऊपर चँदोवा बनकर फैले नभ का एक जादूभरा बिम्ब उतार देते हैं। कूर्माचल का बिम्ब इतना ऐन्द्रिय संवेद्य है कि सभी ऐन्द्रिय संवेदनाओं को उत्तेजित करता है। कवि की रंग-संवेदना इतनी प्रखर एवं सूक्ष्म है मानो रंगों से खेला गया हो। कूर्माचल का सानु प्रदेश एवं उसके ऊपर छाये किरणों से रंजित रजत व्योम सब मिलकर कूर्माचल एक मरकत मन्दिर-सा शोभित होता है—

दिव्य छत्र सा रजत व्योम किरणों से बिरचित ऊपर
रत्न पीठ सा सानु सुहाता नीचे श्यामल सुन्दर,
इन्द्रनील गोलार्ध जड़ित मरकत मन्दिर सा शोभित[1]

कवि ने पावस ऋतु में पर्वत प्रदेश की प्रकृति को पल-पल अपना वेष बदलते नाटकीय रूप में देखा है।[2] 'स्वर्ण किरण' काव्य-संग्रह में 'हिमाद्रि' कविता में हिमाद्रि को वसुधा की महदाकांक्षा, उरोभार और प्रहरी तीन रूपों में देखा गया है —

वसुधा की महदाकांक्षा — से
स्वर्ग क्षितिज से भी उठ ऊपर
अन्तर आलोकित-से स्थित तुम
अमरों का उल्लास पान कर।
उरोभार-से गौर धरणि के
सोया स्वर्ग शीश धर जिस पर,
तुम भारत के शाश्वत गौरव
प्रहरी-से जागरित निरन्तर।[3]

हिमाद्रि को वसुधा की महदाकांक्षा का उपमान इस उद्देश्य से दिया गया है कि उससे उसकी ऊँचाई व्यंजित हो। मनुष्य की आकांक्षा अम्बरचुंबी होती है। किन्तु 'हिमाद्रि' के लिए 'महदाकांक्षा' का अमूर्त उपमान उसका कोई मूर्त बिम्ब प्रस्तुत नहीं करता, भले ही उससे आकांक्षा की निस्सीमता का भाव प्रकट हो। 'उरोभार' का उपमान हिमालय के सन्दर्भ में उपयुक्त है और वह वसुधा पर हिमाद्रि की स्थिति का मूर्त रूप अंकित करता है। किन्तु गौर धरणी के उरोभार पर शीश धर स्वर्ग को सोते दिखाकर उसे यौन-बिम्ब का रूप दिया गया है, भले ही कवि का उद्देश्य यह व्यंजित करना जान पड़ता है कि स्वर्ग और स्वर्गवासियों का अधिवास हिमालय के ऊपर है। फिर 'गौर' विशेषण उस यौन बिम्ब को और भी मांसल बना देता है। तीसरा बिम्ब जागरित प्रहरी का है।

---

१. अतिमा, पृ. १४९ २. पल्लव, पृ. ५८

३. स्वर्ण किरण, पृ. ९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जहाँ कवि ने पर्वत के कोमल एवं शान्त वातावरण का वर्णन किया, वहाँ उसके भीषण ज्वालामुखी रूप की ओर भी उसका ध्यान गया है। धरा उदर से द्रवित रक्त-मज्जा उंडेलती तथा विकट घोष कर फट फट ज्वालामुखी कवि की दृष्टि में अणुवृष्टि में निरत नभ के प्रति अपने हृदय-क्षोभ को उगलती हुई थूक रही है—

फट फट पड़तीं ज्वालामुखियाँ विकट घोष कर
द्रवित रक्त-मज्जा उँडेलती धरा उदर से
हृदय क्षोभ ज्यों उगल उबालों में, वमनों में
थूक रहीं हों नभ के मुख पर घोर घृणा से ![1]

रक्त-मज्जा, उबाल, वमन आदि शब्दों के द्वारा ज्वालामुखी के फटने से उत्पन्न वीभत्स दृश्य का रूप प्रस्तुत किया गया है।

कूर्माचल की प्राकृतिक शोभा में देवदारु का सबसे बड़ा योगदान है। उसका एक ऐन्द्रिय चित्र इस प्रकार दिया गया है —

सुरधनु खण्डों में किरणों की द्रवित कांति कर वितरित,
रंग गन्ध के लता गुल्म से गिरि द्रोणी अतिरंजित
देवदारु रज पीत सुहाती ग्राम वधू सी सुन्दर।[2]

देवदारु के लिए ग्रामवधू का उपमान दिया गया है। ग्रामवधू में नैसर्गिक सौन्दर्य रहता है, वह कृत्रिम नागरिक सौन्दर्य से कोसों दूर रहती है। रजत पीत देवदारु की नैसर्गिक शोभा ग्रामवधू की स्वाभाविक एवं अकृत्रिम शोभा के समान आकर्षक है। वैसे ही संध्याकालीन धूमिलता में नारिकेल का वृक्ष बड़ा ही भीषण वातावरण प्रस्तुत करता है। संध्या की धुन्ध में नारिकेल का लम्बा पादप अपनी शाखाओं सहित बीस मूँड और सौ बाँहोंवाला प्रेत-सा कवि को भयभीत करता है।[3]

प्रभात-संध्या-रजनी के वातावरण : पन्त-काव्य में प्रभात एवं संध्या के अनेक चित्र मिलते हैं। प्रथम मधु के फूलों तथा तुषार पूरित पल्लवों से युक्त सजल प्रभात अपनी स्वर्णिम शोभा एवं लालिमामय आभा के कारण रुचिर है।[4] क्यों न हो, कवि की दृष्टि में घास-फूस, पेड़-पौधों की नोकों में ढुलकते ओस-कण मोती से शुचिपूर्ण हैं[5] और पल्लव —

---

१. शिल्पी, पृ. ६५
२. अतिमा, पृ. १४६
३. स्वर्णधूलि, पृ. ८५
४. पल्लव, पृ. ५४
५. वीणा-ग्रन्थि, पृ. १०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कल्पना के ये विह्वल बाल,
आँख के अश्रु, हृदय के हास,
वेदना के प्रदीप की ज्वाल,
प्रणय के ये मधुमास ।[१]

'पल्लव' उपमेय को रूपित करने के लिए कल्पना के विह्वल बाल, आँख के अश्रु, हृदय के हास, वेदना के प्रदीप, प्रणय के मधुमास आदि अनेक उपमान दिये गये हैं । 'कल्पना के बाल' और 'हृदय के हास' दोनों अमूर्त उपमान हैं, जिनके द्वारा पल्लव का कोई रूप खड़ा नहीं होता । पर 'आँख के अश्रु' और 'वेदना के प्रदीप', और 'मधुमास' बिम्बधर्मी उपमान हैं । 'गुंजन' में अपनी प्रेयसी से मिलनाकांक्षा की गुदगुदी लिये कवि को प्रातःकालीन सौन्दर्य अत्यन्त सुखद लगता है—

आज गृह-वन-उपवन के पास
लोटता राशि-राशि हिम-हास,
खिल उठी आँगन में अवदात
कुन्द-कलियों की कोमल - प्रात ।[२]

चारों ओर—गृह, वन उपवन में राशि-राशि हिमहास लोट रहा है और आँगन कुन्द-कलियों का रजत सौन्दर्य लिये मोहक लगता है । आगे --

आज छाया चहुँदिशि चुपचाप
मृदुल मुकुलों का मौनालाप,
रुपहली कलियों से कुछ लाल,
लद गई पुलकित पीपल-डाल ।[३]

कवि ने रंग, स्पृश्य, श्रव्य संवेदनाओं के सहारे प्रातःकालीन सौन्दर्य का एक बिम्ब खड़ा किया है ।

प्रभात का समय है । पौ फटने के बाद रवि बादलों के अन्दर से धीरे-धीरे झाँक रहा है । अब उसकी वक्र रेखा मात्र क्षितिज में प्रकट हो रही है । उस भृकुटि मात्र रवि से जो त किरणें विकीर्ण हो रही हैं, उनसे सारा भव ताम्र रंग में रंगा हुआ दिखाई देता है । आकाश-मण्डल के प्रतिबिम्ब से नीलिमामय गंगा-जल में रवि की ताम्र किरणें पड़कर स्वर्णिम रेखा फैल रही है । सूर्योदय एवं गंगा-जल पर उससे उत्पन्न वर्ण-परिवर्तन का यह बिम्ब पर्याप्त प्रभावकारी है—

१. पल्लव, पृ. ५४
२. गुंजन, पृ. ४६
३. वही, पृ. ४६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गलित ताम्र भव : भृकुटि मात्र रवि
रहा क्षितिज से देख,
गंगा के नभ नील निकष पर
पड़ी स्वर्ण की रेख ![1]

आगे कवि प्रातःकाल का एक संश्लिष्ट बिम्ब अंकित करता है जो प्रभावकारी ही नहीं, मादक भी है—

गन्ध पवन में धरती भीनी साँस ले रही
जाग रही वन छायाएँ अँगड़ाई भरतीं।
तरुण मधुप, घट्पट से हटा पंखुरियों के पट
अर्ध स्मित कलियों में मृदु मुख चुम्बन करते ?[2]

उपर्युक्त अवतरण में तीन खंडित बिम्ब अंकित हैं। प्रातःकालीन गन्धमय पवन में धरती भीनी साँस ले रही है। जागरण की इस वेला में वन-छायाएँ जागकर अँगड़ाई ले रही हैं और तरुण मधुप कलियों के मुख पर पड़े पंखुड़ियों के अवगुंठन को हटाकर उनके अर्धस्मित मुख पर मृदु चुम्बन भर रहे हैं। तीनों खंडित बिम्ब मानवीकरण के द्वारा निर्मित हैं। तीनों बिम्ब एक-दूसरे के पूरक बनकर मधुर प्रातःकाल का एक संश्लिष्ट बिम्ब प्रस्तुत करते हैं। 'भीनी साँस' में घ्रातव्य बिम्ब, 'अंगड़ाई भरती' में क्रिया-बिम्ब, 'मृदु' में स्पृश्य बिम्ब मिल कर ऐन्द्रिय संवेदनाओं का मिश्रित बिम्ब निर्माण करते हैं।

पन्त ने भारतीय प्रकृति का ही नहीं, लन्दन के प्रभात का भी बिम्ब खड़ा किया है—

भले ही काज्जल का आकाश
धुएँ से रंगता हो पट गात,
तुहिन कण जाली मुख पर डाल
सुहाती मुग्ध रश्मि स्मित प्रात।[3]

यह विदित है कि औद्योगिक नगर लन्दन का आकाश अपने कारखानों से निकलते हुए धुओं से कज्जल ही है और पूरा वातावरण धूमिल एवं धुएँ से भरा हुआ है। फिर भी सूर्य की रश्मियों में दीप्तिमय तुहिन कण जाली में मन्दस्मित प्रातःकाल सुहावना है।

गुंजन की 'एक तारा' कविता का आरम्भ संध्याकालीन प्राकृतिक पृष्ठभूमि में होता है। सारा ग्राम-प्रान्त नीरव संध्या में डूबा है। संध्या होते ही

१. युगवाणी, पृ. ३९
२. रजतशिखर, पृ. ५३
३. लोकायतन, पृ. ३९६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वातावरण शान्त हो गया। निखिल वन का मर्मर पत्रों के आनत अधरों पर ऐसा समा गया जैसी कि वीणा की झंकार वीणा के तारों से हाथ हटाते ही उसी में लीन हो जाती है। संध्या होते ही वृक्ष-लतादि के पत्ते ज़रा झुक जाते हैं और हवा भी मन्द हो जाने से दिन भर का मर्मर स्वर समाप्त हो जाता है। इसके लिए मानवीकरण का सहारा लेकर स्वर के पत्रों के आनत अधरों पर सो जाने की कल्पना की गयी है। पशु-पक्षी अपने-अपने आश्रय स्थान में पहुँच चुके हैं और गोपथ धूलिरहित हो गया है। संध्या की झुटपुट में शान्त, क्लान्त एवं निश्चल गोपथ भूसर भुजंग-सा दिखाई दे रहा है। भुजंग का अप्रस्तुत लाकर जहाँ कवि ने टेढ़े-मेढ़े पथ का बिम्ब अंकित किया है, वहाँ दूसरी ओर जनरहित एवं नीरव पथ के भयावने वातावरण को भी मूर्तित किया है। उस संध्याकालीन प्रशान्ति को भंग करने के लिए झींगुर के तीखे स्वर के अतिरिक्त वहाँ और कोई स्वर नहीं है। श्रव्य एवं रंग-संवेदना का स्पर्श करते हुए निम्न पंक्तियाँ संध्याकालीन ग्राम-प्रान्त का सजीव बिम्ब अंकित करती हैं—

नीरव संध्या में प्रशान्त
डूबा है सारा ग्राम प्रांत !
पत्रों के आनत अधरों पर सो गया निखिल वन का मर्मर,
ज्यों वीणा के तारों में स्वर !
खग कूजन भी हो रहा लीन, निर्जन पथ अब धूलिहीन,
भूसर भुजंग-सा जिह्म, क्षीण !
झींगुर के स्वर का प्रखर तीर केवल प्रशांति को रहा चीर,
संध्या-प्रशांति को कर गंभीर ![१]

'ग्रंथि' में संध्याकालीन वातावरण और नायक के हृदय में उद्भूत प्रेम का बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव में चित्रण हुआ है, जिसमें मधुपबाला के मधुर मधुमुग्ध राग के पद्मदल में संपुटित होने तथा काम्य उपवन में कुमुदकली के विकसित होने के साथ ही नायक के हृदय में प्रणय-पद्म के खिलने का वर्णन हुआ है।[२] संध्या समय कमल के संपुटित होने तथा कुमुद के खिलने की बात कवि-समय पर आधारित है। किन्तु कुमुद-कली के खिलने के साथ ही प्रणय-पद्म के खिलने की बात कवि-समय विरुद्ध है।

अभी गिरा रवि, ताम्र कलश सा,
गंगा के उस पार,
क्लान्त पांथ, जिह्वा विलोल
जल में रक्ताभ प्रसार ।[३]

---

१. गुंजन, पृ ८४
२. वीणा-ग्रंथि, पृ. ९८
३. युगवाणी, पृ. ३७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

साँझ के समय कवि गंगा-तट पर खड़ा अस्ताचल-गामी सूर्य की ओर देख रहा है तो उसे गंगा के उस पार पानी में गिरा सूर्य पानी में उतारे ताम्र कलश के समान दिखाई देता है। 'अभी गिरा' क्रियापद के द्वारा देखते-देखते पानी में डूबे सूर्य का गत्यात्मक बिम्ब हमारे नेत्र-सम्मुख प्रस्तुत होता है। फिर ताम्र कलश रूपी सूर्य के गिरने से उसकी रक्तिम किरणों में गंगा का जल रक्तिम दिखाई देता है। अस्तंगत सूर्य के लिए 'ताम्र कलश' का उपमान सादृश्य पर आधारित है और जिस किसी ने भी नदी के जल में डूबते सूर्य को देखा है, वह इस बिम्ब की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकता। सूर्यास्त का एक और बिम्ब (ग्राम्या) अपनी संश्लिष्टता के कारण विशेष उल्लेख्य है—

सिमटा पंख साँझ की लाली
  जा बैठी अब तरु शिखरों पर,
ताम्र पर्ण पीपल से, शतमुख
  झरते चंचल स्वर्णिम निर्झर।
ज्योति स्तंभ सा धंस सरिता में
  सूर्य क्षितिज पर होता ओझल,
वृहद् जिह्म विश्लथ केंचुल सा
  लगता चितकबरा गंगाजल
धूप छाँह के रंग की रेती
  अनिल ऊर्मियों से सर्पांकित,
नील लहरियों में लोड़ित
  पीला जल रजत जलद से बिम्बित।[1]

उपर्युक्त अवतरण में संध्याकालीन अलग-अलग छः बिम्ब हैं। संध्या होते ही जिस प्रकार कोई पक्षी अपने पंख समेट कर वृक्ष की डाली पर आ बैठता है, उसी प्रकार सूर्यास्त के साथ ही संध्याकालीन लालिमा अपने को समेट कर वृक्ष की शाखाओं पर आ बैठी है। संसार में व्याप्त लालिमा संध्याकाल में केवल वृक्षों की शाखाओं पर ही दिखाई देती है। दूसरा बिम्ब शतमुख झरते चंचल स्वर्णिम निर्झर का है जिसके जल का रंग अस्तंगामी सूर्य की लालिमा-सा ताम्रवर्ण दिखाई देता है। तृतीय बिम्ब क्षिजित के पार डूबते हुए ज्योतिस्तंभ-सा दिखाई देनेवाले सूर्य का है। चतुर्थ बिम्ब गंगाजल का है जो अनेक प्रतिबिम्बों के पड़ने से केंचुल-सा चितकबरा जान पड़ता है। पंचम बिम्ब धूप-छाँह के रंग की रेती का है जो अनिल-ऊर्मियों के कारण सर्प-सा दिखाई देता है। और अन्तिम पंक्तियों में आकाश के रजत जलदों को प्रतिबिम्बित कर लहरा उठते पीले जल का है। यहाँ कवि की रंग-संवेदना दर्शनीय है। नीला जल लालिमा के फैलने

१. ग्राम्या, पृ. ६३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

से पीला दिखाई देता है। रंग-परिवर्तन का यह बिम्ब कम आकर्षक नहीं है। कुल मिलाकर संध्याकालीन प्रकृति का संश्लिष्ट चित्र यहाँ प्रस्तुत हुआ है।

पश्चिमाकाश में सूर्य के साथ ही जो घनी लालिमा छा जाती है, उसके लिए वह्नि-ज्वाला का बिम्ब[1] साँझ के समय स्वर्णिम किरणों को अस्ताचल की ओर खींचते सूर्य को कृपण का बिम्ब[2] दिया गया है। उदयकालीन सूर्य को कनक चक्र-सा रूपायित किया गया है[3] तो अन्य स्थान पर उसकी तुलना बाष्पों के बर्ह-भार को खोले रंग-लोमश मयूर से की गयी है—

रंग लोमश मयूर सा सूर्य
खोल बाष्पों का बर्ह उभार
चमत्कृत करता सहसा दृष्टि
नील पर चित्रित सा साकार।[4]

सूर्यास्त के साथ ही विश्व को घेरते अन्धकार का बिम्ब इस प्रकार है—

पटक पवि को बलि सा पाताल
एक ही वामन पग में—
लपकता है तमिस्र तत्काल
—धुएँ का विश्व विशाल।[5]

जिस प्रकार भगवान ने वामन का अवतार लेकर बलि के सिर पर पग रखकर उसे पाताल लोक में भेज दिया था उसी प्रकार अंधकार के कुहासा रूपी वामन ने सूर्य रूपी बलि को लात मार कर पाताल में पटक दिया और अंधकार का कुहासा चारों ओर तीव्र गति से फैल रहा है। सूर्यास्त एवं उसके अनन्तर फैलते अंधकार का बिम्ब वामनावतार एवं बलि के पौराणिक आख्यान पर आधृत है। उपमालंकार ने बिम्ब-योजना में सहायता पहुँचायी है। 'पटक' एवं 'लपक' क्रियाएँ इतनी सार्थक हैं कि व्यापारों का एक गत्यात्मक चित्र उतर आता है। पन्तजी की मौलिक कल्पना पर आधारित यह बिम्ब अपने ढंग का अनोखा है। महाकाल के वक्षस्थल पर गाढ लालसाओं के आवर्तों में लहरा, महादिशा के केशजाल-सा फैला निबिड़ तिमिर का एक बिम्ब द्रष्टव्य है—

कैसा निबिड तिमिर छाया यह, महादिशा के
केशजाल सा महाकाल के वक्षःस्थल पर
गाढ लालसाओं के आवर्तों में लहरा,—[6]

रात में विश्व को घेरते तम की व्याल रूप में कल्पना सुन्दर है—

---

१. वीणा-ग्रंथि, पृ. ८५
२. वही, पृ. ९७
३. अतिमा, पृ. १४९
४. लोकायतन, पृ. ३६५
५. पल्लव, पृ. ६६
६. सौवर्ण, पृ. १२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

चिनगियों से तारों की डाल
आग का सा अंगार शशि लाल
लहकता है, फैला मणिज्वाल
जगत को डसता है तम व्याल ![1]

घोर अंधकार में शशि अंगार-सा लाल दिखाई देता है और इधर-उधर नभ में बिखरे तारे चिनगारियाँ हैं। कवि की कल्पना है कि तम रूपी व्याल जगत् को डसने के लिए ललक रहा है और उस गति में फैला मणिज्वाल ही चन्द्र और तारे हैं। रूपक एवं उपमा पर आश्रित अन्धकार की व्याल रूप में यह कल्पना बहुत-कुछ परम्परागत होते हुए भी अपनी कलात्मकता के कारण आकर्षक है। एक अन्य स्थान पर शशि की कल्पना तरी[2] रूप में हुई है, गंगा की लहरों में पड़कर सौ चाँदों के सलिल में 'छिप छिप करते खेल' का भी रम्य चित्र देखने लायक है।[3] 'छिप छिप' में जहाँ लहरों में पड़कर चन्द्र के दिखने-छिपने का बिम्ब है, वहाँ यह शब्द लहरों के पानी में उठने-गिरने की ध्वनि को भी प्रकट करता है। चन्द्रोदय की एक मूर्ति-कल्पना निम्न पंक्तियों में देखी जा सकती है—

वह सोने का चाँद उगा ज्योतिर्मय मनसा,
सुरंग मेघ अवगुंठन से आभा आनन सा !
उज्वल गलित हिरण्य बरसता उससे झर झर,
भावी के स्वप्नों से धरती को विजड़ित कर ![4]

मेघों को चीरकर निकलते चाँद को दो उपमानों से रूपायित किया गया है। वह सोने का चाँद ज्योतिर्मय मनसा देवी के समान है। मेघ से निकलकर अपनी आभा फैलानेवाला चाँद किसी रमणी के अवगुंठन से प्रकट होते आभा आनन-सा है। भावी के स्वप्नों से धरती को विजड़ित कर वह उज्ज्वल हिरण्य की वर्षा कर रहा है। एक अन्य स्थान पर पूर्ण चन्द्र की कल्पना सुधा-कलश के रूप में की गयी है।[5]

किरणों को 'रजततार' का उपमान देकर और फिर उसे सुई से सूक्ष्म बताकर उसकी कृशता एवं सूक्ष्मता की व्यंजना करने के अतिरिक्त उसके रंग-आकार का भी परिचय दिया गया है।[6] सूर्य-किरणों के ताप से हिम-बिन्दु सूख जाते हैं। इसी को दृष्टि में रखकर उसे हिम चरती भेड़ का बिम्ब दिया गया है—

१. पल्लव, पृ. ६६
२. रजतशिखर, पृ. ११
३. लोकायतन, पृ. ३११
४. स्वर्णकिरण, पृ. ६४
५. शिल्पी, पृ. ६१
६. वीणा-ग्रंथि, पृ. २५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

दूध धुली ऊनी भापों की
किरणों की भेड़ें हिम चरतीं ।[१]

'दूध धुली ऊनी' किरणों को चाक्षुष बना देती है ।

चिर रहस्यमय ताराओं का छायापथ नभ
निज असंख्य नयनों के विस्मय से हरता मन,
स्वप्नों के स्मित ज्योति प्ररोहों से दिक् पुलकित
व्योम हँस रहा दीप्त दिवौषधियों के वन सा ![२]

रजनी का नभ असंख्य ताराओं का छायापथ है । वह असंख्य नयनों से संसार को देख रहा है और विश्व का मन हरता रहता है । उसको दिव्यौषधियों के वन का उपमान दिया गया है ।

'बादल' कविता छन्दों की एक सुन्दर लड़ी है, जिसमें अनेक रूपकों और उपमाओं से बादल का वर्णन किया गया है। "पन्त का 'बादल' एक नाटकीय पात्र की भाँति स्वयं अपना परिचय देता हुआ बहुरूपिया बनकर सामने आता है ।"[३] बादल के लिए मूर्त एवं अमूर्त कई उपमान प्रस्तुत हैं और उसके भीषण एवं सुकुमार रूप दिखाये गए हैं । बादल कभी जलाशय में कमल दलों-सा प्रकट होता है तो कभी असंख्य अस्फुट बीज रूपी अंडों को सेता विहग बनकर सामने आता है । वह कभी मृग-सा चौकड़ी भरता है तो कभी मस्त मतंगज बनकर झूमता है । कभी शशक बन नभ को चरता है । कभी सरकस के बन्दर के समान अनिल की डाल पर बैठकर मुंह बनाता है तो कभी बृहद् गिद्ध के समान विहग छदों को बिखराता नभ में तैरता है । वह भूत-सा विकट महाकार धारण कर कड़क कड़क शब्दों से विश्व को कंपित करता है तो दूसरे क्षण इन्दु के सुकुमार करों को पकड़े सुभग सीप के पंख पसारकर परियों के बच्चे के समान शुचि ज्योत्स्ना में विचरण करता है। वह प्रलय-बाढ़ का रूप धारण कर गगन-सिन्धु को विलोड़ित करता है और घनघोर उपल तथा तिमिर बरसाकर संसार को त्रस्त करता है । वह तम के यमुना-जल में विशाल जंबाल जाल-सा बहता है तो दमयन्ती-सी कुमुद-कला के रजत करों को फैलाये स्वर्ण हंस-से तैरता हुआ जल को अपना संदेश सुनाता है, दूसरे क्षण संध्या का मादक पराग पीकर मिलिन्दों के समान नभ के नील कमल में विश्राम करता है । वह कभी पर्वताकार तो कभी धूलि-सम सूक्ष्म रूप धारण करता है, कभी नग्न गगन की शाखाओं में मकड़ी का-सा जाल फैलाकर अंबर के उड़ते सूर्य रूपी पतंग को उलझा देता है । इस प्रकार

१. अतिमा, पृ. १०९
२. रजतशिखर, पृ. १४१
३. डॉ. रामयतनसिंह 'भ्रमर'—आधुनिक हिन्दी कविता में चित्र-विधान, पृ. ११३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कवि ने अपनी उच्च कल्पनाशक्ति के द्वारा बादल को कमलदल, विहग, मृग, मतंगज, शशक, बन्दर, गिद्ध, भूत, प्रलय-बाढ़, जंबाल, स्वर्ण-हंस, मिलिन्द, मकड़ी के उपमानों से नाना बिम्बों में बाँधने तथा उनके क्रिया-व्यापारों को दिखाने का प्रयास किया है। यहाँ सूक्ष्म अभिव्यंजनाशक्ति, सुन्दर साम्य एवं कला-पूर्ण कल्पना हमें मुग्ध कर देती है। किन्तु सुरपति के अनुचर, मेघदूत की सजल कल्पना, संशय, अपयश, मोह, लालसा, अनंत उर की करुणा, आदि अमूर्त वस्तुओं के उपमान बादल का मूर्त रूप प्रस्तुत करने में सक्षम नहीं हैं।[1] अन्य स्थानों पर मेघ को मेघनों के बाल[2] तथा कंचन कलश सौध[3] के उपमान देकर मूर्त बनाया गया है।

पल्लव में आयी-'नक्षत्र' कविता में उपमानों की विपुलता एवं विविधता द्रष्टव्य है। इस कविता के प्रेरणास्रोत के सम्बन्ध में शांति जोशी का कथन है कि काठगोदाम से मोटर में अलमोड़ा जाते समय रास्ते में बस बिगड़ गयी और पन्त जी को रात पेड़ के नीचे काटनी पड़ी। वे ज़मीन पर लेटे थे कि तारों से भरे आकाश ने कवि-कल्पना को मूर्त कर दिया और वहीं पर एक लालटेन के प्रकाश में कविता लिख डाली।[4] किन्तु नक्षत्र के लिए अनन्य छवि के समुदाय, स्तब्ध विश्व के अपलक विस्मय, अश्रुहास, अनन्त की अगम कल्पना, संसृति के अविदित आख्यान, पिपीलिका के विवर, अज्ञात देश के नाविक, अनन्त के हृत्-कम्पन, नवप्रभात के अस्फुट अंकुर, निद्रा के रहस्य कानन, अविदित युग के मुद्राकर, विभूति के भग्न भवन, शाश्वत स्मिति, ज्योतित स्मृति, स्वप्नों के विमान, असंख्य भाग्यों के शासक, असीम छवि के सावन, सुदूरता के सम्मोहन, निर्जनता के आह्वान, काल कुहू, गंधर्व सामध्वनि, वेणु के नीरव लय, बीते दिवसों की समाधि, विस्मृत स्वप्न सघन, स्वप्नों के नीरव चुंबन, आदि नकारात्मक या फिर अमूर्त उपमानों के कारण नक्षत्र का न तो कोई स्पष्ट बिम्ब ही प्रकट होता है, न कुछ उसका प्रभाव ही। उपमानों की झड़ी लगाने का कवि का व्यर्थ प्रयत्न हुआ है। हाँ, सुकवि के सजग नयन, अनभ्र गगन के जलकण, ज्योति-बीज, हिमजल के घन, अग्नि शस्य, लघु बुद्बुद, विद्युत्-कन, आकाश सुमन, नंदनवन, तिमिर चरते शशिशावक, उपलदल, शलभ शिशु, आदि उपमान नक्षत्रों की दूरी, अनन्तता, असीम सुषमा, लघुता, उज्ज्वलता, क्षणिकता को लेकर लघु बिम्बों को तैयार करते हैं।[5] किन्तु वहाँ पर भी उपमानों की ऐसी झड़ी

१. पल्लव, पृ. १२८-१३४
२. पल्लव, पृ. ६८
३. अतिमा, पृ. ८६
४. शांति जोशी—सुमित्रानन्दन पन्त : जीवन और साहित्य, पृ. २०७
५. पल्लव, पृ. १२०-१२३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

लगायी गयी है कि पाठक के मन में एक बिम्ब के अंकित होते न होते दूसरा बिम्ब आ जाता है और पहले का प्रभाव मिटा देता है। यही नहीं, इसी जगह सूर-सिन्धु, तुलसी के मानस तथा मीरा के उल्लास नयन[१] के अप्रस्तुत न नक्षत्रों से कोई सम्बन्ध रखते हैं न साम्य ही। पाठक को विवश होकर यह कहना पड़ता है कि बिम्ब-योजना की दृष्टि से 'नक्षत्र' कविता एक व्यर्थ प्रयास है; जिसमें कवि की वह उच्च अनुभूति प्रकट नहीं होती, जो 'बादल' कविता में देखी जा सकती है। अनुभूति के अभाव में कई असंगतियाँ बतायी गयी हैं, जिनकी पन्तजी जैसे भावुक कलाकार से हम आशा नहीं करते। हाँ, 'गुंजन' में शुक्र को द्वाभा का एकाकी प्रेमी कहकर मूर्त रूप दिया है।[२] किन्तु वहाँ भी उसके आगे 'नीरव दिगंत का शब्द मौन' कहकर मूर्त को बिगाड़ दिया है। नक्षत्र का बिम्ब निम्न पंक्तियों में सार्थक हुआ है—

नील-आस्य पर महाहास्य भर उज्ज्वल तारे
जगमग करते चिद् दीपों-से नभ करतल में।[३]

'लोकायतन' काव्य में नक्षत्रों को 'जुगनुओं के जगमग उडु कीट'[४] तथा 'श्वेत चीटों सी उडुगण पाँति'[५] कहकर उनकी बिम्ब-योजना की गयी है।

स्वर्ग धरा के मध्य रश्मि वैभव से चित्रित
स्वप्नों के रत्नस्मित सम्मोहन से ज्योतित,
इंद्रधनुष से, देखो विश्व क्षितिज आलिंगित,
विजय केतु-सा वह प्रकाश के तम पर शोभित।[६]

उपर्युक्त पंक्तियों में यह बताया गया है कि स्वर्ग और धरा के मध्य रश्मि वैभव से चित्रित इंद्रधनुष तम पर विजय केतु-सा प्रकाशित है। यही नहीं विश्व-क्षितिज एवं इंद्रधनुष को आलिंगन में आबद्ध दिखाकर उनके प्रेम-व्यापार का भी चित्रण किया गया है। वैसे तो यहाँ इन्द्रधनुष प्रतीक रूप में आया है, इसलिए उसके सप्तरंग, आकार आदि के चित्रण की ओर कवि ने ध्यान नहीं दिया है। आगे ितिज का एक वर्णन द्रष्टव्य है, जहाँ प्रकाश क्षितिज को, जो कृष्ण-नील मुख पर स्मित रत्नारुण रेखा-सा पड़ा है, भू की स्वर्णिम काँची-सा चित्रित किया गया है—

१. पल्लव, पृ. १२२
२. गुंजन, पृ. ४३
३. सौवर्ण, पृ. ९७
४. लोकायतन, पृ. ३६६
५. वही, पृ. ३७०
६. स्वर्ण-किरण, पृ १६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कृष्ण नील मुख पर स्मित रत्नारुण रेखा सा
खिचा प्रकाश क्षितिज, भू की स्वर्णिम काँची सा,[1]

क्षितिज की यह मोहक कल्पना भावमय है। नीलाकाश के मुख पर रत्नारुण रेखा-सा क्षितिज है, जो पृथ्वी को घेरे है। इसलिए वह पृथ्वी की स्वर्णिम काँची-सा उसकी कटि में पड़ा है। नील रंग पर स्वर्णिम रंग बहुत फबता है।

ऋतुएँ : 'गुँजन' में नववसन्त की रंगीन वर्णना की गयी है, जो चाक्षुष, श्रव्य एवं आस्वाद्य संवेदनाओं को उत्तेजित करने के साथ ही प्रकृति की नवल शोभा, प्राकृतिक वस्तुओं में नयी स्फूर्ति एवं उमंग सब का भाव व्यंजित करती है—

बन के विटपों की डाल-डाल
कोमल कलियों से लाल-लाल
फैली नव मधु की रूप ज्वाल,
जल-जल प्राणों के अलि गुंजन
करते स्पंदन, भरते गुँजन।[2]

अन्योक्ति के द्वारा इन पंक्तियों में द्विवेदी-युग के पतझर के बाद छायावाद रूपी वसंतागमन, साहित्य-विटपी पर नये रूप-रंग विन्यास एवं नवीन मधु संचय के लिए आतुर तरुण कवियों के चित्र भी स्पष्ट हैं।

शरद् ऋतु अपनी उज्ज्वल कोमलता, हँसी-सी निश्चल धूप को लेकर कवि की स्वप्न स्मृतियों को सजग करती है तो कवि उसका जुलाहे रूप में वर्णन करता हुआ कहता है कि शरद् ऋतु जीवन का छाया-प्रकाश लेकर स्वप्नों का पट बुनती है तथा गीत-स्वरों का जाल गूँथकर उसमें सुख-दुःख एवं अश्रु-हास को उलझा देती है। आगे उसका संसार पर प्रभाव दिखाते हुए बताया गया है—

अब बिखर गया पावस का घन,
ठंडा निदाघ का खर अंगार,
अब हँसती उज्ज्वल धुली धूप
उजियाली में आया निखार।[3]

लाक्षणिक शैली के कारण शरद् का चित्र प्रभावकारी है।

सावन की वर्षा की झड़ी प्रसिद्ध है और उसपर कई कविताएँ भी प्राप्त हैं। पन्तजी ने उसको शब्द-चित्र में इस प्रकार बाँधा है—

ऐसे पागल बादल बरसे नहीं धरा पर,
जल फुहार बौछारें धारें गिरतीं झर झर!
आँधी हर हर करती, दल मर्मर, तरु चर् चर्,
दिन रजनी के पाख बिना तारे शशि दिनकर![4]

---

१. सौवर्ण, पृ. ९६
२. गुंजन, पृ. १०
३. उत्तरा, पृ. १३५
४. स्वर्णधूलि, पृ. ८३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

'वर्षा' का 'पागल' विशेषण उसकी उग्रता एवं क्षुब्धावस्था का द्योतक है। जल फुहार, बौछार, झर झर गिरती धारा, हर हर करती प्रचण्ड आँधी, मर्मर करते दल, चर् चर् करते तरु सब मिलकर वर्षा का भीषण रूप सामने रख देते हैं। चारों ओर अमा छायी हुई है और दिन-रात का कोई पता ही नहीं चलता क्योंकि सूर्य, चन्द्र एवं तारों की निशानी तक नहीं है। ऐन्द्रिय संवेदनाओं पर आधारित वर्षा का यह वर्णन बिना किसी अप्रस्तुत के भी रूप-विधान में समर्थ है। अन्तिम पंक्ति में क्रम-भंग दोष खटकता है।

तूफान : युग-परिवर्तन के फेर में पड़कर मलय पवन तूफान का रूप धारण करता है, जिसका डरावना रूप निम्न पंक्तियों में है—

मलय पवन तूफान बन रहा ! सर् मर् चर् मर्
टूट रहे हैं जीर्ण खोखले वृक्ष ठूँठ अब
भूमिसात हो ! नाच रहे झर् झर् करते पत्ते
शुष्क पीत मृत, घूम घूम शत आवर्तों में !
धूलि कणों के भँवर उठ रहे, लोट लोट कर
धूसर भुजंगों-से झंझा कम्पित धरती पर ![1]

झंझा के प्रहार में पड़कर खोखले जीर्ण वृक्ष भूमिसात् हो रहे हैं। शुष्क पीत मृत पत्ते झर झर कर शत आवर्तों में घूम रहे हैं। धूलि कणों के भँवर उड़ रहे हैं। धूसर भूजंग-सा झंझा धरती को कम्पित कर रहा है। विशेषण, क्रिया-पद, ध्वनि-चित्र एवं अप्रस्तुत उपादान तत्वों के रूप में अपनाये गये हैं।

वीचि : 'पल्लव' में 'वीचि-विलास' एक प्रसिद्ध कविता है और यह कविता नैनिताल में लहरों की क्रीड़ा से प्रेरित होकर लिखी गयी है।[2] इस कविता में वीचि के लिए उपमान रूप में 'वारि बेलि' तथा 'बिना नाल के फेनिल फूल' दृश्यात्मक सौन्दर्य पर आधारित हैं। साथ ही उसके उठने-गिरने की क्रियाओं के द्योतक 'विकसा और सकुचा' प्रयोग अन्वर्थक है—

वारि बेलि सी फैल अमूल,
छा अपत्र सरिता के कूल,
विकसा और सकुचा नवजात
बिना नाल के फेनिल फूल।[3]

समय के अनुरूप सामाजिक आदर्श एवं परम्पराएँ बदलती रहती हैं। इस परिवर्तन को मूर्त करने की क्षमता किसी कुशल कलाकार या कवि में ही

---

१. रजतशिखर, पृ. १२८
२. शान्ति जोशी—सुमित्रानन्दन पन्त : जीवन और साहित्य, पृ. २०५
३. पल्लव, पृ. ७६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पायी जाती है। पन्तजी ने काल को सर्प का रूपक देकर अन्ध-परम्परा के बदलने के तथ्य को सर्प के केंचुल-त्याग द्वारा दिखाया है—

काल – सर्प झाड़ता
जीर्ण केंचुल अब निर्भय।[1]

परिवर्तन : 'पल्लव' की 'परिवर्तन' कविता दार्शनिक दृष्टि एवं बिम्ब-योजना की पटुता का सुन्दर उदाहरण है। परिवर्तन प्रकृति का नियम है और वह अवश्यंभावी है। उसपर किसी का कोई नियन्त्रण नहीं चल पाता। उसको कुटिल काल कृमि की उपमा दी गयी है और कहा गया है कि वह विश्व के मानस-शतदल को छान रहा है।[2] उसी को वर्षोपल का उपमान देकर यह दिखाया गया है कि वह संसृति के स्वर्ण शस्यदल को दलमल करता है।[3] परिवर्तन के उग्र तांडव से कम्पित सारा दिक्-मंडल हाहाकार रव से मुखरित है और सारा विश्व उसका समाधि-स्थल है। सारा विश्व उसके इंगित पर नाच रहा है। नभ के ज्योतिर्मय नक्षत्र खग-शावकों के समान टूट पड़ते हैं। जैसे भुजंगम सपेरे के संकेत पर नाचता है वैसे सागर उसके इशारे पर नाचता है। सम्पूर्ण दिशाएँ पिंजरबद्ध गजवर के समान नतमुख हो उसका अधिकार एवं प्रभुता मानती हैं और उसके प्रकोप से वातहत गगन आर्त गर्जन करता है।[4] अन्त में निष्ठुर परिवर्तन को एक महासागर के रूप में देखा गया है जो अनन्तकाल से गर्जना करता हुआ उमड़ रहा है तथा प्रत्येक वस्तु को अपने महोदर में समाये चला आ रहा है।[5]

उपलक्षित बिम्ब : जड़ प्रकृति के लक्षित बिम्बों के कुछ रूप देखने के बाद उसके एकाध उपलक्षित बिम्बों की भी चर्चा करना उचित होगा क्योंकि कहीं-कहीं उपलक्षित इतने सक्षम बिम्ब प्रस्तुत करते हैं कि वे लक्षित से भी प्रभावशाली दिखाई देते हैं।

(१) नव्य चेतना केतु फहराता
सत रंग द्रवित दिगन्तर;
आदर्शों के पोत बढ़ रहे,
पार अतल भव सागर।[6]

(२) स्वप्नों का आवेश ज्वार उठ
विश्व सत्य के पुलिन डुबाता,—
लहरा शाश्वत के जीवन में![7]

---

१. पतझर, पृ. १५
२. पल्लव, पृ. १५१
३. वही, पृ. १५२
४. पल्लव, पृ. १५२
५. वही, पृ. १६३–६४
६. उत्तरा, पृ. ५२
७. वही, पृ. ६१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रथम अवतरण में नव्य चेतना का केतु, सतरंग द्रवित दिगन्तर, आदर्शों के पोत, भवसागर सब मिलकर पाठकों के नेत्रों के सम्मुख सागर का एक चित्र उपस्थित करते हैं। द्वितीय अवतरण में स्वप्नों का ज्वार, सत्य का पुलिन, लहरा शाश्वत के जीवन में—ये सब मिलकर सागर के जल में उत्पन्न होते ज्वार, तथा किनारों को डुबाकर लहर उठते जल का चित्र अंकित करते हैं।

लोक क्रान्ति की अग्रदूतिके, तुम झंझा पर
चढ़कर आई, मन्थित करने जीवन सागर
भूमि कंप सी, ध्वंस भ्रंश, गर्जन तर्जन कर
धूलिसात् कर गई युगों के सौध स्मृति-शिखर ![1]

उपर्युक्त पंक्तियों में लोक-क्रान्ति के दो बिम्ब प्रस्तुत हैं—जीवनसागर को मन्थित करते झंझा तथा भूकम्प के। भूकम्प के ध्वंस-भ्रंश, गर्जन-तर्जन एवं सौधों के धूलिसात् होने का भीकर दृश्य दिखाया गया है।

सुन्दरपुर में जो युग-क्रान्ति हुई उसका वर्णन करते हुए सांगरूपक के द्वारा दावाग्नि का बिम्ब इस प्रकार अवतरित किया गया है—

फैली सुन्दरपुर में युग दावा
जन मत शाखाओं में भर घर्षण,
नवचेतन थे अग्निशिखा वाहक
प्रतिस्पर्धी थे बाधाओं के वन[2]

बाधाओं के वन, नवचेतन के अग्निशिखा वाहक, जनमत-शाखा तथा युग-दावा सब मिलकर वन में दावाग्नि के फैलने, आग की ज्वालाओं की लपटों में वृक्ष-लतादि की शाखाओं के घर्षण एवं जलकर गिरने का दृश्य अंकित हुआ है।

आहेट पर आधारित एक बिम्ब 'उत्तरा' में आया है। कवि चाहता है कि दिव्य-चेतना की सुनहली किरणों से पृथ्वी वासियों के इच्छाओं से भरे हृदय को विदीर्ण कर दिया जाए ताकि उनके हृदय में स्वर्गीय चेतना के प्रति ललक पैदा हो। इसके लिए जो बिम्ब दिया गया है, वह आहेट का है। वक्ष-स्थल में शर के लगने से चोट लगती है और उसमें से रुधिर बह निकलता है। वह चोट खाया स्थान व्रण के रूप में परिणत हो जाता है। इसी का चित्रण इन पंक्तियों में देखा जा सकता है—

छोड़ो निज स्वर्णिम रहस्य शर
धरा वक्ष इच्छा–विदीर्ण कर,
स्वर्ग रुधिर मृण्मांस से बहे
उर में हो चेतना–गहन व्रण ![3]

१. रजत शिखर, पृ. ८७ २. लोकायतन, पृ. ५८०
३. उत्तरा, पृ. ८०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

२. मानवीकृत बिम्ब

"अमानव में मानव-गुणों के आरोप करने की साधारण प्रवृत्ति या प्रक्रिया को मानवीकरण कहा जाता है। सब वस्तु जीवित है, सब वस्तु मन से युक्त है तथा सब वस्तुएँ राग-द्वेष आदि मानव गुणों से सम्पन्न हैं, इसी प्रवृत्ति के रूपान्तर हैं।"[1] अंग्रेज़ी में इसी को 'पेरसोनिफिकेशन' की संज्ञा दी जाती है। साधारण व्यक्ति के लिए यह बाह्य प्रकृति जड़ होती है, किन्तु सर्वचेतनावादी कवि या कलाकार की दृष्टि में यह सम्पूर्ण विश्व एक ही चेतना से परिपूर्ण है, सब में एक ही चेतना का विलास है। उनके अनुसार सृष्टि के सभी तत्वों में एक ही प्राणधारा प्रवाहित है, इसलिए कवि को प्रकृति भी चेतन-सी लगती है, वह कभी हर्षित होती है तो कभी विषादमय बनती है। हिन्दी के छाया-वादी कवियों ने प्रकृति के प्रति इस नूतन दृष्टकोण को अपनाया। स्थूल प्रकृति के अनेक व्यापारों को उन्होंने अन्तर्जगत् की प्रतिकृति माना है। इस प्रकार अपनी अन्तः प्रकृति का विस्तार मानते हुए उन्होंने इस दृश्य जगत् को अपनी चेतना में आरोपित किया और प्रकृति को चेतन रूप में ग्रहण किया।[2] इसके पीछे उन कवियों की प्रकृति को रूप-चित्रों में आँकने की अभिलाषा भी कार्य करती थी क्योंकि वे कवि वस्तु के वर्णन मात्र से संतुष्ट न होकर उसको बिम्बों में प्रकट करना चाहते थे। डॉ. शंभुनाथ सिंह की मान्यता है कि छायावादी कविता में चित्रमयी भाषा में प्रस्तुतों और अप्रस्तुतों की मूर्ति चित्रित करने के प्रयत्न में मानवीकरण का विधान स्वतः हो गया है।[3] छायावादी मानवीकरण की प्रवृत्ति के पीछे एक कारण यह भी स्वीकार किया जा सकता है कि लज्जालु एवं संकोची व्यक्तिवादी कवि अपने सुख-दुख, हर्ष-शोक, आशा-निराशा की बातें खुलकर प्रकट नहीं कर सकते थे, जिस कारण उन्हें अपनी भावनाओं का आरोप प्रकृति पर करना पड़ा। इस प्रकार प्रकृति के माध्यम से भावनाओं की अभिव्यक्ति ने भी मानवीकरण की प्रवृत्ति को प्रश्रय दिया।

कहना न होगा कि हिन्दी-साहित्य में पन्त मानवीकरण के लिए पर्याप्त प्रसिद्ध हैं। उन्होंने प्रकृति की जड़ वस्तुओं में विविध मानवीय भावों, चेष्टाओं को खूब दिखाया, जिससे उनके काव्य में एक नया सौन्दर्य आ गया। वे कभी प्रकृति का नारी रूप में चित्रण करके उसके रूप, गुण, द्युति, गति, मूकता, म्लानता को दिखाते हैं, कभी उसका लज्जा-वेष्टित सौन्दर्य-दर्शन करते हैं। कहीं वे प्राकृतिक वस्तुओं में एक-दूसरे के प्रति आकर्षण और उस आकर्षण से प्रेरित आलिंगन, परिरंभ, चुंबन आदि प्रेम-चेष्टाओं को दिखाते हैं तो कभी उनको

---

१. हिन्दी साहित्य कोष, भाग-१, पृ. ६४०
२. डॉ. कैलास वाजपेयी—आधुनिक हिन्दी कविता में शिल्प, पृ. १३७
३. डॉ. शंभुनाथसिंह—छायावाद-युग, पृ. २३९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

एक-दूसरे के विरह में तडपते, अकुलाते, रोते, उदास एवं म्लान होते दिखाते हैं। कभी प्रकृति का मानवीकरण कर उसको सांस्कृतिक सुषमा से मंडित करते हैं। इस प्रकार मानवीकरण के एक से एक सुन्दर चित्र पन्त-काव्य में हैं।

पृथ्वी, पर्वत, वृक्ष-लतादि : पन्त की धरित्री नववसन्त के सरस-स्पर्श को पाकर कामोद्दीप्त नायिका के समान अपने विकसित चिर यौवनभार को लेकर रोमांचित एवं पुलकित होती है।[1] मलयानिल आकर उससे छेड़छाड़ करता है और उसके तंद्रिल छायांचल को उर से सरका देकर उसमें पुलकावलियाँ भर देता है। उसके मधु अधरों पर मंडरा 'इच्छाओं की मधुपावलियाँ' उसके कानों में गुंजन भर उसको सभोग का निमंत्रण देती हैं।[2] कभी प्रसव व्यथिता बन रश्मि कलश से दिव्य प्रीति की स्वर्ण सुरा भरकर पीती है।[3] कभी धरित्री अपने सुन्दर मुख पर कामना का नव घूँघट डाले अपना सांस्कृतिक सौन्दर्य दिखाती है।[4] 'उत्तरा' में धरा को अपने उद्दाम यौवन को संभाले प्रिय के परिरंभ की प्रतीक्षा में लेटी एक नवयौवना नारी रूप में चित्रित किया गया है, जो मानवीकरण का सुन्दर उदाहरण है। धरा रूपी नवयौवना हरी मखमली चोली में छाती के मुकुलों को बांधे है। वह फूलों की शय्या पर लेटी हुई है और मधु से गुंजित उसका यौवन है। कामना-लता उसकी बाहें हैं, जो पल्लव पुलकित हैं। उसकी पृथु श्रोणी में शत ज्वालगर्भ भूधर निश्चल सोये हैं। मधुकर-कोकिल से झकृत मंजरित स्वर्ण काँची उसकी कटि पर शोभा पा रही है। वह निर्जन शयन कक्ष में लेटी है।[5] मुकुलों के शिखर (स्तन), कंपित अधर, पृथु श्रोणी, जघनों के पुलिन आदि प्रयोगों से पृथ्वी का यौन-बिम्ब अंकित होता है। साँगरूपक एवं लाक्षणिक शैली ने धरा के बिम्ब को सरल एवं संश्लिष्ट बनाया है। उसका एक दूसरा बिम्ब द्रष्टव्य है—

......देख रहा धरती को
इन्द्रधनुष में लिपटी-मुग्ध अनंत यौवना
नाच रही जो मुक्त उर्वशी सी असीम में।
देख रहे अपलक ज्योतिग्रह यौवन शोभा।
उड़ता गंध ग्रथित दुकूल रेशमी पवन का—
शस्य हरित चोली वक्षोजों के शिखरों पर—
झूल रहीं फेनोर्मिल नदियाँ कंठहार सी—
लहराता लहँगा सागर का रत्नमणि जड़ा
धूप छाँहमय रश्मि द्रवित रंगों से गुंभित !
नाच रही वह गिरि श्रृंगों के हाथ उठाए
नील मुक्ति में !—चित् प्रकाश से सद्यः वेष्टित ![6]

---

१. पल्लव, पृ. ८३ २. ज्योत्स्ना, पृ. १०७ ३. स्वर्णकिरण, पृ. ६४
४. स्वर्णकिरण, पृ. ३ ५. उत्तरा, पृ. ८६–८७ ६. सौवर्ण, पृ. ९७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गिरि-शृंगों के हाथ उठाये असीम में मुक्त उर्वशी-सी नृत्य-निरता धरती का यह मोहक चित्र है। मुग्ध अनंत यौवना धरती इन्द्रधनुष में लिपटी है। नृत्य की गति में रेशमी पवन रूपी उसका गंध ग्रथित दुकूल उड़ रहा है। उसके वक्षोजों पर सस्य हरित चोली पड़ी है। फेनोर्मिल नदियाँ कठहार हैं जो नृत्य में झूल रही हैं। सागर का रत्नमणिजड़ा लहंगा लहरा रहा है। नृत्य के सभी उपादानों से युक्त कर धरती का रूप अंकित किया गया है। रूपक, उपमा एवं पौराणिक पात्र उर्वशी का सहारा लेकर बिम्ब को सजीव बनाया गया है। नृत्य-निरता अप्सरा रूप में भू का एक चित्र 'युगांतर' में भी मिलता है।[1]

भारतीय संस्कृति में रजस्वला होने के चौथे दिन स्त्रियाँ अंगराग का उबटन कर स्नान करती हैं। रजस्वला नारी पांडुर वदना रहती है। किन्तु महावट की फुहार में स्नान करके उसका सौन्दर्य निखर उठता है। पतझड़ के पीले पत्तोंवाली भूमि वर्षा की झड़ी में स्नान करके सद्यः स्नाता स्त्री के समान कांतिमयी हो गयी है—

रजस्वती पांडुर वदना भू, अँगराग मल तन पर,
नहा महावट की फुहार में निखर रही तृणश्यामल![2]

सद्यःस्नाता नारी रूप में बिम्ब और भी स्थानों में प्राप्त होता है।[3] सद्यः स्नाता नारी में भोग-लालसा घनीभूत रहती है। इस प्रकार के मनोरथ को लिये सद्यःस्नाता रूप में प्रकृति का और दृश्य देखिए—

चल खंजन नयनों से, कल चातक पुकार-से
भू का सद्यः स्नात मनोरथ प्रकट हो रहा![4]

भू का किरणों के सहस्रों कर-पद बढ़ा अग्नि बरसाती रक्त पद्मासन पर आसीन चंडी रूप में वर्णन 'लोकायतन' में हुआ है।[5] आगे उसके मातृरूप में भी चित्र अंकित किया गया है—

खग कूजित निज कुसुम क्रोड़ में भू
लिए मनुज सुत को भी अभिशापित![6]

यह बिम्ब प्रकृति और मानव में वैषम्य बताता है। प्रकृति नित्य आनंदमयी है जब कि मनुज दुःख से अभिशप्त है। भू-माता अपनी गोद में प्रकृति और मानव रूपी दो संतानों को लिये है।

पन्त जी के काव्यों में और यहाँ तक कि उनके स्वर्ण-काव्यों में भी पृथ्वी के अनेक यौन वर्णन आये हैं, जिनके दर्शन मात्र से सहसा फ्राइड़ का यह सिद्धान्त

---

१. युगपथ, पृ. १०६–१०७
२. अतिमा, पृ. ११३
३. ग्राम्या, पृ. ३८
४. रजतशिखर, पृ. १४१
५. लोकायतन, पृ. ४११
६. लोकायतन, पृ. ५९६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कि कवि या कलाकार मानसिक रोगी है और उसकी दमित कुंठित वासनाओं का उदात्तीकरण ही कला है, स्मरण आता है। शिष्ट पाठक पन्त जैसे आध्यात्मिक स्तर पर बात करने वाले कवि से ऐसे यौन-चित्रों की प्रतीक्षा नहीं कर सकते। कलियों के 'क्वारे भग', 'रज-गंध स्रवण', 'धरायोनि की कांक्षाएँ मादन',[१] 'स्वर्ण श्रोणि पर शीश धरे सोया विंध्याचल', 'गज रदनों से शुभ्र जघन'[२] 'लिपटे भू के जघनों से घन,' 'नाभिगर्त का भँवर'[३] आदि बातें अध्यात्मवादी पन्त की दमित कुंठा की परिचायक हैं।

पन्तजी ने पर्वत का बड़ा ही संश्लिष्ट बिम्ब 'पल्लव' में अंकित किया है। मेखलाकार अपार पर्वत अपने सहस्र सुमन रूपी दृग फाडकर नीचे तालाब के दर्पण में निज महाकार देख रहा है। झाग भरे निर्झर गिरि का गौरव गाते हुए झर रहे हैं और गिरिवर की महदाकांक्षा के समान ऊपर उठे तरुवर नीरव नभ पर झाँक कर देख रहे हैं कि उसके परे क्या है।[४] बार-बार 'आ' का प्रयोग करने से पर्वत का व्यापक एवं विशाल रूप हमारे नेत्रों के सामने अंकित होता है और 'दृग फाड़ देखना' मुहावरा अत्यन्त दृश्यात्मक है। आगे मरकत भू-आसन पर बैठे तथा षड्ऋतुएँ रूपी तरुणियों से वेष्टित शैलाधिराज हिमवान का सम्राट रूप में चित्र द्रष्टव्य है—

> शैलाधिराज था हिम पर्वत
> मरकत भू आसन पर शोभित
> करतीं परिक्रमा शोभा नत
> षड्ऋतुएँ नव यौवन मुकुलित![५]

हिमालय की शिखरों की परियाँ सुरधनु-छाया में लिपट कर, झरनों के फेनों में हँस तथा हिम लडियों से अपनी माँगें भर फिरती हैं। रूपक पर आश्रित यह चित्र शिखरों का नारी रूप में सांस्कृतिक बिम्ब अवतरित करता है—

> झरनों के फेनों में हँस,
> हिम लड़ियों से माँगें भर,
> फिरतीं शिखरों की परियाँ
> सुरधनु छाया लिपटा कर![६]

संध्याकालीन गिरि-प्रान्तर ध्यान-मग्न मुद्रा में अपलक, निश्चल एवं अन्तर्मुख हो बैठा है। चारों ओर स्वर्ण-नील गैरिक छाया फैली हुई है और गिरि-प्रान्तर उपास्य देवता के प्रति भक्ति-भाव निमज्जित है—

१. लोकायतन, पृ. ४३०
२. युगपथ, पृ. ७१
३. उत्तरा, पृ. ८०
४. पल्लव, पृ. ५८
५. लोकायतन, पृ. ६४०
६. लोकायतन, पृ. १९१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्वर्ण-नील गैरिक छाया में
भाव निमज्जित हो गिरि प्रान्तर,
ध्यान वस्थित सा लगता,—
अपलक, निश्चल, अन्तर्मुख भास्वर ![1]

'नौका-विहार' कविता में कालाकाँकर के राजभवन का नींद में वैभव-स्वप्न देखते पुरुष रूप में वर्णन म नवीकरण का एक सफल उदाहरण है—

कालाकाँकर का राज-भवन सोया जल में निश्चिन्त, प्रमन
पलकों पर वैभव-स्वप्न सघन ![2]

उसी कविता में गंगा के किनारों को बीच की पतली धारा को बाहों में भर आश्लेष करने के लिए व्याकुल दिखाया गया है। ग्रीष्म के कारण जल-धारा पतली है और दोनों किनारे दूर-दूर हैं। किन्तु कुछ दूर पर खड़े होकर देखने से दोनों किनारों की दूरी कम होती है और किनारे जलधारा का स्पर्श करते-से जान पड़ते हैं। इस दृश्य को देखकर कवि की कमनीय कल्पना है कि कोई प्रेमी किनारे रूपी भुजाओं में जलधारा रूपी प्रेयसी के कृश-कोमल शरीर को आलिंगन भरने के लिए व्याकुल हो उठा है।

दो बाँहों में दूरस्थ तीर धारा का कृश कोमल शरीर
आलिंगन भरने को अधीर ![3]

आगे जलधारा के बीच में एक द्वीप है, जो माँ के उर पर सोये शिशु-सा लगता है—

माँ के उर पर शिशु-सा, समीप सोया धारा में एक द्वीप,[4]

पन्तजी ने वृक्ष-लताओं, पेड़-पौधों का भी मानवीकरण किया है—

विजन नीड़ में चौंक अचानक,
विटप बालिका पुलकित गात
निज सुवर्ण स्वप्नों की गाथा
गा गा कर कहती अज्ञात;[5]

इसमें विटप-बालिका के स्वप्न-जागरण, अचानक चौंक उठने तथा पुलकित हो स्वप्नों की गाथा गा-गाकर सुनाने का चित्रण है। कवि लतिका के कम्पित अधरों से मृदु अस्फुट गान सुनता है।[6] तो तरुण विटपों से लिपट कर परिरम्भ-सुख से सिहरती लतिका के मुकुलित गात का अवलोकन करता है।[7] 'विटप बाहु से छूट सिहरती मुग्धा लतिका'[8] भी उसकी दृष्टि से बच नहीं पाती। वासन्ती

१. पौ फटने से पहिले, पृ. १३४
२. गुंजन, पृ. १०२
३. वही, पृ. १०३
४. वही, पृ. १०३
५. पल्लव, पृ. ९७
६. वीणा-ग्रन्थि, पृ. ५१
७. गुँजन, पृ. ६०
८. अतिमा, पृ. ११३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

का उपासिका रूप में वर्णन करते हुए यह बताया गया है कि वह नव कलिका को अपने अंचल में रखकर देवी को उपहार स्वरूप अर्पित करती है और उसी को लेकर देवी प्रातः काल में जगत् का शृंगार करती है।[१] मन्द मारुत में झूमकर तिरछीन झुकती बासन्ती को अपने पीन यौवन-भार से अल्प अवनत लावण्यमयी मानिनी के रूप में देखा गया है —

मन्द मारुत से वासन्ती झूमकर
झुक रही थी तरल तिरछी पाँति में
ललित लोल उमंग सी लावण्य की
मानिनी सी, पीन यौवन भार से।[२]

धरा-चेतना के प्रतीक स्वरूप सोनजुही का एक युवती रूप में बिम्ब चित्रित किया गया है। वह आँगन के बाड़े पर चढ़कर दारु खम्भ को गलबाँही भरती है और कंगूरे पर कुहनी टेक मुसकाती है। वह दुबली-पतली है। उसके उभरे अंगों की गोलाई फूलों के गुच्छों के समान है। वह मुग्धा से ज़रा बड़ी वय की है। वह पहिले लजीली थी। वह पल्लवदेही है और उसका धूप-छाँह का आँचल ज़रा नीचे खिसका है—

एक टाँग पर उचक खड़ी हो
मुग्धा वय से अधिक बड़ी हो —
पैर उठा, कृश पिंडुली पर धर,
घुटना मोड़, चित्र बन सुन्दर,
पल्लव देही से मृदु मांसल,
खिसका धूप छाँह का आँचल, —[३]

सोनजुही का यह बहुत आकर्षक फोटोग्राफिक चित्र है। वैसे ही अपनी हरी-भरी झबरी कबरी में फुंदेवाले लाल फूल और मणि की माला खोंस तथा सलवटें पड़ी मखमल की साड़ी पहने जपा की झाड़ी,[४] काँस फेन की फूल-सेज पर जगकर नव गन्ध दुकूल तन पर धर और हंस-ग्रीवा फेर अपने चंचल खंजन चितवन से मन को हरती कमलमुखी[५] एवं नभ से कूद भू से अभिसार करती तारिकाओं-सी कुन्दकली[६] मानवीकरण के सजीव चित्र प्रस्तुत करती हैं। पन्त का देवदारु के प्रति विशेष मोह है। देवदारु के हरित शिखर भू की जिज्ञासा के समान ऊपर उठे हैं और नभ के नील रहस्य को चीरकर तारों से बातें करते हैं।[७] 'स्वीट पी' मृदु मलय के स्नेह-स्पर्श से पुलकित होती है तथा जीवन

---

१. वीणा-ग्रन्थि, पृ. २८
२. वही, पृ. १०७
३. अतिमा, पृ. ६०
४. वही, पृ. १०६
५ लोकायतन, पृ. ४२९
६. वही, पृ. ३११
७. वाणी, पृ. १०९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

के वैभव-सुख से उसका हृदय नर्तित हो उठता है। वह हास-विलासमयी है और अपनी शोभा में अतुलनीय है। वह साँझ-सबेरे प्रणय-कुंज में गुप्त बैठकर कूजन करती है।[1] कवि अपने एकान्त प्रांगण में लेटा हुआ है और हरित-धरित नीम अपनी शाखाओं को लेकर विह्वल उच्छ्वास भर रहा है।[2] चीड़, बाँज, वन देवदारु सिर हिलाकर ताल-नृत्य का आनन्द उठाते हैं तो मुग्ध तरु-लता झूम-झूम नाचती है।[3]

वनभूमि हरित साड़ी पहनी हुई है और काँसों का श्वेत दुकूल उस पर शोभा पा रहा है। वह अपने कुंद-दशनों से मृदु हास भरती है। सद्यः स्नाता एवं निर्धूल होने से वह अतीव कांतिमती है। सरसी उसकी वेणी है, जिसमें कुँई खोंसी गई है। उसके गले में हरसिंगार की माला है, हाथ में मालती के मृदु कंकण हैं। वसन्तकालीन सुन्दर पुष्पों से सुसज्जित वनभूमि बहुत रमणीय दिखाई देती है।[4] यह पूर्णिमा की रात में सुहाती वनभूमि का चित्र है। साँग-रूपक ने मानवीकरण को प्रभावशाली बनाया है। वसन्तकालीन लतिकावृत वन-श्री का उर जावक-अंगुलि-नख से विक्षत है और अपने फुल्ल भार से झुकी माधवी लता रस-ढीठ युवक के सम्मुख आनत है और लज्जावश अपने पद की ओर दृष्टि गड़ाये खड़ी है। यहाँ शृंगारिक वातावरण को चित्रित किया गया है—

अब लतिकावृत्त वन-श्री का उर
जावक-अंगुलि नख से विक्षत,
झुक फुल-भार माधवी लता
रस ढीठ युवक सम्मुख पद-नत।[5]

पल्लव-बाला सौरभयुक्त सुमनों का हार गूँथकर अपने को सजाये-संवारे तरु-डाल पर खड़ी विश्व पर विस्मित चितवन डालती है और अपने अधर प्रवाल को हिलाती है।[6] कोंपलों का भावभरा मुख है। रात भर सोकर उठी नायिका के समान कलियाँ अपनी चिरकाल की नींद त्यागकर अपने अलस पलक-दल खोलती हैं।[7] सौरभ से खिंच आये मारुत का प्राण उन्माद में धड़कता है और समागम के लिए विह्वल हो वह कलियों के कोमल वक्षों में अपना मुख डुबाता है।

कलियों के वक्षों में कोमल
डुबा रहा मुख मारुत विह्वल,
प्राणों में सहसा उन्मादन
सौरभ रहस समाई![8]

---

१. ग्राम्या, पृ. ७८–७९
२. वही, पृ. १०५
३. पतझर, पृ. ४७
४. लोकायतन, पृ. ३०१
५. किरण-वीणा, पृ. १२३
६. पल्लव, पृ. ५३
७. गुंजन, पृ. ५५
८. उत्तरा, पृ. १७०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

देश, ग्राम आदि को मानव रूप में प्रतिष्ठित करने की परम्परा प्राचीन काल से चली आ रही है। जन्मभूमि को माता रूप में चित्रित कर उसको स्वर्ग से भी गरिमामय सिद्ध किया गया है। किन्तु भारत-माता के उदास एवं विषण्ण रूप की झाँकी बहुत कम अंकित हुई है। पन्तजी का ध्यान इस ओर गया। उनका ध्येय यह रहा कि भारत-माता की दुरवस्था का चित्र प्रस्तुत कर जनता में राष्ट्रीय भावना उत्तेजित करें। भारत-माता का मूक एवं विषादमय रूप दिखाते हुए लिखा गया है कि वह कुंठित, पर-पदतल लुंठित है। क्रंदन-कंपित अधरों पर वह मंद मुस्कान भर अपनी वेदना को छिपाने का प्रयत्न करती है। उसको देखने पर ऐसा जान पड़ता है मानो राहु से ग्रसित चन्द्रमा हो। अंधकारमय क्षितिज ही उसकी चिन्ता से तनी भौंहें हैं, वाष्पपूरित नीलाकाश ही उसका नमित एवं साश्रु नयन है और विषाद की कालिमा से घिरा उसका आनन छायाशशि से तुलना करने योग्य है। गीता का ज्ञानमय सदेश देनेवाली भारतमाता की आज ऐसी दुर्दशा है कि वह ज्ञान-विमूढ है।[1] ग्राम-देवता का बिम्ब भी देखने योग्य है। वह सनातन पुरुष है और पूर्ण काम भी। उसके माथे पर तड़ित स्मित श्यामल घन रूपी छत्र शोभित है। वन का पवन उसका व्यजन है। वह कोटि बाहु है, वह हलधर है और वृषभ उसका वाहन है। वह मितभोजी, वसनहीन, क्षीणोदर, चिर सौम्य एवं शिष्ट है। सिर पर स्वर्ण-शालियों का मुकुट है। वह गणपति है। वह वाक्-युद्ध में वीर, क्षिप्र क्रोधी, चिर कर्मठ है। प्रतिवर्ष पिक वयनी मधु-ऋतु उसका अभिनन्दन करती है।[2]

कहीं चट्टान दम साधे नीरव चिन्तन करती दिखाई देती है।[3] तो कहीं वह चुप्पी साधे मन को अवाक् रखती है और अपना चौड़ा सीना ताने निर्भयता की मूर्ति बन सामने आती है—

मन अवाक् रखतीं
चुप्पी साधे चट्टानें
खड़ी सामने निर्भय
चौड़ा सीना ताने।[4]

सरल, चटुल विमल विपुल हिम-शिशु हुलसाये दिखाई देते हैं[5] तो सद्यः स्फुट कुसुमों के मुख पर स्वर्णिम ओसों के मुक्ताकण मुस्कान भरते रहते हैं।[6] प्रातः काल में विकसित पुष्पों पर ढुलकते औसकण जो सूरज की सुनहली किरणों से द्युतिमय हैं, स्वर्णिम दिखाई देते हैं। वे ऐसे द्युतिमय लगते हैं मानो मुक्ता कण हों। 'स्वर्णिम मुक्ताकण' का उपमान सादृश्य पर आधारित है।

---

१. ग्राम्या, पृ. ४८–४९
२. ग्राम्या, पृ. ५७
३. रजत शिखर, पृ. ५२
४. पौ फटने से पहिले, पृ. १२९
५. ज्योत्स्ना, पृ. ३९
६. रजत शिखर, पृ. ५४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

किरण, धूप, तम, छायादि : किरणों के मानवीकरण पर आधारित अनेक कमनीय बिम्ब पन्त-काव्य में सहज ही हमारा ध्यान आकर्षित करते हैं। चन्द्र-किरण की एक रमणीय नारी रूप में कल्पना करते हुए बताया गया है कि वह सजल स्निग्ध स्मिति के साथ मधुर मन्द गति से नीचे आती है और चटुल लहर पर चपल लास करती है तो कभी मुकुलों के स्वप्निल दलों को चूम-चूम अधरों पर मृदुल हास अंकित करती है। वह रजत-स्वर्णिम परियों-सी सुन्दर है और जगती की तन्द्रिल पलकों पर उतर कर मधुर स्वप्न भर देती है।[1] सूर्य-किरणें वृक्ष-लतादियों के अन्तराल से छनकर नीचे जा भू-रज पर लोटती हैं।[2] एक दूसरे स्थान पर सूर्य की अन्तिम किरणों को जल पर रेंगते हुए बताया गया है और उसके रूप को और भी चाक्षुष बनाने के लिए चितकबरे केंचुल का अप्रस्तुत लाया गया है —

> चितकबरे केंचुल-से जल पर
> रेंग रहे थे अन्तिम रवि–कर ![3]

वर्षोपरांत धूप का सुघर धुला मुख मौन मधुर लगता है।[4] चम्पई धूप का नारी-रूप में सांस्कृतिक चित्रण करते हुए उसके रूप एव व्यापारों की व्यंजना की गई है। वह मौन नीलिमा निलय में बसनेवाली है। रुपहली घनों की अलकें सहलानेवाली है, सूर्यमुखी किरणों की परियाँ उसकी पालकी उठाती हैं। सुकुमार सरोरुह-से उसके स्तन हैं। वह सलज्ज नारी है। वह रजत चन्द्रिका के प्रसारों में अंगड़ाई भरती और ऊषा की स्वप्निल पलकों पर जगती है। वह स्वर्णिम हंस-पंखों पर उड़ती है। उसकी ग्रीवा गोरे रंग की है—

> वह मौन नीलिमा निलय में बसनेवाली,
> रुपहली घनों की अलकें सहलानेवाली,
> वह सूर्यमुखी किरणों की परियों से वाहित
> सुकुमार सरोरुह – से स्तनवाली सलज्ज धूप ! —
> वह रजत प्रसारों में स्वर्णिम अंगड़ाई भर
> ऊषा की स्वप्निल पलकों पर जगनेवाली,
> वह हेम हंस पंखों पर नित उड़नेवाली,
> गोरी ग्रीवा बाँहोंवाली चम्पई धूप।[5]

सर्दी के मारे लोग अपने हाथों को घुटनों में समाये सिकुड़कर संकुचित हो लेटा करते हैं। उसी आधार पर रति-क्रीड़ा के उपरांत कामना-तृप्ति से

---

१. ज्योत्स्ना, पृ. ३६
२. रजत शिखर, पृ. ५३
३. लोकायतन, पृ. ४५
४. रजतशिखर, पृ. १४१
५. अतिमा, पृ. १३१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

बौनी स्वर्गशोभा का अपने कनक गौर उरोजों को पीन जघनों से सड़ाये सोने का एक स्थूल यौन-बिम्ब इस प्रकार अंकित है—

स्वर्ग शोभा
कनक गौर उभरे उरोजों को
पीन जघनों से सटाये
सोई थी
छेड़कर देखा,
कामना तृप्ति में
बौनी थी ।[१]

पन्तजी ने अन्धकार को पुरुष रूप में चित्रित किया है और उसे अंगड़ाते हुए[२] तथा गहरी आह भरते हुए[३] देखा है ।

विश्व-वेणु को पलने में पड़े शिशु तथा तरु-पात को धात्री के रूप में कल्पित कर वात्सल्य-भरा एक चित्र 'पल्लव' कविता में आया है । जैसे माता अपने बालक को सुलाने के लिए पालने में लिटाती है, वस्त्रों से उसके शरीर को ढँक देती है और कानों में सौ-सौ बातें भर झुला-झुलाकर सुलाने का प्रयत्न करती है, उसी प्रकार तरु के पात विश्ववेणु को पालने में लिटाते हैं, हरियाली से उसके शरीर को ढँक देते हैं और कानों में इधर-उधर की बातें सुनाकर झुलाते हैं ।

हरियाली से ढँक मृदु गात,
कानों में भर सौ-सौ बात;
हमें झुलाते हैं अविराम
विश्व पुलक-से तरु के पात,
कुसुमित पलनों में अभिराम ।![४]

काव्य में प्रकृति के स्थूल सौन्दर्य के अनेक चित्र मिल जाते हैं । किन्तु सूक्ष्म या अमूर्त प्रकृति-सौन्दर्य के चित्र विरले ही प्राप्त होते हैं । बात यह है कि वे शुद्ध प्रकृति के भीतर नही आते । छाया जैसी अमूर्त वस्तु को भी प्रकृति-सौन्दर्य की कोटि में लाकर प्रस्तुत करने का संभवतः प्रथम प्रयास पन्तजी ने किया । यह प्रकृति के चित्रण की नयी दिशा का निर्देशन था । पन्तजी ने 'छाया' कविता कौसानी में घर के पास देवदारु के वृक्ष की काँपती घनी छाया को संबोधन कर लिखी है ।[५] 'छाया' कविता में छाया[६] को भू पर मूर्छित पड़ी

१. कला और बूढ़ा चाँद, पृ. ३४
२. वीणा-ग्रन्थि, पृ. ६९
३. वीणा-ग्रन्थि, पृ. ६३
४. पल्लव, पृ. १०२
५. शांति जोशी – सुमित्रानंदन पन्त : जीवन और साहित्य, पृ. २०२-२०३
६. पल्लव, छाया, पृ. १०७-११५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

दुखिनी नारी के रूप में देखकर उसके लिए अनेक अप्रस्तुतों की झड़ी लगा दी है। परिहृत वसना, म्लान मना एवं भू-पतिता छाया रूपी दुखिनी नारी वातहता विच्छिन्न लता-सी भू पर पड़ी है। 'विच्छिन्न लता' कहकर उसकी निराश्रितता, एवं असहायावस्था को व्यक्त करने के साथ ही उसके मलिन एवं कृश रूप की भी व्यंजना की गयी है। फिर उसके आलस्य एवं थकान की ओर संकेत करते हुए रतिश्रांता ब्रज-वनिता का पौराणिक अप्रस्तुत रखा है। वह भाग्य से वंचिता, आश्रयरहिता, जर्जरिता, पद-दलिता एवं धूलधूसरिता है। इस प्रकार की दीन-हीन दशा में अपने कुन्तलों को फैलाये पेड़ के तले सोयी छाया कवि को नल से परित्यक्ता दमयन्ती-सी लगती है। विजन में तरु-तले पीली शय्या पर विरक्ति-सी, मूर्छा-सी, विरह-मलिन एवं दुःख-विधुरा-सी छाया पड़ी है। वह पथ-श्रांता द्रुपद-सुता-सी लगती है। जैसे कोई भिखारिणी दूसरों की कृपादृष्टि के लिए अंचल फैलाये पथ पर पड़ी रहती है, वैसे छाया रूपी नारी भी अंचल फैलाये पड़ी है और बदले में सूखे पत्तों को पाती है। यहाँ तक छाया के लिए प्रयुक्त सभी उपमान सार्थक, भाव-व्यंजक एवं मूर्ति-विधायक हैं। पर तुरन्त ही कवि का उपमानों के प्रति मोह जाग उठता है और अनियंत्रित गति से एक के बाद एक अमूर्त उपमान अपना जादू बिछाते चलते हैं। गूढ़ कल्पना, ऋषियों का गंभीर हृदय, बच्चों का तुतला भय, तरुवर का छायानुवाद, उपमा, भावुकता, भावाकुल भाषा, कटी-छंटी नव कविता, पछतावे की परछाई, दुर्बलता, अँगड़ाई, मादकता, वृद्धावस्था की स्मृति, दर्शन की जटिल ग्रंथि, भावी, विस्मृत-स्मृति, त्रिभुवन के नयन चित्र, जगती की नेपथ्य भूमि, अज्ञात विश्वविदूषक, रहस्यमय अभिनय की यवनिका आदि अमूर्त उपमान छाया के रूप-रंग, आकार-प्रकार का कोई स्थूल चित्र अंकित नही करते। 'युगांत' में छाया का तरुणी नारी-रूप में बिम्ब अत्यन्त स्पष्ट है। और उसके स्थूल शारीरिक आकार को भी व्यक्त करता है। वह मुड़ी मृदु बाँह का उपधान लगाये लेटी है। उसके उरोज उभरे हुए एवं कुन्तल खुले हुए हैं। साँवली होती हुई भी एकाकिनी लेटी षोडशी छाया, सुन्दर लगती है। वह विवसना, लता-सी तन्वंगी एवं क्षणभर की संगिनी है—

मृदु बाँह मोड़, उपधान किए
ज्यों प्रेम लालसा पान किए,
उभरे उरोज, कुंतल खोले,
एकाकिनि, कोई क्या बोले ?
वह सुन्दर है, साँवली सही,
तरुणी है,—हो षोड़शी रही,
विवसना, लता सी तन्वंगिनि,
निर्जन में क्षण भर की संगिनि ![1]

---

१. युगपथ, पृ. ४०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वायु का मानवीकरण कई स्थानों में हुआ है। कहीं उसको गंध (नारी) मुग्ध होकर थिरकते हुए तथा कामोत्तेजित अधे पुरुष के समान देखा गया है[१] तो कहीं वन्य सुरभियों से गुंफित शिशु मुकुलों की मुख-गंध सूँघकर इठलाते एवं गुँजन भरते।[२] कहीं वह किशोर कौतुकी समीरण वन के कंधों पर चढ़कर चलता है और सिंह-शावक के समान शिखर-शिखर उछल-कूद करता है[३] तो कहीं बाष्प-शिथिल एवं कौश-मसृण चंचल समीरण गंधों की तन्वंगी ऋतु को मधु-रज कोमल बाँहों में भर लेता है—

मत पूछो, बाष्प-शिथिल समीर
इठलाती कौश मसृण चंचल,
गन्धों की तन्वंगी ऋतु को
बाँहों में भर मधुरज कोमल![४]

बवंडर अट्टहास भर निखिल भुवन को अपने नृत्य मत्त उद्यत तापों से कुचलता है और दैत्यों की तरह उड़कर भुवन को कम्पित करता है।[५]

सर-सरिता-सागर : पन्त ने सर, सरिता, सागर का मानवीकरण कर कई सुन्दर चित्र अंकित किये हैं। निर्झरी अपने भंगिमामय भृकुटी-विलास, बहुरंगी लास और फेनिल हास को लिए फूलों के कूलों पर चलती है और अपनी नैसर्गिक सुषमा से मुग्ध करती है।[६] वह गिरि-बाला है जो आनन्दसूचक तालियाँ बजा-बजा कर अपनी सुरंग चूनरें फहराती है—

ताली दे दे कर
गिरि बालाएँ आनन्दित
फहरातीं निज
सुरंग चूनरें—विस्मय पुलकित![७]

प्राकृतिक वस्तुओं में प्रेम-व्यापार का निदर्शन कर पन्त ने सुन्दर बिम्बों की योजना की है। सागर और चन्द्रमा का प्रेम एवं पारस्परिक आकर्षण प्रसिद्ध है। दोनों एक-दूसरे का आलिंगन करने के लिए विह्वल हैं। सागर अपनी तरंग रूपी अगणित बाँहों को बढ़ाकर इन्दु-करों से आलिंगन करता है तो तरंगें भी नक्षत्रों का चुंबन पाने के लिए लालायित हो उठती हैं। जल के अन्दर प्रतिबिम्बित तारों को विपुल चटुल-लहरें फेनिल चुंबन भर मुग्ध करती हैं। इस प्रकार प्राकृतिक वस्तुओं का प्रेम-व्यापार एक शाश्वत सत्य है।

---

१. पल्लव, पृ. ८३
२. लोकायतन, पृ. ६४१
३. पौ फटने से पहिले, पृ. १२९
४. किरण-वीणा, पृ. १२७
५. शिल्पी, पृ ६४
६. पल्लव, पृ. १२५
७. पौ फटने से पहिले, पृ. १२९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अगणित बाहें बढ़ा उदधि ने
इन्दु करों से आलिंगन
बदले, विपुल चटुल लहरों ने
तारों से फेनिल चुंबन ![1]

कभी कवि सागर को नारी-रूप में देखकर उसके नीलाँचल में बन्धे दिशान्तर की कल्पना करता है[2] तो कभी धरा-योनि की दुर्गन्ध को धोकर पंक सनी टाँगों से बहती सिंधु-तरंगों को असह्य दुर्गन्ध के कारण मुँह बिचकाते और पछाड़ खा गिरते हुए देखता है।[3] 'वीचि-विलास' कविता में लहर को नारी के रूप में अंकित कर उसके लिए नाना अप्रस्तुत प्रस्तुत किये हैं। गूढ़ साँस-सी, सजल कल्पना-सी, शैशव स्मिति-सी, वारि बेलि-सी, फेनिल फूल-सी, छुईमुई-सी, मधुर वेणु की झंकार-सी, मुग्धा की मृदु मुस्कान-सी, दिव्यभूति-सी, सिन्धु-गिरा-सी यह लहर है। वह वारि की किशोर परी है, जो अपने मीन दृग को चारों ओर चलाती हुई किरणों के हिंडोले पर झूलती है। वह अनन्त उल्लासमय एवं महानन्दमय अकूल परमसत्ता का प्रतीक है, इसलिए 'अकूल की उज्वल हास', 'अतल की पुलकित श्वास', 'महानन्द की मधुर उमंग', 'चिर शाश्वत की अस्थिर लास', आदि उपमानों के द्वारा उसका रहस्यमय रूप दिखाया गया है। मूर्त से अमूर्त और अमूर्त से मूर्त का यह बिम्ब-विधान बहुत ही आकर्षक है और जहाँ अमूर्त उपमान लाये गये हैं, उन्हें ऐन्द्रिय संवेदनाओं से युक्त बनाकर ही प्रयुक्त किया गया है, जिससे उनका बिम्बधर्मी गुण सुरक्षित रह गया है।[4]

आकाशीय वस्तुएँ : आकाशीय वस्तुओं में आकाश, मेघ, सूर्य, चन्द्र, चन्द्रिका, तारे, बिजली, दिशाएँ आदि का मानवीकरण करके सुन्दर बिम्ब प्रस्तुत किये गये हैं। पौष निशा का तारों-भरा आकाश नयनाभिराम होता है। हरित धरा के ऊपर छायांकित नीलांबर अगणित तारों को लेकर मंदस्मित दिखाई देता है। कृत्तिका सामने मोती के गुच्छे-सी और भरणी त्रिकोण-सी शोभित है। दोनों के निकट ही रोहिणी सेंदुर की बिंदी दे, प्रिय-मिलनातुर हो बाँहें खोल खड़ी है। सहज मनोहर मृगशिर आदि-काल से मृग पर शर छोड़ता खड़ा है।[5] आकाश व्योमकेश-सा शोभित होता है। आकाश-गंगा स्मित उसका जटा-कलाप है। उसका भाल वंक शशि लेखा-से दीपित है। तम उसके शरीर से लिपटे व्याल है। शून्य दिशाओं रूपी हाथों में भूमि लट्टू-सी घूम रही है—

१. पल्लव, पृ. ८३–८४
२. स्वर्ण किरण, पृ. १७
३. कला और बूढ़ा चाँद, पृ. ८१
४. पल्लव, 'वीचि-विलास', पृ. ७६–७९
५. ग्राम्या, पृ. ६८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वियद गंगा स्मित जटा कलाप
वंक शशि लेखा दीपित भाल,
सुहाता व्योमकेश सा व्योम,
लपेटे चितकबरा तम व्याल !
स्वर्ण लट्टू-सी पृथ्वी घूम
शून्य दिक् करतल में अविराम ।[१]

मेघों को अस्थिहीन जलदों के बाल कहकर खिच, मींच, फेंक, उछाल, उनके विविध रूप रचने का बिम्ब 'विश्व-वेणु' कविता में आया है ।[२] गिरि-खोहों से जगकर प्रतिपल बढ़ते नवघन को गज-करभों का उपमान दिया गया है—

गिरि खोहों से जग नव हिम घन
गज करभों से बढ़ते प्रतिपल ![३]

ग्रीष्म के प्रातःकालीन सूर्य को मक्खन के कन्दुक-सा उज्ज्वल बताया है । ग्रीष्म का सूर्य तप्त अवश्य है, किन्तु प्रातःकाल में वह मक्खन के कन्दुक-सा स्निग्ध, शीतल एवं गोलाकार होता है । फिर उसकी किरणें घास-लताओं पर ढुलकते ओस कणों को सुखा-सुखाकर ले जाती हैं । कवि किरणों को जुलाहे का रूप देकर कहता है कि वे तुषार बिन्दुओं का मृदु पट बुनती हैं ।[४] ग्रीष्म-कालीन सूर्य को अपनी उग्र देह पर भस्म लगाये, त्राटक साधना में प्रचंड पचाग्नि सेंकते जटाधारी मुक्ति-धुनी तापस रूप में देखा गया है ।[५]

पन्त के भावुक हृदय में शशि के प्रति विशेष आकर्षण एवं मोह है । यही कारण है कि उनके काव्य में शशि के अनेक रूप-चित्र मिलते हैं । प्रातःकाल होते ही अपना मुँह छिपा देनेवाली शशिबाला की कल्पना रात-भर प्रिय-समागम से श्रान्त, क्लान्त, ग्लान एवं शिथिल होने के कारण प्रातःकाल में लज्जावश लोगों से मुख छिपा देनेवाली नारी रूप में की गयी है ।[६] कभी चन्द्र जलद-पट को हटाकर अपना मुख दिखलाता है[७] तो कभी अपनी चितवन से कामना को अभिव्यक्त करता है ।[८] कभी कामातुर पुरुष के समान अंगार-सा चाँद लहरों के धड़कते वक्ष-स्थल पर ऊब-डूब करता रहता है ।[९] हेम गौर शशिकला धूप-छाँह की राह पर लुक-छिपकर आँख-मिचौनी खेलती है ।[१०] कभी स्मित प्रीति-तरी-सी वह मोहक नीलम जल में तैरती है ।[११] तो और कभी एक सफल चित्रकार के

१. लोकायतन, पृ. ३६७
२. पल्लव, पृ. १०३
३. लोकायतन, पृ. ६४१
४. वही, पृ. ६४१
५. वही, पृ. ११५
६. वीणा-ग्रंथि, पृ. ७९
७. पल्लव, पृ. ६९
८. वही, पृ. ७१
९. कला और बूढ़ा चाँद, पृ. ७३
१०. अतिमा, पृ. १०९
११. लोकायतन, पृ. ६४३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

समान स्वप्न-तूली से इन्द्रधनुष-स्मित सप्तलोक का चित्र उतारती है—

सृष्टि कला तुम,
स्वप्न तूली सी करती चित्रित
इन्द्रधनुष स्मित
सप्त-लोक-श्रेणी सम्मोहित ![1]

गुंजन की प्रथम 'चाँदनी' कविता में चाँदनी जीवन बाला के रूप में चित्रित हुई है। यह जीवन बाला रुग्ण, पीली, निर्बला, कृशदेही, विवसना होने से लाज में लिपटी है, किन्तु उसके लिए 'सुन्दर' विशेषण निरर्थक है। उसके अंग, रंग, यौवन सब म्लान हैं। वह मूक, सजल एवं चिन्तित है। सांसारिक दुःखों से जर्जरित उसका उर है और वह मृत्यु की प्रतीक्षा में पड़ी है। आगे उसको तापसी के रूप में दिखाया गया है, जो नवजीवन का वर पाने की साधना में तल्लीन है।[2] दूसरी 'चाँदनी' कविता मानवीकरण का सर्वोत्तम उदाहरण है जिसमें ज्योत्स्ना के विविध रूपों का वर्णन किया गया है। नीलाकाश रूपी शतदल पर वह शारद-हासिनी मृदु करतल पर शशिमुख धर नीरव, अनिमेष, एकाकिनी बैठी है

नीले नभ के शतदल पर,
वह बैठी शारद हासिनि,
मृदु करतल पर शशि-मुख धर,
नीरव अनिमेष, एकाकिनि ![3]

चाँदनी की स्वप्निल नतचितवन अग-जग का मन छू लेती है, वह चल चितवन से जग-जीवन को तरंगित करती है। वह सरिता के पुलिन पर सोई नारी रूप में आती है, स्तब्ध समीरण उसकी साँस है, लघु लोल लहरें ही उसके उर-स्पंदन हैं। कभी वह अपने ही सौन्दर्य में छिपी हुई शिखर पर खड़ी है और उसकी सुन्दर छवि सागर की लहर-लहर पर नाच रही है। कभी चाँदनी एक लज्जालु नवोढ़ा रूप में आकर अपना सांस्कृतिक रूप प्रस्तुत करती है। चाँदनी रूपी नवोढ़ा एकान्त शयन पर छवि की छुई-मुई बनकर मृदु मधुर लाज से मरी जा रही है। वह कभी प्रतिपल अस्फुट स्वप्नों का हार गूँथती है और संसार के प्रति करुणार्द्र उसका अंचल ओसकणों से स्निग्ध है। वह मृदु मुकुलों के मुख में मोती के चुम्बन भरती है तो लहरों के चल करतल में चाँदी के चंचल उडुगण को धर देती है।[4] 'चाँदनी' कविता भावना की अद्वितीय शबलता के साथ उर्वर कल्पनाश्रित सक्षम कलात्मकता से भी परिपुष्ट है। विशेषण-

---

१. पतझर, पृ. १९
२. गुंजन, पृ. ३४
३. गुंजन, पृ. ८७
४. वही, पृ. ८७–८९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विपर्यय एवं लाक्षणिक सौन्दर्य ने चाँदनी को इतना स्पृहणीय एवं भाव-संकुल बनाया है कि उसका प्रत्येक बिम्ब पाठक के हृदय में गुद्‌गुदी पैदा करता है। फिर उसका अलौकिक रूप व्यंजित करने के लिए साकार चेतना, अनन्त प्रतीक्षा, अदृश्य, अस्पृश्य विभा आदि उपमान प्रस्तुत किये गये हैं।[1] चन्द्रकला का मुकुट ज्योतिर्मय भाल पर धारण किये, हीरक कनियों की ज्वालाओं से द्युतिमय, नीलाकाश रूपी लहरदार वेणी में तारक लड़ियाँ गूँथे, रजत बाष्प जलदों के सतरंग पंख खोल, सुन्दर सुरबाला-सी हँसती हुई, गगन से नीचे उतरती शारदीया स्वर्गंगा का साकार रूप जान पड़ती है।[2] अन्यत्र चाँद और चाँदनी को नर-नारी रूप में कल्पित कर दोनों के समागम का चित्र उतारा गया है। स्फटिक स्वच्छ मन्दिर के मुक्ताभ कक्ष में चाँद चाँदनी के अनावृत्त रूप-सौन्दर्य को अपनी बाँहों में समेटे सोया हुआ है।[3]

पन्त-काव्य में 'एकतारा' कविता अपने संश्लिष्ट बिम्ब के लिए प्रसिद्ध है। इसमें शुक्रतारा को अनन्त का मुक्तमीन और उसकी ज्योति को निष्कम्प शिखा कहा गया है। शुक्रतारा का पूरा वर्णन पढ़कर हमारे मन में जो बिम्ब तैयार होता है वह एक अनासक्त, शुद्ध बुद्ध ज्ञानी का बिम्ब है—

वह रे अनन्त का मुक्त मीन, अपने असंग सुख में विलीन,
स्थित निज स्वरूप में चिर नवीन!
निष्कम्प शिखा-सा वह निरुपम भेदता जग-जीवन का तम,
वह शुद्ध, प्रबुद्ध, शक्र, वह सम![4]

यहाँ तक बिम्ब बहुत सुन्दर है, किन्तु तुरन्त ही कवि ज्ञान की बातें कहना आरम्भ करता है, जिससे हमारा मन शुक्र से हटकर ज्ञान की बातों में केन्द्रित हो जाता है। यह उपदेश की प्रवृत्ति 'नौका-विहार', 'चाँदनी' आदि अन्य श्रेष्ठ कविताओं के अन्त में भी देखी जा सकती है। पाठक बिम्ब को ग्रहण करने ही जा रहा है कि हठात् उसका ध्यान ज्ञान या उपदेश की ओर खींचते हैं। ऐसे स्थलों पर चित्र संश्लिष्ट होते हुए भी विकलांग हो जाता है।

चपला को अभिसारिका रूप में चित्रित किया गया है। वह मेघों की गुह्य गुहाओं में हँस-हँसकर अभिसार करती है और यह अभिसारिका अपनी खुली वेणी में सुरधुन खोंस अप्सरा-सी उड़ती चलती है।

गुहाओं में मेघों की गुह्य
चंचला करतीं हँस अभिसार
खुली वेणी में सुरधनु खोंस
अप्सरी सी उड़ – फिर लघुभार।[5]

---

१. गुँजन, पृ. ९०–९१
२. रजतशिखर, पृ. १४२
३. कला और बूढ़ा चाँद, पृ. ८०
४. गुँजन, पृ. ८५
५. लोकायतन, पृ. ३६५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आगे उसके नाना रंगों और आकार एवं कटाक्ष का उल्लेख किया है कि नीली पीली सित हरी लाल रंगों की वह तन्वी है और उसकी भ्रू सदा चंचल है।[1] दिशा का सम्राट रूप में बिम्ब प्रस्तुत करते हुए उसको सौर चक्रों का दिव्य किरीट सिर पर धारे दिखाया गया है।[2] तो एक स्थान पर अनन्त कक्ष में लेटी शत भुवनों की जननी दिशा को प्रसव की अनन्त प्रतीक्षा लिये प्रसूती-गृह में पड़ी गर्भवती नारी के रूप में चित्रित किया है। उसकी स्फीत देह पर तारे रूपी रत्नखचित नीलाकाश का आँचल पड़ा है। फिर उसके लिए अन्धी गान्धारी का पौराणिक अप्रस्तुत दिया गया है। गान्धारी का विवाह धृतराष्ट्र से हुआ था। यह जानकर कि पति अन्धा है, गान्धारी ने अपनी आँखों में सदा के लिए पट्टी बाँध ली थी। कालक्रम से इनसे दुर्योधनादि सौ पुत्र हुए हैं। X X X गान्धारी एक सौ पुत्रों का वरदान पाकर गर्भवती हुई, किन्तु दो वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी प्रसव नहीं हुआ।[3] अत: अनन्त कक्ष में पड़ी गर्भवती दिशा की अन्धी गान्धारी से तुलना कल्पना का स्तुत्य उदाहरण है। वैसे सामाजिक जीवन में भी प्रसव के समय गर्भवती नारी की आँखों पर पट्टी बाँधने की प्रथा है —

रत्न खचित आँचल लिपटाए स्फीत देह पर
गर्भवती लेटी हो दिशा अनन्त कक्ष में, —
अन्धी, गान्धारी सी, शत भुवनों की जननी ![4]

समय और ऋतुएँ : उषा, प्रभात, निशा आदि समयों तथा छहों ऋतुओं के मानवीकरण पर आधृत बिम्ब भी पन्तजी ने प्रस्तुत किये हैं। समय सम्बन्धी बिम्बों में उषा का सर्वप्रथम स्थान है, क्योंकि उसी पर पन्तजी के सबसे अधिक बिम्ब मिलते हैं, और उनसे कवि का जैसा लगाव है वैसा अन्य किसी से नहीं है। कभी कवि अरुण उषा की अरुण अधखुली आँखों को देखता है[5] तो कभी उसकी कमल जैसी अधखुली लालिमामय सजल आँखों का दर्शन करता है।[6] कभी विश्वनारी उषा के सुनहले अंचल के उड़ते ही दर्शकों की शत हर्षित ध्वनियाँ गूंज उठती हैं,[7] तो कभी उषा कवि की प्रेयसी के दर्शन के लिए वातायन से झाँक कर देखती है।[8] कभी सलज्ज उषा अधरों पर मुस्कान की रेखा लाती है[9] तो कभी नभ का स्वर्णिम वातायन खोलकर संसार की ओर झाँकती है।[10] उषा का अभी-अभी जगी नायिका के रूप में चित्रण हुआ है। बहुधा

१. लोकायतन, पृ. ६४२
२. वही, पृ. ३६६
३. हिन्दी कथा कोष, पृ. ५८
४. सौवर्ण, पृ. ९७
५. वीणा-ग्रन्थि, पृ. १
६. वीणा-ग्रन्थि पृ. ११३
७. पल्लव, पृ. ८४
८. गुंजन, पृ. ४५
९. उत्तरा, पृ. १७०
१०. शिल्पी, पृ. ६२, पतझर, पृ. २७५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्त्रियाँ प्रातःकाल उठकर अपने स्वप्नों का स्मरण करने का प्रयास करती हैं और पुनः नख-शिख संभालती हैं, सजाती हैं। इसी प्रकार सलज्ज उषा को अपने शरीर को रंगों से भरते हुए देखा गया है—

झाँक झरोखे से स्वप्नों के
सलज उषा नख-शिख रंग जाती[1]

प्रातःकाल होते ही स्त्रियाँ पनघट से पानी भर ले आती हैं, वैसे ही उषा सुन्दरी कभी सिन्दूरी रवि पावक के मणिमय घट को भरकर ले आती है[2] तो कभी वह गायिका बनकर हमारा मन खींच लेती है—

किरणों की वीणा में—
सूर्य चंद्र तूँबे दिग्-उज्ज्वल—
स्मेर मुखी ऊषाएँ हँस-हँस
गाती रहतीं प्रतिपल![3]

संध्या को नारी रूप में चित्रित कर प्राकृतिक वस्तुओं के द्वारा उसका रूप-सौन्दर्य अंकित किया गया है। रूपसी संध्या अपनी छाया-छवि में अपने को छिपाये व्योम से चुपचाप उतर रही है। संध्या समय आकाश में थोड़ी-सी लालिमा रहती है। इसलिए उसका सुनहला केशजाल है। संध्या के छा जाते ही वातावरण शान्त, निश्चल एवं मौन हो जाता है। भ्रमर कमल-दलों में रह जाता है। इसलिए उसकी गुंजार समाप्त होती है। कवि ने यह कल्पना की कि संध्या के अधरों में मधुपालाप समा जाता है। उसके भ्रू-चाप भाव-संकुल, बंकिम हैं। आगे रूप, रंग, स्पर्श संवेदनाओं के आधार पर संध्या-सुन्दरी का रूप-विधान करते हुए कहा गया है कि उसकी ग्रीवा तिर्यक-सी है, चंपक द्युति से युक्त गात है, नयन मुकुलित है और मुख नत जलजात है। अनिल ही उसका लोल स्वर्णांचल है और खग-कुल रोल ही उसकी मधुर नूपुर-ध्वनि है। वह सीप के समान स्वच्छ एवं सफेद पंखों को खोल नभ में मौन उड़ रही है। 'स्वर्णाचल लोल' में रंग एवं स्पर्श व्यंजना है। 'सीप-से जलद' में रंग-भंगिमा है और 'चंपक द्युति' में रूप-भंगिमा आकृष्ट करती है। 'नयन' के लिए मुकुल का उपमान रूप-साम्य पर आधारित है। संध्या होते ही कमल के दल मुंद जाते हैं और कमल ज़रा आनत हो जाता है। इसलिए संध्या के मुख के लिए झुके कमल का उपमान विशेष भाव-व्यंजक है।[4] 'पतझर' में एक स्थान पर संध्या को संध्यावंदन के उपरांत निर्जन में छिपे सोते बताया गया है[5] तो 'ग्राम्या' में संध्या का नारी-रूप में चित्रण कर विनत मुख पर झीना आँचल धर विदा होने तथा उसके केसरी

१. अतिमा, पृ. ११०
२. लोकायतन, पृ. १९२
३. किरण-वीणा, पृ. २
४. युगपथ, पृ. ५२
५. पतझर, पृ. ६६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

दुकूल के क्षितिज पर फहरा उठने की कल्पना की गयी है।[१] रजनी की स्त्री-रूप में कल्पना करते हुए बताया गया है कि वह चंद्रिका-स्नात काली रजनी गोरी श्यामा है, जिसके मुख पर तारों का अंचल पड़ा हुआ है। उसका हिम-धौत तिमिर-कुन्तल खुला हुआ है—

तारों का अंचल दे मुख पर
छहरा हिम धौत तिमिर कुन्तल
वह स्वप्नों की गोरी श्यामा
निर्मलता से लगती निर्मल ![२]

'पौ फटने से पहिले' में अंधकार से आवृत रात को माता मानकर तथा जीव को उसके अंचल की छाया में सोता दिखाया गया है। तारों-भरा आकाश उसके ज्योति-छत्र के समान सुशोभित है।[३]

ऋतुराज वसन्त का चित्रण बहुधा सभी कवियों ने किया है, किन्तु प्रकृति के सुकुमार कवि पन्त का वह सर्वस्व है। ऋतुपति को धरारमण की संज्ञा दी गयी है। पुष्पों के प्याले में अपना यौवन भर-भर मधुकर को पिलाते हुए दिखाया गया है, जिसमें अन्योक्ति के द्वारा स्त्री-पुरुष के संभोग का भी एक चित्र प्राप्त किया जा सकता है।[४] गुलाब के गालों को लज्जित करनेवाली अधरों की लाली लेकर तथा पंखड़ियों को काले-पीले धब्बों से सहज ही सजाकर आनेवाला वसन्त, शरीर से पीले पड़े, अधरों को लाली से रंगे तथा शरीर के काले-पीले धब्बों को कृत्रिम प्रसाधनों से सजाये किसी सुन्दर व्यक्ति का बिम्ब प्रस्तुत करता है—

अधरों की लाली से चुपके
कोमल गुलाब के गाल लजा,
आया, पंखड़ियों को काले
पीले धब्बों से सहज सजा ![५]

वसन्त के आगमन से अल्मोड़े की कुसुमित घाटी चित्रशलभ-सी पंख खोलकर उड़ने को व्यग्र है। सारी पर्वतीय घाटी रंग-बिरंगे फूलों से सुसज्जित है।[६] आम्र-मौर में स्वर्ण कण गूँथकर तथा किंशुक को ज्वाला-वसन पहनाकर वसन्त आता है और हरित शुभ्र स्वर में मर्मर भरता है।[७] नव वसन्त का मानवीकरण करते हुए उसके आगमन का एक भव्य चित्र 'रजत शिखर' में मिलता है। वह अपने अधरों में गुंजन भरकर आता है। उसका मन सौरभ से पुलकित एवं तन फूलों

१. ग्राम्या, पृ. १०६
२. लोकायतन, ६४३
३. पौ फटने से पहिले, पृ. १३५
४. वीणा-ग्रंथि, पृ. ३०
५. युगपथ, पृ. १४
६. वही, पृ. १६
७. उत्तरा, पृ. १७७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

से रंजित है। वह किसी स्वप्न-जगत् में घूम रहा है, इसीलिए उसके लोचन अपलक हैं। वह कुहू-कुहू गाकर अपने प्राणों क सुख को अभिव्यक्त करता है–

नव वसन्त आता अब अधरों से भर गुंजन,
सौरभ से पुलकित मन, फूलों से रंजित तन,
नव भू यौवन-सा स्वप्नों से अपलक लोचन,
कुहू-कुहू गा, प्राणों का सुख करता वर्षण ![1]

चाक्षुष, श्रव्य एवं घ्रातव्य बिम्ब के मिश्रित प्रयोग से वसन्त का एक संलिष्ट बिम्ब पाठकों के मन में अंकित हो उठता है। वसन्त का चंग पर आधारित एक गत्यात्मक बिम्ब 'किरण-वीणा' में उपलब्ध है। चंग उड़ाता बालक चंग के काफी ऊपर उठते ही अपने हाथ की डोर ढीली कर देता है और चंग को हाथ में लेने के लिए शिखर पर बैठा बालक धरती पर कूद पड़ता है। वन-किशोर वसन्त भी पीले मरंद की चंग उड़ाकर अपने हाथ के मलय-डोर को ढील देता है और शिखर से धरती पर कूद कर दौड़ता है—

पीले मरंद की चंग उड़ा
दे रहा ढील गह मलय-डोर,
द्रुत कूद शिखर से धरती पर
दौड़ता लपट सा वन किशोर।[2]

ग्रीष्म का तापस रूप में चित्रण कितना सुन्दर बन पड़ा है—

तरुण तापस वीर,
उग्र रूप, प्रचंड त्रिनयन सा
निदाघ गंभीर !
धूलि से धूसर जटा घन
मौन वचन, मुँदे लोचन,
रुद्ध श्वास, सुखद तृणासन,
वस्त्र विरत शरीर ![3]

गंभीर ग्रीष्म का तरुण तापस-रूप में चित्रण है। तप-निष्ठ उसका उग्र रूप ध्यानस्थ भगवान् शंकर का स्मरण दिलाता है। उसकी सघन जटा धूलि-धूसर है। वह मन ही मन बात करता है, उसके लोचन मुँदे हुए हैं। वह सुखद कुशासन पर बैठा है और शरीर वस्त्र विरत है। वह श्वास को रोके ध्यान-समाधि में है। मानवीकरण के सहारे ग्रीष्म का यह जो चित्र प्रस्तुत किया गया है, वह ग्रीष्म के प्रभाव की भी सुन्दर व्यंजना करता है। ग्रीष्म की गर्मी

१. रजत शिखर, पृ. १४७
२. किरण-वीणा, पृ. १२३
३. रजत-शिखर, पृ. १४८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

का प्रचण्ड रूप सर्व-विदित है और सारा वातावरण धूल से भरा रहता है। गर्मी के कारण गला रुंध जाता है और कंठ से शब्द नहीं निकल पाते हैं। गर्मी के कारण आँखें अपने-आप झंप जाती हैं, श्वास लेना भी कठिन हो जाता है। घास की टट्टी ही उस समय थोड़ा-सा सुख प्रदान कर सकती है। गर्मी में पसीने की झड़ी लगती है, जिससे लोग कम वस्त्र पहनते हैं।

भू-नभ को बांहों में बाँधे इन्द्रधनुष-वसना एवं नीलांजन-नयना सिंधु-सुता वर्षा उन्मद यौवना नारी है, जिसके श्यामल कुंतल नभ में बिखरे हैं और चंचल हरितांचल क्षिति में फहर रहा है। वह क्षितिज-तले अर्धोत्थित लेटी है और शैलमाला ही उसके जघने हैं। असंख्य अपूर्ण इच्छाएँ उसके हृदय का मंथन कर रही हैं, गुरु गर्जना के रूप में वह अपनी अतृप्ति दिखा रही है। वह स्फुरित तडित रूपी दशनों को लेकर मुक्त हँसती है। बूंदा-बूँदी में उसके चंचल नूपुर झंकृत हो उठते हैं। घन-घोष ही मुरज-रव है। बगला ही उसकी रसना है। नृत्य निरत मोरों के फैलाये पुच्छों की कांति में उसकी मंद मुस्कान अंकित है। उसका ललाट बकुल-मुकुलों से गुँफित है। उसकी श्वास केतकी रज से सुरभित है। साँगरूपक के सहारे वर्षा का बिम्ब अंकित हुआ है।[1] वर्षा का मानवीकरण कर उसे सम्राज्ञी रूप में भी देखा गया है, जो श्यामल गजेन्द्र घन पर आसीन है तथा विद्युत् मणि-लड़ियों से भूषित है। उसके मस्तक पर सुरधनु का मोरमुकुट और नभ का छत्र है। बिन्दु-मुक्ता मंडित सित बाष्प उसका चँवर है और दिशाएँ गर्जन-घोष में उसके आगमन की सूचना देती हैं।

ऋतुओं की ऋतु वर्षा आती
श्यामल गजेन्द्र घन पर शोभित,
पर्वत ऋतुओं की सम्राज्ञी,
विद्युत् मणि-लड़ियों से भूषित !
मस्तक पर सुरधनु मोरमुकुट,
नभ-छत्र बिन्दु मुक्ता मंडित
सित बाष्प-चँवर-शोभा वीजित,
दिक् गर्जन से आगम घोषित।[2]

पावस का विजयिनी सम्राज्ञी रूप में ऐसा ही बिम्व 'किरण-वीणा' में भी आया है, जो नभ से भू पर शासन करती है तथा राजोचित महिमा-गरिमा से युक्त उसका रथ घरघराता हुआ दिव्य-पथ पर बढ़ रहा है। उसने दशों दिशाओं को जीत लिया है, उसके उपलक्ष्य में इन्द्रधनुष की ध्वजा फहरा रही है। उसकी दिव्य-विजय के उपलक्ष्य में देव-गण पुष्पहार अर्पित कर रहे हैं।[3]

---

१. रजतशिखर, पृ. १४९–१५०
२. लोकायतन, पृ. ६४२
३. किरण-वीणा, पृ. १२५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शरद ऋतु का जन-मन को मोहित करती सद्यः स्नाता मुग्धा नायिका रूप में चित्रण हुआ है। इन्द्रप्रभ घन-अवगुंठन को उठा वारिज-नयनी एवं चन्द्रमुखी ऋतु सरित-पुलिन पर विचरण करती है। उसका शीतल एवं कांति-मय शरीर है। तारा-पथ ही उसका मन है। उसने अभी-अभी स्नान किया है। इसलिए उसका कृश शरीर शुभ्र पीत है। कुंद-मुकुलों में वह हँसती है। चिर प्रकृति के अंक में पली वह सौम्य एवं सजल है।[१] शरद-चेतना का स्वर्गीय सौन्दर्य मनोमुग्धकारी है। वह प्रीतिमयी, अमृतमयी है एवं शुचि हिम-धवल उसकी हँसी है। वह चन्द्रवदनी एवं कुंददशना है। नक्षत्र-मंडल उसकी स्मिति है और सरोवर ही उसका हृदय है। उसके नयन सरसिज के समान सुन्दर हैं। वह सौम्य स्निग्ध है, मानो शांति की साकार प्रतिमा हो। वह संसार के अंधकार एवं क्लान्ति को मिटा देती है। उसका मृण्मय शरीर स्वर्गस्नात हो दिव्य एवं पवित्र है। कौश-शुभ्र काँस ही उसका वस्त्र है। वह पूर्ण यौवन-युक्ता है।[२] श्वेत-श्याम बलाकाओं की मदिर चितवन है। स्वच्छ जल और नील नभ उसके कक्ष हैं। काँसों की दुग्ध फेन-सेज पर वह सोती है। गौर पद्म-सरोवर उसका उठता-गिरता वक्ष है।[३]

हेमन्त का वृद्ध-रूप दिखाया गया है। हेमन्त काल में पत्ते पीले पड़ जाते हैं, जीर्ण-शीर्ण हो जाते हैं। वे जीर्ण पलित पीत कंपित पत्र ही हेमन्त का वार्द्धक्य सहज कंपायमान गात्र है। उसके पक्के बाल अधिक आयु के कारण हिम-धवल हो गये हैं। वह क्षीणकाय है और सीधा-सादा उसका वेष है। वह मंथर गति में चलता है और शरीर की कांति मंद पड़ गयी है। आँखें झुक गयी हैं। मुख-कमल भी फीका पड़ गया है। सब मिलकर हेमन्त में वार्द्धक्य की सभी विशेषताएँ आ गयी हैं—

जीर्ण पलित पीत पात,
कंपित हेमन्त गात !
हैम धवल पक्व केश,
क्षीण काय, सौम्य वेश,
मंथर गति, मंद कांति
नत दृग मुख वारिजात ![४]

शिशिर का क्रुद्ध रूप भी मोहक है। शिशिर भयंकर श्वास छोड़कर धूलि उड़ाता है और जरा-जीर्ण जगती के पीले पत्तों को उड़ाता है। सारे संसार को ध्वंस-भ्रंश करता-सा क्रुद्ध शिशिर झंझा पर चढ़ आ रहा है। अत्यधिक क्रोध के कारण वह थर-थर काँप रहा है और ओठ चबा रहा है। वह सी-सी

१. उत्तरा, पृ. १३७
२. रजत शिखर, पृ. १३९
३. कला और बूढ़ा चाँद, पृ. ३१
४. रजत-शिखर, पृ. १४४–१४५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सीटी बजाकर गाता है और जगत् को रुलाता है। वह समदर्शी शरद का अभिवादन करता है—

छोड़ श्वास फूत्कार धूलि के साँप नचाता
जरा जीर्ण जगती के पीले पात उड़ाता,
ध्वंस भ्रंश करता सा क्रुद्ध शिशिर अब आता
झंझा पर चढ़, थर थर कँपता, ओठ चबाता !
सी सी सीटी बजा, रुदन में भरता गायन,
समदर्शिनी शरद का वह करता अभिवादन ![1]

३. मनुष्येतर चेतन प्रकृति के बिम्ब

मनुष्येतर चेतन प्रकृति के बिम्बों को दो भागों में बाँटा जा सकता है—पार्थिव एवं अपार्थिव। पार्थिव चेतन प्रकृति के अन्तर्गत पशु-पक्षी, कीट-पतंगों के बिम्ब आते हैं और अपार्थिव में कल्पनाश्रित या पुराख्यान पर आधारित अनंग, अप्सरा, गंधर्व, स्वर्दूत आदि से सम्बन्धित बिम्ब लिये जा सकते हैं।

अ) पार्थिव चेतन प्रकृति के बिम्ब

पन्त-काव्य में कुत्ता, खरगोश, गिलहरी, मृग, गाय, मयूर, कोकिल, राजहंस, बतख, चातक, भ्रमर, जुगनू, तितली, तिमिंगल, साँप, अजगर, मीन, आदि पशु-पक्षी, कीट-पतंगों के बिम्ब प्राप्त होते हैं। कभी इनके प्रस्तुत बिम्ब अंकित किये गये हैं तो कभी इनको अप्रस्तुत में रखकर बिम्ब-योजना की गयी है। राजमार्ग पर मोटर से दब रक्त से लथपथ हो साँस तोड़ते कुत्ते का स्थूल प्रत्यक्ष बिम्ब इस प्रकार है—

साँस तोड़ता लौंडी कुत्ता
मोटर से दब,
राजमार्ग पर पड़ा,
रक्त से लथपथ, जर्जर ![2]

'किरण-वीणा' में धेनु का एक बिम्ब आया है, जिसमें उसके पूँछ उठाकर रंभाने एवं अंतः-सलिला स्वर्गंगा के तीर पर रस-कातर हो विचरने का चित्रण हुआ है। यह वर्णन दार्शनिक विचारों से गुँफित होता हुआ भी हमारे नेत्रों के आगे धेनु का चित्र अंकित करता है—

स्वर्ग धेनुएँ पूँछ उठाकर रंभा रहीं सुन मर्म मौन स्वर,
अंतःसलिला स्वर्गंगा के तीर विचर रस कातर ![3]

दो पैरों पर खड़े तथा भय से सतर्क दो श्रवणों को उठाये, फुनगियाँ चुन-चुन

---

१. रजत शिखर, १४५–१४६
२. पतझर, पृ. २०७
३. किरण वीणा, पृ. ३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

खाते खरगोश का चित्र बिना किसी अप्रस्तुत योजना के या आलंकारिक भाषा के, पर्याप्त सजीव एवं चित्ताकर्षक है—

दो पैरों पर खरगोश खड़े
फुनगियाँ नरम चुन चुन खाते
भय से सतर्क दो उठे श्रवण
संकेत विपद् का बतलाते ![१]

आगे गिलहरी का अत्यन्त स्वाभाविक रूप-चित्र अवतरित किया गया है—

थल के जीवन की चल लहरी,
शंकित सी, रोमिल पूँछ फुला,
गिलहरी नाचती तड़ित्-स्नायु
पाकर सम्मुख मैदान खुला ![२]

गिलहरी के लिए प्रयुक्त दोनों उपमान 'थल के जीवन की चल लहरी' तथा 'तडित् स्नायु' अत्यधिक सार्थक हैं और दोनों उपमान गिलहरी की चंचलता, क्षिप्रता एवं गत्यात्मकता के द्योतक हैं। दोनों उसके सूक्ष्म शरीर के भी व्यंजक हैं। फिर 'नाचती' क्रिया उसके गत्यात्मक बिम्ब को और गति-शील बना देती है।

खग-शावक पतझर आँगन में
उड़, कुदक, मटक चुगते दाने।[३]

'पतझर आँगन' कहने से कई पीले, जीर्ण पत्तों से भरा आँगन दृष्टि में आता है। फिर खग-शावक के नाना प्रकार के क्रिया-व्यापारों के द्वारा गत्यात्मक चित्रण हुआ है। वैसे ही बतख का आतप-सेवन करता हुआ चित्र भी स्वाभाविक है—

बतखों की चिकनी पीठों से
चिपके गीले ओसों के कन,
वे पंख झाड़, ग्रीवा मटका
करती प्रभात आतप सेवन ![४]

बतख प्रातःकाल में धूप का सेवन करती है। उससे पूर्व वह अपने पंखों को फैलाकर झाड़ती है और ग्रीवा मटका कर धूप में बैठ जाती है। 'चिकना' और 'गीला' शब्द स्पृश्य संवेदना को उत्तेजित करते हैं।

राजहंस के प्रति पन्तजी की विशेष आस्था दिखाई देती है। कई स्थानों में उसका वर्णन आया है। उसके अद्वितीय सौन्दर्य का द्योतक एक चित्र इस प्रकार अंकित है—

---

१. किरण-वीणा, पृ. १२९
२. वही, पृ. १२९
३. वही, पृ. १३०
४. स्वर्ण किरण, पृ. १३१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

राजहंस भरते उड़ान शुचि शुभ्र चतुर्दिक्
श्वेत कमल की पंखड़ियाँ बरसा जन पथ पर,
स्वर्णिम पंखों की शत उज्वल आभाओं से
नव स्वप्नों की दिव्य सृष्टि कर भू मानस में ।[1]

'वाणी' में शुभ्र कमल के वक्षों को अपनी ग्रीवा से मंडित कर स्वर्णिम लहरों पर तैरते राजहंस का चित्र आया है, जो रंग-संवेद्यता के कारण अत्यन्त चाक्षुष बन पड़ा है

शुभ्र सरोरुह वक्षों को कर ग्रीवा मंडित
राजहंस तिरते स्वर्णिम लहरों पर बिम्बित ।[2]

रत्न छाय बर्हभार खोले मयूर[3], वारि को तरसता तृषित चातक[4] आदि के चित्र भी सामान्यतः पन्तजी के काव्य में प्राप्त होते हैं ।

अजगर भयंकरता के लिये प्रसिद्ध है । नथुनों से फेन उगलती, सहस्र फण फैलाये फूत्कार करती अजगर-तरंगों का जो चित्र खींचा है, वह तरंग का न होकर वास्तव में क्रुद्ध उद्धत फण फैलाये अजगर का बिम्ब अंकित करता है —

नथुनों से फेन उगलतीं
अजगर तरंगें
सहस्र फन फैलाये
इसे चारों ओर घेरे
फूत्कार कर रही हैं ।
उनकी नाड़ियों में
लालसा का कालकूट
दौड़ रहा है ![5]

तितली का रंग-संवेद्य बिम्ब 'युगान्त' में आया है। वह मधु की कुसुमित अप्सरी है । वह उड़-उड़ फूलों को बरसाती है । रंग-बिरंगी तितली के उड़ने से ऐसा जान पड़ता है मानो फूलों की वर्षा हो रही हो । वह अपने लोल-लोल विविध रंगी पंखों को फैलाकर जब उड़ती है तब शत-शत इन्द्रचाप का आभास होता है ।

तुम मधु की कुसुमित अप्सरी सी
उड़ उड़ फूलों को बरसाती,
शत इन्द्र धनुष रच रच प्रतिपल
किस मौन गीतिलय में गाती ?[6]

---

१. रजत शिखर, पृ. १०७
२. वाणी, पृ. ३९
३. कला और बूढ़ा चाँद, पृ. १३०
४. वीणा-ग्रन्थि, पृ. १२५
५. कला और बूढ़ा चाँद, पृ. ७९
६. युगपथ, पृ. ५०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

'मधुप' पन्त की राग-संवेदना को उत्तेजित करता है। इसलिए वे कभी बिंधकर तड़पते मधुप का चित्र अंकित करते हैं[1] तो कभी अरुण कमल अधरों पर मधु चुम्बन अंकित करते हुए नील पीत भ्रमर के दर्शन कर पुलकित हो उठते हैं।[2] उनका भौंरा मधुरस पीकर वाचाल बनता है और खोया-खोया-सा डोलता है।[3] जुगनू अपनी क्षीण ज्योति में किसी खोये धन को ढूंढ़ता है।[4] चंचल-चंचल, बुझ-बुझ, जल-जलकर शिशुओं को पल-पल में छलता रहता है।[5] शब्द-विन्यास जुगनू के टिमटिमाने, बुझ जाने की प्रतीति करा देता है। मौन ज्योतिरिंगण निशीथ के अन्धकार में चमक-झमक कर प्रकाश का संकेत देते हैं—

मौन ज्योतिरिंगण निशीथ के अन्धकार में
चमक झमक उठते प्रकाश के संकेतों – से ![6]

वे ही जुगनू घाटी में दीप हिलाकर गुपचुप बातें भी करते हैं।[7]

पन्तजी को चींटी तक ने आकृष्ट किया है और उन्होंने उसको भी बिम्ब में बाँध दिया है। चींटियों की लम्बी पंक्ति काली रेखा और तम के हिलते-डुलते तागों के समान दिखाई देती है। फिर इधर-उधर बिखर-बिखर चलती चींटियों के लिए बालों की कतरन का उपमान दिया गया है। काली रेखा, तम के तागे तथा बालों की कतरन – ये अप्रस्तुत चींटी के रंग एवं सूक्ष्म देह को स्पष्ट करने में सक्षम हैं—

वह सरल, तरल, काली रेखा
तम के तागे – सी जो हिल-डुल
चलती लघुपद पल पल गिल जुल
वह है पिपीलिका पांति ![8]

इस प्रसंग में यह भी बताना आवश्यक है कि पन्तजी ने अपनी भावना, कल्पना एवं विचारों को सशक्त मूर्त रूप देने के लिए पशु-पक्षी और कीट-पतंग को उपमान रूप में ग्रहण कर उपलक्षित बिम्ब-योजना भी की है और कुछ स्थानों में ये उपलक्षित बिम्ब लक्षित बिम्बों से भी अधिक स्पष्ट एवं प्रभावकारी हैं। इसलिए ऐसे उपलक्षित बिम्बों की उपेक्षा नहीं की जा सकती। उदाहरण के लिए 'स्वर्ण-धूलि' कविता में कवि ने भगवान् से यह प्रार्थना की है कि वह मनुष्य के हृदय में ऐसा रमण करे जैसा कि गायें जौ के खेतों में विचरण करती हैं। यहाँ पाठक के मन में जो बिम्ब अंकित होगा, वह खेतों में स्वच्छन्द चरती-घूमती गायों का होगा।

---

१. वीणा-ग्रन्थि, पृ. १२५
२. वाणी. पृ. ३९
३. गुँजन, पृ. ५२
४. वीणा-ग्रन्थि, पृ. ४३
५. ज्योत्स्ना, पृ. ४५
६. रजत शिखर, पृ. ६
७. लोकायतन, पृ. ४३
८. युगवाणी, पृ. २७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जौ के खेतों में ज्यों गायें चरतीं विचरण,
देव, हमारे उर में रमण करो तुम प्रतिक्षण ।[1]

'उतरा' में अंध परंपरा के सूखे नीरस आदर्शों में दम घुटते मानव को दग्ध मरुभूमि में मृगजल को देख दौड़ते मृग के रूप में चित्रित किया गया है ।

आदर्शों के मरुजल से दग्ध मृगों को
मैं स्वर्गंगा का स्मित अंतर्पंथ बतलाता,[2]

उच्च विचारों के प्रशान्त मन में ही श्रद्धा और विश्वास जैसे उच्च आत्मिक गुणों का वास है, अन्यत्र नहीं । इन आत्मिक गुणों से युक्त मन प्रीति-तरंगों से तरंगित रहता है । इस बात को कवि ने सरोवर एवं हंस-मिथुनों के तैरने के बिम्ब द्वारा स्पष्ट किया है—

श्रद्धा और विश्वास तैरते हंस-मिथुन-से
उच्च विचारों के प्रशान्त जल में रजतोज्ज्वल,
अतल नील उर सरसी को कर प्रीति तरंगित ![3]

प्रशान्त रजतोज्ज्वल जल और हंस-मिथुनों के स्वच्छन्द तैरने से तरंगित अतल नील सरसी सब का कमनीय चित्र अंकित किया गया है । साँगरूपक ने चित्र को सप्राण बनाया है । 'रजतोज्ज्वल' एवं 'नील' रंगों ने बिम्ब को आकर्षक बनाया है । 'अतिमा' काव्य-संग्रह में भी ठीक इसी प्रकार का एक चित्र आया है, जिसमें श्रद्धा और विश्वास रूपी रुपहले राजमरालों के जोड़े को सात्विक उर-सरसी में शुभ्र सुनहली ग्रीवा मोड़े तैरते दिखाया गया है । रूपक एवं रंग-सवेदना के उपयुक्त नियोजन से चित्र कमनीय बन गया है ।[4] आध्यात्मिक आनंदानुभूति में निमग्न मन को सौरभ एवं मधु से उन्मन हो गुंजन भरते मधुकर के रूप में कल्पित किया गया है—

सौरभ से उन्मन हो उठता
उर का मधुकर,
आनन्द प्रीति शोभा रज पी
भरता गुंजन ।[5]

कवि अपने मन के स्वप्नों की तितलियों की फुहर से जन-मानस में रंग-रंग की शोभा फैलाता है ।[6] उसका प्राण रूपी जुगनू प्रेयसी की खोज में भटकता है ।[7] 'युगवाणी' में कवि ने यह मंगलाशा प्रस्तुत की है कि जीवन-स्वर से प्रभावित

१. स्वर्ण धूलि, पृ. १७
२. उत्तरा, पृ. ४७
३. सौवर्ण, पृ. ७७
४. अतिमा, पृ. २१
५. उत्तरा, पृ. १२६
६. रजत शिखर, पृ ५६
७. पल्लव, पृ. ६६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हो वर्तमान वैषम्य समाप्त हो जाएगा। इस बात को सँपेरे की बीन पर मंत्र-मुग्ध हो विनत फण फणियों के नर्तन के बिम्ब द्वारा समझाया गया है।

अखिल अमंगल दैन्य भूलकर
बैर, विरोध, विनत फन,
मंत्र-मुग्ध फणियों-से करते
जीवन स्वर में नर्तन।[१]

आगे 'रजत शिखर' में यह समझाया गया है कि निद्रित निश्चेतन मन मनोराग के संकेतों पर जागृत हो ऐसा नाच उठेगा जैसा कि साँप वंशी के स्वर-संकेतों पर अपना फण खोल नाचता है—

शत सहस्र फन खोल पुनः निद्रित निश्चेतन
मनोराग की वंशी के स्वर संकेतों पर
नाच उठेगा—कर विराग के प्रति विरक्त मन![२]

'लोकायतन' में वासुकि सर्प का एक बिम्ब अंकित किया गया है। नभ काल-नील गह्वर-सा लगता है जिसमें तम रूपी वासुकि दिशा रूपी कुंडल मारे बैठा है तथा फेन स्फीत शत विष फण फैलाये बैठा है और आकाश के जलते तारे उसके स्फीत फण में बिखरी मणियाँ हैं। वासुकि-सर्प का यह उदात्त बिम्ब रंग, रूप एवं आस्वाद्य की मिश्रित संवेदनाओं तथा उपमा-रूपक अलंकारों के कारण प्रभावोत्तेजक बन गया है—

काल-नील गह्वर सा लगता नभ
तम वासुकि हो दिक् कुंडल मारे,
फेन स्फीत शत विष फन फैलाये—
स्फोटा मणियों-से जलते तारे![३]

तिमिंगल मत्स्य बड़े-बड़े जहाज़ों तक को अपने पुच्छ के प्रहार से तहस-नहस कर सकता है। इसी आधार पर कवि ने अचेनन मन को तिमिंगल-सा कल्पित कर उसके पुच्छपात से नष्ट-भ्रष्ट होते मानव के जीवन रूपी यान का वर्णन किया है—

एक अचेतन की तरंग के प्रबल घात से
बालू का सा दुर्ग, यान मानव जीवन का
तहस नहस हो गया, तिमिंगल पुच्छ पात से।[४]

मानव-जीवन की अस्थिरता को 'बालू का दुर्ग' बताया गया है। इसको अचेतन की तरंग ऐसा नष्ट कर देती है, जैसे तिमिंगल मत्स्य जलान्तर भाग से घूमते

---

१. युगवाणी, पृ. ७५
२. रजत शिखर, पृ. २३
३. लोकायतन, पृ. ४९६
४. रजत शिखर, पृ. ३०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मानव-यान को नष्ट कर देता है। यहाँ प्रस्तुत और अप्रस्तुत दोनों के बिम्ब समर्थ हैं।

आ) अपार्थिव बिम्ब

पन्तजी अपने प्रारंभिक काल में स्वच्छन्द कल्पना के कवि रहे हैं। उनकी वायवी कल्पना जन-धरती से परे अप्सरा-लोक को देख आती है और ज्योति चूड अप्सराओं के मोहक सौन्दर्य पर विस्मय विमुग्ध हो जाती है। बात यह है कि पन्तजी बाल्यकाल में दादी के मुख से परियों, परियों के राजकुमार आदि की कथाएँ सुनते थे और ऐसी कथाओं में विशेष आनन्द अनुभव करते थे। 'दादी ने यह कह रखा था कि परियाँ छोटे बच्चों को बहुत प्यार करती हैं। अपने पंखों में छिपाकर उड़ा ले जाती हैं, फिर अपने घर में बन्द कर देती हैं।"[1] इस कारण पन्तजी के अपार्थिव बिम्बों में अप्सरा के काल्पनिक रूप-सौन्दर्य का प्रमुख स्थान है। उनकी अप्सरा निखिल कल्पनामयी एवं अखिल विस्मयाकार है। नारी-रूप में कल्पना करते हुए उसके अंग-प्रत्यंग का वर्णन किया गया है। वह अपनी तडित चकित चितवन से सुर-सभा को विस्मित एवं अवाक् कर देती है। उसकी नग्न देह पर सतरंग सुरधनु का सुकुमार छायापट सुशोभित है। नीलनभ की अपनी वेणी में इन्दु रूपी कुंद पुष्प को वह खोंस रखती है। वह अपनी मृणाल-तुल्य बाहुओं को फैलाये स्वर्गगा में जलविहार करती है और इन्दु-बिम्बों को पकड़कर तैरती है, तैरते समय ऊपर उड़ते फेन-कण ही नभोमंडल के द्युतिमय नक्षत्र हैं। उसकी सजल देह-छवि चंचल लहरों में बिम्बित हो असंख्य कमलों का आभास देती है। सूर्य की किरणों से प्रकाशित चल जलदों पर वह नभ के आर-पार जाती है। वह अपनी गोद में तडित-भीत शशि के मृग-शिशु को लगाये चलती है। उसके नभ-संचरण के समय के पद-चिह्न ही उडुगण हैं, इन्द्रधनुष ही नभ के पार जाने का सेतु है।[2] उसका गौर-श्याम तन है, जिस पर छायांचल शोभित है। प्रातःकाल में रजत हिलोरें उसके लिए कंचु काढती रहती हैं और तितलियाँ सुरंग रेशमी पंख डुलाकर उसके गाल को सिराती हैं। मुंदे मुकुलों में अप्सरा अपनी निरुपम छवि का स्वप्न देखती है, चटुल लहरियों से चुंबित मलयज उसका पद-चाप है। जलजों में निद्रित मधुपों से वह मौनालाप करती है।[3] दुग्ध फेन शारद ज्योत्स्ना में स्वयं ज्योत्स्ना बनकर वह सरसी में अभिसार करती है। नील रेशमी तम ही उसका खुला कच भार है। तार-तरल लहरांचल ही उसका स्तन-हार है, चंद्रिका की किरणें लघुपद हैं। मेहन्दीयुत उसके मृदु करतल की छवि से पुष्प विकसित होते हैं। उसकी गौर-देह की द्युति ही

१. शान्ति जोशी – सुमित्रानन्दन पन्त : जीवन और साहित्य, पृ. ३२
२. गुंजन, पृ. ९४–९५
३. गुंजन, पृ. ९६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हिम शिखरों की शुभ्रता है। उषा उसके तलवों की लालिमा है, शशि-स्मित घन उसके पंख हैं। नक्षत्र मंडल का कंपन। उसका उर-स्पंदन है और चपल वीचियाँ उसके पद-संचार हैं।[१] उसका मंदस्मित आनन है। नववसंत में उसके सौन्दर्य की झाँकी मिलती है, भृंगों का गुंजार उसके भृकुटी-भंग का द्योतक है। उसका उर-भार शत-शत आकांक्षाओं से स्पंदित रहता है। वह सुर-नर मुनि ईप्सित अप्सरा है और जरा-जन्म-भय-मरण-शून्य वह यौवनमयी एवं नित्य नवीन है। वह शिशुओं की चिर सहचरी है और माता बनकर उनके मुँह में अंगूठा डाल स्तन-पान कराती है तथा स्वप्न में आकर उनके अधरों में स्वप्निल हास भरती है।[२] वह बाल युवतियों को चितवन-कला सिखलाती है।[३] 'युगांतर' में उसके स्थूल शरीर जैसे लावण्य चूड पीन श्रोणी, उभार, स्वर्गिक शोभा-स्तंभों से पेशल जघन, आदि का उल्लेख हुआ है।[४] 'लोकायतन' काव्य में भी अप्सरा के दिव्य रूप का वर्णन हुआ है—

देखा कवि ने—मरकत सर तट पर
इन्द्र धनुष नीहारों में वेष्टित
करती दिवाभिसार अप्सराएँ
प्राणों की सुषमाओं से मंडित !
उनकी चितवन से विद्रुम जल में
रक्त नील खिल उठते पुष्कर
भृकुटि भंग बनती तरंग चंचल
स्मिति शोभा सीपों में जाती भर ![५]

यहाँ कवि ने अप्सरा और सरोवर का बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव दिखाकर अप्सरा के दिव्य अलौकिक सौन्दर्य की व्यंजना की है। उपर्युक्त पंक्तियाँ पढ़ते ही हमें जायसी की निम्न पंक्तियाँ स्मरण आती हैं—

नयन जो देखा कवँल भा, निरमल नीर सरीर।
हँसत जो देखा हंस भा, दसन्-ज्योति नग हीर॥[६]

एक जगह कवि ने अपनी काल्पनिक प्रेयसी को वन-फूलों की कोमलता में सहज संजोयी स्वप्न-देश की परियों की मृदु राजकुमारी बनाया है।[७]

अनंग एक मानसिक विकार है और उसको भारतीय पौराणिक कल्पना ने देवता रूप में ग्रहण किया है। पन्त जी ने अपनी 'अनंग' कविता में उसको

---

१. गुंजन, पृ. ९७
२. वही, पृ. ९३
३. वही, पृ. ९५
४. युगपथ, पृ. ११२
५. लोकायतन, पृ. ५३९
६. जायसी ग्रंथावली, पृ. २५
७. वाणी, पृ. ४३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पुरुष रूप में स्वीकार किया है तथा विश्व अभिनय के नायक, अखिल सृष्टि के सूत्रधार, असीम सौन्दर्य सिन्धु की विपुल वीचियों के शृंगार आदि कहकर मूर्त करने का प्रयास किया है। किन्तु ये सारी बातें एक ही साँस में कही गयीं कि एक चित्र के बनते ही उसपर दूसरा चित्र छा जाता है। इससे पाठक की मूर्ति-कल्पना में कोई समन्वित प्रभाव पड़ नहीं पाता। "अभिनेता का चित्र सामने आते-आते वहाँ सूत्रधार का चित्र दिखाई पड़ने लगता है, सूत्रधार को नजर भर देख नहीं पाते कि वह त्रिभुवन के मनोविकार के रूप में अमूर्त बनकर अदृश्य हो जाता है।"[1] किन्तु आगे चार पंक्तियों में कुसुमायुधधारी रूप की व्यंजना इस प्रकार की गयी है—

तुम ने भौरों की गुंजित ज्या,
कुसुमों का लीलायुध थाम,
अखिल भुवन के रोम रोम में,
केशर शर भर दिये सकाम ![2]

'अतिमा' काव्य-संग्रह की 'मनसिज' कविता में उसकी मूर्ति-कल्पना इस प्रकार हुई है—

तुम मन की आँखों के सम्मुख,
प्राणों के याचक बन आते,
मधु मुकुलों का ले धनुष बाण
स्वर्णिम मनसिज-से मुसकाते ![3]

इसमें दो बिम्ब हैं - एक याचक का और दूसरा धनुष-बाण लिये मुस्कराकर मोहित करने का। प्राणों का याचक अनंग मन की आँखों का विषय है। स्वर्णिम रंग के द्वारा उसके मुस्कराते स्वरूप का बिम्ब अंकित करने का प्रयास किया गया है। आगे उसको एक शिकारी रूप में दिखाया गया है—

तुम वेणु चाप में चढ़ा डोर
साँसों की, भावों से गुंजित,
स्वर साध, सुनहले तीर छोड़
मर्माहत करते, अपराजित ![4]

भावों से गुंजित वेणु चाप में साँसों की डोर चढ़ाकर और उसमें स्वर साध सुनहले तीर छोड़ लोगों को मर्माहत करनेवाले काम का यह स्पृहणीय चित्र है। पूरी आठ पंक्तियों में अनंग के प्रभाव के विकास की भी व्यंजना हुई है।

---

१. डॉ. रामयतनसिंह 'भ्रमर'—आधुनिक हिन्दी कविता में चित्र-विधान, पृ. १३३

२. पल्लव, पृ. ८३

३. अतिमा, पृ. ४३

४. वही, पृ. ४३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रेमी-प्रेमिका का मन एक दूसरे के प्राणों का याचक होता है, फिर प्राण को वश में करके वे आनंदित हो उठते हैं। तब उनमें काम का संचार होता है। किन्तु काम-भावना एक स्वर्णिम शर है, जो प्रेमी-प्रेमिका के मर्म को वेधता रहता है। इसी भाव-विकास को मूर्त रूप देने के लिए कवि ने उसके याचक रूप, मुस्काते काम्य रूप एवं मर्माहत रूप को दिखाया है।

स्वर्दूतों की कल्पना हमारी संस्कृति की उपज है। गंधर्वों और स्वर्दूतों पर आधारित कई आख्यान हमारे प्राचीन ग्रन्थों में उपलब्ध हैं। उनके अनुसार स्वर्दूत वपुहीन हैं, वे प्रभा-पंखों पर उड़कर, स्वर्गंगा में जल-विहार करते हैं। इस अन्तरिक्ष के परे एक द्यौ-लोक है, जहाँ इनका वासस्थान है। पन्त जी ने स्वर्दूत का कल्पनाश्रित बिम्ब इस प्रकार प्रस्तुत किया है —

दिखा ऊपर स्वर्णिम द्यौ-लोक
निर्निमेष अंतरिक्ष के पार,
प्रभा पंखों पर उड़ स्वर्दूत
स्वप्न वपु करते समुद्र-विहार ![१]

अपार्थिव बिम्बों में एकाध स्थानों पर गंधर्वों का उल्लेख हुआ है[२] और उनकी अभिसार-भूमि की कल्पना की गयी है किन्तु उनको बिम्ब रूप में रखने का कहीं प्रयास नहीं हुआ है। वैसे ही 'दूर वन के राजकुमार',[३] 'वन्य देवियों की माया'[४] की ओर संकेत अवश्य मिलते हैं, पर उनके बिम्ब नहीं के बराबर हैं।

४. प्रतीकात्मक बिम्ब

प्रतीक-शैली छायावाद-युगीन अभिव्यक्ति का एक सबल आधार है। छायावादी कवियों में पन्त अपनी प्रतीक-योजना में अद्वितीय हैं। उन्होंने सूक्ष्म से सूक्ष्म अनुभूतियों को भी ऐन्द्रिय प्रतीकों द्वारा सचित्र बनाया है। साथ ही इन प्रतीकों के द्वारा अनुभूति में तीव्रता लायी गयी है। पन्तजी ने कुछ तो परम्परागत प्रतीक अपनाये हैं और कुछ प्रतीक उनके अपने बनाये हुए हैं। प्राचीन एवं परम्परागत प्रतीकों को भी पन्तजी ने नवीन परिवेश में रखा है। उनके प्रतीकों में भव्य मूर्तिमत्ता है, उनके प्रतीक भाव, दशा या स्थिति का चित्र उपस्थित करते हैं। पन्तजी के अधिकतर प्रतीक प्रकृति से गृहीत हैं। प्राकृतिक प्रतीक अधिकतर लाक्षणिक होते हैं। उनकी प्रारम्भिक रचनाओं में कली, किसलय, कुसुम, शूल, छाया, वसन्त, मधुमास, मधुप, पिक, पपीहा, मछली, खंजन, कमल, पवन, मोती, मोती वाली मछली, सीपी, धूलि की ढेरी, लहर, सागर, मदिरा, गंगाजल, चन्द्र, बादल आदि प्रतीक रूप में आये हैं।

---

१. लोकायतन, पृ. ३६६
२. रजतशिखर, पृ. ५०
३. गुंजन, पृ. ८३
४. पल्लव, पृ. ९४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्वर्ण-काव्यों में पन्तजी प्रतीकों की भाषा में ही बोलने लगे। आध्यात्मिक अनुभूतियों को व्यक्त करने में सामान्य भाषा जब असमर्थ हो जाती है, तब कवि उनको प्रतीकों में प्रकट करता है। 'स्वर्ण किरण' में 'रजतातप' आत्म-निर्माण का, 'इन्द्रधनुष' जीवन-निर्माण का, 'अरुण ज्वाल' नवचेतना का, 'स्वर्ण निर्झर' सौन्दर्य चेतना का, 'स्वर्णिम पराग' मन का, 'उषा' मनःस्वर्ग का, 'हरीतिमा' प्राण का एवं 'स्वर्णोदय' जीवन-सौन्दर्य का प्रतीक है। 'स्वर्ण' शब्द चेतना का प्रतीक है। ज्योत्स्ना, स्वर्णप्रात, स्वर्ण निर्झर, स्वर्ण किरण, स्वर्ण धूलि, सब आध्यात्मिक चेतना के प्रतीक हैं। 'उत्तरा' में प्रयुक्त मेघ, पावक, तडित, स्वप्न शिखर, छायाजलद, आभा, चन्द्र ज्वाल, सब नवीन, रम्य एवं सक्षम प्रतीक हैं, भले ही उनके प्रयोग में दुरूहता आ गयी हो। पन्त-काव्य में हिमाद्रि (विश्व-संस्कृति), कौए बतखें, मेंढ़क (निम्न चेतन के विभिन्न स्तर), प्रकाश (आत्मा), पतंग, छिपकली (देह), कैंचुल (मृत संस्कार), सोनजूही (धरती पर रहता हुआ भी ऊर्ध्वगमन में प्रयत्नशील मन) कितने ही प्रतीक आये हैं। उनकी प्रतीक-योजना का चरम उत्कर्ष 'लोकायतन' में देखा जा सकता है जिसमें प्रत्येक घटना एवं पात्र ही नहीं, पूरी कथा ही प्रतीकात्मक है। डॉ. विद्यानिवास मिश्र के शब्दों में "कवि ने प्रतीक-साधना का चरम उत्कर्ष ला दिया है। पढ़ते-पढ़ते ऐसा लगता है कि वन, नदी, पहाड़, पशु-पक्षी, आदमी, इतिहास-भूगोल, ज्ञान-विज्ञान सभी प्रतीकात्मक हो गये हैं और केवल प्रतीक ही प्रतीक चल रहे हैं।"[१] आगे पन्त के प्रतीकात्मक प्रकृति-बिम्बों पर विचार किया जाएगा।

संकुचित थीं प्रात जो नव क्यारियाँ
दुपहरी को, वे अरुण की ज्योति में
फूलने अब हैं लगी, उन्मत्त कर
लोचनों को निज सुरा सी कान्ति से।[२]

यहाँ प्रतीकों के सहारे नायिका के यौवन-विकास की ओर संकेत किया गया है। 'प्रातः' बाल्यकाल का, 'नव क्यारियाँ' अर्धविकसित शारीरिक अंग का, 'दुपहरी' यौवनकाल का, 'फूलना' विकास का तथा 'सुरा' सौन्दर्य का और 'अरुण' सुकुमार नायक का प्रतीक है। बाल्यकाल में नायिका के जो शारीरिक अंग संकुचित थे, वे तारुण्य की दोपहरी में प्रिय नायक के प्रेम में विकास पाने लगे तथा सौन्दर्य की मादकता एवं कान्ति में लोचनों को मस्त करने लगे। यौवन-विकास एवं सौन्दर्य की मस्ती का प्राकृतिक प्रतीकों के द्वारा यह बिम्ब आकर्षक है—

१. कल्पना, अंक – १६३, पृ. ११
२. वीणा-ग्रन्थि, पृ. १०९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कमल पर जो चारु दो खंजन, प्रथम
पंख फड़काना नहीं थे जानते,
चपल चोखी चोट कर अब पंख की
वे विकल करने लगे हैं भ्रमर को।[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में नायिका के मुख एवं कटाक्ष-बाण से नायक को विह्वल करने का चित्रण है। 'कमल' मुख का, 'खंजन' चंचल आँखों का, 'चपल चोखी चोट' कटाक्ष-बाण का तथा 'भ्रमर' प्रेमी नायक का प्रतीक है। कमल के समान कोमल मुखवाली नायिका की आँखों में प्रेम का नशा चखकर चचलता आ गयी और वे पंख मारकर उड़ना चाहती हैं। वे आँखें चंचल हो, अब इधर-उधर फिरने तथा कटाक्ष-बाण से नायक के हृदय में चोट पहुँचाने लगी हैं। प्रेम-सलिल में डूबी आँखों की गति-विधि का यह सुन्दर चित्र है। आगे नायिका की आँखों के लिए विहगिनी, शफरी आदि प्रतीक आये हैं —

कुंज के वा कुटिल काँटों से कहीं
बिंध गई थी विहगिनी ? अथवा कहीं
सरल शफरी फँस गई थी सुमन सी
तरल छवि के अलक-के से जाल में ?[2]

प्रेम की चोखी चोट खाकर तड़पती हुई आँखों के लिए काँटों से बिंध गयी विहगिनी का उपमान मार्मिक एवं चित्रात्मक है। सरल नेत्र रूपी शफरी किसी के छवि-जाल में फँस कर अब तड़पती है। जैसे सुमन अलक-जाल में फँसकर मुर्झा जाता है, वैसे ही नेत्र रूपी शफरी छवि के जाल में पड़कर अपना अन्त ही कर डालेगी। 'सुमन' में श्लेष का सौन्दर्य द्रष्टव्य है। अगर 'अलक' का प्रयोग गुणसाम्य पर मान लिया जाए तो भी काफी भाव-व्यंजक है। अलक कुटिलता और कालिमा का भी प्रतीक है। यहाँ छवि के कुटिल जाल में फँसी नेत्र रूपी शफरी के अन्धकारमय जीवन की व्यंजना होती है।

हाय, मेरे सामने ही प्रणय का
ग्रन्थि वन्धन हो गया, वह नवकमल
मधुप सा मेरा हृदय लेकर, किसी
अन्य मानस का विभूषण हो गया ![3]

नायक का हृदय जिस नायिका पर आसक्त हो गया था, वही नायिका विवाहोपरान्त नायक का प्रेमी हृदय लेकर अपने मनस्वी पति के मानस का विभूषण बन गयी। 'नवकमल' नववधू, 'मधुप' लोभी हृदय का प्रतीक है। नव कमल

१. वीणा-ग्रन्थि, पृ. १०८
२ वही ,पृ. ११०
३. वही, पृ. १२४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

में लिंग विपर्यय अवश्य ही खटकता है। 'मानस' में श्लेष के द्वारा नयी अर्थवत्ता आ गयी है।

कवि ने अपनी प्रेयसी को निखिल सुषमामयी बनाने के लिए कई प्राकृतिक प्रतीक अपनाये हैं —

उषा का था उर में आवास
मुकुल का मुख में मृदुल विकास
चाँदनी का स्वभाव में भास
विचारों में बच्चों के साँस ![1]

यहाँ 'उषा' पावनता, स्वच्छता, रागमयता के लिए प्रयुक्त हुई है। 'मुकुल' सौन्दर्य, अर्धस्फुरण, रम्यता एवं अस्पृश्य स्वरूप का द्योतक है। 'चाँदनी' स्निग्धता, शीतलता एवं सुखदता के लिए प्रयुक्त हुई है। 'बच्चों की साँस' में भोलापन और सहजता का आभास मिलता है।

झर गई कली, झर गई कली !
चल-सरित पुलिन पर वह विकसी,
उर के सौरभ से सहज बसी,
सरला प्रातः ही तो विहँसी,
रे कूद सलिल में गई चली।
आई लहरी चुम्बन करने,
अधरों पर मधुर अधर धरने,
फेनिल मोती से मुँह भरने
वह चंचल सुख से गई छली।[2]

यहाँ कली, चल सरित पुलिन, सलिल, लहरी, फेनिल मोती सब प्रतीकात्मक हैं। कली तरुणी का, चल सरित प्रलोभनों के संसार का, उर का सौरभ भावनाओं का, सलिल जीवनधारा का, लहरी लिंग विपर्यय के होते हुए भी किसी प्रिय का, फेनिल मोती क्षणिक सुख का प्रतीक माना जाए तो यौवन के द्वार पर खड़ी हुई किसी तरुणी का संसार के क्षणिक सुख के मोह में पड़कर विपथगा बनने तथा जीवन को समाप्त करने का चित्र प्राप्त होता है। वह बेचारी सरला थी, किन्तु प्रलोभनों के इस संसार में उसका यौवनविकास घातक सिद्ध हुआ। वह उर के स्वाभाविक गुणों को लेकर सुमधुर हृदय के प्रणय-स्वप्नों को सँजाये खड़ी थी, किन्तु दूसरों के अहित पर स्वार्थ सिद्ध करने-वाला यह ससार उसको निर्दोष रहने नहीं देता। क्षणिक सुखों का प्रलोभन देकर उसको गुद-गुदाता है, फलतः क्षणिक चंचल सुख के छल से वंचिता होकर वह कुपथगामी बनती है, जीवन समाप्त कर देती है। आगे यौवन के प्रेम का

१. पल्लव, पृ. ७२ २. गुंजन, पृ. ३७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्राकृतिक प्रतीकों के द्वारा सजीव बिम्ब प्रस्तुत किया गया है।

न रोक सकते चपल नयन,
मीन तिरते, उड़ते खंजन,
अधर से मिलते मधुर अधर,
मुग्ध अलि कलि करते चुंबन।
बाँह यदि भरतीं आलिंगन
लताओं से लिपटे तरुगण,
प्रबल रे फूलों का बन्धन
अमिट प्राणों का आकर्षण।[1]

इसमें आये मीन (प्रेयसी की आँखें), खंजन (चंचल नयन), अलि (प्रिय), कली (प्रिया), लताएँ (तरुणियाँ), तरुगण (युवक), फूलों का बन्धन (कोमल प्रेम) सब प्रतीक हैं। प्राकृतिक वस्तुओं पर आरोपित यौवन-सुलभ प्रेम की चंचलता, आलिंगन, चुँबन आदि चेष्टाएँ दिखाई गई हैं। इसी तरह 'स्वर्ण-धूलि' में तारुण्य के विकास को वसन्त-विकास के प्रतीकों द्वारा चित्रित किया गया है।[2]

'गुँजन' की प्रथम कविता को अगर प्रतीकात्मक माना जाए तो द्विवेदी-युगीन पतझड़ को समाप्त कर वसन्तश्री के समान साहित्य-जगत् में नई आभा एवं सौन्दर्य की भावना को विकीर्ण करती छायावादी कविता के भव्य एवं श्लाघ्य बिम्ब मिल सकते हैं।[3]

आधुनिक हिन्दी कविता नवीन उपमानों, नवीन प्रयोगों, नवीन प्रतिमाओं और प्रतिमानों की खोज में भटक रही है। उसने छायावादी कल्पना एवं सौन्दर्यदृष्टि को ठुकरा दिया और नवीनता के मोह में आकर धुरीहीनता पायी। उसकी भावनाएँ अशक्त एवं अस्वस्थ हैं और उसकी अभिव्यंजना शिथिल, बिखरी एवं टूटी-फूटी है। नये कवि कल्पना के सौन्दर्य से वंचित हैं, फलतः उनके भाव छटपटा रहे हैं। नयी कविता तथा नये प्रयोग के नाम पर काव्य-जगत् में गड़बड़ी मचानेवाले कवियों की ओर संकेत करते हुए पन्त ने लिखा है—

घोंघे, शंख, चाँद के टुकड़े, सीप कौड़ियाँ······
राजमरालों से उड़ते
भावों के पर छटपटा
रिक्त कल्पना गगन में![4]

पन्तजी दार्शनिक और विचारक कवि हैं। दार्शनिक एवं आध्यात्मिक रहस्य की बातें इतनी जटिल हैं कि उन्हें सीधी एवं सहज भाषा में व्यक्त नहीं किया जा सकता। ऐसी दशा में कवि को सांकेतिक भाषा या प्रतीकों का सहारा

१. स्वर्ण किरण, पृ. १०७
२. स्वर्णधूलि, पृ. १२५
३. गुंजन, पृ. ९
४. वाणी, पृ. ६६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

लेना पड़ता है। भू-चेतना, अवचेतना, समदिक्-चेतना, दिव्य-चेतना, मन का ऊर्ध्वसंचरण, आध्यात्मिक अनुभूति आदि दार्शनिक विचारों को व्यक्त करने के लिए पन्तजी ने प्रकृति के नाना बिम्बों का प्रयोग किया है। इन बिम्बों पर आगे चल कर विचार किया जाएगा।

'युगांतर' में कवि वर्तमान अवचेतन मन के ऊपर चेतन-मन के विकास और ऊर्ध्वचेतन की प्राप्ति का स्वप्न देखता है। उसकी अन्तिम कविता 'त्रिवेणी' प्रतीकात्मक रूप में विश्वास दिलाती है कि अवचेतन-मन चेतन-मन का सहारा लेकर ऊर्ध्वचेतन में समाहित होगा। उद्वेलित, आकुल, अशांत, आवेशों से मंथित आवर्तों में घूम रही यमुना अवचेतन मन का प्रतीक है। निस्तल अकूल शाश्वत धारावाली शांत, धीर गंगा चेतन मन का प्रतीक है। अन्तः सलिला, चिरविमला, अचपल सरस्वती ऊर्ध्वचेतना का प्रतीक बनकर आयी है।[1] पूषण धरती के तमिस्र का अवगुंठत दे सोते समय सुधांशु बन जन-मन को दिवास्वप्नों से भरता 'धरती का ज्योतिर्मय ईश्वर' है।[2] विश्वोदय पर स्वर्णकलश वक्षोजों पर धर, रजत रश्मियों की अंजलि भर अरुणोदय-मन्दिर में पदार्पण करती ऊषा 'मनः स्वर्ग' का प्रतीक है।[3]

निःस्वर शिखरों पर उड़ता
गाता सोने का पाँखी !
चीर कुहासों के क्षितिजों को
भर उड़ान दिग् भास्वर,
वह प्रभात नभ में फैलाता
स्वर्णिम लपटों के पर ![4]

इसमें 'निःस्वर शिखर' ऊर्ध्व-चेतना के स्तर का, 'सोने का पाँखी' मन की ऊर्ध्वगामी चेतना का, 'कुहासों का क्षितिज समदिक् चेतना का, 'प्रभात नभ' अधिमानस का और स्वर्णिम लपट दिव्य-चेतना के प्रकाश का प्रतीक है। कुल-मिलाकर दिव्य-चेतना के अनुग्रह से प्रेरित हो समदिक् गति से ऊपर उठकर ऊर्ध्व-चेतना के स्तर-सोपानों पर उड़ते अधिमानस के स्तर पर पहुँचते मन का बिम्ब प्रतीकात्मक भाषा में दिखाया गया है।

हुआ अगोचर सोने का मृग
वह छलांग भरता अन्तर में,
क्षण भर मन धरती पर रहता
क्षण भर में उड़ता अम्बर में ![5]

१. युगपथ, पृ. १५३–१६५
२. स्वर्ण किरण, पृ. ४७
३. वही, पृ. ५१
४. अतिमा, पृ. १३
५. वही, पृ. ७८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पंचवटी का कनक मृग अगोचर हुआ। भले ही वह चक्षुओं के लिए अदृश्य हो गया तब भी वह मानव-अन्तर में छलांग भरता है। कभी उसकी टाँगें धरती पर रहती हैं, तो कभी आकाश में। निस्संदेह यह सोने का मृग मन की मरीचिका है, जो मन की चेतना को छलती जा रही है। पंचवटी का यह सोने का मृग पौराणिक कल्पना पर आधारित होते हुए भी प्रतीक रूप में आया है।

जीवन की व्याख्या करनेवाली 'अतिमा' की निम्नलिखित पंक्तियाँ प्रतीकात्मक हैं—

यह सरिता का बहता अंचल
इसमें केवल फेन ग्रथित जल ?
सीपी-सा प्रसार मुक्ता स्मित,—
तट असीम में मौन निमज्जित,
नीलोज्वल निःशब्द शांति सा
उर में सूक्ष्माकाश प्रतिफलित ![१]

'सरिता' जीवन का, 'असीम तट' चिरंतनता का तथा 'सूक्ष्माकाश' ब्रह्म का प्रतीक है। कवि जीवन की सरिता को केवल मायिकजल से युक्त माननेवाले दर्शनों के आगे प्रश्न-चिह्न लगाता है। वास्तव में जीवन सीपी का प्रसार है, जिसमें मुक्ता की स्मिति है। यह मुक्ता जीव के उर का शाश्वत चैतन्य ही है। जीवन-सरिता का प्रवाह मौन के असीम तट पर जाकर निमज्जित हो जाता है। सरिता के जल में जो नीलोज्वल निःशब्द शांतिमय सूक्ष्माकाश प्रतिफलित है, वह जीव के उर में प्रतिफलित दिव्यसौन्दर्य स्वरूप परमात्मा ही है।

साँप एवं बीन पर आधारित एक बिम्ब 'वाणी' में द्रष्टव्य है—

लो, प्रकाशमणि से भूषित कर साँपों के सिर,
छेड़ो, बीन बजाओ, उन्नत हो फन,
उजियाले हो सकें बिलों में रहनेवाले
जड़ अंधियाली के सहस्र फन आनन ![२]

सँपेरा बीन बजाकर साँप को नचाता है। बीन की ध्वनि पर मुग्ध साँप अपना फण ऊपर उठाता है, जिससे उसके फण की मणियाँ प्रकट हो जाती हैं। यहाँ प्रकाश मणि दिव्य-चेतना है। बिल अवचेतन का अन्धकार है और बिल में सोया साँप अवचेतन की अन्धकारमय गुहा में सुषुप्त मन है। उसको दिव्य-चेतना के स्वर-संगीत से जगाकर ऊर्ध्वगामी बनाना है, ताकि वह अवचेतन से ऊपर उठकर दिव्य-चेतना की प्रकाश-रश्मियों से आवृत्त दीप्त सौन्दर्य को प्राप्त कर सके।

---

१. अतिमा, पृ. १००
२. वाणी, पृ. ७२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हिल न पंक में सका ऊर्ध्व-सरसिज,
उलझ गये निशि अलकों में शशि कर ![1]

यहाँ भी पंक अवचेतन का, ऊर्ध्व सरसिज दिव्य-चेतना का, निशि अलक अवचेतन के तम का और शशिकर दिव्य-किरण का प्रतीक है।

१. लोकायतन, पृ. ४३५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पन्त-काव्य में भाव–बिम्ब

छायावाद भाव-प्रेरित काव्य साहित्य था, जिसमें बाह्य स्थूल सौन्दर्य के प्रति उपेक्षा तथा आन्तरिक सौन्दर्य के उद्‌घाटन के प्रति विशेष आग्रह रहा। यहाँ तक कि इस काव्य में नारी के भी बाह्याकार का कम, आन्तरिक सुषमा का अधिक वर्णन हुआ। अन्य छायावादी कवियों के समान पन्तजी ने भी अपनी व्यापक सौन्दर्यानुभूति एवं उच्च कल्पनाशक्ति के द्वारा मानव के आन्तरिक भावों का उद्‌घाटन किया है। फलतः उनके काव्य में विरह-मिलन, आशा-निराशा, लज्जा-संकोच, कसक-टीस, सुख-दुःख, आदि मानवीय व्यापारों के भावात्मक चित्रों की अवतारणा हुई। पन्त-काव्य में उपलब्ध इन भाव-बिम्बों की दो श्रेणियाँ बनायी जा सकती हैं— १) भाव-सौन्दर्य के बिम्ब और २) शुद्ध भाव-बिम्ब।

१. भाव-सौन्दर्य के बिम्ब

इस श्रेणी में उन सारे बिम्बों को लिया जा सकता है जो किसी भाव-दशा के द्योतक हों जैसे प्रेमदशा के संदर्भ में, लज्जा, क्रीड़ा, मोह, प्रेम, वेदना, मुग्धता, मान आदि भावात्मक वृत्तियों के चित्र लिये जा सकते हैं। 'ग्रन्थि' काव्य में यह दिखाया गया है कि संध्या की स्वर्णिम वेला में नायक की तरणी तरल तरंगों में पड़कर डूब गई और जब नायक की मूर्छा दूर हुई तो उसने अपने सिर को एक कोमलांगी की गोद में पाया। नायक के जागने पर नायिका के मन में एक अपरिचित को अपनी गोद में डालने से कभी लज्जा, संकोच, भीरुता, अधीरता एवं चिन्ता की भावना जागती थी तो कभी उसपर दया एवं सहानुभूति उत्पन्न होती थी। इस मिश्रित मनोदशा का सुन्दर चित्र इस प्रकार है—

शीश रख मेरा सुकोमल जाँघ पर,
शशिकला सी एक बाला व्यग्र हो,
देखती थी म्लान मुख मेरा, अचल,
सदय, भीरु, अधीर चिन्तित दृष्टि से।[1]

धीरे-धीरे नायिका लज्जा से आवृत होती गयी। इस लज्जा का चित्रण अत्यन्त कलात्मक ढंग से कवि ने प्रस्तुत किया है—

लाज की मादक-सुरा-सी लालिमा
फैल गालों में नवीन गुलाब से

१. वीणा-ग्रंथि, पृ. ९८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

छलकती थी बाढ़-सी सौन्दर्य की
अधखुले सस्मित गढ़ों से, सीप-से ![1]

यहाँ नायिका के लज्जावृत्त सौन्दर्य का वर्णन हुआ है। गालों में गढ़े स्त्री के सौन्दर्य में चार चाँद लगा देते हैं। फिर लज्जा की मादक सुरा पीने से उसके गालों में लालिमा फैल रही है। वह सारी लालिमा सौन्दर्य को और भी बढ़ा देती है, किन्तु नायिका के सीप-से गढ़ों में लाज की लालिमा मिश्रित सौन्दर्य-बाढ़ समा नहीं सकी। और जो चीज़ गढ़े में समा नहीं पाती वह छलक पड़ती है। 'छलकना' क्रिया नायिका के सौन्दर्य की बाढ़ को साकार करती है। यह अत्यन्त कलात्मक भाव-बिम्ब है। कवि की मूर्ति-विधायिनी क्षमता का प्रोज्ज्वल उदाहरण है। लाज की लालिमा के लिए सुरा की लालिमा सादृश्य पर आधारित है। सुरा पीने से मुख का लाल-लाल हो जाना चिर परिचित है। वैसे ही नायिका की लज्जा का प्रतिबिम्ब गाल पर छा जाता है। सुरा और लज्जा में साधर्म्य भी है। गालों के लिए 'गुलाब' का उपमान रंग-सादृश्य पर आधारित है। लज्जा की लालिमा की बाढ़ से तुलना करके एक प्रभावकारी वातावरण प्रस्तुत किया गया है। बाढ़ में पानी गढ़ों में भरता है और जो उसमें समा नही पाता वह छलककर सब कहीं फैल जाता है। उपमालंकार के उचित सन्निवेश से लज्जा के बिम्ब के साथ ही मद्यप के चेहरे की लालिमा एवं बाढ़ के भी बिम्ब अनायास मिल जाते हैं।

लजीली नारी का एक और भाव-बिम्ब द्रष्टव्य है—

देख रति ने मोतियों की लूट यह
मृदुल गालों पर सुमुखि के लाज से
लाख-सी दी त्वरित लगवा, बन्द कर
अधर-विद्रुम द्वार अपने कोष के ![2]

प्रसंग यह है कि नायिका और नायक की चार आँखें हो गयीं और नायिका का अनियंत्रित प्रेम उसके 'नाथ' संबोधन में प्रकट हो गया। किन्तु वह तुरन्त संभल गयी और सकुचा गयी। लज्जा ने उसकी वाणी को आगे बढ़ने नहीं दिया, वह मौन हो गयी। उसके लज्जावनत गालों पर मोती की सी उज्ज्वल आभा फूट पड़ी। किन्तु नायिका की यह अनधिकार चेष्टा रति से देखी नहीं गयी। उसने देखा कि इस प्रकार उसके मोतियों की लूट हो रही है। इसलिए उसने नायिका के अधर पुट को जो कोष के द्वार हैं, बन्द कर दिया और वह आगे खुलने न पाये, यह सोचकर उसने गाल पर लज्जारूपी मुहर लगवा दी और निश्चिन्त हो गई। सामाजिक जीवन में भी हम देखते हैं कि धनी लोग अपनी अल्मारी में निक्षिप्त सपत्ति की सुरक्षा के लिए उसको बन्द करके लाख लगवा देते हैं

१. वीणा-ग्रन्थि, पृ. १००
२. वीणा-ग्रंथि, पृ. १०४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ताकि उनके अनजाने कोई उसे खोलने न पाये। दूसरा चित्र यह भी होता है कि गोपनीय लिफाफों को बन्द करके उनपर लाख की मुहर लगा दी जाती है, ताकि उसको कोई खोल न पाये। यहाँ रूपकातिशयोक्ति, उपमा एवं रूपक के सहारे लज्जालु नारी का अत्यन्त भावगर्भित बिम्ब अंकित किया गया है।

पद नखों को गिन, समय के भार को
जो घटाती थी भुलाकर, अवनितल
खुरच कर, वह जड़ पलों की धृष्टता
थी वहाँ मानो छिपाना चाहती।[1]

यहाँ व्रीड़ावश संकोच का अनुभव करती नायिका के अनुभावों का चित्रण है। संकोच के कारण वह लज्जावनत है। पद- नखों को गिनना, अवनितल को खुरचना आदि अनुभाव एवं जड़ता संचारी भाव है। यहाँ बिना किसी अप्रस्तुत के अनुभावों तथा क्रिया-व्यापारों द्वारा नायिका के भाव की अवतारणा हुई है।

गिरा हो जाती है सनयन
नयन करते नीरव भाषण,
श्रवण तक आ जाता है मन
स्वयं मन करता बात श्रवण ![2]

प्रेम भाव की इससे सुन्दर व्याख्या शायद ही कहीं मिले। प्रेमी की गिरा सनयन होकर देखने का कार्य करती है और नयन मौन भाषा में बात करने लगते हैं। मन प्रेमी की बातें सुनने के लिए इतना उत्सुक हो जाता है कि वह श्रवण तक खिंच आता है और मन श्रवण का कार्य स्वयं लेकर बात सुनने लगता है। प्रेमराज्य में सब उलटी बातें चलती हैं। अपने प्रिय के सम्बन्ध में जानने तथा उसे देखने के लिए विकल प्रेमी की भाव-दशा का यहाँ लाक्षणिक चित्र प्रस्तुत है। प्रणय की प्रत्येक भाव-चेष्टा एवं आंगिक अनुभाव की व्यंजना निम्न पंक्तियों में हुई है—

देह में पुलक, उरों में भार,
भ्रुवों में भंग, दृगों में बाण,
अधर में अमृत, हृदय में प्यार
गिरा में लाज, प्रणय में मान ![3]

प्रीति को देखकर शंकर के हृदय में प्रेम आकार लेता है। प्रेम का आरंभ रूपाकर्षण से होता है। शंकर के हृदय में उद्‌भूत प्रेम को रूपायित करते हुए कवि ने बादलों के पट से झाँकते चन्द्र का उपमान प्रस्तुत किया है—

१. वीणा-ग्रंथि, पृ. १०४
२. पल्लव, पृ. ६०
३. गुंजन, पृ. ६०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

रूप के शोभा-पट से झाँक
प्रेम-शशि उदय हुआ अम्लान ।[१]

मानवती नायिका पति से रूठकर दूर रहना चाहती है और मूक रहती है, वह कुछ बोल नहीं पाती । जैसे कोई सखी हाथ पकड़ कर साथ ले चलती है, उसी प्रकार मान जिह्वा का हाथ पकड़े चलता है—

छिपी सी पी सी मृदु मुसकान
छिपी सी, खिंची सखी-सी साथ,
उसी की उपमा सी बन, मान
गिरा का धरती थी, धर हाथ ।[२]

कवि ने मुग्धा नायिका का चित्रण किया है । 'मुग्धा' शब्द के अर्थ हैं— स्तब्ध, विमूढ, भ्रमित, विभ्रान्त तथा सुन्दर और इस नायिका में इन समस्त गुणों को माना गया है ।[३] नायक के धैर्य को छीनती मुग्धा नायिका की भाव-चेष्टाओं का वर्णन करते हुए उसकी भ्रमित दशा का बिम्ब इस प्रकार है—

औ' अकेले चिबुक तिल से, कुछ उठी
कुछ गिरी भ्रू वीचि से, कुछ कुछ खुली
नयनता से, कुछ रुकी मुस्कान से
छीनते किस भाँति हो तुम धैर्य को ![४]

चिबुक का तिल, कुछ उठी कुछ गिरी भ्रू-वीचि, मुकुलित नयन, मन्द चलकर अचानक रुकना, फिर मुस्कराना—नायिका की ये सारी चेष्टाएँ मोहक हैं और उसके हृदयगत भाव की व्यंजना करती हैं ।

पन्तजी ने 'परकीया' कविता में नारी के आत्मिक सौन्दर्य की व्यंजना की है । एक वेश्या रोटी के लिए अपना शरीर बेचती है । पर उस पर आसक्त एक व्यक्ति को उससे प्रेम-प्रस्ताव करते देखकर वह नारी अपनी दुश्चरित्रता स्वीकार करती है । पर वह युवक बड़े आदर्श के साथ कहता है कि स्वकीया, या परकीया, सब समाज की परिभाषाएँ हैं । सत्य का सम्बन्ध रूढ़ि से नहीं, हृदय से है । तुम्हारी आँखों से जब इतने आँसू उमड़ आये, तुम अपवित्र नहीं, पवित्र हो, जो तुम्हें अपवित्र कहता है, वह स्वयं अपवित्र होता है । मलिन एवं कलुषित शरीर से असंपृक्त उसकी जो पवित्र आत्मिक चेतना है, उसको पंक सने सरोवर के जल में पंकिलता से अप्रभावित रहते कमल के समान रूपायित किया गया है—

पंकिल जीवन में पंकज-सी
शोभित आप देह से ऊपर,

१. लोकायतन, पृ. ३०७
२. पल्लव, पृ. ५६
३. हिन्दी साहित्य कोष, भाग—१, पृ. ६५६
४. वीणा-ग्रंथि, पृ. १२७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वही सत्य जो आप हृदय से
शेष शून्य जग का आडम्बर ![1]

संयोग के क्षण के हृदय-परिवर्तन एवं आनन्द को प्रकृति पर घटित करते हुए लाक्षणिक प्रयोग के साथ बिम्ब प्रस्तुत किया गया है—

तुम प्रणय-कुंज में जब आयी
पल्लवित हो उठा मधु यौवन
मंजरित हृदय की अमराई !
मलय हुआ मन्द चंचल
लहराया सरसी जल,
अलि गूँज उठे, पिक ध्वनि छाई ![2]

'मंजरित हृदय की अमराई', 'लहराया जल, अलि गूँज उठे, पिक ध्वनि छाई' आदि इतने लाक्षणिक हैं कि संयोग के उल्लास, आनन्द, भाव-तरंग तथा हृदय की उमंग आदि को मूर्त रूप प्रदान करते हैं। ग्रंथि में भग्नाश प्रेमी का चित्रण इस प्रकार हुआ है—

याद है मुझको अभी वह जड़ समय
ब्याह के दिन जब विकल दुर्बल हृदय
अश्रुओं से तारकों को विजन में
गिन रहा था, व्यस्त हो, उद्भ्रान्त हो।[3]

इसमें वियोग जनित जड़ता का वर्णन हुआ है। नायक की प्रेयसी दूसरे से विवाहित हो जाती है तो नायक की काम-दशा जड़ता को प्राप्त होती है। नायक का हृदय नैराश्य एवं वेदना की अति से विकल एवं दुर्बल हो उठता है। वह व्यस्त एवं उद्भ्रान्त हो विजन में अश्रु-धारा बहाता है और चिन्तावश आकाश के तारों को गिनता है। 'तारकों को गिनना' विरह को मूर्त करता है। 'जड़ समय' में विशेषण-विपर्यय का चमत्कार द्रष्टव्य है।

पन्त के काव्य में भय, विक्षिप्तता, चिन्ता, विस्मय, क्रोध, वीभत्स जैसी अन्य मनोदशाओं का भी चित्रण हुआ है। साहित्य-दर्पणकार के अनुसार किसी रौद्र की शक्ति से उत्पन्न चित्त को व्याकुल करने वाला भाव भय है।[4] 'लोकायतन' के कवि वंशी को प्रतिद्वन्द्वी माधो गुरु ने हतप्रभ कर दिया। उसने वंशी के कवि चेतस को ध्वस्त किया जिससे कवि का प्रतिभा-रविमंडल अस्त हो गया। मानो लक्ष्मण को शक्ति लग गयी। माधो गुरु के चले जाने के बाद वंशी का अन्तस् किसी अप्रत्याशित भय से शंकाकुल हो उठा। उसके भयाकुल मन को कवि ने स्पष्ट रूप दिया है—

१. स्वर्णधूलि, पृ. १२०
२. स्वर्णधूलि, पृ. १२६
३. वीणा-ग्रंथि, पृ. १२४
४. आचार्य विश्वनाथ—साहित्य दर्पण, पृ. १७८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भग्न कवि अन्तस् को निर्वाक्
रौंदता रहा भयंकर दृश्य !
कल्पना का समस्त सौन्दर्य
बुझ गया, बना चित्र तम-कूप,
केंचुए, अजगर, भैंस, वराह
घूमते मन में उठ अपरूप ![1]

कवि के मन को माधो गुरु और उसके शिष्यों का भयंकर दृश्य रौंदने लगा। 'रौंदना' क्रिया काफी बिम्बात्मक है। जैसे कोई शक्तिशाली दुर्बल व्यक्ति को रौंदकर अशक्त बना देता है वैसे ही माधो गुरु का भयंकर दृश्य कवि हृदय का मंथन करने लगा, जिसके फलस्वरूप उसकी कल्पना का सौन्दर्य बुझ गया। 'बुझ गया' क्रिया भी बिम्बात्मक है। जैसे दीपक बुझने से अन्धेरा छा जाता है, वैसे ही कवि का कल्पना-सौन्दर्य समाप्त होकर मन तम-कूप बन गया। 'तम-कूप' में मन का नया बिम्ब उभर आता है। फिर तम-कूप भी कैसा ! उसमें केंचुए, अजगर, भैंस, वराह आदि घूम रहे हैं। ये सब प्रतीक हैं जो भय की भावना को मूर्त रूप देने के लिए लाये गये हैं।

माधो गुरु के अनुयायियों द्वारा आहत हरि की मृत्यु हो जाती है। उसके बलिदान ने माधो गुरु के चित्त को विक्षिप्त कर दिया—

निगल रहा था गुरु को सूनापन
हृदय शून्य की असि से था आहत,
प्राण शक्ति रस मुरझाता जाता
बोध मलिन होता, स्वभाव उद्धत !
निश्चेतन तम ने बाया हो मुँह
बना चित्त छायाभासों का घर,
जीवन मन के अन्धकार से लड़
हुए शनैः गुरु श्रान्त, भ्रान्त, जर्जर ![2]

माधो गुरु को सूनापन निगल रहा था, जैसे कोई राक्षस किसी को निगल रहा हो। हृदय में सूनापन खल रहा था। किन्तु इस बात को भी मूर्त करने के लिए बताया गया है कि शून्य की असि से हृदय आहत हो गया था। यहाँ मानवीकरण एवं रूपक ने बिम्ब-योजना की है। फिर प्राण-शक्ति-रस को मुरझा जाने का बिम्ब दिया है। जैसे कोई पुष्प मुरझा कर प्राण-शक्तियों के रस से रिक्त हो जाता है, वैसे ही माधो गुरु की प्राण-शक्ति मुरझा गयी और जीवन रस सूख गया। उसके मन में घोर अन्धकार छा गया। तम को मुँह बाए राक्षस का रूप दिया गया है। चित्त भूत-प्रेतादियों का वास-स्थान बन

१. लोकायतन, पृ. ३५७ २. लोकायतन, पृ. ५२८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गया। जैसे घर भूत-प्रेतादि के कारण भयानक बनता है, वैसे ही माधो गुरु का चित्त अनेक दुश्चिन्ताओं से मलिन, धूमिल एवं डरावना बन गया। आगे गुरु के मानसिक संघर्ष का चित्रण करने के बाद कवि ने बताया है कि गुरु श्रान्त, भ्रान्त और जर्जर हो गये।

चिन्ता एक संचारी भाव है। इसके प्रभाव से मुख विवर्ण होता है, भ्रू-कुंचित होती है और मस्तक पर रेखाएँ खिंचती हैं। विश्व-शान्ति को विपत्ति में पड़े देखकर कुछ देशों के अधिनायक विश्व-शान्ति के लिए चिन्तित हो एकत्र होते हैं। कवि ने उनके मन की चिन्ता को इस प्रकार अभिव्यक्त किया है—

वह देखो, कुछ विश्रुत देशों के अधिनायक
विश्व शान्ति के लिए यहाँ समवेत हुए हैं,
चिन्तातुर मुख, कुंचित भ्रू, रेखांकित मस्तक ![1]

अद्भुत रस का स्थायी भाव विस्मय है। भरत के अनुसार इसकी उत्पत्ति माया, इन्द्रजाल, असाधारण कर्म, विचित्र चित्र तथा अन्य कलाकृतियों के द्वारा होती है।[2] अलौकिकता से युक्त वाक्य, शील, कर्म एवं रूप आलम्बन विभाव हैं, अलौकिकता के गुणों का वर्णन उद्दीपन विभाव है, आँखें फाडना, टकटकी लगाकर देखना, रोमांच, आँसू, स्वेद, हर्ष, साधुवाद देना, उपहार, दान, हा हा करना, अंगों का घुमाना, कम्पित होना, गद्गद् वचन बोलना, उत्कंठित होना, इत्यादि अनुभाव हैं।[3] नयी चेतना के विकास को देखकर विस्मित जनता का चित्रण पन्तजी ने इस प्रकार किया है—

गर्वोन्नत मस्तक, विस्मय से खुले हुए मुँह,
विस्फारित लोचन, विस्तृत उर, उठी भुजाएँ—[4]

'लोकायतन' में जनजीवन में स्वर्ग के ज्योति चक्र तोरण के खुलते ही विस्मय विमुग्ध वातावरण का चित्रण 'चकित नियति', 'हर्षित दिशि, अपलक क्षण' द्वारा किया गया है।[5]

रौद्ररस का स्थायीभाव क्रोध है और शत्रु या विरोध-पक्ष का व्यक्ति आलम्बन है। शत्रु द्वारा किये गये अनिष्ट कार्य उद्दीपन विभाव के अन्तर्गत आते हैं। मुख तथा नेत्र का लाल होना, भ्रू-भंग, दाँत या होंठ चबाना, कठोर वचन, विरोधियों को ललकारना आदि अनुभाव हैं। मद, उग्रता, अमर्ष, आवेग आदि इनके संचारी हैं।[6] 'शिल्पी' में विद्युत् दंशन से जर्जर हो रहे मानव का नियति पर आक्रोश प्रकट किया जा रहा है—

---

१. सौवर्ण, पृ. ३३ २. भरत नाट्यशास्त्र, ७२५ ग.
३. हिन्दी साहित्य कोष, भाग–१, पृ. १९ ४. शिल्पी, पृ. १५
५. लोकायतन, पृ. ५३६ ६. हिन्दी साहित्य कोष, भाग–१, पृ. ७३७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जाप भयानक गूंज यहाँ जो सुनते प्रतिक्षण
समाचार यन्त्रों के हलचल की ध्वनि है वह;
वहन कर रहे जो संवाद विविध देशों के,
मनुज नियति पर दाँत, किटकिटा क्रोध खीझ से
वायु-मार्ग से, सिन्धु मार्ग से, भूमि मार्ग से
निखिल विश्व जीवन का, मन का स्पन्दन कम्पन
अविरत वाहित हो, आन्दोलित करता रहता
आज धराजीवी मनुष्य के आहत मन को,—
जर्जर जो हो रहा सतत विद्युत् दंशन से ![1]

नियति आलम्बन है और विद्युत् दंशन उद्दीपन है। खीझ से मनुज का दाँत किटकिटाना अनुभाव है। मन का स्पन्दन, कम्पन, अमर्ष एवं उद्वेग संचारी हैं। इस प्रकार क्रोध स्थायी भाव रौद्र-रस का परिपाक करता है।

वीभत्स दुखात्मक रस के अन्तर्गत गिना जाता है और इसका स्थायी भाव जुगुप्सा या घृणा है। युद्ध के प्रसंगों में वीभत्स का वर्णन बहुतायत से मिलता है। आलम्बन विभाव के अन्तर्गत घृणाजनक वस्तुएँ जैसे श्मशान, मृत, दुर्गन्धमय पदार्थ आदि आते हैं। दुर्गन्ध, कीड़े रेंगना, मक्खियों का भिनभिनाना आदि उद्दीपन-विभाव के अन्तर्गत आते हैं। मुंह फेर लेना, आँख मींचना आदि अनुभाव तथा मोह, अपस्मार, आवेग, व्याधि आदि संचारी हैं।[2] पन्त ने वीभत्स रस का वर्णन करते हुए लिखा है—

रक्त मांस के सड़े पंक से उमड़ रही है
महा घोर दुर्गन्ध, रुद्ध हो उठती श्वासा
तैर रहे गल अस्थि खंड शत, रुंडमुंड हत,
कुत्सित कृमि संकुल कर्दम में महानाश के !
दिग्व्यापी सहार असंख्य निरीह जनों का
भूत सभ्यता का दारुण उपहार है घृणित !![3]

यहाँ भौतिक सभ्यता के असंख्य निरीह जनों के संहार का दृश्य आया है। रक्त-मांस, अस्थिखंड, रुंडमुंड आदि आलम्बन-विभाव हैं। महा घोर दुर्गन्ध, कुत्सित कृमि संकुल कर्दम आदि उद्दीपन हैं। श्वास का रुद्ध होना अनुभाव है और आवेग संचारी भाव है।

पन्तजी के काव्य में शान्त रस के स्थायी भाव 'शम' का वर्णन उस रूप में नहीं हुआ, जिस रूप में हमारे भक्त-कवियों ने किया है। कारण यह है कि

---

१. शिल्पी, पृ. ५३
२. द्रष्टव्य, रघुनाथ प्रसाद साधक—समालोचना-शास्त्र, पृ. १७९
३. शिल्पी, पृ. ७०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भक्त कवि संसार त्यागी तथा वैरागी थे, जबकि पन्तजी प्रवृत्तिमार्गी सन्त हैं। इसलिए संसार को त्यागकर निष्क्रिय संन्यास या वैराग्य भावना उनका काम्य नहीं रही। उनका विश्वास है कि मनुष्य एक साथ द्रष्टा-भोक्ता बन सकता है। उनका शम परम्परागत 'शम' से भिन्न है। एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

आओ हे, सब ध्यान मौन, एकाग्र प्राण मन,
जीवन का अन्तरतम सत्य करें उद्घाटन।
पलक मूँद, अन्तः स्थित, खोलें मन के लोचन,
घटवासी को करें पूर्ण हम आत्म-समर्पण।[1]

इसमें घटवासी को आत्मसमर्पण कर, पलक मूँद, अन्तः स्थित, मन के लोचन खोलने तथा अन्तरतम सत्य का उद्घाटन करने की इच्छा एवं तज्जन्य हर्ष का रूप देखा जा सकता है। बाह्य संसार की असारता एवं क्षणिकता को देखकर उदासीनता एवं अरुचि का भाव भी व्यक्त हुआ है।

२. शुद्ध भाव के बिम्ब

इधर 'भाव' के अन्तर्गत स्थायी एवं संचारी उन सभी अमूर्त एवं सूक्ष्म मनोभावों को लिया जाएगा, जो मानव-मन में वासना रूप में पड़े हुए हैं और जिनको कवि पन्तजी ने अपनी कलात्मकता के द्वारा किसी न किसी प्रकार से मूर्त रूप में व्यक्त किया है। कवि ने प्रेम, ममता, वाँछा, स्पृहा, इच्छा, तृष्णा, अभिलाषा, कामना, आशा-निराशा, दुःख-सुख, सन्देह, भ्रांति, हिंसा, ईर्ष्या, द्वेष, स्वार्थ आदि कई भावों को रूपाकार में ऐन्द्रिय संवेद्य बनाने का प्रयास किया है और इन भाव-बिम्बों ने उनके काव्य को एक नया सौन्दर्य प्रदान किया है।

प्रेम और ममता : 'खिला प्रेम का नवजलजात'[2] में प्रेम नामक अमूर्त भाव को मूर्त रूप दिया गया है। यही नहीं, 'नव' विशेषण के द्वारा प्रेम के सद्यःप्रस्फुटित रूप की ओर भी संकेत किया गया है। नवजलजात जैसे अत्यधिक मोहक एवं आकर्षक है वैसे ही अभी-अभी विकसित प्रेम अपनी नवता एवं आस्वाद्यता में प्रकाम्य होता है, किन्तु विरही व्यक्ति को वही सालनेवाला काँटा बन जाता है। इसलिए प्रेम सुनने में बड़ा ही भव्य एवं रम्य है, किन्तु जिसने उसकी वियोगजन्य पीड़ा का अनुभव किया वह जानता है कि प्रेम काँटों की शय्या है। इसलिए कवि ने लिखा है -

क्यों वृथा प्रेम आया जग में
सिर पर काँटों का धरे मौर ![3]

---

१. अतिमा, पृ. ८८
२. वीणा-ग्रन्थि, पृ. ८
३. स्वर्णधूलि, पृ. १२९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

यहाँ प्रेम का मानवीकरण करके यह बताया गया है कि उसके मस्तक पर काँटों का मौर है। 'लोकायतन' में सिरी के प्रेम का वर्णन करते हुए संध्या समय अपने नीड़ की खोज करते पक्षी का बिम्ब दिया गया।

संध्या के स्वर्णिम झुटपुट से
कोमल कुन्तल-तम में खोकर
प्रणय-भावना नीड़ खोजती
मुँद पारगामी मन के पर ![१]

दिन भर प्रेमी दैनिक कार्यों में व्यस्त रहता है। उसका मन दूर-दूर की बातों में उलझा रहता है, किन्तु संध्या होते ही मन अन्य बातों से हटकर प्रणय पाकर विश्राम करना चाहता है, जैसे संध्या के झुटपुट में पक्षी, चुग्गा जमा करने के कार्यों से विरत हो अपने नीड़ में पहुँच पंखों को समेटे विश्राम करना चाहता है।

प्रेम का सात्विक रूप आकर्षक एवं पूज्य है, किन्तु जब वह वासना के पंक में सना होता है, तब निष्प्राण एवं अंधा होता है। ऐसा प्रेम विकासगामी नहीं होता। इस बात को कवि ने रूपकातिशयोक्ति एवं मानवीकरण द्वारा चित्रित किया है—

पंक लांछन में लिपटा प्रेम
रेंगता दृष्टिविद्ध, निष्प्राण ![२]

आगे प्रेम को बलिपशु का रूप देते हुए लिखा गया है—

प्रेम का हुआ सदा से क्रूर
देहरी पर तन की बलिदान,[३]

जहाँ प्रेम में शारीरिक वासना को महत्व दिया जाता है, वहाँ प्रेम समाप्त हो जाता है।

ममता को विद्युत् का उपमान दिया गया है —

ममता विद्युत् सी मचल रही
छाया-बाष्पों का अंतस्तल,[४]

सेवा, क्षमा, श्रद्धा, भक्ति : स्वर्गीय चेतना के आश्लेष से दिव्य बनी सेवा का नारी-रूप में चित्रण द्रष्टव्य है—

सेवा उतरी, ज्यों गंगा जल,
कलुष तृषित लहरों से चंचल;
वीतराग तन पर संध्यांचल,
नत मुख पर श्रम कण मुक्ताफल,

---

१. लोकायतन, पृ. ६३
२. वही, पृ. २९१
३. लोकायतन, पृ. २९१
४. उत्तरा, पृ. १००

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्तिमित दृष्टि थी, अधर सहज स्मित,
सेवा का वक्षस्थल विस्तृत ।
ध्रुवतारा से पथ पर ज्योतित,
काँटों को करती थी कुसुमित ।[1]

सेवा परसेवा-व्रता नारी है । वह गंगा-जल के समान पावन एवं पवित्र है । वह वीत-राग थी । धूमिल संध्यांचल उसके तन का गैरिक वस्त्र था । उसके नत-मुख पर श्रमकण रूपी मुक्ताफल झलक रहे थे । उसकी दृष्टि स्थिर थी । अधरों पर सहज स्मिति विराजमान थी । उसका विस्तृत वक्ष-स्थल था । वह ध्रुवतारा बनकर पथ पर ज्योति किरणें विकीर्ण कर रही थी । वह अपने उपचार से लोगों के दुःखों को दूर कर सुख प्रदान करती थी । पूरा पद पढ़ते ही सेवा का जो बिम्ब अंकित होता है, वह 'फ्लारेन्स नाईटिंगेल जैसी सेवाव्रता' किसी नारी का है जो आचरण से ध्रुवतारा तथा स्वभाव से गंगाजल के समान पावन हो ।

आगे सेवा की सखी क्षमा के मातृरूप का चित्रण है—

सहचरी थी क्षमा, गौरव रश्मि चुंबित भाल,
युग पयोधर थे सुधास्रुत ज्योति कलश विशाल,
न्याय को धर अंक में मुख चूमती थी बाल,
दृष्टि पथ पर पंख खोले शुभ्र रजत मराल ![2]

क्षमा एक सात्विक गरिमामयी माता थी । उसके युगल पयोधर अमृत निष्यंती ज्योति-कलश थे । उसके अंक में न्याय रूपी बालक था जिसके मुख को वह ममतावश चूमती थी । वह दृष्टि-पथ पर पंख खोले शुभ्र रजत मराल-सी दिखाई देती थी ।

श्रद्धा हृदय की रागात्मिका वृत्ति है । वह अपनी सात्विकता एवं पावनता में अमोघ है । वह आभादेही है और आत्मकेन्द्रित है । जैसी वह हृदय से सात्विक है वैसा ही उसका प्रिय श्री-तन था । अर्थात् ऐसा जान पड़ता था मानो उसके हृदय के सौरभ का सार भाग लेकर उसका कान्तिमय तन निर्मित हुआ हो । यहाँ प्रसादजी की 'कामायनी' की श्रद्धा याद आती है ।[3] उसकी स्वर्गिक चितवन आशीष की रश्मियाँ बरसाती थी और उसका आनन दिव्य रजत नीहार रश्मि से मंडित था । आगे कवि उसके लिए एक उपमान प्रस्तुत करता है—भू-प्रदीप की स्वर्ग की ओर ऊर्ध्वचित् निश्चल निष्कंप शिखा का । इससे उसकी स्वर्गीय आभा, ऊर्ध्वोन्मुख रूप, निश्चलता, शान्ति, पवित्रता एवं पावनता

---

१. स्वर्ण किरण, पृ. ५९
२. स्वर्ण किरण, पृ. ६०-६१
३. 'हृदय की अनुकृति बाह्य उदार'—कामायनी,, पृ. ४६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

का परिचय मिलता है। आगे उसकी कांति एवं आभा को मूर्त करने के लिए एक और उपमान—किरणों का स्तंभ प्रस्तुत किया गया है। फिर उसे हृदय-नभ में उदित तेजोमय एवं दीप्तिमय उषा बताया गया है। मानवीकरण, रूपक एवं उपमा ने श्रद्धा को बिम्ब रूप में प्रकट करने में सहयोग दिया है। रंग तथा घ्रातव्य संवेदनाओं को उत्तेजित करने में समर्थ कवि की श्रद्धा-संबंधी यह मूर्ति-कल्पना अतीव कमनीय है—

आभा देही श्रद्धा प्रकटी अंतर्लोचन,
उर की सार सुरभि से कल्पित था प्रिय-श्री तन !
बरसाती आशीष रश्मि थी स्वर्गिक चितवन,
दिव्य रजत नीहार शांति से मंडित आनन !
भू प्रदीप की शिखा स्वर्ग की ओर ऊर्ध्वचित्
वह निश्चल निष्कंप, स्तंभ किरणों की शोभन,
सूक्ष्म चेतना सिंधु मंथन से स्वतः प्रस्फुटित,
शुभ्र उषा सी थी उर नभ में उदित अगुंठित ![1]

उसी प्रसंग में भक्ति का ध्यान-मग्ना रूप भी देखने लायक है—

साथ भक्ति थी, रोमांचों की स्रक् सी पावन
नयनों के अभ्रों से झरते थे प्रकाश के कण !
अधरों के पुलिनों पर बहता स्मित का प्लावन,
उर-कंपन में बजते प्रिय पग नूपुर प्रतिक्षण !
तप्त कनक द्युति देह, सहज चन्दन सी वासित,
गैरिक शृंगों-से उरोज थे अश्रुमाल स्मिति,
सित कर्पूर शिखर सी, दिव्य शिखा से दीपित
सांध्य पद्म सा ध्यान मग्न उर प्रिय को अर्पित ![2]

भक्ति का मानवीकरण करके कई उपमानों से उसका रूप अंकित किया गया है। श्रद्धा के साथ भक्ति थी। वह अपने प्रिय के भक्ति-रस में पुलकित हो रही थी। रोमांचित होती भक्ति स्रक्-सी पावन दिखाई देती थी। उसके नयनों के लिए नील मेघ का अप्रस्तुत दिया गया और बताया गया कि जिस प्रकार मेघों से जलकण बरस पड़ते हैं उसी प्रकार उसके नयनों से प्रकाश-कण झर रहे थे। पानी की वर्षा से नदी-नाले के पुलिनों से पानी की बाढ़ बह निकलती है। वैसे ही भक्ति के अधर रूपी पुलिनों से स्मिति का प्लावन बहता था। उसका हृदय कंपित होकर नूपुर जैसी झनझन ध्वनि प्रकट करता था। उसके शरीर की पवित्र ज्योति तप्त सोने की निखार की समता करती थी। तप्त सोना अपनी

१. स्वर्ण किरण, पृ. ६१
२. वही, पृ. ६१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सभी मलिनता से दूर रहता है। वह अत्यधिक द्युतिमय होता है। वैसे ही भक्ति का शरीर भी अपने तप के ताप में जलकर आध्यात्मिक सौन्दर्य से युक्त था। 'तप्त कनक' रंग-संवेदना की चरमसीमा का द्योतक है। फिर उसे चन्दन-सी वासित बताकर घ्रातव्य भी बनाया गया है। उसके उरोज गैरिक शृंगों से शोभित थे और उनपर अश्रुजल चू पड़ा था। इस प्रकार जल-कणों की ज्योति में प्रकाशित उरोज सजल स्वर्ण की आभा पाते थे। दिव्य-शिखा के लिए 'कर्पूर शिखर' का अप्रस्तुत उसे घ्रातव्य बनाता है। ध्यान-मग्ना भक्ति के लिए सांध्य पद्म का उपमान कवि की मौलिक उद्‌भावना है। संध्या-काल में पद्म मुंद कर सिकुड़ जाता है। भगवान् के ध्यान में कर-पंकजों को जोड़े स्थिर मुद्रा में बैठी भक्ति मुँदे कमल की समता पाती थी। यह बिम्ब कवि की उच्च भावुकता, अतुल सौन्दर्य-भावना, सूक्ष्म ऐन्द्रिय संवेदना तथा प्रखर कला-चातुर्य का दिग्दर्शन कराता है।

इच्छा, वांछा, अभिलाषा, स्पृहा, तृष्णा, लालसा : इच्छा को मूर्त रूप देते हुए कवि ने उसके कई खंडित बिम्ब बनाये हैं, जैसे—

(१) जीवन की लहलह लतिका में
विकसा इच्छा के नव-नव दल[1]

(२) किन इच्छाओं के पंखों में
उड़ उड़ ये आँखें अनजान।[2]

(३) रंग रंग की इच्छाएँ कुसुमित,
झुके सफल जग जीवन डालें।[3]

(४) दुर्दम इच्छा के अश्वों को
संयत स्ववश करो।[4]

(५) चंचल इच्छा के शलभ[5]

(६) शत रौंढ़ भग्न इच्छाएँ
थी रेंग रहीं कीचड़ में,[6]

प्रथम अवतरण में जीवन को लहराती लता बताकर इच्छा को नव दल का उपमान दिया गया है। इससे उसके नित्य नूतन रूप एवं अनियंत्रित रूप से जन्म का संकेत मिलता है। द्वितीय में उसको पंखों का रूपक देकर जहाँ चित्रात्मक बनाया गया है, वहाँ उसके ऊपर उठने की विकलता का भाव भी दर्शाया गया है। तृतीय उद्धरण में उसके नाना रूपों को दिखाने के लिए रंग-रंग के पुष्पों की उपमा दी गयी है। मानव-जीवन में इच्छाएँ विविध रंगी होती हैं।

१. ज्योत्स्ना, पृ. ११८
२. पल्लव, पृ. ९५
३. उत्तरा, पृ. ८४
४. शिल्पी, पृ. ११०
५. अतिमा, पृ. ११५
६. लोकायतन, पृ. २००

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जैसे विविध रंगोंवाले कुसुमों के भार से वृक्ष की डालियाँ झुक जाती हैं, उसी प्रकार देखने में सुन्दर दिखाई देनेवाली इच्छाएँ जीवन को दबा रही हैं, उसकी उन्नति एवं विकास में बाधक बन रही हैं। ये इच्छाएँ ऐसी हैं जो दुर्दमनीय हैं। उनपर नियंत्रण रखना कठिन है। किन्तु उनको स्वच्छन्द बढ़ने दिया जाए तो अचित्य परिणाम निकल सकता है। इसलिए चतुर्थ उद्धरण में उसको तीव्र गति में बिना लगाम के दौड़नेवाले अश्व का उपमान दिया गया है। पंचम अवतरण में शलभ के रूप में चित्रित कर उसकी चंचलता का संकेत है। छठा अवतरण बिम्ब-विधान की दृष्टि से सफल है। मानव की इच्छाएँ कभी तृप्त एवं शान्त नहीं हो सकतीं। इसलिए वे भग्न होती जा रही हैं। इन भग्न इच्छाओं का मानवीकरण किया गया है।

वाँछा का मानवीकरण कर उसको मानस-शय्या पर सुलाया गया है—

मानस-शय्या पर मेरी इन
वांछाओं को सोने दो,[1]

अभिलाषा का निम्न चित्रित रूप बड़ा भाव-व्यंजक है—

फिर फिर प्राणों की अभिलाषा कनक भुजग सी
लिपट बाँध देती उत्सुक बढ़ते चरणों को।[2]

जो व्यक्ति मन को ऊर्ध्वगामी बनाकर विकास पाना चाहता है, उसे प्राणों की अभिलाषा त्यागनी होगी। प्राणों की अभिलाषा मन के ऊर्ध्वगमन में बाधक है, किन्तु प्राणों की अभिलाषा मोहक है कि वह सहज ही छोड़ी नहीं जाती। फलतः मन अपने संकल्प एवं प्रयत्न में असफल हो रहा है। अतः मन के ऊर्ध्व-संचरण में बाधा डालती अभिलाषा को उस कनक भुजंग का उपमान दिया है जो मनुष्य के आगे बढ़ते चरणों से लिपट कर उसका चलना रोक देता है। अभिलाषा के लिए गृहीत यह उपमान नूतन है और पर्याप्त अर्थ-बोधक है।

जैसे कोई व्यक्ति गर्मी के दिनों में वृक्षों-कुंजों की सघन छाया में बैठते-बैठते नींद में ऊँघने लगता है, वैसे ही वेदना के विपिन में बैठी कवि की स्पृहा ऊँघने लगती है—

विपुल कुंजों की सघनता में छिपी
ऊँघती है नींद सी मेरी स्पृहा,[3]

स्पृहा का यह मानवीकृत बिम्ब स्पष्ट है। एक अन्य बिम्ब भी द्रष्टव्य है—

हृदय सरसी, छवि पद्म विकास,
स्पृहाएँ ऊर्मिल-गान ![4]

---

१. वीणा-ग्रन्थि, पृ. १७
२. रजतशिखर, पृ. १०
३. वीणा-ग्रंथि, पृ. १३७
४. गुंजन, पृ. ६४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

यौवन के मधुमास में प्रेयसी का इंदु-मुख इंदु के समान कवि के ध्यान में द्युति-मय हो उठता है। उस समय हृदय-रूपी सरोवर में प्रेयसी के छवि-पद्म का विकास होता है और स्पृहाएँ ऊर्मिल गान बनती हैं। स्पृहाओं के लिए 'लहरों का गान' उपमान एक तो उनके उत्कर्ष का बोधक है तो दूसरे उल्लास का भी द्योतक है। सरोवर में लहरें ऊपर उठ-उठकर कलगान करती हैं वैसे प्रेमी की स्पृहाएँ प्रेयसी के ध्यान में ऊर्मिल हो उठती हैं। स्पृहाओं का यह मूर्ती-करण प्रभावकारी होते हुए भी पूरे छंद में असंगति है, क्योंकि इंदु के उदय से सरोवर में कमल का विकास नहीं होता, केवल कुमुद का होता है।

लालसा एवं तृष्णा को चल केंचुलियों का रूप देकर एक सुन्दर बिम्ब प्रस्तुत किया गया है—

अमिट लालसा तृष्णाओं की चल केंचुलियाँ
रेंगा करतीं गरल मदिर क्षण फन फैलाए ![1]

'चल केंचुलियाँ' गत्यात्मक बिम्ब खड़ा कर देती हैं। फिर उनके 'फन फैलाने' तथा 'रेंगने' के क्रिया-व्यापार से बिम्ब और भी सजीव बन गया। 'गरल' एवं 'मदिर' विशेषणों के कारण लालसा-तृष्णा को आस्वाद्य भी बनाया गया। इस प्रकार उनके रूप एवं गुण के द्योतक यह बिम्ब इतना स्पष्ट है कि भाव का साकार रूप प्रस्तुत करता है। आगे भी तृष्णा के लिए धरा धूलि में फण फैलाये लोटते भुजंग का अप्रस्तुत दिया गया है।

......धरा धूलि में
जो जीवन तृष्णा, भुजंग सी शत फन फैला
लोट रही है नीचे......[2]

अलौकिक सौन्दर्य के धरा-शिखर पर उतरते ही मानव की तृष्णा शान्त होती है। इसके लिए कवि ने एक नया चित्र अंकित दिया है—

शिथिल वसन-सी खिसक देह से, जीवन तृष्णा
मानव के चरणों पर पड़ी प्रणत छाया सी ![3]

'वाणी' में तृष्णा को रूपित करते हुए कहा गया है कि जिस प्रकार सरोवर के जल में शैवाल-जाल फैला रहता है उसी प्रकार मन में तृष्णा के घन छाये हुए हैं—

युग-युग के शैवाल जाल-से
मानस जल में छाए तृष्णा के घन ![4]

---

१. रजत शिखर, पृ. ६
२. वही, पृ. ५७
३. शिल्पी, पृ. ८२
४. वाणी, पृ. ७२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कवि ने आहत इच्छाओं, असफल तृष्णाओं के सोने का चित्र भी अंकित किया है—

शत शत आहत इच्छाएँ, असफल तृष्णाएँ
उसके चिर कुंठित अंतर में मौन सो रहीं।[१]

आशा-आकांक्षा, कामना, सुख : पन्तजी ने काव्य में कई स्थलों पर आशा, आकांक्षा, कामना, सुख आदि भावों को मूर्त रूप दिया है—

(१) जहाँ स्वर्ण की आशा-अलिनी
गाती है, कर स्वप्न विहार।[२]

(२) वह सोने की आशा-अलिनी
करती है जब मृदु गुंजार,
तब सुख हँसता, औ' दुख गाता
विश्व दीखता एकाकार।[३]

(३) शरद के बिखरे सुनहले जलद सी
बदलती थी रूप आशा निरंतर।[४]

(४) अमृत आशा ! फिर दुखी की सहचरी
नित नई स्मिति सी. मनोरम रूप सी,
विभव वंचित, तृषित, लालायित दयन
देखते हैं सदय मुख तेरा सदा।[५]

(५) इन्द्रधनुष सा आशा का सेतु
अनिल में अटका कभी अछोर।[६]

ऊपर 'आशा' के पाँच मूर्त चित्र हैं। प्रथम और द्वितीय अवतरणों में आशा को अलिनी का उपमान दिया गया है और दोनों स्थानों में उसको स्वर्ण रंग से युक्त कर दिया है। आशा सुखद है जीवन का आधार है, इसलिए उसको सुनहले रंग का बताया गया है। द्वितीय अवतरण में आशा रूपी अलिनी के मधु गुंजार के प्रभाव का भी वर्णन हुआ है। सुख हँसता है और दुःख रोता है। सुख और दुःख जैसे मानसिक भावों का भी मानवीकरण किया गया है। आशा सुख की सहायक है, जबकि दुःख की शत्रु। इसलिए आशा का मधु गुंजार दुःख के लिए रोने का विषय बनता है। आशा एकरूप नहीं रहती। समयानुसार आशा अपना रूप बदलती है, इसलिए उसमें एक क्रमबद्धता नहीं रहती। क्रमहीन एवं विविध रूपी आशा को बिखरे सुनहले जलद के अप्रस्तुत के साथ प्रस्तुत किया गया है। इतना होते हुए भी वह विभव वंचित, तृषित एवं लालायित नयनों का आसरा है। वही चिर दुःखी की एक-

१. रजतशिखर, पृ. ८६
२. वीणा-ग्रंथि, पृ. ५२
३. वही, पृ. ५३
४. वीणा-ग्रन्थि, पृ. १२२
५. वही, पृ. १२९
६. पल्लव, पृ. ६६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मात्र सहचरी है। उसी का संबल लेकर दुःखी जीवन ढोता चलता है। उसके अभाव में इस दुःखी संसार की क्या दशा होती, इसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते। केवल आशा रूपी सहचरी दुःखी व्यक्ति को मरने से या आत्महत्या से बचाये रखती है। इसलिए आशा दुःखी के लिए अमृत है। 'अमृत' कहकर आशा को आस्वाद्य बनाया गया है। पाँचवें अवतरण में आशा का सेतु उपमा के रूप में आया है। फिर 'इन्द्रधनुष' से उसकी समता करके जहाँ उसके बहुरंगी रूप की ओर संकेत किया गया है, वहाँ उसकी क्षणिकता भी उभारी गई। यही नहीं 'इन्द्रधनुष' के द्वारा उसकी असीमता का भी परिचय दिया गया है, आशा के सेतु को 'अनिल में अटका' या निराधार बताकर उसकी अस्थिरता दिखाई गयी है। इस प्रकार इन्द्रधनुष के समान मोहक एवं निस्सीम आशा को शून्य में लटका सेतु बताकर कवि ने यह भी संकेत किया है कि आशा जीवन में कभी सफल नहीं होती। सफल बनाने के प्रयत्न में आशा निराशा में परिणत होगी। आशा की यह सुन्दर एवं मनोवैज्ञानिक व्याख्या है।

१) नामहीन आकांक्षाएँ यहाँ अंतद्रिल
इन्द्रजाल बुनतीं अपलक स्वप्नों के मोहक।[१]

२) खोल गुंजलक चितकबरी कांक्षा
लगी लोटने, दे शत विष दंशन,[२]

उपर्युक्त दोनों उद्धरणों में आकांक्षा को मूर्त रूप दिया गया है। प्रथम अवतरण में उसको ऐन्द्रजालिक का और द्वितीय में उसको साँप का बिम्ब दिया गया है। आशा-आकांक्षाएँ मोहक स्वप्नों से मनुष्य को मोहित करती हैं, जैसे कोई ऐन्द्रजालिक हमारे चित्त को भ्रमित करता है। द्वितीय आकांक्षा रूपी सर्प के लोटने, दंशन करने का चित्र है।

१) परित्यक्ता वैदेही सी ही
अब हृदय कामना उठी निखर।[३]

२) मारकाट, हत्या, निर्दयता, कटुनृशंसता,
पैशाचिक उद्दाम कामना का खर तांडव![४]

३) क्षुधित कामना सिंधु उफन कर
अग्निस्तंभ सा उठता ऊपर।[५]

प्रथम अवतरण में कामना को परित्यक्ता वैदेही का पौराणिक बिम्ब दिया गया है। द्वितीय में उसी कामना की कल्पना मारकाट और हत्या में तल्लीन एक

१. रजतशिखर, पृ. ६
२. लोकायतन, पृ. ५६९
३. उत्तरा, पृ. १४५
४. रजतशिखर, पृ. २८
५. वाणी, पृ. ५१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पैशाचिक वृत्तिवाले मनुष्य के रूप में की गयी है और तृतीय में उसको खौल उठते सागर तथा अग्नि-स्तंभ के उपमानों के द्वारा साकार किया गया है।

स्वप्न-सुख अवास्तविक एवं निराशाजनक होता है। वह कवि के हृदय में उच्च शिला से कूद पड़कर घोष करते निर्झर के समान भीषण घोष कर रहा है। उसे रूपायित करने के लिए वज्र, वात, भूकंप एवं उत्पात के अप्रस्तुत प्रयुक्त हुए हैं —

गर्व-सा गिर उच्च निर्झर स्रोत से
स्वप्न सुख मेरा शिलामय हृदय में
घोष भीषण कर रहा वज्र सा
वात सा, भूकंप सा, उत्पात सा ![1]

मृगजल से प्राप्त सुख कभी भी अतृप्त रहता है, वह प्यासा है। इसलिए 'चातक सी प्यासी मृगजल सुख' कहकर उसका चित्र आंका गया है।[2]

निराशा, व्यथा, वेदना, उच्छ्वास : अमंगल सूचक एवं दुःखप्रद नैराश्य को गुंजलक मारे अजगर की उपमा दी गई है —

अजगर सा गुंजलक मारकर
घेरे हो नैराश्य अमंगल,[3]

वेदना को 'अंधेरे हृदय की दीपक शिखा'[4] में ज्वलन के प्रभाव को दिखाने के साथ ही स्वरूप भी प्रस्तुत किया गया है। आगे इसी प्रसंग में 'वेदना के सुरीले' हाथ[5] की कल्पना कर उसका मानवीकरण कर दिया है। एक अन्य स्थान पर कवि ने मूक व्यथा का दर्शन किया है[6] तो मधुर प्रणय की भावमयी वेदना को अंगड़ाई लेते हुए भी देखा है—

मधुर प्रणय की भाव-वेदना
अँगड़ाई लेती अतर में ![7]

वेदना की अंगड़ाई जहाँ उसे सचेतन बनाती है, वहाँ उसका चाक्षुष रूप भी दिखाती है। 'उच्छ्वास' नामक अमूर्त तत्व को 'आकाश' के रूप में चित्रित कर उसकी अनंतता और असीमता का परिचय कराया गया है।

स्नेह का वासंती संसार
पुनः उच्छ्वासों का आकाश ![8]

---

१. वीणा-ग्रन्थि, पृ. १३८
२. लोकायतन, पृ. ४४१
३. वही, पृ. ४२
४. वीणा-ग्रन्थि, पृ. १३१
५ वीणा-ग्रन्थि, पृ. १३६
६. अतिमा, पृ. ३७
७. पौ फटने से पहिले, पृ. ७२
८. पल्लव, पृ. ७१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भ्रांति, संदेह, लोभ

तिमिर के अज्ञात अंचल में छिपी
झूमती है भ्रांति मेरी भ्रमर सी,[1]

इस उदाहरण में भ्रांति तिमिर के अज्ञात अंचल में भ्रमर-सी झूमती दिखाई गई है। भ्रांति अमूर्त भाव है और भ्रमर मूर्त उपादान। अतः यहाँ अमूर्त का मूर्त उपकरण से मूर्तीकरण किया गया है। तिमिर अज्ञान का प्रतीक है। अज्ञान से ही भ्रांति का जन्म होता है। तिमिर का मातृत्व भी सिद्ध किया गया, क्यों कि वही अपने अंचल में भ्रांति नामक शिशु को पालता है। तिमिर काला है। उपमान भ्रमर भी काला है। अतः तिमिर के अज्ञात अंचल में भ्रमर जैसी झूमती भ्रांति जीवन का अंधेरा है। भ्रांति का कितना सुन्दर एवं भावगर्भित बिम्ब-विधान है। 'झूमना' क्रिया सार्थक है। फिर तिमिर, भ्रमर आदि में रंग-संवेदना भी प्रकट होती है।

खींच लो इसको, कहीं क्या छोर है ?
द्रौपदी का वह दुरन्त दुकूल है।
फैलता है हृदय में नव बेलि सा,
खोज लो, इसका कहीं क्या मूल है ?[2]

यहाँ अदेह संदेह को दो उपमानों—द्रौपदी का दुरन्त दुकूल तथा नवबेलि—से उपमित किया गया है। संदेह अगर किसी के मन में पैदा हुआ तो फिर उसका अन्त नहीं होता। इस बात को द्रौपदी के दुरन्त दुकूल के पौराणिक बिम्ब द्वारा सिद्ध किया गया है। जैसे नव बेलि बिना मूल के भी पूरे वृक्ष पर फैलकर उसको सुखा देती है, वैसे ही संदेह के लिए किसी आधार या कारण की आवश्यकता नहीं होती। एक बार वह अगर हृदय में व्याप्त हुआ तो उसका कभी अन्त नहीं होता। वह पूरे हृदय के आनंद को समाप्त कर देता है।

पंतजी ने 'लोभ' नामक मनोविकार का मानवीकरण कर संसार में उसके भारी अत्याचार का बिम्ब प्रस्तुत किया है—

सकल रोओं से हाथ पसार
लूटता इधर लोभ गृह द्वार,
उधर वामन पग स्वेच्छाचार
नापता जगती का विस्तार !
टिड्डियों सा छा अत्याचार
चाट जाता संसार ![3]

१. वीणा-ग्रन्थि, पृ. १३८ २. पल्लव, पृ. ६१ ३. पल्लव, पृ. १५५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

लोभ का लुटेरा रूप प्रस्तुत करते हुए उसके द्वारा गृह-द्वार का लूटने का चित्र पहली दो पंक्तियों में है। अधिक से अधिक साधनों को जल्दी से जल्दी ले जाने के विचार से वह चारों ओर अपना हाथ पसारता है। 'हाथ पसारना' पूरा चित्र सामने लाता है। लोभ स्वेच्छाचारी है और वह सारे संसार को अपने अधीन करने की सोचता है। इसलिए 'वामन पग' उसका विशेषण बनकर आया है, जो वामनावतार तथा वामन द्वारा तीन पगों में सारे जगत् को नापकर महाबलि को पाताल में भेजने का चित्र अंकित करता है। 'नापना' क्रिया लोभ के स्वेच्छाचार का गत्यात्मक रूप अंकित करती है। फिर लोभ के अत्याचार को टिड्डी-दल का उपमान देकर यह चित्र प्रस्तुत किया गया है कि जिस प्रकार टिड्डी-दल पक्के दानों के खेतों को देखते-देखते चुग जाता है और नष्ट कर देता है, उसी प्रकार अत्याचार सारे संसार को चाट जाता है। 'चाट जाना' क्रिया पूरे वातावरण को नेत्रों के सम्मुख प्रत्यक्ष कर देती है। रूपक तथा उपमा के द्वारा लोभ के रूप एवं कार्यों की सजीव अवतारणा हुई है।

प्रेरणा, प्रतीति, लज्जा, वासना : मन के ऊर्ध्व धरातल पर पहुँचते ही वहाँ प्रेरणाओं के स्वर्णिम मेघ रजत फुहारों से अजस्र झरते हैं —

जहाँ प्रेरणाओं के स्वर्णिम मेघ बरसते
मर्म स्वरों की रजत फुहारों से अजस्र झर।[1]

प्रेरणाओं के मेघों को 'स्वर्णिम' रंग विशेष उद्देश्य से दिया गया है। यह प्रेरणा आध्यात्मिक है, इसलिए दिव्य है और पंतजी अध्यात्म से संबन्धित वस्तुओं को स्वर्णिम रंग से बहुधा रंगते हैं। स्वर्णिम मेघ, रजत फुहार, मर्म-स्वर एवं अजस्र झर अपने रंग तथा श्रव्य संवेदनाओं के कारण एक मिश्रित बिम्ब अवतरित करते हैं और पाठक अपनी आँखों के आगे मेघ, वर्षा, वर्षा का घोष, नदी-नालों का उमड़ना तथा फुहारों का कमनीय सौन्दर्य—सब का सम्मिलित चित्र पाता है।

स्वर्ग-चेतना के धरा की ओर अवरोहण के समय की प्रतीति का एक दिव्य-नारी रूप में चित्रण चित्ताकर्षक है—

शरद् चन्द्रिका स्नात मल्लिका सी नव निर्मल
हिम बाष्पों का झीना पट पहने किरणोज्वल,
शैशव की स्मिति सी प्रतीति आई चिर निश्छल,
भर अनभ्र नीलिमा मौन नयनों में निस्तल।[2]

---

१. पल्लव, पृ. १५५
२. स्वर्ग-किरण, पृ० ५८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रतीति का मानवीकरण कर प्राकृतिक उपमानों से उसका दिव्य सौन्दर्य निखारा गया है। वह शरद्ज्योत्स्ना-स्नात मल्लिका-सी निर्मल है, हिम बाष्पों का किरणोज्ज्वल झीना पट पहनी हुई है। वह ऐसी निश्छल है मानो शैशव की स्मिति हो। 'शैशव की स्मिति' के उपमान से प्रतीति के भोलेपन, निष्कलंक स्वरूप आदि की सुन्दर व्यंजना हुई है। उसके नयन मौन हैं, अनभ्र नीलिमा से आच्छादित हैं। रंग, गन्ध, स्पर्श संवेदनाओं की प्रचुरता के कारण यह प्रतीति का सफल ऐन्द्रिय बिम्ब है।

नव प्रवाल लाली में गुंठित
छुई मुई सी लज्जा कोमल
मसृण जलद में शशि छाया सी
आ-जा, दिपती छिपती प्रतिपल।[1]

उपर्युक्त अवतरण में लज्जा के आगमन एवं प्रभाव का चित्रण हुआ है। लज्जा का मानवीकरण करके उसको नवप्रवाल लाली का अवगुंठन पहने बताया गया है। लज्जा के आगमन के साथ ही मुख लालिमामय हो उठता है। इसी-लिए लज्जा रूपी नारी का वह अवगुंठन है। 'छुई-मुई' का उपमान लज्जा का पूरा चित्र प्रस्तुत करता है। लजीली नारी स्पर्श मात्र से मुरझा जाती है, जैसे कि छुईमुई या लाजवन्ती। क्षण-क्षण मुख पर लज्जा की लालिमा आती जाती रहती है और उसके लिए मसृण जलदों में शशि-छाया के दिपते-छिपते उपमान को प्रस्तुत कर 'दिप-छिप' क्रिया से उसके व्यापार की तीव्रता का एक गत्यात्मक चित्र बनाया गया है। रंग एवं स्पर्श-संवेदनाओं तथा उपमा-अलंकार से प्रभावकारी यह चित्र लज्जा के मोहक रूप को अंकित करने में समर्थ है।

कवि ने वासनाओं को असंख्य केंचुलों की नागिन का अप्रस्तुत दिया है। वासनाओं की असंख्य परतें होती हैं, जैसे नागिन की असंख्य केंचुलें। फिर वासना का नागिन रूप दिखाकर लिंग-साम्य की रक्षा भी हुई है—

ओ वासनाओं के
असंख्य केंचुलों की
नागिन[2]

अहन्ता, दर्प, घृणा, द्वेष, ईर्ष्या

१) अहन्ता अब जन-जीवन संबल !
ओढ़े भू आसुरी शक्ति का काला कम्बल ![3]

---

१. स्वर्ण किरण, पृ. ५३
२. कला और बूढ़ा चाँद, पृ. १८२
३. वाणी, पृ. ७६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

२) दर्प सर्प का व्यर्थ दाँव ![१]

अहन्ता को आसुरी शक्ति का काला कम्बल बनाकर उसके भयंकर रूप एवं प्रभाव का परिचय दिया गया है। 'काला' विशेषण सार्थक है, क्योंकि अहन्ता मन की कलुषित स्थिति है, जो पूरे संसार में अंधेरा फैलाती है। द्वितीय अवतरण में दर्प को सर्प का रूप देकर उसके दाँव को व्यर्थ सिद्ध किया गया है। अहंकार जो भी दाँव खेलेगा, उसका परिणाम असफलता ही है। कवि को आशा है कि लोगों के ज्ञान-चक्षु खुलते ही अन्धकार का फण नत किये शक्ति-मद का सर्प वशीभूत होगा।[२]

घृणा विरोध निशा का पथ है।[३] घृणा द्वेष कल्मष है[४], वह छिपा हुआ तृषानल है।[५] वह गरल है, जिससे संसार जल मरेगा।[६] इस प्रकार घृणा-द्वेष, ईर्ष्या को अन्धकार और गरल सिद्ध कर उससे बचे रहने का आग्रह किया गया है।

स्वार्थ, हिंसा, प्रतिहिंसा : स्वार्थ को अन्धियारी नगरी[७] का रूपक देकर उसके भयाकुल रूप की व्यंजना की गई है। स्वार्थ अन्धा है, जिसके प्रभाव से मानव अपना विवेक खोकर अन्धेरे में टटोलता फिरता है, किन्तु उसको कुछ सूझता नहीं है। हिंसा को नग्न नृत्य करती नारी का रूप दिया गया है।[८] आगे हिंसा को ग्लानिवश मूर्छित सोती नारी के रूप में प्रस्तुत किया गया है—

हिंसा स्वयं ग्लानिवश सो जाती
मूर्छित हो—[९]

प्रतिहिंसा एवं अविश्वास दैत्य हैं, जो अपने निर्मम चरणों से संसार को पद-मर्दित कर रहे हैं—

पद मर्दित हो रहीं आज वे अविश्वास के
प्रतिहिंसा के दैत्यों के निर्मम चरणों से।[१०]

स्मृति, स्वप्न, तन्द्रा, निद्रा : स्मृति के अनेक रूप-चित्र पन्त के काव्य में प्राप्त होते हैं। कहीं उसका बालिका-रूप दिखाया गया है, तो कहीं उसके प्रभाव का चित्रण है। कभी उसको मूक व्यथा में लिपटे सोते दिखाया गया है।

१) स्मृति ! यद्यपि तुम प्रणय की पद चिह्न हो,
पर निरी हो बालिका—तुम हृदय को

---

१. वाणी, पृ. ५२
२. लोकायतन, पृ. ४१०
३. वही, पृ. ४३९
४. वही, पृ. ४४१
५. वाणी, पृ. २९
६. वाणी, पृ. २९
७. सौवर्ण, पृ. ८१
८. रजत शिखर, पृ. ११५
९. किरण-वीणा, पृ. ४०
१०. रजत-शिखर, पृ० ६३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गुदगुदाती हो, तरल जल बिम्ब सी
तैरती हो, बाल क्रीड़ा कर सदा ।[१]

२) एक मधुरतम स्मृति पल भर विद्युत सी जल कर उज्ज्वल
याद दिलाती मुझे हृदय में रहती जो तुम निश्चल ।[२]

स्मृति प्रणय का अवशिष्ट है और इस नाते वह प्रणय का पद-चिह्न है । आगे उसको चंचल बालिका माना गया है । वह एक क्षण के लिए प्रेमी को गुद-गुदाती है, जैसे कोई बालिका अपनी मधुर क्रीड़ाओं से मुग्ध करती है । द्वितीय अवतरण में स्मृति के आगमन को विद्युत् के कौंधने का उपमान प्रभाव-साम्य पर आधारित है ।

'स्वप्न' को अनेक अप्रस्तुतों से सजाने का प्रयत्न भी पन्तजी ने किया है । पल्लव की 'स्वप्न' कविता में उसके लिए स्वर्ण सरित, भावों की गूढ़ उमंग, देवियों की माया, सुषमा का संसार, स्वप्निल मदिरा का राग, स्वर्ण पराग, नयन नलिन में बँधी भ्रमरी, मायावी शिशु, छायामय लोक आदि[३] अनेक उपमान दिये गये हैं जिनमें से कुछ अमूर्त हैं तो कुछ मूर्त । भले ही अमूर्त उपमानों से उसका कोई स्पष्ट बिम्ब न बनता हो, तो भी मूर्त उपमान जैसे 'नयन नलिन में बंधी मधुप', 'मायावी शिशु' आदि सजीव बिम्ब-कल्पना ही हैं ।

निम्न पंक्तियों में भी 'स्वप्न' की मूर्त-कल्पना है—

तुम देही हो ? दीपक लौ सी दुबली, कनक छबीली,
मौन मधुरिमा भरी, लाज ही सी साकार सजीली-
तुम नारी हो ? स्वप्न कल्पना सी सुकुमार सजीली ?[४]

नारी-रूपमें स्वप्न की कल्पना करके उसके लिए दीपक लौ सी दुबली, कनक छबीली, साकार सजीली आदि विशेषण प्रस्तुत किये हैं और उसके रूपाकार को अंकित किया गया है । वह स्नेह-प्रतिमा है और मर्म इच्छा से बनती है । वह हृदय-कमल में अभिलाषा स्पंदित कर झूलती है,[५] दिव्यदूत से पंख खोल उसे निःस्वर उतरते दिखाया गया है ।[६] स्वप्न के लिए अप्सरियों का उपमान अनेक स्थानों पर दिया गया है ।[७]

तंद्रा एवं निद्रा को निम्न अवतरणों में मूर्त किया गया है—

(१) किस प्रकार तब अंधकारमय
हौले थी हो गयी मही !

१. वीणा-ग्रन्थि, पृ० १२८
२. ग्राम्या, पृ० १०६
३. पल्लव, पृ. ९४-९६
४. स्वर्णधूलि, पृ. १३१
५. स्वर्ण धूलि, पृ. १३४
६. उत्तरा, पृ. १५१
७. सौवर्ण, पृ. ६५-६६ : लोकायतन, पृ. ३०२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तस्करिणी सी तंद्रा सबकी
सुधि थी चुपके छीन रही ।[१]

(२) नींद घनेरी भरी दृगों में
पलकें झँप झँप जातीं ।[२]

प्रथम अवतरण में तंद्रा को तस्करिणी का अप्रस्तुत दिया गया है। रात के अंधकार में जैसे चोर माल चुरा ले जाता है, उसी प्रकार नींद सबकी सुधि छीन ले जाती है। अर्थात् नींद सबको बेसुध कर डालती है। नींद का सुधि को चुपके छीन रही तस्करिणी के रूप में बिम्ब मोहक है। दूसरे अवतरण में पलकों के झँप-झँप जाने की क्रिया के द्वारा दृगों में भरी घनेरी नींद को मूर्त दिखाने का प्रयास किया गया है। 'ग्राम्या' में नींद को अजगर रूप में रूपायित किया गया है, जो सारी बस्ती को निगल रहा है।[३]

निष्कर्ष

उपर्युक्त आधारों पर यह निष्कर्ष निकलता है कि पन्त-काव्य भाव-प्रेरित है और उसमें मानसिक भावों के असंख्य मूर्त-चित्र देखे जा सकते हैं। पन्तजी प्रेम, वासना, सुख, दुःख, आशा-निराशा, संदेह, भ्रम, लज्जा, ईर्ष्या, अभिलाषा जैसे अनेक भावों को बिम्ब रूप में अंकित किया है। उन्होंने कभी इन भावों का मानवीकरण किया है तो कभी इनके लिए अप्रस्तुत-विधान की योजना बनायी है और कभी इन भावों को स्पष्ट करने के लिए प्रतीकों का सहारा लिया है। इन भावों के उत्कर्ष को प्रकट करने के लिए उनका ऐन्द्रिय संवेदनात्मक स्वरूप भी दिखाया गया है। मूर्त-विधान में कभी विशेषण, कभी क्रिया, कभी लाक्षणिक प्रयोग चमत्कार उत्पन्न करते हैं।

---

१. वीणा-ग्रंथि, पृ. ८५
२. उत्तरा, पृ. १४९
३. निगल रहा बस्ती को धीरे,
गाढ़ अलस निद्रा का अजगर।—ग्राम्या, पृ. ६७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सप्तम अध्याय

पन्त-काव्य में दार्शनिक बिम्ब

पन्तजी बीसवीं शताब्दी के दार्शनिक एवं चिन्तक कवि हैं। वे अनेक दार्शनिक विचारधाराओं तथा मान्यताओं से प्रभावित हैं। इसलिए यह स्वाभाविक है कि उनके काव्य में दार्शनिक बिम्बों की प्रचुरता हो। पन्त-काव्य में दार्शनिक बिम्बों का अन्वेषण करने के पूर्व दर्शन का तात्पर्य और पन्तजी को प्रभावित करनेवाले दर्शनों का रूप आदि पर संक्षेप में विचार करना आवश्यक है।

दर्शन

दर्शन शब्द 'दृश्' धातु से करण अर्थ में 'ल्युट्' प्रत्यय लगकर बना है, जिसका अर्थ हुआ 'जिसके द्वारा देखा जाए।' यह देखने की क्रिया दो प्रकार की होती है—बाह्य चक्षु से देखना तथा अन्तःचक्षु से देखना। बाह्य चक्षुओं से प्राप्त ज्ञान को चाक्षुष प्रत्यक्ष तथा अन्तःचक्षु या प्राज्ञ चक्षु से प्राप्त ज्ञान को प्राज्ञ-ज्ञान कहा जाता है और इन दो में से द्वितीय प्राज्ञ-ज्ञान भारतीय दृष्टि से वास्तविक दर्शन का विषय है। भारतीय दर्शन मूलतः आध्यात्मिक रहा है और उसने सम्पूर्ण जगत् में एक ही परमेश्वर या विश्व पुरुष को देखने की चेष्टा की है। हमारे ऋषि-मुनियों ने प्रकृति के प्रांगण में बैठकर एकान्त चिन्तन-मनन के द्वारा सम्पूर्ण प्रपंच की जिस नियामक एवं नियन्ता अध्यात्म सत्ता का आभास प्राप्त किया, वही भारतीय दर्शनों का मूल है। उनके द्वारा हम सत्य एवं अक्षर पुरुष को जानते हैं।[1] भारतीय दर्शन जागतिक दुःख से निवृत्ति एव निःश्रेयस् की प्राप्ति का मार्ग सुझाता रहा।

भारतीय दर्शन एवं पन्त

पन्तजी भारतीय दर्शनों से अत्यधिक प्रभावित हैं। वैदिक तत्वज्ञान का प्रभाव प्रारम्भिक रचनाओं पर ही नहीं पन्तजी के तथाकथित प्रगतिवादी रचनाओं तथा अरविन्द-दर्शन से प्रभावित रचनाओं पर भी देखा जा सकता है। उनके स्वर्ण काव्यों में उदाहरण देकर दिखाया जा सकता है कि कभी वे वेदों-उपनिषदों के मन्त्रों को यथावत् प्रस्तुत करते हैं तो कभी उनका भावानुवाद करते हैं। आगे वैदिक दर्शन तथा अरविन्द-दर्शन के सार-तत्वों पर विचार किया जाएगा।

१. येनाक्षरं पुरुषं वेद सत्यम्—मुण्डकोपनिषद्, १–२–१३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वैदिक दर्शन

भारतीय वाङ्मय का अतिप्राचीन रूप वेद है, जिसमें अध्यात्म सत्ता की स्वीकृति एवं उसके प्रति जिज्ञासा का भाव स्पष्ट देखा जा सकता है। वेदों में दर्शन का जो बीजारोपण हुआ, उसका पूर्ण विकसित रूप उपनिषदों में प्राप्त होता है और उपनिषदीय दार्शनिक विचारों का सारतत्व, 'गीता' में प्राप्त होता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि वेद, उपनिषद्, गीता आदि ग्रन्थों में अभिव्यक्त अध्यात्मज्ञान वैदिक दर्शन का विषय है और इस दर्शन ने समान रूप से प्राच्य एवं पाश्चात्य जीवन तथा चिन्ता-धाराओं को प्रभावित किया है। पाश्चात्य सर्वात्मवाद भी इसी का प्रभाव माना जा सकता है। वैदिक दर्शन ने लौकिक जीवन से परे आध्यात्मिक जीवन अपनाकर जीवन के परमलक्ष्य परमानन्द की प्राप्ति का मंगलमय उपदेश दिया है। वैदिक दर्शन का स्वर एकतामय है।[१] उसने ब्रह्म और जगत् तथा ब्रह्म और आत्मा की एकता का उद्घोष किया है।[२]

वैदिक दर्शन की यह मान्यता रही है कि ब्रह्म 'तज्जलान्' है, अर्थात् वह सत्ता है जिससे सब वस्तुओं का उद्गम होता है, जिसमें सबका विलय होता है तथा जिसमें सबका अस्तित्व है। वह 'सत्यस्य सत्यम्' है। पहले उस आदि सत्ता का अस्तित्व था, जिसने अपने को इस अनुभूत जगत् के रूप में अभिव्यक्त किया। उस सत्ता को विश्वपुरुष के रूप में कल्पित किया गया है, जिसके एक सहस्र सिर, सहस्र नेत्र और सहस्र पाद हैं और जो सम्पूर्ण जगत् में व्याप्त है।[३] परमेश्वर सबका शासक है, वही सब जीवों की आत्मा बनकर अन्तर्यामी रूप में सबका शासन करता है। अतः जगत् में जितनी भी जड़-चेतन वस्तुएँ हैं, वे सब ईश्वर-स्वरूप हैं।[४] ऋग्वेद में सृष्टिकर्ता ईश्वर को हिरण्यगर्भ कहा गया है। व्यक्त जगत् के नाम और रूप हिरण्यगर्भ में उसी तरह छिपे हैं जैसे भावी वृक्ष बीज में समाया रहता है।[५]

यह जगत् सर्वोच्च सत्ता ब्रह्म का आत्म-प्रक्षेपण है, ईश्वर ने अपनी माया-शक्ति के सहारे लीला के लिए यह प्रक्षेपण सम्पन्न किया है। इसलिए ब्रह्म ही जगत् का स्रष्टा, पोषक एवं संहारक है। जिस प्रकार मकड़ी अपना जाला अपने ही शरीर के तन्तुओं से बुनती है और उसे अपने में समाविष्ट करती है, वैसे ही हिरण्यगर्भ भगवान् अपने अन्दर की समस्त शक्तियों को प्रकट

---

१. सर्वं खल्विदं ब्रह्म—छान्दोग्योपनिषद्, ३०–१४–१
२. अयं आत्मा ब्रह्म—बृहदारण्यकोपनिषद्, २–५–१९
३. पादो अस्य विश्वाभूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि—ऋग्वेद, १०–९०
४. ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्—ईशावास्योपनिषद्, मंत्र–१
५. उपनिषदों की भूमिका, पृ. ६१–६२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कर जगत् की सृष्टि करता है।[१] इस सृष्टि-लीला के पीछे ईश्वर के मन में मादन भाव था। उसमें 'एकोऽहम् बहुस्याम्' की भावना हुई तो सृष्टि हुई। इस सृष्टि के समय अद्वितीय सत् को छोड़कर कुछ नहीं था।[२]

जीव वैयक्तिक आत्मा है, जो अहंकार के कारण संसार के गर्त में पड़कर जन्म-मरण का दुःख भोगता है। इसलिए जीवात्मा भोक्ता है, वह कर्मफल का अनुभव करता है। बृहदारण्यकोपनिषद् में बताया गया है कि शरीर रूप वृक्ष पर रहनेवाला पक्षी—जीवात्मा -- कर्मफल रूप दुःख-सुख के उपभोग से बच नहीं सकता। पूर्व जन्म के संचित फल भोगने के लिए वह संसार में आता है। जीवात्मा अपने कर्मों से देवता बन सकता है, परमात्मा बन सकता है।[३] वैयक्तिक अनुभूति के निराकरण मात्र से जीव विश्व में अपनी आत्मा का स्पंदन अनुभव करता है तथा सभी में एकरसतामय आनन्द प्राप्त करता है। आत्मा नित्य, चिरन्तन, अमर, अनश्वर है। कठोपनिषद् में कर्मफल एवं पुनर्जन्म की सुन्दर व्याख्या प्रस्तुत है। हिन्दू अनेक जन्मों में विश्वास रखता है। जिस प्रकार जोंक घास की लम्बी पत्ती के अन्तिम सिरे पर पहुँच जाती है तो वह सहारे के लिए और कोई स्थान खोज लेती है और अपने को उस ओर खींच लेती है, उसी प्रकार यह जीवात्मा इस शरीर के अन्त पर पहुँचकर सहारे के लिए और कोई स्थान खोज लेता है।[४] अतः मृत्यु जीवात्मा का अन्त नहीं, काया-परिवर्तन मात्र है। अतः जीवात्मा एवं परमात्मा की एकता तथा जीवात्मा की अमरता का सन्देश वैदिक दर्शनों का मूलभूत सिद्धान्त है।

अरविन्द-दर्शन

महर्षि अरविन्द बीसवीं शताब्दी के मूर्धन्य चिन्तक, दार्शनिक एवं योगी थे। उन्होंने भारतीय उपनिषदों, पुराणों, गीता आदि का व्यापक अध्ययन एवं अनुशीलन करके भारतीय दार्शनिक विचारों की युगानुरूप एवं मानव-योग्य व्याख्या प्रस्तुत की। उनके अनुसार ब्रह्म या परमसत्ता या परमचेतना या दिव्य-चेतना एक अद्वितीय सत्ता है जो असीम, अनन्त, अनिर्वचनीय शुद्ध निर्गुण है, जहाँ मनुष्य मन या बुद्धि के द्वारा पहुँच नहीं सकता। वह सत्ता भी है और परिणति भी। वह सकल भी है और निष्कल भी।[५] उनकी यह धारणा भी है कि ब्रह्म न सत्ता है, न परिणति, न स्थिति है, न गति, न एक है, न अनेक। वह शक्ति और शक्तिमान का समन्वित रूप है।[६] आगमिक एवं नैगमिक

१. मुण्डकोपनिषद्, १–१–७
२. छांदोग्योपनिषद्, २–१–१ से ९ तक
३. बृहदारण्यकोपनिषद्, ४–३–३१
४. कठोपनिषद्, १–१–५६
५. टी. वी. कापाली शास्त्री—श्री अरविन्दो: लाइट्स ऑन दि टीचिंगस्, पृ. ११
६. वही, पृ. २०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अद्वैतवादियों के समान वह सच्चिदानन्द स्वरूप है। पदार्थ के परे शक्ति एवं गति के रूप में जो परमसत्ता है, उसको हम केवल अन्तः चेतना के द्वारा ही समझ सकते हैं, वह चाक्षुष ज्ञान का विषय नहीं है।

अरविन्द के अनुसार जीव चेतन-सत्ता है, ब्रह्म का अंश है। ब्रह्म आत्माभिव्यक्ति के लिए सृष्टि-रचना में तल्लीन रहता है। समस्त प्रकृति मूल रूप में ब्रह्म की शक्ति के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। यह शक्ति शान्ति-अवस्था में ब्रह्म में समायी हुई रहती है और ब्रह्म में गतिशीलता के होते ही शक्ति ब्रह्म से निकलकर नाना रूपों में प्रकट होती है।[1] लीलामय भगवान् अपने एक अंश पर प्रकृति का आधिपत्य स्वीकार करता है और यही जीवात्मा है। अतः जगत् के समस्त पदार्थों में जीवात्मा समाया हुआ है। तात्पर्य यह है कि अरविन्द के अनुसार ब्रह्म और जगत् दोनों सत्य हैं और दोनों में विकास की सतत प्रक्रिया चल रही है। इस दृष्टि से शांकर अद्वैत और अरविन्द-अद्वैत में अन्तर यह है कि शंकर संसार को मिथ्या मानते हैं तथा ब्रह्म और जगत् के भेद को अनिर्वचनीय मानते हैं, जबकि अरविन्द जड़ और चेतन में विरोध नहीं मानते। सब एक ही ब्रह्म रूपी सागर के गति-रूपी आन्दोलन से उत्पन्न होती लहरें हैं।[2] "इस विराट विश्व-सृष्टि के यदि दो अर्ध माने जाएँ तो परार्द्ध में सत् चित् आनन्द एवं सुपरमाइण्ड एवं अधीनस्थ शक्ति के रूप में अपरार्द्ध में उन्हीं के प्रतिबिम्ब क्रमशः जड़, प्राण, चैत्य पुरुष एवं मन हैं। इस प्रकार सत् यदि अपने को प्रकाशित करना चाहता है तो उसे जड़ात्मक आवरण धारण करना ही होगा। वैसे ही यह जड़ात्मक आवरण भी उसी का स्वेच्छया परिगृहीत रूप है।"[3]

अरविन्द की योग-साधना में अतिमानव की स्थिति का महत्व पूर्ण स्थान है। अतिमानव स्वर्गीय मानव की स्थिति है, जो परमानंद में तल्लीन रहता है। वह जीवनमुक्त व्यक्ति है। मानव का लक्ष्य इस अतिमानव स्वरूप को प्राप्त करने का है। इसके लिए मन-बुद्धि का अतिक्रमण करना पड़ता है। जड़ में छिपी हुई जीवन-शक्ति अन्न, प्राण, मन तक का विकास प्राप्त कर चुकी है। उसे अतिमानव बनने की योग्यता प्राप्त करनी है। इसके लिए पहले अतिमानव बनने की साध होनी चाहिए और मानव को आत्मविस्तार करना चाहिए। इस आत्मविस्तार से वह अपने को परम-चेतना के सम्मुख आत्म-समर्पण कर देगा। मानव-चेतना के ऊर्ध्वसंचरण की साध से प्रोत्साहित हो उसे इस प्रयत्न में सहायता एवं अनुग्रह प्रदान करने के लिए परम चेतना का अधः संचरण होता है।

---

१. टी. वी. कापाली शास्त्री—श्री अरविन्दो : लाइट्स ऑन दि टीचिंगस् पृ. २१
२. अरविन्द—दि लाइफ डिवाइन, भाग-२, पृ. ४५
३. तुलसीदल (अरविन्द विशेषांक), अगस्त १९७०, पृ. १२७-१२८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तात्पर्य यह कि अतिमानव की साधना द्विधामूलक है। अधः का ऊर्ध्व-संचरण और ऊर्ध्व का अधः संचरण साथ-साथ चलते हैं।[1] ऊर्ध्व-संचरण की योग्यता ऊर्ध्व-चेतना की कृपा एवं वैयक्तिक साधना पर निर्भर है। दिव्यानुग्रह एवं आत्म-साधना के बल पर मनुष्य उच्च मन, दीप्त मन, संबोधि जैसे अनेक सोपानों पर चढ़कर अधिमानस की स्थिति तक पहुँच सकता है। अरविन्द ने जड़ पदार्थ और दिव्य-चेतना के बीच कई सोपान माने हैं। उन्होंने दिव्य चेतना के निवर्तन या अवरोहण का सोपानक्रम यह बतलाया है—सत् चित् आनंद से अतिमानस, अतिमानस से मानस, मानस से जीव, जीव से प्राण, प्राण से जड़-तत्व। जगत् के विवर्तन या विकास या आरोहण का सोपानक्रम इसके ठीक विपरीत है—जड़तत्व से प्राण, प्राण से जीव, जीव से मानस, मानस से अतिमानस, अतिमानस से आनंद, उससे चित्, उससे परब्रह्म निरपेक्ष सत् माना है।[2]

योगी अरविन्द मुक्ति को मानते हैं, किन्तु उसे मृत्यु के उपरांत नहीं, जीवन-काल में इसी संसार में मानते हैं। मनुष्य अपनी साधना के बल पर दिव्य-रूप धारण कर सकता है और इसी संसार को अतिमानवों का स्वर्ग बनाया जा सकता है और इसी को वे भागवत् जीवन (लाइफ डिवाइन) की संज्ञा देते हैं।

दार्शनिक बिम्ब

पन्तजी को प्रभावित करनेवाले दार्शनिक तत्वों का समग्र अध्ययन करने के उपरांत अब यह देखा जाएगा कि पन्तजी ने इन तत्वों को किस प्रकार बिम्बों में परिणत कर दिया है। दार्शनिक तत्वों, विचारों को मूर्त रूप देना सहज कार्य नहीं है। उसके लिए गहन अनुभूति, उर्वर कल्पना-शक्ति एवं सक्षम कलात्मकता अपेक्षित है। यही नहीं, आध्यात्मिक कविताओं में व्यक्त आध्यात्मिक अनुभव पन्तजी के अनुभूत भले ही हों, साधारण पाठक के लिए वे अननुभूत होते हैं। ऐसी स्थिति में पाठक को बिम्ब-ग्रहण के लिए तैयार करना वास्तव में दुष्कर कार्य है और यही कवि की बिम्ब-योजना की चातुरी का सच्चा परीक्षा-स्थल है। पहले वैदिक दर्शन पर आधारित पन्त के दार्शनिक बिम्बों को लिया जाएगा।

वैदिक दर्शन से संबंधित बिम्ब

ब्रह्म : पन्तजी का ब्रह्म विराट् वपुमंगल है, सारा संसार उसी की छाया है। उषा उसी की सुन्दर छवि है, नव वसन्त उसका शृंगार है, तारे मुक्तामाल हैं, सूर्य-शशि उसके माथे के किरीट हैं, मेघमंडल उसके स्नेहाश्रु हैं, मलयानल उसका

---

१. टी. वी. कापाली शास्त्री—श्री अरविन्दो : लाइट्स ऑन दि टीचिंगस्, पृ. १२

२. हिन्दी साहित्य कोष, भाग—१, पृ. ५७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गहरा मन है, संसार उसकी लीला है। ऐसे भगवान् को प्रेम-पराग लिपटाकर बाँहों में समाया जा सकता है।

जिसकी सुन्दर छवि उषा है,
नव वसन्त जिसका शृंगार,
तारे हार, किरीट सूर्य-शशि,
मेघ केश, स्नेहाश्रु तुषार,
मलयानिल मुख-वास, जलधि मन,
लीला लहरों का संसार,[१]

कवि की ब्रह्म-संबंधी यह कल्पना उपनिषदीय ब्रह्म की देन है।[२] महाभारत के शांतिपर्व में भी भगवान् की विराट् कल्पना लगभग इसी रूप में हुई है। मानव-शिशु को ब्रह्म का स्वरूप देते हुए, उसकी विराट् कल्पना करते हुए बताया गया है कि सूर्य-चन्द्र उसके लोचन हैं, वायु उसी का उर-स्पन्दन है और सारे दिशा-क्षण उसी के आत्मप्रसार हैं।[३] कवि की कल्पना है कि बादलों के परे तारक-लोक और उसके आगे अकूल चेतना-तीर्थ है। वह शरद् चाँदनी-सी अभिषिक्त है। उसके आगे रवि लोक और उसके भीतर आनन्द-धाम और आनन्द-स्वरूप भगवान् की कल्पना करते हुए लिखा गया है—

आनन्द धाम शोभित भीतर
झरते अनन्त रस के निर्झर
शोभा के स्वर्णिम फेनों पर
कँपते सुर वीणाओं के स्वर!
उर कम्पों, पुलकों से कल्पित
शशि-रेख प्रीति-प्रासाद सुघर,
झांकते झरोखों से बाहर
अनिमेष सत्य शिव औ' सुन्दर![४]

प्रीति-प्रासाद के झरोखों से बाहर झांकते सत्य शिव सुन्दर भगवान् की यह मूर्ति-कल्पना सुन्दर है। आगे उसके जाज्वल्यमान शीश पर स्वर्ण रश्मिस्मित ज्योति प्रीति के अतल नयन-सरोवर, अधर प्रवालों पर गुंजित मौन मधुर स्मिति के मुरली-स्वर, सिंधुवत् विशाल सहृदय वक्ष, विश्वभार भृत अंस,

---

१. वीणा-ग्रंथि, पृ. ३५

२. अग्निमूर्धा चक्षुषी चन्द्र सूर्यौ दिशः श्रोत्रे वाक् विवृत्तश्च वेदाः।
वायु प्राणो हृदयं विश्वमस्य पद्भ्यां पृथिवी ह्येष सर्वभूतान्तरात्मा॥
मुण्डकोपनिषद्, २-१-४

३. स्वर्ण किरण पृ. ९८

४. उत्तरा, पृ. १३२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

करुणालम्बित बाहु, वरद कर, मृत्यु कलुष हर चारु धनुष-शर, समय के पथ पर अक्षय चिह्न छोड़ते युग-युग बढ़ते चरण आदि की कल्पना करते हुए विश्व हृदय-शतदल पर स्थित परात्पर ब्रह्म-रूप का चित्र अंकित किया गया है। यह जगदीश और हृदयेश्वर ब्रह्म सृजन-नृत्य के उल्लास में निरत है, त्रिभंगी उसकी मुद्रा है और उसके अभय इंगितों को पाकर जीवन की शाश्वत शोभा झर झर पड़ती है।[१] शून्य के गवाक्ष से सुनहली अलकों से घिरा अपना मुखमंडल दिखाते ब्रह्म का यह बिम्ब कम मोहक नहीं है --

जहाँ कुछ न था,
कुछ -- नहीं भी न था,
उसके गवाक्ष से
स्वतः ही
सुनहली अलकों से घिरा,
तुम्हारा मुख दिखाई दिया ![२]

उस समय ब्रह्म के सर्वगामी सहज स्थिर रश्मि चरणों पर दिशा-काल ज्ञान-शून्य पड़े थे।[३] कवि की यह ब्रह्म-कल्पना ऋग्वेद के विचार से मेल खाती है जिसमें यह बताया गया है कि सृष्टि के समय न सत् था न असत्, न अन्तरिक्ष था, न व्योम ही, उस समय मृत्यु का भी भय नहीं था। उस समय केवल 'एक' था और कुछ नहीं था।[४]

कवि ने ब्रह्म की कल्पना सदानीरा नदी के रूप में करते हुए साँगरूपक के द्वारा चित्र उतारने का प्रयत्न किया है, जिसके अनुसार ब्रह्म बिना तीरों की नदी है तथा बिना स्रोत की सदानीरा। आकाश उसका नील तल है और समुद्र उसका भँवर है। धरती उस सदानीरा का बुद्बुद है और पर्वत तरंगें हैं और वायु अदृश्य फेन है। यह सदानीरा ऊपर-नीचे सर्वत्र बहती है।

तुम्हें नहीं दीखी ?
बिना तीरों की नदी,
बिना स्रोत की
सदा नीरा
x x x
आकाश नील तल
समुद्र भँवर,

---

१. उत्तरा, पृ. १५३–१५४
२. कला और बूढ़ा चाँद, पृ. १४८
३. कला और बूढ़ा चाँद, पृ. १४९
४. ऋग्वेद, १०–१२९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

धरती बुद्बुद् पर्वत तरंग हैं,
और वायु
अदृश्य फेन
X X X
नीचे, ऊपर सर्वत्र
बहती सदानीरा ।[१]

इस भंगुर के गुंठन में नित्य चिरंतन ब्रह्म का वास है, जिससे यह जंगम जीवन-क्रम शासित है।

वह भंगुर के गुंठन में नित्य चिरंतन,
शासित जिससे जंगम जीवन क्रम अनुक्षण ।
ऋत स्वर्ण शृंखला में गुंफित गति, स्थिति, लय,
वह विश्व व्यवस्थित पूर्ण, सत्य महदाशय ।[२]

वह स्वयं प्रकाश है, हिरणमय द्युति से आवृत है तथा अपने अधिवैश्व गति में अर्न्तहित रहता है।

वह स्वयं-प्रकाश हिरण्यमय द्युति से आवृत,
निज अधिवैश्व गति में रहता अर्न्तहित ।[३]

कवि की यह कल्पना ईशावास्योपनिषद् के एक मन्त्र पर आधारित है, जिसके अनुसार आदित्य मंडलस्थ ब्रह्म का मुख ज्योतिर्मय पात्र से ढँका हुआ है।[४] कवि उस अवगुंठन से भू की ओर झाँकते अध्यात्म का अनुभव करता है।[५] और स्वर्णिम पराग को हिरण्य का अवगुंठन सिद्ध करता है।[६]

कवि उस छविमय ब्रह्म का चित्र भी अकित करता है, जो अपनी अरुण अधखुली उनींदी आँखों को मलकर उठता है तथा स्वयं रंगहीन होकर भी संसार को रंजित करता है—

अरुण अधखुली आँखें मलकर
जब तुम उठते हो छविमय !
रंग रहित हो रंजित करते,
बना हिमालय हेमालय ![७]

---

१. कला और बूढ़ा चाँद, पृ. १५४–१५५
२. लोकायतन, पृ. २२९
३. लोकायतन, पृ. २३०
४. हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम् ।—ईशावास्योपनिषद्, मंत्र १५
५. स्वर्ण किरण, पृ. ४८
६. वही, पृ. ४९
७. वीणा-ग्रन्थि, पृ. २९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कवि उस सुवर्णमय भगवान् के पद-पद्मों को अपने हृदय में खिलाना चाहता है। यही नहीं वह ब्रह्म स्वर्णवस्त्र का परिधान पहनकर तथा प्रथम रश्मि का स्पर्श कर जग को आश्वासन भी देता है।[१] वह सुजान है और निशानाथ का प्रिय सहचर है।[२] जग के निर्मल दर्पण में उसी की छवि पड़ी हुई है।[३] जैसे कोई वीणा के तारों को अपनी उँगलियों से स्पर्श कर कवि की हृत्तन्त्री को झंकृत करता है और उसमें गुंजार भरता है।[४] वह कवि का सुख-दुःख का मौन सहचर है, द्युतिमान है तथा उसका पथ निर्देश करता है और प्राणों में गान फूँकता है।[५] कभी उड़ते पत्तों में कवि को अपना सुकुमार प्रिय मिल जाता है। वही लहरों से हाथ बढ़ाकर कवि को उस पार आने का निमंत्रण भी देता है।

कभी उड़ते पत्तों के साथ
मुझे मिलते मेरे सुकुमार,
बढ़ाकर लहरों से निज हाथ
बुलाते, फिर मुझको उस पार ;[६]

कवि ने सुन रखा है कि इस संसार के निस्तल जलधि में परब्रह्म रूपी मोती वाली मछली रहती है, किन्तु कवि को उसमें डूबने का भय है, इसलिए तटपर बैठे उसकी छवि-भर देखने की इच्छा है।[७]

वास्तव में ब्रह्म इतना सूक्ष्म, एवं अनिर्वच अगोचर है कि उसका बिम्ब प्रस्तुत करना कष्ट-साध्य है। यहाँ तक कि महात्मा कबीर भी उसे 'गूँगे का गुड़' कह गये। ऐसे अलौकिक ब्रह्म को सुकुमार, द्युतिमान, हिरण्मय, सहचर मौन आदि कहकर मात्र व्यंजित किया जा सकता है। फिर भी पन्तजी ने उसके अरुण अधखुले नेत्र मलने, हाथ उठाकर बुलाने, अवगुंठन पहन बैठने, जंगम जगत् को शासित करने जैसे अनेक क्रिया-व्यापारों से उसे मूर्तित करने का प्रयास किया है। इनके अतिरिक्त कहीं ब्रह्म की सदानीरा रूप में, कहीं विराट् रूप में बिम्ब-योजना की है और उसे ऐन्द्रिय-प्रत्यक्ष बनाया है।

ऋग्वेद के अनुसार हिरण्यगर्भ प्रथम स्वर्ण बीज है जो स्रष्टा के प्रथम कार्य के बाद सृष्टि का भार अपने ऊपर लेता है; कठोपनिषद् के अनुसार जब असत् ईश्वर प्रकृति से प्रथम प्रभावित हुआ तब हिरण्यगर्भ की उत्पत्ति हुई।[८] परमात्मा एक अनन्त विषयी के रूप में अनन्त विषय जल या प्रकृति को देखता है और इस प्रकार अनन्त विषयी और अनन्त विषय की अन्योन्य क्रिया का फल ही हिरण्यगर्भ है। अर्थात् यह हिरण्यगर्भ महान् आत्मा है, जो अव्यक्त में से

१. वीणा-ग्रन्थि, पृ. ३३
२. वही, पृ. ३२
३. वही, पृ. ४८
४. वही, पृ. ५१
५. पल्लव, पृ. ९२
६. पल्लव, पृ. १००
७. गुंजन, पृ. ७१
८. कठोपनिषद्, ३-१०-११

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

निकलता है। अतः हिरण्यगर्भ स्वयं स्रष्ट (रचा हुआ) है और जगत् उसी से बंधा हुआ है। ईश्वर की प्रेरणा से वह लीला में लग जाता है। जगत् ईश्वर की रचना और हिरण्यगर्भ की अभिव्यक्ति है। पन्त-काव्य में इस दार्शनिक विचार से सम्बन्धित कई बिम्ब प्राप्त होते हैं। पन्त ने आदि हेतु भगवान् को स्वर्णगर्भ के रूप में अपने को सर्जित करते दिखाया है। इसलिए उसको प्रसव-पीड़ा से पीड़ित नारी का बिम्ब देते हुए लिखा गया है

वह आदि हेतु ही अपने को कर सीमित,
सित स्वर्ण-गर्भ में हुआ स्वयं ही सर्जित!
लेटा था स्त्री सा असत् प्रसव दुःख पीड़ित
टाँगे फैलाए, -- तपस्तेज से गर्भित ![1]

स्वर्णिम डिम्ब हिरण्यगर्भ ही स्वयं बँटकर स्वर्ग-भू, स्थूल-सूक्ष्म, सुर-नर में परिणत हो जाता है। हिरण्यगर्भ विश्वात्मा है और वह परमेश्वर का सित मुकुर है, जिसमें भगवान् अपना रूप प्रकाशित करता है। इस प्रकार परमेश्वर और हिरण्यगर्भ के सम्बन्ध को दिखानेवाला यह दार्शनिक बिम्ब अत्यन्त स्पष्ट है—

वह स्वर्णिम डिम्ब हिरण्यगर्भ ही बँटकर
बन गया स्वर्ग-भू—सूक्ष्म स्थूल—सुर-वर नर !
वह विश्वात्मा रे स्वर्ण रश्मि से आवृत
परमेश्वर का सित मुकुर, स्वरूप प्रकाशित ![2]

सृष्टि का बिम्ब भी कम प्रभावकारी नहीं है। जब आदि शान्ति में मूल प्रकृति का लय हो जाता है, तब नाद-ब्रह्म वंशी में स्वर भर अनंत एवं कालहीन रस-तांडव में तन्मय हो जाता है और उसके आनंद के कण ही झरकर मर्त्य, अमर और भव बन जाते हैं। सृष्टि-निरत आनन्दस्वरूप भगवान् के नृत्य-निरत रूप का यहाँ वर्णन द्रष्टव्य है—

जब आदि शांति में मूल प्रकृति रहती लय,
तब नाद ब्रह्म वंशी में स्वर भर तन्मय—
रचता अनंत में कालहीन रस तांडव,
आनंद स्फुरित शत झरते मर्त्य अमर भव।[3]

अक्षर ब्रह्म ही क्षर बन कर बहुनामात्मक एवं बहुरूपात्मक जगत् में विचरण करता है। यह जगत् अक्षर ब्रह्म से उसी प्रकार उत्पन्न होता है जैसे मकड़ी से जाला, पृथ्वी से औषधियाँ तथा शरीर से रोमराजी जन्म लेती है।

---

१. लोकायतन, पृ. २३२
२. वही, पृ. २३३
३. वही, पृ. २३३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ज्यों ऊर्णनाभ रचता प्रिय आशा-बन्धन,
भू औषधि बनती, रोम राजि बनता तन,
अक्षर ही क्षर बन करता जग में विचरण
बहुनाम रूप, मन, अन्न प्राण कर धारण ![1]

यह बिम्ब मुण्डकोपनिषद् के भावानुवाद पर आधारित है।[2] इसमें कवि ने कोई मौलिकता नहीं दर्शायी है। वैसे ही गीता में सृष्टि को ऊर्ध्वमूल अश्वत्थ कहा है, जिसका मूल ब्रह्म है और पर्ण वेद हैं।[3] पंत ने इसी भाव को इस प्रकार व्यक्त किया है। —

रे ऊर्ध्वमूल अश्वत्थ, अधः शाखा तन
वह शुक्र अमृत, ज्योतिर्मय ब्रह्म सनातन ![4]

अवतारवाद या सगुण ब्रह्म

जहाँ कवि का ब्रह्म अदृश्य, दृग् अगम्य, छविमान, अनिर्वचनीय तथा सच्चिदानंद है, वहाँ पुराणकालीन लीलाधारी सगुण ब्रह्म की भी उपेक्षा नहीं की गयी है। गीता का ब्रह्म एक ही समय निर्गुण-सगुण दोनों हैं। प्राकृतिक गुणों से रहित होते ही श्रीकृष्ण निर्गुण और लीलाधारी होते ही सगुण हैं। यह सगुण लीला वे अपने भक्तों के लिए, धर्म की रक्षा के लिए करते हैं। अपने आनंद की अभिव्यक्ति के लिए वे अपनी परमा प्रकृति के द्वारा नाना रूपों में प्रकट होते हैं और असीम से ससीम बनते हैं। यह भगवान् का क्षर रूप है।[5] गुंजन' की 'अप्सरा', 'विहग के प्रति' आदि में सगुण रूप भगवान् का आभास मिलता है। 'अप्सरा' की 'प्रतियुग में आती हो रंगिणि, रच रच रूप नवीन[6] में गीता के 'संभवामि युगे युगे' की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है। विहग कवि की दृष्टि में पराशक्ति का प्रतीक है, जो युग-युग में नव-नव रूप धारण कर संसार में आता है —

रिक्त होते जब-जब तरुवास
रूप धर तू नव-नव तत्काल

---

१. लोकायतन, पृ. २४१
२. मुण्डकोपनिषद्, १–१–७
३. गीता, १५–१
४. लोकायतन, पृ. २४०
५. यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदाऽऽत्मानं सृजाम्यहम् ॥
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्म संस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे ॥
—गीता, ४–७/८
६. गुंजन, पृ. ९८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

नित्य नादित रखता सोल्लास
विश्व के अक्षय वट की डाल ।[1]

यही सगुणवादी स्वर 'स्वर्णोदय' कविता में भी प्रकट हुआ है —

मुक्त अरूप-रूप धर सीमित,
श्वासों से कर गगन तरंगित ![2]

मानव-शिशु अक्षर ब्रह्म का सगुण रूप है और शिशु-रूप में उसने अपने को ससीम बना दिया है । यही नहीं, युग-परिवर्तन के घन से विश्व-क्षितिज के घिरते ही मेघों के रंध्र-जाल से कोई शुभ्र किरण ज्योति-सेतु सी निकलकर वसुधा को अपनी लपेट में ले लेती है और स्वर्गिक स्वप्नों से उसे भर देती है—

जब जब घिरते विश्व क्षितिज पर युग परिवर्तन के घन,
मेघों के क्षण रंध्र जाल से कोई शुभ्र किरण छन
ज्योति सेतु-सी सर्जित हो द्रुत इंद्रचाप में मोहन,
स्वर्गिक स्वप्नों में लेती लिपटा वसुधा के दिशि-क्षण![3]

मेघों से छनकर उतरती शुभ्र किरण सगुण ब्रह्म के अतिरिक्त और क्या हो सकता है ।

जीवात्मा

हृदय में रहनेवाली आत्मा ब्रह्म है । वह नित्य, अविनाशी एवं अनन्त है । वह शरीर में रहते हुए भी अशरीरी है तथा समस्त अस्थिर पदार्थों में रहते हुए भी स्थिर है । एक स्थान में कहा गया है कि यह शरीर रथ है, रथ का स्वामी रथी आत्मा है, बुद्धि सारथी है, मन उसकी लगाम है, श्रोत्रादि इंद्रियाँ उसके घोड़े हैं । शब्द, स्पर्शादि विषय दौड़ने की भूमि है । शरीर तथा इंद्रिय-मन से युक्त आत्मा को भोक्ता कहते हैं ।[4] पंतजी ने आत्मा का यही बिम्ब इस प्रकार दिया है —

यह आत्मा अमर रथी, नर तन जीवन रथ
सारथि सद्बुद्धि, मनस् प्रग्रह, भू असि पथ,—

---

१. गुंजन, पृ. ८३
२. स्वर्ण किरण, पृ. ९४
३. वही, पृ. १६
४. आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव तु ।
बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च ॥
इन्द्रियाणि हयानाहुर्विषयान् तेषु गोचरान् ।
आत्मेन्द्रियमनोयुक्तं भोक्तेत्याहुर्मनीषिणः ॥
— कठोपनिषद्, १–३–३/४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जिनके इंद्रिय हय सत्सारथि संचालित,
वे आप्त काम, — भव कूप-मग्न दुर्मति नित ![१]

ऋग्वेद में जीव और परमात्मा में भेद बताया गया है। एक ही शरीर के अन्दर कार्यों का फल भोगनेवाला जीव और निष्क्रिय द्रष्टा आत्मा रहते हैं।[२] पतजी ने मुण्डकोपनिषद् के 'द्वा सुपर्णा' के प्रतीक को अपनाकर परमात्मा एवं जीवात्मा के भेद को समझाया कि परमात्मा संसार-वृक्ष का फल नहीं भोगता, वह द्रष्टा मात्र है, जबकि जीवात्मा कर्म-फल का भोक्ता है—

दो पक्षी रहते एक वृक्ष पर शाश्वत
चखता पीपल फल एक, स्वाद रस में रत !
दूसरा देखता, भोग मुक्त मन, अनशन,
जीव ही ईश, जो भवहित प्रभु-अर्पित मन ![३]

मुक्तात्मा अपनी परात्पर ज्योति में उसी प्रकार विलीन हो जाता है, जैसे कि नदियाँ सागर में विलीन हो जाती हैं।

नदियाँ ज्यों सागर में वह होती अवसित
त्यों मुक्त पुरुष भी नाम रूप रज विरहित—
उस दिव्य परात्पर द्युति में वह होता लय
भव क्रम विकास में खुलता जिसका आशय ![४]

जीवन और जगत्

आदि सत्ता ब्रह्म ने अपने को इस अनुभूत जगत् में विकसित किया। जगत् ब्रह्म से फूटता है और उसी में लीन होता है। जिस प्रकार जलती हुई अग्नि से एक समान सहस्रों चिनगारियाँ फूटती हैं, उसी प्रकार निर्विकार ब्रह्म से असंख्य सत्ताएँ उत्पन्न होती हैं और फिर उसी में लौट जाती हैं।[५] अतः यह जगत् सर्वोच्च सत्ता ब्रह्म का आत्म-प्रक्षेपण है। ईश्वर अपनी माया-शक्ति से जगत् की सृष्टि करता है और इस सृष्टि-लीला के पीछे ईश्वर की 'एकोऽहम् बहुस्याम्' की भावना कार्य करती है। जीव ईश्वर का प्रतिबिम्ब है, किन्तु रचित या सृष्ट होने से प्रत्येक का अपना पृथक् रूप है। पृथक् अस्तित्व का बोध अविद्या से होता है। बुद्धि से परिचालित जीवात्मा अपने को पृथक् मानता है, फलतः कर्मफल भी पृथक् रूप से अनुभव करता है।

कवि पन्त ने 'शशि की तरी' में यह बताया है कि भगवान् सृजन-आनन्द से प्रेरित हो सृजन के कई प्रयोग करते हैं ताकि अपनी पूर्णतम अभिव्यक्ति सम्भव हो।[६] सृष्टि सम्बन्धी उपर्युक्त विचारों को पन्त ने बिम्ब-रूप में प्रस्तुत

---

१. लोकायतन, पृ २३९
२ ऋग्वेद, १–१६४–२२
३. लोकायतन, पृ. २४१
४. लोकायतन, पृ २४२
५. मुण्डकोपनिषद्, २–१–१
६. शशि की तरी, पृ. ५४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

किया है। सृष्टि-लीला को अकूल उमंग तथा सृष्टि को तरंग मानते हुए कवि ने लिखा है—

अतल से एक अकूल उमंग
सृष्टि की उठती तरल तरंग
उमड़ शत शत बुद्बुद संसार
बूड़े जाते निस्सार।
बना सैकत के तट अतिवात
गिरा देती अज्ञात ![1]

'अतल' सृष्टिकर्ता ब्रह्म का मन है, जहाँ से 'अकूल उमंग' उत्पन्न होती है, जिससे सृष्टि की तरंग उठकर संसार की रचना करती है। बुद्बुद पृथक् अस्तित्ववाले जीवात्माओं का प्रतीक है। बुद्बुद् अल्पक्षण के लिए अपना पृथक् अस्तित्व रखकर सागर-जल में विलीन हो जाता है। वैसे ही संसार अविद्या का फल है। वह वास्तव में सैकत तट है, जो क्षणिकता का द्योतक है।

आनन्द स्वरूप ब्रह्म के पुलकों से असंख्य लोक झर-झर पड़ते हैं और समुल्लसित हो शून्य में नाचते हैं

चिर महानन्द के पुलकों से
झर झर नित अगणित लोक-निचय,
नाचते शून्य में समुल्लसित
बन शत-शत सौर-चक्र निर्भय ![2]

मनुष्य का शरीर मृण्मय है और इस मृण्मय शरीर में शाश्वत प्रकाश ब्रह्म की शिखा लेकर जीव रूपी प्रदीप जल रहा है। सम्पूर्ण जीवों में एक ही परम-सत्ता का प्रकाश है। इस प्रकार ब्रह्म को शाश्वत प्रकाश तथा जीव को मृण्मय प्रदीप के रूप में चित्रित करते हुए जीव और ब्रह्म के सम्बन्ध को दर्शानेवाला निम्नलिखित बिम्ब दार्शनिक महत्व का है—

मृण्मय प्रदीप में दीपित हम
शाश्वत प्रकाश की शिखा सुषम,
हम एक ज्योति के दीप अखिल,
ज्योतित जिनसे जग का आंगन ![3]

'एक तारा' कविता में सृष्टि-लीला का एक सुन्दर चित्र अंकित है। सर्वप्रथम आकाश में केवल शुक्र तारा ही दिखाई देता है। कवि ने उसे अनन्त का मुक्तमीन तथा अपने असंग सुख में विलीन बताकर सृष्टिपूर्व निस्संग, मुक्त

---

१. पल्लव, पृ. १५७
२. ज्योत्स्ना, पृ. ५७
३. वही, पृ. ६०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अनन्त ब्रह्म का प्रतीक माना है। वह निष्कम्प शिखा है, वह शुद्ध, बुद्ध है, सम है। किन्तु धीरे-धीरे उसमें एकाकीपन का व्यथा-भार खलने लगता है और सृष्टि में तल्लीन हो जाता है, आकाश का आँगन कुन्द-कलियों की भांति असंख्य ताराओं से भर जाता है और आकाश जगमग करने लगता है। एक तारा ब्रह्म के समान है। एक से बहुत होने की उसकी इच्छा से सृष्टि का निर्माण एवं प्रसार हुआ। यह तारामंडल ही विश्व का प्राणिवर्ग है, जग-दर्शन है—

निष्कम्प शिखा-सा वह निरुपम, भेदता जगत-जीवन का तम,
वह शुद्ध, प्रबुद्ध, शक्र वह सम !

X X X X

गुँजित अलि-सा निर्जन अपार, मधुमय लगता घन अन्धकार,
हलका एकाकी व्यथा-भार !

जगमग-जगमग नभ का आँगन लद गया कुन्द कलियों से घन,
वह आत्म और यह जग-दर्शन ![1]

विधाता का विधान अविदित रहता है। यह सृष्टि-लीला अनेक रहस्य-सूत्रों से गुँफित है। फलतः सृष्टि की गति भी अविदित रहती है। वह विधि के चंचल करतल पर अवलम्बित है। उसका भविष्य क्या होगा, इसका निर्णय करना सरल कार्य नहीं है। विधि के हाथ पर अवलम्बित सृष्टि को ओस-बिन्दु के अप्रस्तुत द्वारा समझाया गया है। तिनके की नोक पर ढुलकते ओस-कण किसी भी क्षण चू पड़ सकते हैं; वैसे ही विधि के अधीन रहती इस सृष्टि को परिवर्तन का ग्रास बनते देर नहीं लगती। वह विधाता के इंगित पर चलती है—

कितने सूक्ष्म रहस्यों के
सूत्रों से गुह्य सृष्टि यह गुंफित
ओस-बिन्दु-सा विधि के चंचल
करतल पर अवलम्बित ![2]

मानव को जीवन की प्रत्येक अवस्था से परिचित होकर चलना है। जीवन की जो भी स्थिति हो, उसका सामना करते हुए चलने में ही जीवन की सार्थकता है। कवि ने जीवन को समुद्र, लहरों को जीवन की स्थितियों तथा जीव को नाविक का अप्रस्तुत देते हुए समझाया है कि नाविक को जिस प्रकार समुद्र की प्रत्येक लहर का सामना करते हुए नाव को आगे ले जाना पड़ता है, उसी प्रकार जीव प्रत्येक परिस्थिति को झेलकर जीवन को संसार-सागर के पार ले जाता है—

१. गुंजन, पृ. ८६
२. शशि की तरी, पृ. १००

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जीवन की लहर लहर से
हँस खेल-खेल रे नाविक !
जीवन के अंतस्तल में
नित बूड़-बूड़ रे भाविक ![1]

मनुष्य-जीवन नवविकास पा रहा है। इस समय प्रीति-भाव से मिलकर रहने से हम मानव बनेंगे, भिन्न रहने से हम दानव बनेंगे। मानव तथा राक्षस-धर्म के लिए धर्मी का प्रयोग करते हुए कवि ने मानव-जीवन का बिम्ब प्रस्तुत किया है—

जीवन का यह विकास,
आ रहे मनुज पास !
उठता उर से रव है,—
एक हम मानव हैं,
भिन्न हम दानव हैं ![2]

मानव तथा दानव के लाक्षणिक प्रयोग से मानव के दो रूपों की अभिव्यक्ति होती है।

पन्तजी अपने दार्शनिक दृष्टिकोण में समन्वयवादी हैं। उनका विचार है कि जीवन भूतवाद या अध्यात्मवाद में से केवल एक का अवलंब लेकर पंगु रह जाएगा। जीवन की पूर्णता के लिए दोनों का समन्वय आवश्यक है। अतः सत्य का मानवीकरण कर तथा भूतवाद, प्राणिवाद एवं अध्यात्मवाद को उसका अंग सिद्ध करते हुए जीवन के प्रति संतुलित दृष्टिकोण का बिम्ब इस प्रकार अवतरित किया गया है—

वही सत्य कर सकता मानव जीवन का परिचालन
भूतवाद हो जिसका रज तन, प्राणिवाद जिसका मन
औ अध्यात्मवाद हो जिसका हृदय गंभीर चिरंतन
जिसमें मूल सृजन विकास के, विश्व प्रगति के गोपन ![3]

मानवता के विकास का रथ से रूपक बाँधकर जड़-चेतन को उसके दो पहिये माने गये हैं—

जड़ चेतन के चक्र निरंतर
घूम रहे चिर प्रलय सृजन कर,
जय ध्वनि हाहारव में बढ़ता
युगपथ पर मानवता का रथ ![4]

---

१. गुंजन, पृ. १८
२. स्वर्णधूलि, पृ. ९७
३. स्वर्णधूलि, पृ. १०२
४. उत्तरा, पृ. ३५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जयध्वनि आनंद एवं सफलता और हाहारव दुःख एवं असफलता के प्रतीक हैं। दोनों में उठते-गिरते मानवता का रथ आगे बढ़ता है।

जीवन के प्रति अत्यासक्ति हानिकारक है। मानव अपनी आसक्ति को संतुलित करके चले, अन्यथा जीवन निष्क्रिय एवं असफल हो जाएगा। इस तत्व को मधु में पंख लिपटे मधुप के अप्रस्तुत द्वारा समझाया गया है। मधुप मधु में पंख लिपटाकर अपनी सहज गति खो पाता है—

जीवन में जितना डूबोगे उतना ही तुम उकताओगे,
मधु में लिपटा कर पंख, मधुप, फिर सहज नहीं उड़ पाओगे ![1]

यही बात 'गुंजन' की एक कविता में भी समझायी गयी है।[2]

कवि का समन्वयवादी एवं संतुलित दृष्टिकोण राग-विरागमय जीवन को प्रश्रय देता है। जीवन रस-धारा रति और विरति के पुलिनों के बीच से होकर गतिशील है। अत्यधिक रति और अत्यधिक वैराग्य दोनों जीवन की गति में बाधक हैं—

रति और विरति के पुलिनों में बहती जीवन रस की धारा,
रति से रस लोगे और विरति से रस का मूल्य लगाओगे।[3]

पन्तजी वैराग्य-साधना के प्रतिकूल हैं। इंद्रिय-जीवन की सर्वथा उपेक्षा करके योग-साधना रत हो, बुद्धि को कुंठित एवं मुरझारकर ब्रह्म-रंध्र से उड़कर शून्याकाश में खो जाना जीवन का लक्ष्य नहीं है। जीवन का लक्ष्य है भू-स्वर्ग बसाना। उसको समझे बिना शून्य में खो जानेवाले साधनात्मक जीवी को पंख मारकर गगन में खो जाते खग का अप्रस्तुत दिया गया है —

जीवन का ध्येय नहीं है यह
मन ब्रह्म रंध्र से उड़कर
खो जाए रिक्त गगन में
खग सा, झुलसा मति के पर।[4]

इन्द्रिय सुख के प्रति आकर्षण मन की सहज वृत्ति है। इन्द्रिय-जीवन की उपेक्षा किये बिना भी मनुष्य आध्यात्मिक बन सकता है। सांसारिक तृष्णाओं को मर्दित कर एवं रस-अतृप्त मन लेकर आत्मपौरुष का जो निर्माण होता है, वह पंगु है और लंगड़ाता ही रहेगा—

पंगु आत्म पौरुष
लंगड़ाता,
रस अतृप्त, भव-तृष्णा-मर्दित।[5]

---

१. स्वर्णधूलि, पृ. १४८
२. गुंजन, पृ. १९
३. स्वर्णधूलि, पृ. १४९
४. लोकायतन, पृ. २०८
५. पौ फटनेसे पहिले, पृ. ७७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

संसार की क्षणिकता एवं नश्वरता

संसार जीव निर्मित है और इसलिए अविद्या है। सारा दृष्टिगोचर प्रपंच किसी अदृश्य पट पर चित्रित भर है, जो कभी भी मिट सकता है। यह वास्तविक सत्य नहीं। कवि ने इसको मोम के पुतले का बिम्ब प्रस्तुत किया है—

ओ विराट चैतन्य
यह मैं क्या देखता हूँ
कि घर बाग पेड़
और मनुष्य
किसी अदृश्य पट में
चित्रित भर हैं।
ये वास्तविक सत्य नहीं,
मोम के पुतले भर हैं।[१]

पन्त का यह दृष्टिकोण महाकवि तुलसीदास के एक पद का स्मरण कराता है, जिसमें उन्होंने संसार को ईश्वर की विचित्र रचना कहा है तथा उसे शून्य भित्ति पर बिना रंग के उतारा चित्र घोषित किया है।[२]

इलाहाबाद के बाल भवन में पन्तजी का परिचय तीन-चार साल की एक बालिका से हुआ, जिसने उनका मन अपनी ओर आकर्षित किया। उस बालिका के प्रति पन्तजी का स्नेह बढ़ता ही जा रहा था कि संयोगवश उसकी मृत्यु हुई। उसकी मृत्यु से पन्त के मन पर गहरा आघात पड़ा, जिसकी अनुगूँज 'शशिकी तरी' में सुनायी पड़ती है। उसमें पन्तजी ने जगत् की क्षणिकता पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि यह जगत् हास-अश्रु का कल्पित क्रीड़ा-स्थल है—

बाल खिलौनों का जग
करता गूढ़ भाव अभिव्यंजित,
संभव है, यह जग हास-अश्रु का
क्रीड़ा स्थल भर कल्पित![३]

इस क्रीड़ा-स्थल पर जन्म-मृत्यु, सुख-दुःख के निष्ठुर परिवर्तन प्रतिपल होते ही रहते हैं।[४]

अह! सुरा का बुलबुला यौवन, धवल
चद्रिका के अधर पर अटका हुआ,

---

१. कला और बूढ़ा चाँद, पृ. ५९
२. विनय पत्रिका, पद १११
३. शशिकी तरी, पृ. ५२
४. वही, पृ. ६८–६९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हृदय को किस सूक्ष्मता के छोर तक
जलद सा है सहज ले जाता उड़ा[1]

कवि ने यह बताया है कि मनुष्य को मोहित एवं आकर्षित करनेवाला यह यौवन क्षणिक है। यौवन के लिए 'सुरा का बुलबुला' उपमान भाव-व्यंजक है। सुरा मादक होती है और उसका बुलबुला भी मादक होता है। किन्तु बुलबुला क्षणिक एवं नाशवान है। चन्द्रिका (सौन्दर्य) पर अवलंबित यह मादक यौवन अधर (आधार-रहित) पर टिका हुआ है। जो आधार रहित है, उस पर क्या भरोसा रखा जा सकता है ! किन्तु यह मादक यौवन अपने सौन्दर्य को लेकर हृदय को सहज ही उड़ा ले जाता है, जैसा कि वायु जलद को जहाँ चाहे उड़ा ले जाती है। 'अधर' में श्लेष का सौन्दर्य द्रष्टव्य है। जीवन की क्षणभंगुरता दिखाने के लिए नीचे बहुत ही प्रभावोत्पादक एवं सजीव चित्र अंकित है—

अखिल यौवन के रंग उभार
हड्डियों के हिलते कंकाल;
कचों के चिकने, काले व्याल
केंचुली, काँस, सिवार;[2]

आज जो रंगीन यौवन है, वह अपना रंग-उभार खो देगा और उसके स्थान पर हड्डियों का कंकाल रह जाएगा। यौवन के चिकने कच, जो काले व्याल बनकर वासना का विष फैलाते हैं, वे ही थोड़े दिनों के उपरांत केंचुली, काँस या सिवार से बढ़कर कुछ नहीं समझे जाएँगे। यही क्या, यौवन के गालों के फूल यौवन-श्लथ हो नयन-नीर बहाते-बहाते झुलस जाएँगे और आज जो अधर प्रणय-चुंबन के लिए विह्वल हैं, वे ही अधर अधरों को भूल जाएँगे।[3]

सुख-दुःख

जीवन सुख-दुःखमय है, सुख-दुःख जीवन में क्रम से आते रहते हैं। दुःख के बाद सुख, सुख के बाद दुःख यह क्रम जारी रहता है। कवि ने जीवन में सुख-दुःख के आविर्भाव को घन और शशि के अप्रस्तुतों द्वारा बिम्ब-रूप में समझाया है—

सुख-दुख के मधुर मिलन से
यह जीवन हो परिपूरण,
फिर घन में ओझल हो शशि,
फिर शशि से ओझल हो घन ![4]

आगे प्रतीकों के द्वारा जीवन के सुख-दुःख, आनन्द एवं विषाद आदि चित्रित किये गये हैं—

---

१. वीणा-ग्रंथि, पृ. १२२
२. पल्लव, पृ. १४८
३. पल्लव, पृ. १४८
४. गुंजन, पृ. १५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

यह साँझ-उषा का आँगन,
आलिंगन विरह-मिलन का
चिर हास-अश्रुमय आनन
रे इस मानव जीवन का ![1]

संसार के अत्यधिक दुःख तथा अत्यल्प मात्रा में सुख को लोकोक्ति द्वारा विम्बात्मक बनाया गया है—

यहाँ सुख सरसों, शोक सुमेरु
अरे जग है जग का कंकाल !![2]

यहाँ सरसों तथा सुमेरु के द्वारा सुख-दुःख को रूपायित किया गया है। ऐसे ही लोकोक्ति का सहारा लेकर सुख-दुःख को नीचे भी चित्रित किया गया है—

चार दिवस की मधुर चाँदनी
रैन अंधेरी फिर उदास है ![3]

जन्म-मरण

जीव वैयक्तिक आत्मा है, जो अहंकार के कारण संसार के गर्त में पड़कर जन्म-मरण का दुख भोगता है। मृत्यु काया-परिवर्तन है, जीर्ण वस्त्र का परिहार एवं नूतन वस्त्र का धारण मात्र है।[4] पन्तजी ने इस ओर संकेत करते हुए लिखा है—

आत्मा जीर्ण-वसन तज रज का
नव वसनों में होती भूषित।[5]

पन्तजी ने एक स्थान पर मानव जीवन को उरग तथा मृत्यु को केंचुल का त्याग बताकर आत्मा को अनश्वर सिद्ध किया है। मृत्यु बाह्य-चेतना का परिवर्तन है—

छोड़ जीर्ण केंचुल, नव सर्पित
होता उरग मनुज का जीवन।[6]

मानव-शरीर पंचभूतों से निर्मित है और मृत्यु के समय वही पंचभूतों में विलीन हो जाता है। 'शशि की तरी' में यह बताया गया है कि कवि का अनुपमा

---

१. गुंजन, पृ. १६
२. पल्लव, पृ. १५६
३. सौवर्ण, पृ. ८०
४. बासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही॥
—गीता २–२२
५ स्वर्ण किरण, पृ. १३३
६. स्वर्ण किरण, पृ. ११९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

नामक बालिका से आकर्षण एवं स्नेह बढ़ गया था। किन्तु अकस्मात् उसकी मृत्यु हुई और उसका भौतिक शरीर अपने तत्वों में तन्मय हो गया। इस बात को विटप-नीड़ छोड़कर पंखमार नभ में अगोचर होते खग-शावक के बिम्ब द्वारा समझाया गया है—

विटप नीड़ से पंख मार
खग शिशु ज्यों हो नभ में लय
स्नेह क्रोड़ तुम छोड़
हुई असमय तत्वों में तन्मय![1]

जीवन और मृत्यु का साँगरूपक पर आधारित एक बिम्ब 'शंखध्वनि' में आया है। उसमें यह बताया गया है कि सृष्टि एक रूपक है, जीवन रंगमंच है और सांसारिक कर्म अभिनय करते पात्र हैं। नाटक से मानव की चिरपरिचितता है, सृष्टि-विकास को नाटक की कथावस्तु के विकास का अप्रस्तुत देकर बिम्ब को सारगर्भित एवं विचार-प्रधान बनाया है। इसमें आयी कल्पना अवश्य ही प्राचीन है, अंग्रेजी के कवि शेक्सपीयर ने भी जीवन की रंगमंच से कल्पना की है। फिर भी सृष्टि सम्बन्धी निगूढ़ तत्व को नाटक पर घटित करके पन्तजी ने उसे बोधगम्य बनाने का प्रयत्न किया है। जैसे नाटक के दृश्य की समाप्ति पर पात्र पर्दे के पीछे नेपथ्य भूमि में जाकर अगले दृश्य के अभिनय की साज-सज्जा करते हैं, वैसे ही नर-नारी मृत्यु रूपी नेपथ्य में जाकर नये कर्ममय जीवन के लिए तैयारी करते हैं। इस प्रकार मृत्यु के उपरांत नया जीवन और नया कर्म आरम्भ होता है, फलतः सृष्टि निरन्तर प्रगतिशील बनी रहती है—

जीवन ही भव रंगमंच,
नेपथ्य मृत्यु गोपन भर,
कर्मपात्र— रो-गाकर अभिनय
करते निखिल चराचर!
विविध भूमिकाओं में हो
अवतीर्ण विश्व नारी नर
सुख दुःखान्त सृष्टि रूपक को
देते प्रगति निरन्तर![2]

'नौका-विहार' कविता में पुनर्जन्म की व्याख्या करते हुए कवि स्पष्ट घोषित करता है कि जीवन-नौका भी जन्म-मरण के आर-पार घूमती रहती है। अतः संसार को सागर, जीवन को नौका तथा जन्म-मरण को दो किनारे मानते हुए सुन्दर बिम्ब अंकित किया है। जैसे नौका को दो किनारों के बीच घूमना पड़ता

---

१. शशि की तरी, पृ. ५४
२. शंखध्वनि, पृ. १४७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

है, वैसे ही जीवन भी जन्म और मृत्यु के बीच निरन्तर गतिशील है—

हे जग जीवन के कर्णधार, चिर जन्म-मरण के आर-पार
शाश्वत जीवन-नौका-विहार ![1]

जन्म और मृत्यु प्रकृति के नैसर्गिक कार्य हैं, जो क्रमानुसार चलते ही रहते हैं। इस बात को जन्म और मृत्यु का मानवीकरण करते हुए चित्र-रूप में समझाया गया है—

खोलता इधर जन्म लोचन
मूँदती उधर मृत्यु क्षण-क्षण ।[2]

मृत्यु और जन्म के लिए रात और प्रातः के अप्रस्तुत देकर कवि ने यह समझाया है कि जैसे रात के उपरान्त प्रभात का आगमन अवश्यंभावी है वैसे ही मृत्यु के उपरान्त जन्म भी और जैसे प्रकृति में रात और दिन सत्य हैं, वैसे ही जीवन में मृत्यु और जन्म भी अटल हैं, उनसे कोई बच नहीं सकता। मृत्यु केवल सुषुप्ति है और जन्म जागरण—

मूँदती नयन मृत्यु की रात
खोलते नव जीवन की प्रात ।[3]

माया

माया अविद्या है और अविद्या भ्रांति है। इसी के कारण जीव अज्ञान में भटकते रहते हैं और सत्य को नहीं पाते। पदार्थों और जीवों की अनेकता का भावन माया के कारण है। "माया का सम्बन्ध जगत् के अस्तित्व से नहीं, बल्कि उसके अर्थ से है, जगत् की वास्तविकता से नहीं बल्कि उसे देखने के दृष्टिकोण से है।"[4] कविवर पन्त ने माया-बिम्ब प्रस्तुत करते हुए लिखा है—

माया-सागर में डूबों का
सोख-सोख रति रस हर दूँ —
ओप भरी दोपहरी में ![5]

माया के लिए सागर उपमान उसकी व्यापकता, विस्तार एवं गहनता का द्योतक है। 'डूबों का' शब्द चमत्कारपूर्ण है। जैसे सागर में डूबा व्यक्ति जीवन से वंचित हो जाता है, उसी प्रकार माया में डूबा व्यक्ति ज़ीवन के लक्ष्य से भटक जाता है। ओप और दोपहरी प्रतीक हैं जो क्रमशः उमंग एवं यौवन के लिए प्रयुक्त हुए हैं। माया को मरीचिका,[6] सूखे मरु, मृगजल, रजत, रेत आदि कहा है।

---

१. गुंजन, पृ. १०४
२. पल्लव, पृ. १५०
३. पल्लव, पृ. १५७
४. उपनिषदों की भूमिका, पृ. ९२
५. वीणा-ग्रन्थि, पृ. ३
६. वही, पृ. ४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पन्तजी ने यह दिखाया है कि संसार के जीव अज्ञान के तिमिर त्रास में फँसे हैं। जीव का मानस ईश्वर का क्रीड़ा-स्थल है, किन्तु दोनों में व्यवधान डालता है माया रूपी काला बादल।[1] किन्तु यह बादल तभी मिटेगा जबकि भगवान अपने कर-स्पर्श से उसे मिटा देंगे। माया हिमजल है।[2]

नि य ति

नियति ईश्वर की नियामिका-शक्ति है और इसपर दृढ़ आस्था कई हिन्दी कवियों ने व्यक्त की है। प्रसाद जी अपने नियतिवाद के लिए प्रसिद्ध हैं। पन्तजी का नियति पर भरोसा दिखाई नहीं देता, फिर भी 'ग्रन्थि' में एक स्थान पर उसका एक सुन्दर बिम्ब है, जिसमें उसे चकई के खिलाड़ी के रूप में चित्रित किया गया है और बताया गया है कि वह जगत् को कृश सूत्र से फिराती रहती है—

नियति ! तुम निर्दोष और अछूत हो,
सहज हो सुकुमार, चकई का तुम्हें
खेल अतिप्रिय है, सतत कृश सूत्र से
तुम फिराती हो जगत को समय सा ![3]

का ल

'स्वर्ण-धूलि' काव्य-संग्रह में काल का अश्व रूप में एक बिम्ब खड़ा किया गया है और उसको धावमान रूप देकर काल की अविरत गति की ओर संकेत मिलता है। काल-अश्व तपः शक्ति का अनश्वर रूप है, जो दिशापृष्ठ पर अति दिव्य वेग से दौड़ रहा है। सप्त रश्मियों से शोभित यह काल रूपी अश्व अविराम गति से विश्व का रथ खींच रहा है और संसार पर उसके सहस्रों घुर प्रहार कर रहे हैं। काल-अश्व की गति से सारे भुवन चक्र की भांति घूम रहे हैं। इस प्रकार काल का अश्व रूप में चित्रण करते हुए उसका संसार पर प्रभाव भी दिखाया गया है—

काल अश्व यह, तपः शक्ति का रूप अनश्वर,
दिशा पृष्ठ पर धावमान, अतिदिव्य वेग भर !
महावीर्य यह, सप्त रश्मियों से हो शोभित
चला रहा भव को सहस्र घुर,——प्राण उच्छ्वसित !
भुवन भुवन सब घूम रहे चक्रों – से अविरत,
महा अश्व यह, खींच रहा अश्रान्त विश्व रथ ![4]

१. वीणा-ग्रन्थि, पृ. १०
२. वही, पृ. १०
३. वही, पृ. १२८
४. स्वर्ण-धूलि, पृ. ५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

निष्कर्ष

वैदिक दर्शन पर आधारित पन्तजी के बिम्बों का समग्र अध्ययन करने के उपरांत इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि पन्तजी के अधिकतर बिम्ब वेद-मन्त्रों के या तो पद्यानुवाद हैं या छायानुवाद । इस श्रेणी के मौलिक बिम्बों की संख्या परिमित है । उन बिम्बों में भी कल्पना की प्रचुरता एवं भाषा के सौष्ठव का उचित सन्निवेश नहीं हुआ है । पर इसके लिए पन्तजी को दोषी नहीं ठहराया जा सकता । दार्शनिक बिम्बों की योजना में कल्पना के लिए कम अवसर मिलता है और दूसरे कवि ने संभवतः यह भी ध्यान में रखा होगा कि दार्शनिक दुरूह तत्वों को कल्पना का कलेवर पहनाने से उनकी उलझन और भी बढ़ती जाती है । इसलिए तत्वों को सरल एवं सीधी भाषा में व्यक्त किया गया है ।

२. अरविन्द-दर्शन से सम्बन्धित बिम्ब

दिव्य-चेतना

स्वयं अरविन्द के अनुसार दिव्य-चेतना मनः चक्षु का विषय है, बाह्य चक्षुओं से उसका दर्शन नहीं किया जा सकता । ऐसी स्थिति में उसे शब्दों में मूर्त करना दुष्कर प्रयास है । पन्तजी ने दिव्य-चेतना को सृजन आनंद-परी कहा है जो स्वर्ण की किरण-तूलिका से नवजीवन-सौन्दर्य भरती है ।[१] वह नभ में विचरता स्वर्ण शुभ्र कलहंस है जो धरा-शिखर पर अलौकिक सौन्दर्य बरसाता है ।[२] वह सौन्दर्य-चेतना है, जो स्वर्णिम प्रवाह-सी अंतर्नभ से वसुधा को शोभा-उर्वर करने के लिए उतरती है ।[३] वह रस-सागर है, जो प्राणों के मधु-गागर को रस से भरती है ।[४] वह शुभ्र, शरद मेघ,[५] अगम शांति, महासिंधु है ।[६] वह स्वप्नों की द्वाभा में वेष्टित प्रथम उषा है, जो अधखुले स्वर्ग वातायन से चेतना क्षितिज को रंजित करती है । वह अस्पृश्य, अदृश्य विभा है । वह आनन-अवगुंठन में हँसती है और अंतर के निरवधि अगम मौन आरोहों को दीप्त करती है ।

तुम प्रथम उषा बनकर आई
स्वप्नों की द्वाभा में वेष्टित,
अधखुले स्वर्ग वातायन से
चेतना क्षितिज को कर रंजित ![७]

---

१. स्वर्णधूलि, पृ. ५५
२. शिल्पी, पृ. ८१
३. वही, पृ. १०७
४. अतिमा, पृ. ८३
५. कला और बूढ़ा चाँद, पृ. १३५
६. वही, पृ. १५६
७. अतिमा, पृ. ८५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

दिव्य-चेतना सत्य है और सूर्य-चंद्र उसके वत्स हैं। शांति और शोभा, श्रद्धा और भक्ति उसकी धेनुएँ हैं। स्वर्णिम किरणें भी कामधेनु हैं, जिनके स्तनों से धारोष्ण प्रकाश-रूपी मधुशील अमृत बहता है—

सूर्य चंद्र
सत्य ही के वत्स हैं
शांति और शोभा
श्रद्धा और भक्ति
उसी की धेनुएँ हैं !
ये किरणें भी
कामधेनु हैं,—
जिनके स्तानों से
धारोष्ण प्रकाश
मधुशील अमृत
बहता है ![1]

पन्तजी ने दिव्य-चेतना को लज्जा-नम्रमुखी के रूप में भी चित्रित किया है—

लज्जा नम्र
भाव लीन
तुम अरुणोदय की
अर्धनत
शुभ्र पद्म कली सी
लगती हो ![2]

दिव्य-चेतना का अरुणोदय की अर्धनत शुभ्र पद्म-कली का बिम्ब चाक्षुष है और अलौकिक सत्ता का इससे अधिक स्थूल चित्र देना असंभव है। वैसे ही उसका गोपालक रूप भी थोड़ा-बहुत स्पष्ट है। 'शंख-ध्वनि' में हनुमान को चेतस-गति एवं चैतन्य परात्पर की संज्ञा दी गयी है तथा उन्हें सृष्टि को अपने में समेटे सच्चिदानन्द बताया गया है।[3]

मातृशक्ति

मातृशक्ति चिन्मयी है, जो ब्रह्म में निहित है। यही समस्त जगत् की सृष्टि का कारण है। मातृशक्ति दिव्य-चेतना की सृजन-शक्ति है। वह उसके द्वारा ही सृष्टि-कार्य करती है। मातृशक्ति और दिव्य-चेतना में अभेद्य सम्बन्ध है, वे एक हैं, अभिन्न हैं।[4] कवि उससे प्रार्थना करता है कि वह प्रच्छन्न व्योम

---

१. कला और बूढ़ा चाँद, पृ. ६३
२. वही, पृ. १३३
३. शंखध्वनि, पृ. २१
४. अरविन्द—दि लाइफ डिवाइन, भाग–२, पृ. ९९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

से अनिर्वचनीय आलोक स्रोत-सी, चेतना के शिखरों को अपनी किरणों से रेखा-स्मित कर तथा उनकी अध्यात्म उच्चता को निखारती हुई नीचे उतरे। कुल-मिलाकर मातृशक्ति की अलौकिक आभा की एक झाँकी पाठक के मानस में अंकित होती है—

मातृशक्ति, फिर उतरो निज प्रच्छन्न व्योम से
अवचनीय आलोक स्रोत सी, निज किरणों से
रेखास्मित कर शुभ्र चेतना के शिखरों को,
उनकी शुचि अध्यात्म उच्चता को निखार कर।[१]

सृजन-वह्नि

अरविन्द के अनुसार चेतन-सूत्र ही सृष्टि-पट को बुनने का साधन है। ब्रह्म ही स्थूल जगत् के रूप में अभिव्यक्त हुआ है, किन्तु ब्रह्म की शक्ति, जो स्वयं अचेतन है, क्रियाहीन या विश्रमावस्था में ब्रह्म में ही अवस्थित है। वह उससे अभिन्न है। ब्रह्म-सागर ही अपनी गति के आन्दोलन से जीवन रूपी तरंगों को जन्म देता हैं।[२]

पन्तजी ने इस सृजन-चेतना का रूप प्रस्तुत करते हुए बताया है कि सृजन-वह्नि न भौतिक आग है, न कायिक आग है, न आत्मिक आग ही। वह विकसित जीवन-शतदल का अक्षय पराग है। वह तन-मन में बहती स्वर्गिक निर्झरणी है तथा लपटों के सागर में तिरती स्वर्णिम तरणी है—

आत्मिक आग ?—नहीं, पर फिर भी एक आग यह,
विकसित जीवन शतदल की अक्षय पराग यह!
X X X
तन में मन में बहती यह स्वर्गिक निर्झरिणी,
लपटों के सागर में तिरती स्वर्णिम तरणी![३]

सृजन-वह्नि के तीन उपमान प्रस्तुत किये गये हैं—जीवन-शतदल का पराग, स्वर्गिक निर्झरणी तथा स्वर्णिम तरी। ये तीनों उपमान चाक्षुष हैं और सृजन-वह्नि को मूर्त रूप देने में सक्षम हैं।

परात्पर ज्योति

परात्पर ज्योति अलौकिक सौन्दर्य एवं तेज-पुंज है, जिसका दर्शन मानवीय नेत्र नहीं कर सकते। कवि पन्त ने उसको 'हीर रश्मि चन्द्रकला' बताकर मूर्तित कर दिया है—

१. वाणी, पृ. १५१
२. अरविन्द—दि लाइफ डिवाइन, भाग—२, पृ. ४५
३. अतिमा, पृ. ९७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

यह हीर रश्मि
चन्द्रकला
परात्पर ज्योति है ![1]

दिव्यानुभूति

कोई दिव्य-चेतना कवि को प्रेरणा देती है। दिव्यानुभूति को रूपायित करते हुए कवि ने उसको चन्द्रकिरण किरीटिनी कहा है तथा बताया है कि वह मौन स्वप्न-सजग चरण धर कर आती है और हृदय के एकान्त शान्त स्फटिक क्षणों को स्वर्गिक संगीत से भर देती है। दिव्यानुभूति का नारी रूप में यहाँ चित्रण हुआ है—

चन्द्र किरण किरीटिनी
तुम कौन आती
मौन स्वप्न-सजग चरण धर ?
हृदय के एकान्त शान्त
स्फटिक क्षणों को
स्वर्ग के संगीत से भर ![2]

आध्यात्मिक आनन्द

अरविन्द की योग-साधना में अतिमानव की स्थिति का महत्वपूर्ण स्थान है। इसकेलिए मन-बुद्धि का अतिक्रमण करना होगा। इस स्थिति में पहुँचा हुआ जीव परमानन्द में तल्लीन होता है। यह स्वर्गीय मानव की स्थिति है। यह मानव में देवत्व की स्थिति है। इसे निर्वाण या कैवल्य की स्थिति भी कहा जा सकता है। इसकी तुलना वेदान्तीय जीवन-मुक्त-स्थिति से की जा सकती है, जहाँ जीवन-मुक्त संसार में रहते हुए भी लोकोत्तर सत्य से सम्बन्ध स्थापित करता है। इस अवस्था का जो आनन्द है, उसका कई स्थानों में कवि पन्त ने वर्णन किया है। उनका कथन है कि मन रूप-रस-गन्ध-स्पर्श से परे अवाक् ऊँचाइयों, असीम प्रसारों, अतल गहराइयों में पहुँचकर अकूल आनन्द अगम शान्ति एवं अरूप लावण्य एवं प्रेम का अभेद्य रहस्य प्राप्त करता है।[3] इस आनन्द का बिम्बात्मक वर्णन द्रष्टव्य है—

रसोन्मुक्ति में मज्जित होता उर
चिन्मूल्यों के मुक्ता चुन भास्वर ![4] तथा
फिर किशोर क्वारे स्वप्नों का
कचनारी सौन्दर्य बरसता —
दिङ् मुकुलित कर अन्तर !

१. कला और बूढ़ा चाँद, पृ. ६९
२ किरण-वीणा, पृ. ४
३. कला और बूढ़ा चाँद, पृ. १३२
४. लोकायतन, पृ. ४३३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

किस वसन्त के सूर्य स्पर्श से
दहक उठा फिर प्राणों का वन,
अनिर्वाप्य इच्छा का पावक
सोया था आत्मा में गोपन,—
उमड़ सिन्धु आनन्द लोटता
जीवन के चरणों पर ![१]

कचनारी सौन्दर्य, वसन्त का सूर्य स्पर्श, प्राणों का वन, इच्छा का पावक, आनन्द-सिन्धु लोटता, आदि प्रयोग आध्यात्मिक आनन्द को मूर्त रूप देते हैं।

अन्तर्मानस

अन्तर्मानस दिव्य-मानस ही है। पन्तजी ने अन्तः मानस को अरुण सरोवर का बिम्ब दिया है। वह माणिक सरोवर है जो रजत-हरित अमृत जल पूरित है —

आः, यह माणिक सरोवर,
रजत हरित, अमृत जल
अरुण सरोवर ![२]

अमूर्त वस्तु का यह मूर्त चित्र विशेष महत्व का है। अन्तर्मानस को सरोवर मानकर उसे माणिक एवं अरुण विशेषणों से जहाँ रंगीन बनाया है, वहाँ उसकी आध्यात्मिक स्थिति भी समझायी है। उसका जल रजत-हरित है, जो रंग-संवेदना का द्योतक है। 'अमृत' विशेषण के द्वारा उसे रस्य या आस्वाद्य बिम्ब बनाया गया है।

निश्चेतन मन

हमारा जीवन और मन जड़तत्व के बन्धन में आबद्ध है। यह मन सारे पापों का कारण है और यह इन्द्रिय जीवन में तल्लीन रहता है। पन्तजी ने मन के अनेक सुन्दर बिम्ब अंकित किये हैं—

१) गहन कूप सा, सँकरी बाँबी सा,
निम्नोन्मुख, गुह्य देश यह,
घोर पंक में लिपटा प्राणों का घन ![३]

२) यह अन्धगर्त अहिराज विवर,
पैठा सहस्रफन फणिमणिधर,
वह कुंडल मारे तन मन पर
भय के सुख से कँपता अन्तर !

---

१. किरण वीणा, पृ. ६
२. कला और बूढ़ा चाँद, पृ. ५१
३. वाणी, पृ. ७२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

चौकड़ी मारकर चपल हिरन
पड़ते उड़ सिंहों के मुख में,
कानन कराल, डूब सब पशु
भीषण-मादक कर्दम-सुख में ![1]

३) नील भँवर जीवन रस सागर
फिरकी-सी उर नाव डोलती
काँप रहे जड़-चेतन थर-थर ![2]

निश्चेतन मन को प्रथम अवतरण में गहन-कूप, सँकरी बाँबी आदि अप्रस्तुतों द्वारा मूर्त किया गया है। द्वितीय अवतरण में निश्चेतन मन के अन्ध-गर्त को अहिराज-विवर सिद्ध किया गया है। इस विवर में वासना रूपी सहस्र-फण सर्प का वास है। आगे उसे कराल कानन का अप्रस्तुत दिया गया है। इस कानन में अज्ञान का सिंह वास करता है, जिसके मुख में मनुष्य की चंचल वृत्तियाँ जाकर फँसती हैं। तृतीय अवतरण में यह बताया गया है कि जीवन वास्तव में रस-सागर है, किन्तु उसमें वासना-भँवर पड़ गया है। फलतः उर-नौका फिरकी के समान इस भँवर में डोलकर और चक्कर काटकर निम्न तल को जा रही है।

इन्द्रियों के जीवन को घोर संग्राम-भूमि के रूप में चित्रित किया गया है। प्राणों के प्रदेश में इन्द्रियों की जो घाटी है, उसकी कथा करुणाजनक है। वहाँ निश्चेतन की घोर अन्धकार की नगरी है, वहाँ प्यासे असुरों का मुक्त कामना तन्त्र ही चल रहा है, फलतः मानव-मन देवासुर-संग्राम-क्षेत्र बन गया है—

रोमांचक है हाय, इन्द्रियों की यह घाटी
करुणाजनक कथा है प्राणों के प्रदेश की,
घोर अन्धेर नगरी निस्तल निश्चेतन की,
मुक्त कामना तन्त्र राज्य प्यासे असुरों का !!
देवासुर संग्राम क्षेत्र है मानव का मन,
प्राण भावना समर-स्थल है जिसका शाश्वत।[3]

पाप के भार से दबते मानव का चित्र भी द्रष्टव्य है —

बौना, नाटा, ठिगना, कुबड़ा मानव जीवन
लँगड़ाएगा भू पर, दब कर पाप-भार से ![4]

मनुष्य बहिर्मुख जीवन में शाश्वत आनन्द एवं सुख का अन्वेषण कर रहा है। वह भौतिक सुख के पीछे भटक रहा है और उससे अपनी प्यास बुझाने का निष्फल प्रयास करता है—

१. किरण-वीणा, पृ. ७४
२. वही, पृ. ७८
३. रजत-शिखर, पृ. २४
४. वही, पृ. ३१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हास अश्रु की घाटी यह : हँसमुख फूलों की
पलकों से झरते रहते मोती के आँसू :
धरती का चातक प्रेमी आकाश कुसुम का,
अन्ध चकोर अंगारे चुग निज तृषा बुझाता,
गन्ध मधुप गाता काँटों में फूलों के लिए !![1]

यह पूरा छन्द ही प्रतीकात्मक है। हास-अश्रु की घाटी भौतिक जीवन का प्रतीक है। यहाँ हँसमुख फूलों की पलकों से मोती के आँसू झरते ही रहते हैं। भौतिक जगत् का मानव प्यासा चातक है जो आकाश-कुसुम (अप्राप्य शाश्वत सुख) का प्रेमी है। 'आकाश कुसुम' बड़ा भाव-गर्भित प्रतीक है। मानव अन्धा चकोर है जो ऐन्द्रिय सुख रूपी अंगारे चुगकर वासना-तृषा बुझाने की व्यर्थ चेष्टा करता रहता है। भौतिक ऐन्द्रिय प्रलोभनों में बँधा मानव-मधुप काँटों में (दुखात्मक एषणाओं के जीवन में) फूलों (चिरन्तन नित्य सुख) की लालसा लेकर मंडराता-गुनगुनाता रहता है। ऐन्द्रिय प्रलोभन, दुःखात्मक जीवन एवं शाश्वत सुख की निष्फल आशा का यहाँ प्रतीकात्मक बिम्ब है।

मानव का हृदय दुर्बलताओं से घिरा हुआ है। इन दुर्बलताओं के कारण वह अज्ञानांधकार से भरा हुआ है। कवि ने दुर्बलताओं के अन्धकार से व्यावृत मानव-हृदय को दीप-शून्य गृह का बिम्ब दिया है—

हे करुणाकर, करुणा सागर !
क्यों इतनी दुर्बलताओं का
दीपशून्य गृह मानव अन्तर ![2]

आत्मज्ञान-शून्य मानव-मन को शिखा-रहित मृत मृण्मय दीपक बताया गया है।[3]

इन्द्रिय-आत्मिक जीवन

अरविन्द-दर्शन के अनुसार मनुष्य संसार में रहकर भौतिकता की उपेक्षा किये बिना आत्मिक जीवन बिता सकता है। अन्य दर्शनों ने भूत को हेय और आत्मा को स्पृहणीय माना है। परन्तु अरविन्द के अनुसार भूत एवं अध्यात्म दोनों की आवश्यकता है। भूत और आत्मा महासत्य के दो छोर हैं। वैसे ही पन्तजी का नवीन जीवन-दर्शन है कि जीवन का भौतिक आनन्द उपेक्षणीय नहीं है, भोग्य है। हाँ, ऐन्द्रिय जीवन की सीमा का अवश्य ध्यान रखना चाहिए। उस सीमा-रेखा के आगे का अतिशय ऐन्द्रिय जीवन हानिकारक है, आत्मिक जीवन में बाधक है। इसलिए एक सीमा तक ऐन्द्रिय जीवन को महत्व देकर मनुष्य अध्यात्म की ओर अग्रसर हो सकता है, पन्तजी की यही मान्यता है।

---

१. रजत शिखर, पृ. ९
२. स्वर्णधूलि, पृ. ३८
३. वाणी, पृ. १३३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उन्होंने बताया है कि इन्द्रिय-विमुख आत्मा तमसावृत एवं द्वार-रहित मृत गृह के समान डरावना है। वैसे ही आत्महीन मानवता राक्षस की प्रतिमा है।

इन्द्रिय विमुख मनुज आत्मा
ज्यों द्वार रहित मृत गृह तमसावृत,
आत्महीन मानवता त्यों ही
दानवता की प्रतिमा कुत्सित ![1]

पन्तजी सौन्दर्य और प्रेम के स्वस्थ एवं संस्कृत रूप के उपासक हैं। नर-नारी का रस-संस्कृत प्रीतिजन्य जीवन अध्यात्म का बाधक नहीं है। यह बात इस प्रकार स्पष्ट की गई है—

शोभा लहरों में हो
प्रीति समुद्र तरंगित
राग चेतना भू की
हो विकसित रस-संस्कृत,
नर-नारी जीवन हो
मधु प्रांगण दिङ्मुकुलित ![2]

यही नहीं निष्क्रिय वैराग्य जीवन का लक्ष्य नहीं है। भू-मानस इन्द्रिय स्मित एवं चित्-किरणों से भासित है। ऐसे जीवन को पन्तजी रस पावक स्वर्णिम शतदल के रूप में प्रस्तुत करते हैं—

लो, मैं तुम को देता नव
रस पावक स्वर्णिम शतदल,
नव भू-मानस इंद्रिय स्मित,
चित किरणों का अन्तस्तल ![3]

पन्तजी का समन्वयवादी दृष्टिकोण जीवन-सागर को रति एवं विरति के पुलिनों में बहाना चाहता है।

पीत विरति सित रति के पुलिनों में
बहता अक्षय चित् जीवन सागर ![4]

कवि ने अपने आदर्श मानव का एक बिम्ब प्रस्तुत किया है। वह इस वासनात्मक पंकिल संसार में रहता हुआ भी उस पंक से असंपृक्त हो अपना सौन्दर्य दिखाता है। वह रसवृंत पर खिला मानस-कमल है, जिसका मूल पंक में होते हुए भी, आत्मा के विकास से शोभित है। वह देह-जनित मूल्यों से परे है।

---

१. वाणी, पृ. १३८
२. लोकायतन, पृ. २११
३. लोकायतन, पृ. २१०
४. वही, पृ. ५६३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

देह मूल्यों के नहीं
मेरे मनुष्य !
रस वृंत पर खिले
मानस कमल हैं वे
पंक मूल,—
आत्मा के विकास ।[१]

कवि का यही समन्वयवादी दृष्टिकोण विज्ञान एवं अध्यात्म का भी आश्लेष करता है। कवि का विश्वास है, दोनों एकांगी हैं, अपने-आप अपूर्ण हैं। दोनों का समन्वय ही, विश्वजीवन के विकास का साधन है। इस बात को अंध-पंगु न्याय के चित्र द्वारा स्पष्ट किया गया है। विज्ञान अंधा है और अध्यात्म पंगु है, दोनों पृथक् रहकर चल नहीं सकते। जिस प्रकार अंधा और पंगु एक-दूसरे का सहारा लेकर अपना मार्ग प्रशस्त करते हैं, उसी प्रकार ध्वंस-अंध विज्ञान अध्यात्म ज्योति-लोचन बनकर तथा पंगु अध्यात्म विज्ञान के चरण पाकर आगे बढ़ें –

ध्वंस-अंध विज्ञान शक्ति को अब
देने नव अध्यात्म ज्योति लोचन,
संगिक पीठ बना भू जीवन को
करे पंगु अध्यात्म लोक विचरण ![२]

नवचेतना

कवि की मान्यता है कि भौतिक जड़वादी यह संसार दिव्य-चेतना की कृपा से नव-चेतना पाकर अपना विकास कर पाएगा। पन्त के चेतनावाद का परम-लक्ष्य विश्व-मंगल एवं लोक-कल्याण है। पन्तजी ने लिखा है–"नवीन चेतना की मनःक्रीड़ा, उसके आनन्द और सौन्दर्य, उसकी आशा-विश्वास-प्रद प्रेरणाओं के उद्‌बोधनगान मेरी इधर की रचनाओं के विषय हैं, जो जन-युग के संघर्ष में मानव-युग के उद्‌भव की स्वप्न सूचनाएँ भर हैं।"[३] कवि के इस कथन से इतना तो निश्चित हो जाता है कि नव-चेतना एक स्वप्न-संकल्प मात्र है, किन्तु कवि ने इस स्वप्न-संकल्प को चित्रात्मक बनाया है—

तुम रक्त सुरा सी सुर मादन,
जड़ तुम को पी बनते चेतन,
गुंजरित भृंग, कूजित कोकिल,
मद से गुंजरित कनक रसाल ![४]

---

१. कला और बूढ़ा चाँद, पृ. १५०
२. लोकायतन, पृ. ५५७
३. उत्तरा, प्रस्तावना, पृ. १०-११
४. स्वर्ण किरण, पृ. ३०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कवि ने नव चेतना को वर्णों, स्वादों, ध्वनियों से युक्त करके सवेद्य बनाया है। वह सुरा-सी मादक है और उसका पान करके जड़ चेतन बन जाता है। वही सुरा भृंगों में मधु गुंजार भरती है, कोकिल को कल कूजन की प्रेरणा देती है और रसाल को कनक रंग देकर उसे कल गुंजार से मुखरित करती है। 'शिल्पी' में उसे रूपायित करते हुए बताया गया है कि मेघों में विद्युत्-सी, तरुवन में झंझा-सी नई चेतना जन-मन के अन्धकार को चीर कर आनन को दीपित कर देती है।[1]

द्विधामूलक गति : अरविन्द की योगसाधना का परम लक्ष्य है, आत्मा की दिव्य-स्फूर्ति के परिणामस्वरूप पदार्थ का ऊर्ध्वगामी विकास ऐसा किया जाए कि यह संसार ही स्वर्ग बन जाए, दिव्य-चेतना का स्फुरण बने। भू-चेतना के ऊर्ध्वगमन का संकल्प लेकर प्रयत्नशील होते ही दिव्यचेतना उसे अपने आश्लेष से ऊपर उठाती है। विराट् अनामय सौन्दर्यवाली भूमा अपने पावक स्पर्श से मनुज-प्रकृति को तीर्थ-स्नात्, अंतः केन्द्रित तथा असीमता की पवित्रता में सद्य-स्मित करती है।[2] अर्थात् इस प्रक्रिया को भूमि एवं स्वर्ग का परिणय कहा जा सकता है। पृथ्वी दिव्य-चेतना का प्रसाद चाहती है।

पंतजी ने चिरन्तन ब्रह्म तथा पृथ्वी के उर्वर प्रसार में फैली अपनी ही रहस-प्रकृति दोनों के पारस्परिक संबंध को दिखाने तथा दोनों के पारस्परिक प्रेम को व्यक्त करनेवाला एक बिम्ब प्रस्तुत किया है। चिरन्तन ब्रह्म एकाग्र शिखर पर खड़े होकर भू के प्रसार में अपनी रहस प्रकृति को प्रीतिभाव से देख रहे हैं तो प्रकृति घुटनों के बल बैठ अपलक नेत्रों से अपने जीवन-साथी को अमृत-प्रीति एवं वरदान हेतु देख रही है। कवि ने प्रकृति का सुन्दर नारी-रूप अंकित किया है। वह फूलों की चोली पहने है, उसका हरितांचल लहरा रहा है। उसका नील कुंतल खुला है और चारों दिशाओं में सुगंध फैला रहा है। हृदय-सिंधु उच्छ्वास तरंगित है।

ऊर्ध्व शुभ्र, एकाग्र शिखर पर खड़े चिरन्तन
देख रहे हैं जग के स्वामी भू के उर्वर
इस बहुमुख फैले प्रसार में, सतजल कल्पित
अपनी ही आनंद तरंगित रहस प्रकृति को !
फूलों की चोली पहने, लहरा हरितांचल,
चूर्ण नील कुंतल छहरा दिक् सौरभ विश्लथ,
घुटनों के बल बैठ, उच्छ्वसित हृदय सिंधु ले,
अपलक आयत दृग जो देख रही ऊपर को
अमृत प्रीति वरदान हेतु जीवन साथी से ![3]

---

१. शिल्पी, पृ. १५ २. शंखध्वनि, पृ. २३ ३. रजत-शिखर, पृ. ३७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आगे आकाश और पृथ्वी के संभोग का चित्र दिखाते हुए भूमि और स्वर्ग अथवा जड़ और चेतन के रहस-मिलन का परिचय दिया है तथा दोनों के पारस्परिक आकर्षण का स्वरूप दिखाया है —

आकाश झुक रहा धरती पर
बरसा प्रकाश के उर्वर कण,
धरती उसके उर में बुनती
छाया का सतरंग सम्मोहन
हो रहा स्वर्ग से धरणी का
जड़ से चेतन का रहस मिलन ।[1]

फिर नव्य- चेतना अधिमन के नभ से स्वर्ण शुभ्र उषा-सी जन-मानस धरणी पर उतरती है और अपने शत रश्मि-तीरों से भू-जीवन के जड़ तम को चीर-कर स्वर्णिम चेतना से प्रकाशित करती है ।[2] ज्योति-जाह्नवी नव्य-चेतना का पुलक स्पर्श पाकर धरती का मन उभर उठता है,[3] दिव्य-चेतना की किरणें समदिक् चेतना को स्वर्णिम किरणों के शरों से बेध डालती है, जिससे उसके प्राणों में अवरोहण की प्रेरणा की ज्योति बस जाती है ।[4] यही भू-चेतना के प्रति दिव्य-चेतना की कृपा एवं अनुग्रह है ।

मन की अतिक्रांति या ऊर्ध्वगमन का चित्र कवि ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है —

यह अतिमा
मन से उठ ऊपर
पंख खोल शोभा क्षितिजों पर,
स्वर्ण नील आरोहों को तर
गंध शुभ्र रज साँसों में भर,
गीतों के निःस्वर झरनों में
स्वप्न द्रवित सुरधनु वर्णों में
अंतर शिखरों को नहलाती![5]

मन के ऊर्ध्वगमन को स्वर्णनील आरोहों को तरण कर पंख खोल ऊपर उड़ते तथा अपने कलकूजन से अंतर शिखरों को नहलाते एक खग का बिम्ब प्रदान किया है । विश्व-विकास के विवर्तन में कालचक्र को पीछे छोड़कर नई चेतना के जड़, जीवन, मन के सप्त सोपानों को पार करने तथा चिति-शक्ति का आश्लेष पाकर संपूर्ण भुवनों के रत्न-रश्मि-रंजित होने का दार्शनिक चित्रण

---

१. उत्तरा, पृ. १०९
२. रजत शिखर, पृ. ९९
३. वही, पृ. १३२
४. स्वर्णधूलि, पृ. ५३
५. अतिमा, पृ. ५२–५३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

'लोकायतन' में भी प्राप्त होता है।[1] इस स्थिति में पहुँचकर ब्रह्म, जीव और जगत् एक ही परम-चेतना के स्वर्णसूत्र में आबद्ध हो जाते हैं, कहीं कोई भेद नहीं रहता। मन के इस विकास में अंधकार मिटता है और प्रकाश-रश्मियाँ नाचने लगती हैं। जन-मन मोहक एवं अमर स्वप्नों को प्राप्त करता है। तम के मिटने, रश्मि के नाचने तथा मोहक स्वप्नों के तिरने का चित्रण इस प्रकार है —

भू तम का सागर रहा सिहर
जन मन पुलिनों पर बिखर बिखर
उठ रश्मि शिखर नाचतीं लहर !
तिरते स्वप्नों के पोत अमर
देवों का स्वर्णिम वैभव हर
नव मानवीय द्रव्यों से भर ![2]

यह जीवन का नया प्रभात है। लोक-जागरण का क्षण है। इस लोक-जागरण को वन में छाये नवप्रभात का प्रतीक देकर सुन्दर बिम्ब-योजना की गयी है—

मौन गुंजरण जाता मन में
मर्मर धूप छाँह के वन में !
आज भर गया प्राण-समीरण
स्वर्ग मधुरिमा से रे नूतन,
दिखलाया जीवन प्रभात मुख
खोल क्षितिज उर का वातायन, —[3]

भू-स्वर्ग

पन्त देवों के स्वर्गलोक की आकांक्षा नहीं रखते। वे जन-धरणी पर मानवों का नव-स्वर्ग बसाने के लिए आकुल-व्याकुल हैं। उनकी मान्यता है कि मन के पशु को और मन के दानव को उन्नमित कर नवविश्व-जीवन का निर्माण किया जा सकता है।[4] तब निखिल विश्व ही ईश्वर का मन्दिर बनेगा। निराकार ईश्वर मानव में साकार होकर धरा-स्वर्ग के आँगन में विचरण करेगा।[5] दिव्य-चेतना का संस्पर्श पाकर भू-स्वर्ग बनता है। भू-स्वर्ग का चित्रण करते हुए कवि ने लिखा है कि जलधि-लहरों से चित्रित नील-रेशमी चल पट को फहराकर तथा हरित मखमली ज्वाला में लिपटी अनिल-दुकूला भू सस्मित हो उठती है और दिक्-प्रांगण के रंगमंच पर वह मुग्ध नाचती है, जिससे सारा

---

१. लोकायतन, पृ. ५५३
२. उत्तरा, पृ. ४४–४५
३. वही, पृ. ६१
४. शंखध्वनि, पृ. १२
५. शंखध्वनि, पृ. १७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

रंगमंच नीलाभा से शोभित हो उठता है। यही नहीं प्रथम स्वर्ण द्वाभा के स्वागत में ग्रह-तारे भी नाच रहे हैं। इस आनन्द विभा का प्रतिबिम्ब लेने नव रवि कनक मुकुर लेकर हँसता हुआ आता है तो शशि अपना रजत सुधा-घट अर्पित करता है।[१] इधर संयम गुण रूपी रस्सी से स्वर्ग-शोभा को खींचकर जन-मन में आनन्द-सिन्धु उद्वेलित हो रहा है।[२] उधर ऊपर आकाश में भूमा की पालकी अपने कन्धों पर उठाये नक्षत्र नृत्य-निरत हैं और अम्बर मुग्ध हो इस रमणीय दृश्य का सौन्दर्य लूट रहा है—

भूमा की शिविका धर कन्धों पर
नृत्य निरत नक्षत्र, मुग्ध अम्बर।[३]

मिट्टी के दीपक (भौतिक शरीर) से दीपशिखा-सी चेतना जाग्रत होती है और तैल धारवत् मर्म स्नेह को पाकर भूतल स्वर्ग-विभा से भर जाता है।[४]

नवयुग का मानव

कवि-कल्पित नवयुग का मानव मानव-ईश्वर है, जो स्वर्गीय आभा से मंडित है। वह अध्यात्म के उच्च शिखर पर पहुँचा हुआ मानव है। अपनी साधना के द्वारा वह भागवत् जीवन प्राप्त अतिमानव है। ब्रह्म के साथ एकत्व की अनुभूति उसकी विशेषता है। पन्तजी ने महर्षि अरविन्द में अतिमानव रूप देखा और उनका बिम्ब इस प्रकार प्रस्तुत किया—

प्रातः रवि सा स्फुरित रश्मि स्मित
था भगवत् चैतन्य तपोज्ज्वल,
भू मानस में पूर्ण प्रस्फुटित
अन्तः स्वर्णिम हो सहस्र दल।
ज्योति पंख उस दिव्य दृष्टि ने
दीपित अन्तर्भुवन दिए कर,
ऊर्ध्व स्पर्श के स्वर्ण तीर से
भू मन में जड़ पाश लिए हर।[५]

अरविन्द का भागवत् जीवन था और वे अतिमानव थे। उनके लिए रश्मिस्मित प्रातः रवि का उपमान दिया गया है। उनमें तपोज्ज्वल भागवत् चैतन्य विलस रहा था। वे भू-मानव में प्रस्फुटित स्वर्णिम सहस्रदल थे। उनकी दिव्य-दृष्टि ज्योतिपंख थी, जिसने अपनी रश्मि-किरणों से अन्तर्भुवन को ज्योतित कर दिया। ऊर्ध्व-चेतना के स्वर्णिम तीर से उन्होंने भू-मन के जड़-पाश को हर लिया।

---

१. लोकायतन, पृ. ४७१
२. वही, पृ. ४६८
३. वही, पृ. ४६८
४. स्वर्ण-किरण, पृ. ६
५. वाणी, पृ. १३४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

नवयुग के मानव का झंझा-रथ पर चढ़ आता रूप उदात्त बिम्ब का सुन्दर उदाहरण है। वह प्रदीप्त जीवन-पर्वत है। वह धरा-पंक को दग्ध तथा मनोनभ को दीपित करता आ रहा है। उसके भय से युग-युग के पत्ते झर पड़ते हैं और वह नव अग्निबीज बरसा रहा है। क्रुद्ध बवंडर और अन्धड़ मत्त तुरंगों-से उसके साथ खेल रहा है। उसके रथ-चक्रों का दारुण रव आकाश को बधिर बना रहा है। वह नवमधु के फूलों से अपने को वेष्टित किये आ रहा है। उसके शारीरिक अंग रूप, रंग, सौरभ एवं गुंजन से भरा हुआ है। उसका अन्तस्तल दीपित है, वह युग-स्वप्न का मंजरित रूप है।[१]

'अतिमा' में आया नवमानव का बिम्ब इतना स्पृहणीय है कि कवि ने समस्त प्राकृतिक सुषमा एवं उदात्त रूप को लेकर उसके रूप-आकार की सृष्टि की है। नया मानव-ईश्वर अवतरित हो रहा है। स्वर्ण रश्मियों से स्मित ऊषाओं के स्वर्णिम रथ पर तड़ित्-स्फुरित लतिकाओं में लिपटे पर्वत-सा, अगणित सुर-वीणाओं के झंकृत निर्झर-सा, उन्मद भृंगों-से गुंजित नव कुसुमाकर-सा वह संसार में आ रहा है। रूप, रस, गन्ध, ध्वनि संवेदनाओं की वह चरम परिणति है।

आज नया मानव ईश्वर अवतरित हो रहा
स्वर्ण रश्मियों से स्मित ऊषाओं के रथ पर,
तड़ित् स्फुरित लतिकाओं में लिपटे पर्वत सा,
अगणित सुर वीणाओं के झंकृत निर्झर सा,
उन्मद भृंगों से गुँजित नव कुसुमाकर-सा![२]

वह चैतन्य पुरुष एवं ज्योति-पद्म[३] है। उसके स्वर्णिम मुख पर सूक्ष्म स्वर्ण किरणों की जाली है और नवजीवन श्री-स्मित है, लोक-ऐक्य की लौह पीठिका पर स्थित है।[४] वह युगसम्भव मानव है, त्रिनयन है।[५]

३. फुटकर बिम्ब

उपर्युक्त बिम्बों के अतिरिक्त पन्त-काव्य में एकाध अन्य दार्शनिक बिम्ब भी मिलते हैं। उनमें नाथ-सम्प्रदाय की साधना, ब्रह्मवाद तथा वैराग्य के बिम्ब विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। नाथ-सम्प्रदाय प्राणनिरोध-प्रधान साधना-पद्धति है। उसके अनुसार इड़ा तथा पिंगला नाड़ियों को रोककर सुषुम्ना मार्ग से प्राणवायु को संचारित कर कुण्डलिनी को उत्तेजित किया जाता है ताकि कुण्डलिनी शरीर के अन्दर स्थित छह-चक्रों का भेदन कर सहस्रार में पहुँच जाए।

---

१. सौवर्ण, पृ. ४२-४३
२. अतिमा, पृ. ५८
३. कला और बूढ़ा चाँद, पृ. १६५
४. लोकायतन, पृ. ५३९
५. उत्तरा, पृ. ४५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इससे योगी आध्यात्मिक ब्रह्म-रस का पान कर सकता है। कवि ने इस साधना का चित्रण किया है —

प्रतीक्षा में जग कर अनिमेष
प्राण की पकड़ ऊर्ध्वमुख डोर
ड्योढ़ियाँ कर चक्रों की पार
सतत बढ़ना प्रभु मन्दिर ओर ![1]

प्राण की ऊर्ध्वमुख डोर, चक्रों की ड्योढ़ियाँ और सहस्रार रूपी प्रभु-मन्दिर सब मिलकर योग-साधना का चित्र अंकित करते हैं।

मध्ययुगीन ब्रह्मवादियों ने संसार को सर्प-रज्जु कहकर भ्रम फैलाया था। उनके अधर में अटके दिवांध मन का रूप देखने योग्य है—

अधर में अटका औंधा
ब्रह्मवादियों का
दिवांध मन ![2]

कवि वैराग्य-साधना का विरोधी है। उसके अनुसार वैराग्य भार-स्वरूप है। वैरागी तन से त्रासित एवं भस्म-काम हो मन से निष्क्रिय हैं। वे ज्ञान-शुष्क मरुस्थल में तपते हैं और मृगजल पीकर अपने जन्म-मरण को ढोते रहते हैं। वैरागी की भार ढोते हुए मरुभूमि से चलते प्यासे यात्री की कल्पना सुन्दर है और बिलकुल नवीन भी—

तन से त्रासित, वैराग्य-निहत
धिक् भस्म-काम जो निष्क्रिय मन,
वे ज्ञान-शुष्क – मरुस्थल में तप,
मृग जल पी, ढोते जन्म-मरण ![3]

१. लोकायतन, पृ. ३१६
२. किरण-वीणा, पृ. ५६
३. किरण-वीणा, पृ. १११

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हिन्दी काव्य में बिम्ब-योजना और पन्त

हिन्दी काव्य-साहित्य में बिम्ब- विधान का जो सुष्ठु रूप छायावादी कवियों के काव्य में मिलता है, वैसा रूप इसके पूर्व नहीं हुआ था। किन्तु इसका यह तात्पर्य कदापि नहीं है कि उसके पूर्व के साहित्य में कवियों ने वर्ण्य-विषय का बिम्ब-ग्रहण नहीं कराया है । कवियों ने अर्थ-ग्रहण के साथ ही बिम्ब-ग्रहण भी कराया है, भले ही यह कार्य उनकी मुख्य प्रवृत्ति में नहीं आता । किन्तु छायावादी अतिशय कल्पना ने बिम्ब के जो नाना रूप-विधान किये, वे अतिशय महत्व के हैं । पूर्व छायावाद-काल तक कवि-दृष्टि वस्तुओं के यथातथ्य चित्रण तक सीमित रही या अधिक से अधिक उनके बिम्बों को अलंकार की कोटि में सीमित रखा जा सकता है । अलंकाराश्रित उनकी उपमान-योजना भी मौलिक न होकर परम्परागत अधिक रही है । फलतः उपमान योजना भी रूढ़ एवं संकुचित रही, मौलिक उद्भावनाएँ विरले ही मिलती हैं । कहने का मतलब यह है कि बिम्ब के अनिवार्य गुण—ताज़गी, नवीनता आदि की ओर कवियों का ध्यान नहीं गया और उनमें उस कलात्मकता का भी अभाव रहा, जो श्रेष्ठ बिम्बों के निर्माण के लिए अपेक्षित है । आगे हिन्दी-काव्य में बिम्ब-योजना के स्वरूप पर संक्षेप में विचार किया जाएगा ।

निर्गुण संप्रदाय के काव्य-बिम्ब

हिन्दी काव्य में बिम्ब-योजना के प्रसंग में सर्वप्रथम हमारा ध्यान निर्गुण-मार्गीय काव्य पर जाता है । उसके पूर्व के काव्य तथा उनकी भाषा के स्वरूप आदि के सम्बन्ध में आज भी विद्वान लोग एकमत नहीं हैं । दूसरे उससे पहले के कवियों में विद्यापति ही एक ऐसे जान पड़ते हैं, जिनकी बिम्ब के प्रसंग में चर्चा की जा सकती है । पर अपनी शृंगारिक प्रवृत्ति के कारण विद्यापति शृंगारी कवियों में सम्मिलित हो सकते हैं, जिनकी चर्चा आगे की जाएगी ।

निर्गुण संप्रदाय के कवि साधक थे जो भगवान् के अलख एवं निरंजन रूप का प्रतिपादन करते थे । उनमें ज्ञानमार्गी संत-परम्परा के कवि भारतीय ब्रह्मज्ञान एवं योग-साधना को लेकर तथा उसमें सूफियों के प्रेम-तत्व को मिलाकर उपासना-क्षेत्र में अग्रसर हुए ।[1] दूसरी परम्परा शुद्ध प्रेम-मार्गी सूफी कवियों की है । "इस शाखा के सब कवियों ने कल्पित कहानियों के द्वारा प्रेम-

१. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल—हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ. ६६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मार्ग का महत्व दिखाया है। इन साधक कवियों ने लौकिक प्रेम के बहाने उस 'प्रेमतत्व' का आभास किया है जो प्रियतम ईश्वर से मिलानेवाला है।"[१] पहली कोटि के कवियों की रचनाओं में निर्गुण परमात्मा के प्रति प्रेमाभक्ति विषयक उद्गार मिलते हैं और आत्म-ज्ञान जनित आनंद की अभिव्यक्ति पाई जाती है। दूसरे संसार को मायिक एवं त्याज्य समझने के कारण सांसारिक वस्तुओं के प्रति उपेक्षा एवं विरक्ति की भावना भी उनमें थी। प्रेममार्गी कवियों ने लोककथाओं में कल्पना मिलाकर उसे मांसल अवश्य बनाया है। उनके अनुसार यह व्यक्त जगत् परमात्मा का प्रतिबिम्ब है। इन कारणों से उन्होंने मानव एवं प्रकृति के भी बिम्ब प्रस्तुत किये हैं। निर्गुणमार्गी कबीर तथा जायसी बिम्ब के धनी हैं। उन्होंने अपने कथ्य को चित्र-रूप में प्रस्तुत करने का सराहनीय प्रयत्न किया।

निर्गुण संप्रदाय के कवि ऐन्द्रिय सवेद्य चित्रणों की ओर बहुत कम ध्यान दे पाये हैं। रंगों की दृष्टि से सफेद, काले, लाल, पीले, नील, स्वर्ण रंगों तक[२] ही उनकी गति रही है। ध्वनि-संवद्य चित्र और भी विरले हैं। जायसी ने पायल एवं करधनी की झंकार, बीन-मृदंग[३] एवं अन्य वाद्य-यंत्रों के श्रव्य बिम्ब अंकित किये हैं। भीनी सुगन्धी, इत्र, पुष्प-गन्ध, सौंधी गन्ध, कर्पूर, चन्दन[४] तक उनकी पहुँच रही है। स्पश्य संवेदना की दृष्टि से मसृणता, चिकनापन, कड़ापन, खुरदरापन, ठंड़-गर्मी[५] आदि का कई स्थानों पर उल्लेख हुआ है। उनके आस्वाद्य बिम्ब मिठास[६] एवं कडुवापन तक सीमित रहे हैं।

जायसी ने सिंहल-द्वीप के पनघट का वर्णन करते हुए वहाँ आनेवाली सुन्दरियों के रूप एवं हाव-भावों का मार्मिक चित्रण किया है। वैसे ही मानस-रोदक-खंड में पद्मावती की जल-क्रीड़ा का वर्णन करते हुए उसका जो चित्रण किया है वह द्रष्टव्य है —

> सरवर तीर पद्मिनी आई। खोंपा छोरि केस मुकलाई।।
> ससि-मुख, अंगमलयगिरि बासा। नागिन झाँपि लीन्ह चहुँ पासा।।[७]

यहाँ बिम्ब का मुख्य साधन उपमान-योजना ही है। उसके मुख के लिए चंद्र तथा बालों के लिए नागिन का उपमान परम्परागत है। हाँ 'मलयगिरि बासा' से युक्त करके बिम्ब को ऐन्द्रिय संवेद्य बनाया गया है। अन्य स्थानों में भी केश के लिए कस्तूरी, भ्रमर, प्रेम-जंजीर, एवं राहु,[८] माँग के लिए कंचन-रेखा,

---

१. हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ. ६६
२. जायसी ग्रंथावली, पृ. १७
३. वही, पृ. ४७, ४८
४. वही, पृ, १२, १३, १५, ३८, ४३
५. वही, पृ. २५
६. वही, पृ. ११
७. वही, पृ. २४
८. वही, पृ. २०, २४, ४१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सूर्य-किरण, विद्युत्[1], नेत्र के लिए खंजन, कुरंग, रक्त-कमल[2] भौंहों के लिए धनुष, खड्ग[3], अधर के लिए माणिक्य, दुपहरिया का फूल[4], दाँत के लिए दाडिम, हीरा, विद्युत्[5] ग्रीवा के लिए कम्बुमयूर, सुराही[6] उरोज के लिए कंचनबेल, नारंगी, श्रीफल, तुरंग, लड्डु[7] उपमान प्रयुक्त हुए हैं। उपमान परम्परागत होते हुए भी कवि-कल्पना में पर्याप्त मौलिकता और सजीवता है। शुक्लजी का कथन है— "सृष्टि के जिन-जिन पदार्थों में सौन्दर्य की झलक है, पद्मिनी की रूप-राशि की योजना के लिए कवि ने मानो सबको एकत्र कर दिया है"।[8]

प्रकृति की दृष्टि से जायसी के काव्य में सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, बिजली, बादल, वर्षा, समुद्र, नदी, पंक, फूल, पत्तियाँ, वृक्ष-लतादि के व्यापारों के बिम्ब आये हैं। इन जड़-वस्तुओं के अतिरिक्त हाथी, शेर, मृग, अश्व, बैल, हंस, बगुल, सर्प, मछली, मगर, भ्रमर आदि चेतन प्रकृति के भी चित्रण प्राप्त हो सकते हैं। किन्तु कवि ने बहुधा वस्तु-परिगणन प्रणाली अपनायी है, जिस कारण बिम्ब में कोई प्रभावोत्पादकता नहीं है। जायसी और कबीर दोनों ने प्रतीकात्मक बिम्बों की अवतारणा की है, पर आध्यात्मिक या रहस्यात्मक होने के कारण उनको दार्शनिक बिम्बों में ही स्थान दिया जा सकता है।

निर्गुणवादी कवियों के बिम्ब वस्तुपरक तथा स्थूल हैं। आलम्बन एवं आश्रय की चेष्टाओं का चित्रण इन कवियों में मिलता है। कबीर तथा जायसी आदि मुख्य रूप से श्रृंगार तथा शान्त भाव में तन्मय थे और उनसे सम्बन्धित भावों, अनुभावों के बिम्ब उनके काव्य में प्राप्त होते हैं। आत्मा को विरहिणी रूप में रखकर कबीर ने उसके विकल प्राणों की पुकार, मर्म-व्यथा की हूक और भावनाओं का मार्मिक रूप अंकित किया है। निम्न पंक्तियों में विरहिणी की प्रिय से मिलने की व्यग्रता का कितना भव्य चित्रण मिलता है—

विरहनि ऊभी पंथ सिरि, पंथी पूछे धाय।
एक सबद कहि पीव का, कबर मिलैंगे आय॥[9]

जायसी ने भी 'विरह-भौंर' का एक कमनीय एवं प्रभावजनक चित्र अंकित किया है। पद्मावती के प्रेम में तप्त राजा रत्नसेन बिरह के भँवर में चारों ओर चक्कर लगाने लगता है, क्षण-क्षण उसके हृदय में हिल्लोरें उठती हैं, वह लंबी साँस छोड़ता है। कभी उसका मुख पीला पड़ जाता है तो कभी सफेद। एक क्षण में वह सचेत होता है तो तुरंत ही अचेत हो जाता है।

१. जायसी ग्रंथावली, पृ. ४१
२. वही, पृ. २०, २४
३. वही, पृ. २०, ४१
४. वही, पृ. २०, ४३
५. वही, पृ. २०, २४, ४४
६. वही, पृ. ४५
७. वही, पृ. २०, २४, ४६
८. जायसी ग्रंथावली, भूमिका, पृ. ८९
९. कबीर ग्रंथावली, पृ. ६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विरह-भौंर होइ भावरि देई। खिन खिन जीउ हिलोरा लेई॥
खिनहिं उसास बूडि जिउ जाई। खिनहिं उठै निसरै बौराई॥
खिनहिं पीत, खिन होइ मुख सेता। खिनहिं चेत, खिन होइ अचेता॥[१]

यहाँ कवि ने विरह को भँवर-रूप में कल्पित ही नहीं किया, विरह की भिन्न दशाओं का भी चित्र सामने रखा है।

निर्गुण-कवियों ने संयोग शृंगार से सम्बन्धित बिम्ब भी प्रस्तुत किये हैं। कबीर ने रहस्यवाद की अन्तिम स्थिति में आत्मा-रूपी प्रिया तथा परमात्मा रूपी प्रिय के आध्यात्मिक विवाह एवं दाम्पत्य-जीवन को भी चित्रात्मक बनाया है। एक पद में परमात्मा को दूल्हा और अपने को दूल्हिन के रूप में चित्रित करते हुए बराती, विवाह वेदी, वेदोच्चार, भँवरी, विवाह के सभी तत्वों का सन्निवेश किया है।[२]

निर्गुण सम्प्रदाय की दोनों शाखाओं पर योग-साधना का प्रभाव पड़ा था और इस कारण दोनों ने साधना-पद्धति को बिम्बित करने का प्रयत्न किया है। पर उन चित्रणों में शुष्क एवं नीरस ज्ञान की बातें अधिक हैं और वे अधिकतर प्रतीकात्मक हैं। बिम्बों में जिस भावना एवं कल्पना का प्राचुर्य होना अपरिहार्य है, उसका अभाव है। किन्तु उनके कुछ रहस्यपरक दार्शनिक बिम्ब विशेष महत्व के हैं। परमात्मा रहस्यमयी सत्ता है। "उस रहस्यमयी सत्ता का आभास देने के लिए जायसी बहुत ही रमणीय और मर्मस्पर्शी दृश्य-संकेत उपस्थित करने में समर्थ हुए हैं।"[३] जायसी ने पद्मावती को परमेश्वर तथा जगत् को उसका प्रतिबिम्ब मानते हुए दोनों के बिम्ब-प्रतिबिम्ब की योजना की है।—

नयन जो देखा कवँल भा, निरमल नीर सरीर।
हँसत जो देखा हंस भा, दसन-जोति नग हीर॥[४]

कबीर को अपने लाल की लालिमा सब कहीं दिखाई देती है। उन्होंने परमात्मा एवं जीवात्मा की अद्वैत स्थिति सागर-जल एवं कुम्भ-जल के रूपक द्वारा दर्शायी है—

जल में कुभ कुंभ मैं जल है, बाहरि भीतरि पांनी।
फूटा कुंभ जल जलहि समांनां, यहु तत कथौ गियानी॥[५]

वैसे ही माया को पापणीं, मोहनी, डाकणीं, आदि उपमानों द्वारा चित्रित करने तथा उसके कार्यों से परिचित कराने का भी प्रयत्न किया गया है।[६] संसार की

१. जायसी ग्रन्थावली, पृ. ४१
२. कबीर ग्रन्थावली, पद—१, पृ. ६९
३. जायसी ग्रन्थावली, भूमिका, पृ १६५
४. जायसी ग्रन्थावली, पृ. २५
५. कबीर ग्रंथावली, पृ. ८०
६. द्रष्टव्य, कबीर ग्रंथावली, माया कौ अंग।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

क्षणिकता एवं नश्वरता को सहज संवेद्य बनाने के लिए पानी के बुद्बुद् का अप्रस्तुत अत्यन्त भाव-व्यंजक एवं चित्रात्मक है—

पांणी केरा बुदबुदा, इसी हमारी जाति ।
एक दिनां छिप जांहिगे, तारे ज्यूँ परभाति ।।[1]

इन कवियों ने प्रतीकों के सहारे एकाध स्थानों पर दार्शनिक विचारों को सुन्दर अभिव्यक्ति दी है। परमात्मा रूपी मानसरोवर में मुक्तात्मा रूपी हंस के आध्यात्मिक आनंद रूपी मोती चुगने तथा उसी में रहने का जो चित्र अंकित किया गया है, वह प्रतीकात्मक होता हुआ भी भावात्मक है और चित्र-विधान की दृष्टि से अतीव स्पष्ट एवं दृश्यात्मक है—

मानसरोवर सुभर जल, हंसा केलि कराहिं ।
मुक्ताहल मुकता चुगैं, अब उड़ि अनत न जाहिं ।।[2]

सगुण भक्तों के काव्य में बिम्ब

सगुण भक्तों ने भगवान् के लीलाधारी स्वरूप की झाँकी प्रस्तुत की है। उनका यह कार्य अपने समय के अनुरूप था। भारत में मुसलमानी शासन स्थापित हो चुका था और निराश्रित हिन्दू जनता उनके निर्मम आतंक से पीड़ित एवं असहाय थी। इस प्रकार चारों ओर से निराश्रित एवं भय-पीड़ित जनता के सामने लीलाधारी भगवान् के मोहक रूप-सौन्दर्य एवं धर्मरक्षक स्वरूप को प्रस्तुत कर उन्हें आश्वस्त करने का उत्तरदायित्व सगुण भक्तों ने अपना लिया। इस कारण कृष्ण-भक्त कवियों ने करील-कुंजों के बीच गोपबालाओं के साथ अठखेलियाँ करते नट-नागर गोपालकृष्ण की मनोरंजन-कारी लीलाओं तथा रामोपासक कवियों ने मर्यादा पुरुषोत्तम एवं धर्म-रक्षक भगवान् राम की नर-लीलाओं का चरित सुनाकर भक्ति की सुर-सरिता बहायी। इस कारण सगुण कवियों को रूप-सौन्दर्य एवं कर्म-सौन्दर्य के अंकन के लिए पर्याप्त अवकाश मिला। सूर-सागर सौन्दर्य का पारावार है। रूप-सौन्दर्य वास्तव में पार्थिव सौन्दर्य है और सूर द्वारा प्रस्तुत राधाकृष्ण का छवि-वर्णन द्रष्टव्य है—

खेलत हरि निकसै ब्रज-खोरी ।
कटि कछनी पीतांबर बाँधे, हाथ लिये भौंरा, चक डोरी ।।
मोर-मुकुट, कुंडल स्रवननि वर, दसन-दमक दामिनि-छबि छोरी ।
गए स्याम रवि-तनया कैं तट, अंग लसति चंदन की खोरी ।।
औचक ही देखी तहँ राधा, नैन बिसाल भाल दिये रोरी ।
नील बसन फरिया कटि पहिरे, बेनी पीठि रूलति झक्झोरी ।

१. कबीर ग्रंथावली, पृ. ५७
२. कबीर ग्रंथावली, परचा कौ अंग, पृ. १२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

संग लरिकिनी चलि इत आवति, दिन-थोरी, अति छवि तन-गोरी ।
सूर स्याम देखत हीं रीझै नैन-नैन मिलि परी ठगोरी ॥[1]

स्पष्ट है, सौन्दर्य का यह चित्रण वर्णनात्मक अधिक है । तुलसीदास जी ने राम-लक्ष्मण के लता-भवन से निकलकर प्रकट होते रूप के लिए पाटल जलद को अलग कर निकलते युगल विमल विधु का उपमान देकर चित्र को सौन्दर्यात्मक बनाया है—

लता भवन ते प्रकट भए तेहि औसर दोउ भाई ।
निकसे जनु जुग विमल विधु जलपटल बिलगाई ।[2]

तुलसीदास जी द्वारा चित्रित सीता-सौन्दर्य द्रष्टव्य है—

सुँदरता कहँ सुन्दर करई, छबिगृह दीपशिखा जनु बरई ।[3] तथा
जहं विलोक मृगसावक नैनी, जनु तहँ बरिस कमल सित श्रेनी ।[4]

सीताजी का सौन्दर्य सुन्दरता को भी सुन्दर करता है और वे ऐसी मालूम पड़ती हैं मानो छविगृह में दीपशिखा जल रही हो । उनकी आंखें मृग-शावक के समान चंचल तथा कमल के समान सुन्दर हैं । वे जहाँ भी नेत्र फेरती हैं, वहाँ कमलों की श्रेणी ही बरस पड़ती है । सीता का यह रूप-वर्णन परम्परागत उपमानों पर आश्रित होता हुआ भी प्रभावकारी है । दूसरी पंक्ति जायसी की 'नयन जो देखा कवँल भा' वाली पंक्ति से मेल खाती है, तथा मध्यकालीन सौन्दर्य-बिम्ब की दिग्दर्शक है ।

विरह-विधुरा राधा के चित्र में कवि ने रूप-साम्य एवं धर्म-साम्य पर आश्रित उपमान रखे हैं —

अतिमलीन वृषभानु कुमारी
हरि स्रम-जल भींज्यौ उर-अंचल, तिहिं लालच न धुवावति सारी ॥
अधमुख रहति अनत नहिं चितवति, ज्यों गथ हारे थकित जुवारी ।
छूटे चिकुर बदन कुम्हिलाने, ज्यौं नलिनि हिमकर की मारी ॥[5]

विरह-दशा में अधोमुख बैठी राधा के लिए पूँजी हार बैठे जुआरी का उपमान धर्म-साम्य पर आधारित है तो बिखरे बाल और मुरझाये मुख के लिए उपमान स्वरूप 'हिमकर मारी नलिनी' रूप-साम्य की दृष्टि से सुन्दर है । सूर ने ऐसे

१. सूरसागर-सार, पृ. ८७
२. रामचरितमानस, बालकाण्ड, दोहा–२३२
३. वही, दोहा २२९–४
४. रामचरितमानस, बालकाण्ड, दोहा २३१–१
५. सूरसागर-सार, पृ. १८८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ही भावपूर्ण उपमान कई स्थानों पर प्रस्तुत किये हैं। विरह-दशा में निसि-बासर बरसते नयनों को दी गयी घन की उपमा कितनी भावपूर्ण है—

सखि इन नैननि तें घन हारे।
बिनहीं रितु बरषत निसि बासर, सदा मलिन दोउ तारे ॥
ऊरध स्वास समीर तेज अति, सुख अनेक द्रुम डारे।
बदन सदन करि बसे बचन खग, दुःख पावस के मारे ॥[१]

गोपियों के नेत्र बिना ऋतु के रात-दिन बरसते रहते हैं। नयनों के मेघ होने की कल्पना करते ही सूर की सौन्दर्य-दृष्टि के सामने वर्षाकाल का प्राकृतिक वातावरण उपस्थित हो जाता है। गोपियों का ऊर्ध्व श्वास ही समीरण का रूप धारण कर लेता है, जिसके झकझोरने से सुख के वृक्ष धराशायी हो जाते हैं। मुख से शब्द नहीं निकल पाते, वे पावस के त्रास से पक्षियों की तरह शरीर रूपी घोंसले में छिपे रहते हैं। शब्दों के लिए खग का उपमान कवि की मौलिक कल्पना है। नयन और घन के अन्तराल में छिपा लक्ष्यार्थ सौन्दर्यपूर्ण है। इस बिम्ब में कवि ने अमूर्त श्वास, सुख, वचन आदि को मूर्त रूप देने का प्रयत्न किया है।

सगुणोपासक भक्त कवियों ने विश्व-प्रकृति के प्रति अपनी तन्मयता का बहुत कम परिचय दिया है। यहाँ तक कि तुलसीदास भी स्वतन्त्र प्रकृति के अधिक बिम्ब नहीं दे पाये हैं। हाँ, उद्दीपनकारी प्रकृति के चित्र यत्र-तत्र देखे जा सकते हैं। बिम्बों की दृष्टि से सूरदास उल्लेखनीय हैं। उद्दीपनकारी रात का चित्र इस पद में अंकित है—

पिय बिनु नागिनी कारी रात।
जौ कहुँ जामिनि उवति जुन्हैया, डसि उलटि ह्वै जात।
जंत्र न फुरत मंत्र नहिं लागत, प्रीति सिरानी जात।
सूर स्याम बिनु बिकल बिरहिनी, मुरि-मुरि लहरैं खात ॥[२]

श्री कृष्ण के विरह में रात गोपियों को नागिन के समान डँसती है। विरह की रात अत्यन्त पीड़ा-जनक होती है। रात के लिए नागिन उपमान रूप-साम्य एवं प्रभाव-साम्य पर आधारित है।

सूर और तुलसी ने अमूर्त वस्तुओं, भावों को भी रूपायित कर बिम्ब-योजना के क्षेत्र में अद्भुत कलात्मकता का परिचय दिया है। वास्तव में अमूर्त वस्तुओं और भावों को रूप-चित्रों में अंकित करने में ही कवि की बिम्ब-निर्माण-पटुता छिपी हुई है। पुष्पवाटिका में राम के अलौकिक सौन्दर्य पर मुग्ध सीता जी की जड़ता का वर्णन देखिए—

१. सूरसागर-सार, पृ. १४२
२. वही, पृ. १४३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

थके नयन रघुपति छबि देखें। पलकन्हिहुँ परिहरीं निमेषें ।।
अधिक सनेहँ देह भै भोरी। सरद-ससिहिं जनु चितव चकोरी ।।
लोचन मग रामहि उर आनी। दीन्हे पलक कपाट सयानी ।।
जब सिय सखिन्ह प्रेमबस जानी। कहि न सकहिं कछु मन सकुचानी ।।[1]

रूपकों की संयोजना से तुलसीदास जी ने कहीं-कहीं विशेष प्रभावकारी चित्र प्रस्तुत किये हैं। निम्न पंक्तियों में मूर्त एवं अमूर्त वस्तुओं, भावों का ही नहीं, वर-याचना प्रसंग की सम्पूर्ण परिस्थितियों को दृश्यात्मक बनाने का सफल प्रयास किया गया है—

अस कहि कुटिल भई उठि ठाढ़ी। मानहुँ रोष तरंगिनि बाढ़ी ।।
पाप-पहार प्रकट भइ सोई। भरी क्रोध जल जाइ न जोई ।।
दोउ वर कूल, कठिन हठ धारा। भँवर कूबरी वचन प्रचारा ।।
ढाहत भूप रूप तरु मूला। चली विपत्ति वारिधि अनुकूला ।।[2]

इसी प्रसंग में राम को राजा बनाने के दशरथ के मनोरथ को वन, उससे उत्पन्न सुख को सुन्दर पक्षियों का समूह तथा उसे भंग करने के लिए उद्यत कैकेई को भीलनी और उसके वचनों को भयंकर बाज का अप्रस्तुत देकर शिकार सम्बन्धी बिम्ब इस प्रकार प्रस्तुत हुआ है—

भूप मनोरथ सुभग बनु सुख सुबिहंग समाजु।
भिल्लिनि जिमि छाड़न चहति बचनु भयंकरु बाजु ।।[3]

सगुण भक्त कवि भगवान् के भक्ति-रसामृत में तन्मय हो कविता लिखते थे, तब भी उनके काव्य में दार्शनिक चिन्तन का भी प्रचुर उपयोग हुआ है। माया के बन्धन में बंधे अन्धाधुन्ध नाचते जीव का साँगरूपक पर आधारित यह चित्रण पाठक पर अमिट प्रभाव डालता है और कवि के नृत्य सम्बन्धी सूक्ष्म-ज्ञान का परिचय देता है—

अब हौं नाच्यो बहुत गुपाल।
काम-क्रोध को पहिरि चोलना, कंठ विषय की माल।
महामोह के नूपुर बाजत, निन्दा-शब्द-रसाल।
भ्रम भर्यो मन भयौ पखावज, चलत असंगत चाल।
माया को कटि फेंटा बांध्यो, लोभ तिलक दियौ भाल।
कोटिक कला काछि दिखराई जल-थल सुधि नहिं काल।
सूरदास की सबै अविद्या दूरि करौ नन्दलाल ।।[4]

---

१. रामचरितमानस, बालकाण्ड, दोहा २३१–३/४
२. रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड, दोहा ३३–१/२
३. वही, दोहा २८
४. सूरसागर–सार, पृ. २२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

क्रमबद्धता एवं सुसंबद्धता इस बिम्ब की मौलिक विशेषताएँ हैं।

सूरदास जी ने अविद्या माया में फँसे जीव को वृक्ष की डाली पर बैठे पक्षी का बिम्ब दिया, जो शिकारी के बाण का लक्ष्य बना भयभीत बैठा है। वहाँ से उड़कर प्राण-रक्षा की बात वह सोच ही नहीं सकता क्योंकि ऊपर घात लगाये बाज बैठा है। दोनों ओर से असमंजस में बैठा पक्षी भगवान् का स्मरण करता है। इतने में एक सर्प शिकारी को डँसता है और उसके हाथ का बाण छूटकर बाज को लगता है। यह माया के वश में पड़े जीव की दशा तथा भगवद् स्मरण से उसके उद्धार का ही चित्र सामने नहीं रखता, अपितु बाज एवं शिकारी का लक्ष्य बने पक्षी की मुक्ति का कमनीय बिम्ब प्रस्तुत करता है।

अब कैं राखि लेहु भगवान।
हौं अनाथ बैठ्यो द्रुम-डरिया पारधि साधे बान।
ताके डर मैं भज्यौं चाहत, ऊपर ढुक्यौ सचान।
दुहुँ भांति दुख भयो आनि यह, कौन उबारै प्रान ?
सुमिरत ही अहि डस्यो पारधी, कर छूट्यौ संधान।
सूरदास सर लग्यौ सचानहिं, जय जय कृपा निधान ॥[1]

सूर ने वैकुंठ की बिम्ब-योजना की है। संसार को विषयरस-छीलर तथा वैकुंठ को मुक्ति-मुक्ताफल वाले समुद्र के रूप में चित्रित किया है। साँगरूपक पर आधारित यह बिम्ब पौराणिक कल्पना को भी उद्बुद्ध करता है। वैकुंठ रूपी सागर सनक एवं शिव-रूपी हंस, मुनि रूपी मीन से भरा हुआ तथा सूर्य-नक्षत्रों से प्रकाशित है। वहाँ विष्णु रूपी प्रफुल्लित कमल शोभित है और वहाँ वेद-ध्वनि का गुँजार सुनाई पड़ता है। वहाँ के हंस मुक्ति रूपी मुक्ताफल चुगते हैं तथा सुकृत रूपी अमृत-रस का पान करते हैं।[2]

इस प्रकार हम देखते हैं कि सगुण भक्त कवियों ने अपने भावों, विचारों को बिम्ब रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। भगवान् के सौन्दर्य की छटा अंकित कर जन-मानस को उसके प्रति आकृष्ट करने का उनका लक्ष्य था; साथ ही जनता को प्रबोध देकर मायिक संसार से विरत करने का भी उनका उद्देश्य था। इसके लिए उन्होंने अपने विचारों को बिम्ब रूप में सर्वसंवेद्य बनाया, जिसके लिए साधन रूप में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों, प्रतीकों, पौराणिक कल्पनाओं को अपनाया। सारांश यह कि सगुण भक्त कवियों के अधिकतर बिम्ब उपमा, उत्प्रेक्षा एवं रूपक अलंकारों पर आश्रित हैं या फिर प्रतीकात्मक हैं। तुलसी अपनी उपमा एवं रूपक के लिए प्रख्यात हैं।

---

१. सूरसागर-सार, पृ. २१
२. वही, पृ. २८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शृंगारी कवियों के बिम्ब

शृंगारी कवि 'तंत्रीनाद कवित्त रस सरस राग रतिरंग' को अपना आदर्श मानकर नायिका-भेद, नख-शिख वर्णन, हाव-भाव एवं चेष्टाओं पर विशेष ध्यान देते थे। उनके काव्य में रंजन की प्रवृत्ति थी। यहाँ तक कि शृंगारी कवि नारी के व्यक्तित्व को महत्व न देकर पर-नारीसंभोग की चिन्ता करते थे। इन कवियों के लिए प्रकृति काव्य-चमत्कार के लिए अनुकूल एक साधन मात्र रही है। उनके यहाँ प्रकृति की स्वतंत्र इयत्ता नहीं थी। प्रकृति को लेकर अलकृति का कार्य खूब हुआ। इस कारण वस्तु-परिगणनात्मक प्रकृति-चित्रण भले ही मिले, किन्तु प्रकृति का वास्तविक रूप यहाँ नहीं है। विषय और विषयी के तादात्म्य से उत्पन्न अनुभव या संवेदन का एक प्रकार से अभाव दिखाई देता है। दूसरे "रीति-कविता का मुख्य विषय शृंगार है और उसका वातावरण सर्वथा घरेलू है, अतएव स्वभावतः ही उसमें प्रकृति के चित्रों का विशेष स्थान नहीं है।"[१]

काव्य-कला की दृष्टि से शृंगारकाल एक प्रकार से रूढ़ एवं परंपराश्रित रहा। उसमें कल्पना के लिए अवकाश कम था। औपम्य मूलक अप्रस्तुतों तक ही उसकी गति रही। काव्य की इतिश्री स्थूल-सूक्ष्म रेखाओं के प्रत्यंकन तक सीमित रही। स्थूल सौन्दर्य के नाना पक्षों को रूपायित करने की दृष्टि से इस काल का महत्वपूर्ण स्थान अवश्य है और ऐसे रूप-चित्रण के लिए इन कवियों ने प्रकृति एवं सांस्कृतिक परिवेश के भीतर से नये अप्रस्तुतों का चयन भी किया है। इसलिए इस काल के बिम्ब मुख्य रूप से आलंकारिक या सज्जात्मक रहे।

शृंगारी कवियों में विद्यापति ने अपने स्थूल-रूप-सौन्दर्य के प्रत्यंकन में विशेष ख्याति प्राप्त की। वे विलास एवं यौवन के मादक क्षणों के कवि हैं। उन्होंने नारी-सौन्दर्य के प्रसंग में कामिनी की गजगति, अपांग वीक्षण, इन्द्रजाली पुष्प-बाण, चम्पे के फूलों की रस्सी जैसे बाहु-पाश, सुमधुर वचन और शरच्चन्द्र जैसे मुखमण्डल सब का चित्रण कर उसका काम-लोलुप रूप प्रस्तुत किया है—

गेलि कामिनि गजहु गामिनि बिहसि पलटि निहारी।
इन्द्रजालक कुसुम-सायक कुहकि भेल वर नारी।
जोरि भुज जुग मोरि बेढल ततहि बदन सुछन्द।
दाम-चमक काम पूजल जइ़इ सरदा चन्द।[२]

प्रस्तुत चित्रण में नायिका के बाह्य सौन्दर्य के साथ उसकी भाव-भंगिमाओं, कायिक चेष्टाओं का निरूपण मार्मिक है, जो रीतिकालीन कवि बिहारी के चित्रणों का

---

१. डॉ. नगेन्द्र—देव और उनकी कविता, पृ. १८८
२. विद्यापति पदावली, प्रेमप्रसंग, पृ. ९४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्मरण दिलाता है। साथ ही 'इन्द्रजाल' जैसे मिथ तथा 'कुसुम-सायक' जैसे पौराणिक बिम्बों से युक्त यह चित्रण प्रभावशाली है।

घनानंद की सुजान का सौन्दर्य मोहक है—

झलके अति सुन्दर आनन गौर, छके दृग राजत काननि ह्वै।
हँसि बोलनि में छवि-फूलन की बरषा उर ऊपर जाति है ह्वै।
लट लोल कपोल कलोल करै, कल कंठ बनी जलजावलि द्वै।
अंग अंग तरंग उठै दुति की, परिहै मनो रूप अवै धर च्वै ॥[1]

घनानंद के रूप-वर्णन में अंग-विशेष का वर्णन प्रायः मिलता है, समस्त अंग-प्रत्यंग को एकसाथ चित्रित करने की प्रवृत्ति उनमें नहीं है अर्थात् सामान्य से विशेष की प्रवृत्ति के कारण उनके बिम्ब काफी स्पष्ट एवं प्रभावकारी हैं। इसलिए आलंबन के सौन्दर्य-वर्णन से सम्बन्धित प्रत्येक छन्द एक नयी छवि लेकर आता है और प्रत्येक छन्द में कवि की तीव्र अनुभूति एवं दृष्टि छिपी हुई है। फलतः उसमें नवीनता, ताज़गी एवं सूक्ष्मता का गुण अनायास ही आ गया। नेत्रों पर उनके सबसे अधिक चित्र मिलते हैं। सुजान की वक्र भौंहों के हिलने, चपल होने, घुमावदार भौंहों के तनकर चमकने, तिरछापन, तीक्ष्णता, गतियुक्तता आदि से सम्बन्धित एक से एक सुन्दर चित्र उनके काव्य में प्राप्त होते हैं। भाषा की मूर्तिमत्ता ने उनके बिम्बों को स्पष्टता प्रदान की है। उनमें रीतिकालीन अन्य कवियों के समान अलंकरण की प्रवृत्ति दिखाई नहीं पड़ती। सुजान के नेत्र रूपी हाथ कटाक्ष-बाण चलाने में सिद्धहस्त हैं कि वे अपने निशान में अचूक हैं —

चलत सजीवन सुजान दृग हाथिन तैं
प्यारे अनियारी रुचि रखवारी वोट है।
जब जब आवै तब तब अति मन भावै
अहा कहा विषम कटाच्छ सर चोट है ॥[2]

गत्यात्मक सौन्दर्य के चित्रण में बिहारी सबसे आगे हैं और उनके सभी बिम्ब सज्जात्मक अधिक हैं। "उनके चित्रों में नक्काशी का प्राधान्य है—उनकी रेखाएँ पैनी और रंग जड़े हुए हैं। वे वस्तु-परक अधिक और भावपरक कम हैं।"[3]

सटपटाति-सी ससिमुखी, मुँह घूंघट पटु ढाँकि।
पावस झरसी झमकि के, गई झरोखा झाँकि ॥[4]

---

१. रसखान और घनानंद, पृ. ४१
२. वही, पृ. ५०
३. डॉ. नगेन्द्र—देव और उनकी कविता, पृ. १८९
४. बिहारी-बोधिनी, पृ. ३२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

बिहारी और देव दोनों ने अपने चित्रों में वर्ण-योजना का अद्भुत चमत्कार दिखाया है। श्रीकृष्ण के अधरों पर रखी वंशी होठ, दृष्टि और पीतांबर की छटा से इन्द्रधनुष की द्युति पाती है—

अधर धरत हरि के परत, ओठ डीठि पट जोति।
हरित बांस की बांसुरी, इंद्र धनुष सी होति ॥[१]

शृंगारी कवियों ने शृंगार के दोनों रूपों—संयोग एवं वियोगकी चेष्टाओं के मधुर चित्र अंकित किये हैं। इस दृष्टि से देव, बिहारी एवं घनानंद विशेष उल्लेखनीय हैं। देव ने शृंगार के आलंबन एवं आश्रय की चेष्टाओं के जो चित्र खींचे हैं उनमें अन्य कवियों की तुलना में भावान्विति अधिक है। बिहारी में भावान्विति अपेक्षाकृत क्षीण हो, उन्होंने प्रकृत्या संयोग शृंगार में विशेष अनुरक्त होने के कारण कुछ लीलाओं के मोहक चित्र दिये हैं।

बतरस-लालच लाल की, मुरली धरी लुकाय।
सौंह करै, भौंहन हँसे, देन कहै, नटि जाय ॥[२]

बिहारी ने प्रेम सम्बन्धी भावों को संतुलित कर और थोड़ी-बहुत स्वतंत्र कल्पना का आश्रय लेकर चित्र में अनुभूत्यात्मक सघनता लाने पर विशेष ध्यान दिया है। किन्तु घनानंद में प्रेम, सौन्दर्य एवं वेदना के चित्र अधिक हैं। "लहकती हुई पुरवैया, भटके हुए बादल, चमकती हुई बिजली, वर्षा के प्रसूनों की सुगंधि, चतुर्दिक घिरी हुई घटाएँ, कलापियों की कूक, शीतल समीर, बिजली की कौंध, टूटती हुई उल्काएँ, प्यासे चातक, उन्मत्त मयूर, गरजते हुए बलाहक, हँसती हुई बिजली, चंद्रमारहित अंध आकाश आदि का वर्णन कर कवि ने इनके द्वारा विरह की उद्दीप्ति दिखलाई है।"[३] यही नहीं, घनानंद ने विरह-दशा को मूर्तित करने के लिए उसे होली के समान कल्पित किया है, जहाँ नेत्र रात-दिन अँसू गिराकर पिचक.री के समान चलते ही रहते हैं। कवि ने विरह के वैवर्ण्य की ओर भी संकेत किया है—

पीरी परी देहँ छीनी राजत सनेह भीनी
कीनो है अनंग अंग अंग रंग बोरी सी।
नैन पिचकारी ज्यों चल्योई करैं रैन दिन
बगराए बारनि फिरति झकझोरी सी ॥
कहाँ लौ बखानौं घनआनंद दुहेली दसा
फागमयी भई जान प्यारी वह भोरी सी।
तिहारे निहारे बिन प्राननि करत होरा
विरह अँगारनि मगरि हिय होरी सी ॥[४]

---

१. बिहारी-बोधिनी, पृ. ११
२. वही, पृ. १५४
३. डॉ. कृष्णचंद्र वर्मा—घनानंद, पृ. १२२
४. रसखान और घनानंद, पृ. ५७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अमूर्त भावनाओं को मूर्त रूप देना कल्पनाशक्ति एवं सूक्ष्मचिन्तन के अधीन है। शृंगारी कवियों में देव और घनानंद अमूर्त भावनाओं को मूर्तित करने की ओर विशेष सजग रहे। देव के सम्बन्ध में डॉ. नगेन्द्र जी का कथन है—"अंतर्जगत् की प्रवृत्तियों से घनिष्ठ परिचय होने के कारण अमूर्त उपादानों का भी, उन्होंने स्थान-स्थान पर सुन्दर प्रयोग किया है, उधर धर्म के स्थान पर धर्मी का प्रयोग कर, तथा भावनाओं अथवा जड़ वस्तुओं पर मानव-गुणों का आरोप कर उस बन्धी हुई सीमा के भीतर भी वैचित्र्य विकास की सफल चेष्टा की है।"[१] घनानंद ने भी इस ओर सफल प्रयोग किया है—

तेरे हित हैली अनुराग बाग बेली करि,
मुरली गरज झूमि झूमि सरसतु है।[२]

मध्यकालीन बिम्ब-योजना पर संक्षेप में प्रकाश डाला गया है। इससे पता चलता है कि इस क्षेत्र में कबीर, जायसी, सूर, तुलसी, देव, बिहारी, घनानंद आदि की देन महत्वपूर्ण है। फिर भी मध्यकालीन बिम्ब-योजना का क्षेत्र सीमित है। प्रायः वस्तुपरक स्थूल बिम्बों के प्रति कवि-दृष्टि सजग रही। अमूर्त वस्तुओं, भावनाओं को रूपायित करने की ओर कवियों ने विशेष लगाव नहीं दिखाया है। साथ ही बिम्ब-विधान प्रायः उपमान-योजना पर आधारित है और उपमान-योजना का क्षेत्र भी सीमित है, उसमें अतिशयता के लिए स्थान नहीं रहा। बहुधा कवियों ने परम्परागत रूढ़ उपमानों द्वारा अपनी कला-कुशलता प्रकट की। इस कारण इस युग की उपमान-योजना सामान्य व्यक्ति की पहुँच में होती थी। बिम्ब-योजना के लिए कवि लोग विशेष प्रयत्न-शील नहीं हैं। अधिकतर वस्तु-बिम्ब भी या तो वर्णनात्मक हैं या फिर आलंकारिक ही। नये अदृश्य पदार्थों के प्रदर्शन के लिए आवश्यक नयी कल्पना-शक्ति एवं नयी सूझ का उनमें एक तरह से अभाव ही दिखाई देता है।

आधुनिक काल

हिन्दी काव्य का आधुनिक काल बहुविध प्रवृत्तियों, प्रयोगों का समय रहा है। इस काल में आकर हिन्दी कविता अनेक धाराओं में प्रवाहित हुई। अंग्रेज़ी शिक्षा-दीक्षा एवं संस्कृति ने भारतीय जनता को पुरानी रूढ़ि, रीति-नीति को त्याग कर बाह्य संसार के सपर्क में आने के लिए वातायन खोल दिया। दूसरे राजनैतिक गतिविधियों, सांस्कृतिक संस्थाओं एवं सुधारवादी आन्दोलनों ने भारतीयों में नव-जागरण की शंख-ध्वनि बजायी और परिणामस्वरूप हम में व्यापक दृष्टिकोण आ गया। जीवन के इस परिवर्तन ने कला और साहित्य में भी अद्भुत परिवर्तन किया। रीतिकालीन शृंगारिक कविता सड़ी-गंदी गलियों

---

१. डॉ. नगेन्द्र—देव और उनकी कविता, पृ. १९०
२. रसखान और घनानंद, पृ. ११७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

से निकली थी, जिससे अब दुर्गन्ध निकलने लगी थी। अतः कवियों का प्रथम ध्यान कविता को शृंगारिक कारा से उन्मुक्त कर जीवन-सापेक्ष एवं समयानुकूल बनाने की ओर गया। फलतः राजनैतिक समस्याओं, सामाजिक विषमताओं, एवं सांस्कृतिक पतन के चित्र उसमें स्थान पाने लगे। देश-प्रेम एवं राष्ट्रीयता के स्वर भी मुखरित होने लगे।

काव्य की शिल्प-विधि की दृष्टि से देखा जाए तो यह कहना पड़ेगा कि जनता में मातृभाषा के प्रति अनुराग और महत्ता उत्पन्न हुई। हिन्दी को अदालती भाषा के रूप में भी स्थान मिला। यह अनुभव होने लगा कि बोलचाल की भाषा और काव्य-भाषा में एकरूपता होनी चाहिए। खड़ी बोली जब तक बोलचाल की भाषा रही, उसे साहित्यिक गरिमा से युक्त करने का प्रयास नहीं हुआ था। आधुनिक काल के प्रारंभिक दिनों में काव्य की भाषा ब्रजभाषा को अपदस्थ कर उसके स्थान पर खड़ी बोली को प्रतिष्ठित करने का प्रयास हुआ, जो आगे चलकर द्विवेदी-युग में आकर अपना उचित सम्मान पा सकी। परंपरागत उपमानों, मुहावरों, लोकोक्तियों, विशेषणों में नये भावों को वहन करने की क्षमता नहीं रही। अतः नूतन भावों की सफल अभिव्यक्ति के लिए सक्षम भाषा का रूप अपनाने की आवश्यकता थी। पुरानी छंद-योजना के स्थान पर नये छन्दों को आत्मसात करने तथा काव्य को बोझिल अलंकारों से मुक्त करने की ओर भी आधुनिक युग में ध्यान दिया गया। इसके अतिरिक्त चिर काल से उपेक्षित प्रकृति को नये रूप-सौन्दर्य के साथ देखने एवं सजाने का कार्य इस काल की मौलिक विशेषता है।

आगे आधुनिक काल के काव्य में बिम्ब-योजना का जो विकास हुआ, उस पर विचार किया जाएगा।

भारतेन्दु-युग और बिम्ब

रीतिकालीन कविता मुख्य रूप से राज्याश्रय में विकसित हुई थी। इसलिए कवियों को अपने विलासी आश्रयदाता राजाओं की चित्तवृत्ति के मनोनुकूल शृंगारिक पथ का अनुसरण करना पड़ा था। फलतः उसमें प्रेम के एकपक्षीय स्वरूप की झाँकी मिलती है। उसमें प्रकृति के प्रति उपेक्षा भाव प्रकट हुआ, किन्तु भारतेन्दु और उनके सहयोगी कवि स्वतन्त्र थे। वे भाव-क्रान्ति लेकर साहित्य-क्षेत्र में अवतरित हुए थे। उन्होंने जीवन और साहित्य में निकट सम्बन्ध लाने का प्रयत्न किया। उनमें वर्तमान नव-जागृति को चित्रित कर जनचेतना को प्रेरित करने की बलवती इच्छा कार्य कर रही थी। उनकी दृष्टि यथार्थवादी थी। उन्होंने तत्कालीन सामाजिक, राजनैतिक तथा धार्मिक सुधारवादी तत्वों को काव्य का विषय बनाया। फिर भी वे परम्परा से पूर्णतया विछिन्न नहीं हो सके। स्वयं भारतेन्दु ने भक्तिकालीन एवं रीतिकालीन प्रवृत्तियों को प्रश्रय देकर कविताएँ लिखीं। तात्पर्य यह कि भारतेन्दु-युग विषय की दृष्टि

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

से वह संधिकाल था, जिसने परम्परागत प्रवृत्तियों तथा नवीन प्रवृत्तियों में श्रृंखला का काम किया।

भारतेन्दु-मंडल के कवियों ने भाषा में परिवर्तन का प्रयास किया, किन्तु वे पूर्ण सफल नहीं हुए। खड़ी बोली इस काल में पूर्णतया साहित्यिक भाषा नहीं बन सकी। इस काल में भी ब्रजभाषा में कविता होती रही। खड़ी बोली में कुछ कविताएँ लिखी गयीं, किन्तु उनकी भाषा परिमार्जित नहीं थी। नये भावों को चित्रित करने के लिए जिस नूतन शैली की अपेक्षा थी उसके लिए समय की आवश्यकता थी। इसलिए भारतेन्दुकालीन काव्याभिव्यक्ति में कलात्मकता पर अधिक बल नहीं दिया गया। भारतेन्दु-युग आधुनिकता का सूचक मात्र था।[1] शुक्लजी ने भी इस बात की ओर संकेत किया है कि भारतेन्दुजी ने हिन्दी काव्य को केवल नये-नये विषयों की ओर ही उन्मुख किया, उसके भीतर किसी नवीन विधान या प्रणाली का सूत्रपात नहीं किया।[2]

भारतेन्दु-युग के काव्य-बिम्बों पर विचार करते समय यह विस्मृत नहीं किया जा सकता कि इस युग में विषय और उपादानों का क्षेत्र विस्तृत हुआ था। इस युग में कवियों ने सामाजिक समस्याओं, देश-प्रेम, राष्ट्रीयता, स्वभाषा प्रेम, आदि को विषय रूप में ग्रहण किया। रूपविन्यास में मी परिवर्तन लक्षित होने लगे। नये प्रतीक और नूतन अप्रस्तुत होने लगे। "चूँकि इस काल की अधिकांश खड़ी बोली की कविताएँ एक विशेष प्रकार के सामाजिक उद्देश्य से परिचालित होकर लिखी गयी थीं, अतः उनकी शैली सीधी-सरल और अभिधात्मक अधिक हुई, लाक्षणिक अथवा ध्वन्यात्मक बहुत कम।"[3] वस्तुओं को भावना के रंगीन चित्रों में आंकने का प्रयास इस काल में नहीं हुआ। बात यह थी कि स्वच्छन्द भावना और कल्पना की उड़ान के लिए इस युग में अवसर नहीं मिला और खड़ी बोली की प्रारम्भिक अवस्था होने के कारण उसमें अभिव्यंजना भी सक्षम नहीं बन सकी। इसलिए इस काल में केवल स्थूल रेखाचित्र ही अधिक मिलते हैं।

भारतेन्दु नर-प्रकृति के कवि थे। वे बाह्य प्रकृति की अनंतरूपता के साथ हृदय का सामंजस्य नहीं पा सके।[4] इसलिए उनके प्रकृति-चित्रण भी परम्परागत एवं अप्रस्तुत-योजना के अन्तर्गत आते हैं। वे प्रकृति के लक्षित बिम्ब के स्थान पर उपलक्षित बिम्ब ही दे सके। ये अप्रस्तुत भी अर्थ की नयी भावभूमि

१. डॉ. केसरी नारायण शुक्ल —आधुनिक काव्यधारा, पृ. ९१
२. रामचन्द्र शुक्ल — हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ. ५४३
३. डॉ. केदारनाथसिंह —आधुनिक हिन्दी कविता में बिम्ब-विधान, पृ. १०१
४. रामचन्द्र शुक्ल —हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ. ५४३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

और अनुभूति के नये संदर्भों से सम्बन्ध बराबर स्थापित नहीं कर सके।[१] उन्होंने कुछ अप्रस्तुत पुराण तथा संस्कृति से भी ग्रहण किये।

भारतेन्दु-युग के कवियों ने प्रेम, सुख-दुःख, आशा-निराशा, विरह-मिलन, कसक, लज्जा, झिझक, घबराहट, शंका, असूया, निर्वेद आदि संचारी भावों तथा वियोग की अवस्थाओं का चित्रण किया है। किन्तु आवेगहीन कल्पना के कारण भावचित्र भी शाब्दिक रेखाचित्र की कोटि से अधिक आगे नहीं बढ़ सके।

आगे भारतेन्दु के कुछ बिम्बों के उदाहरण दिये जाएँगे। भारतेन्दु ने रीतिकालीन प्रभाव से नायिका-भेद, नायक-भेद, आदि का चित्रण किया है। उन्होंने राधा का रूप-वर्णन करते हुए वदन, नासिका, नेत्र, अधर, दंत, कपोल, वेणी, बाहु, कुच, जंघा, कटि तथा एड़ी के लिए क्रमशः कमल, अतसि पुष्प, कमलदल, बिम्बाफल, कुन्द, गुलाब, फूल की माला, मृणाल-नाल, द्वैफल, रंभा, गूलर का फूल तथा नारंगी के अप्रस्तुत किये हैं, जो सबके सब प्रकृति से गृहीत हैं। यहाँ आलंकारिकता के भार से बिम्ब का भावपक्ष दब-सा गया है।

> नागरी रूप-लता सी सोहै।
> कमल सो बदन पल्लव से कर पद देखत ही मन मोहै।
> अतसि-कुसुम सी बनी नासिका, जलज-पत्र से नयन।
> बिम्ब से अधर, कुन्द दंतावलि, मदन बान सी सयन।
> जानु बनी रम्भा की खंम्भा शोभा होत अपार।
> गूलर फूल सरिस कटि राजत कविजन लेहु विचारि।[२]

प्राकृतिक बिम्बों के प्रसंग में उनका यमुना-वर्णन उल्लेखनीय है।

> तरनि-तनूजा तट तमाल तरुवर बहु छाये।
> झुके फूल सों जल-परसनहित मनहुँ सुहाये।
> किधौं मुकुर में लखत उझकि सब निज-निज सोभा।
> कै प्रनवत जल जानि परम पावन फल लोभा।[३]

यमुना के तट के तालवृक्षों का मानवीकरण किया गया है और संदेह तथा उत्प्रेक्षा अलंकारों की योजना की गयी है। आलंकारिकता के मोह के कारण यमुना तथा उसके तट के ताल-वृक्षों का कोई प्रभाव पाठक पर नहीं पड़ता। हाँ 'लखत उझकि' गत्यात्मकता लाता है। किन्तु सन्देह अलंकार गत्यात्मक बिम्ब के प्रभाव को भी नष्ट कर देता है। कवि ने एक जगह यमुना को कामातुरा नारी-रूप

---

१. डॉ. केदारनाथसिंह—आधुनिक हिन्दी कविता में बिम्ब-विधान, पृ. १०६
२. भारतेन्दु ग्रंथावली, पृ. ४४३
३. भारतेन्दु नाटकावली, प्रथम भाग, पृ. २४४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

में चित्रित किया है।[१] उनके वसन्त के स्वागतार्थ खड़े वन के वृक्षों और लतओं का वर्णन द्रष्टव्य है—

नवल वन फूली द्रुम बेली
लहलह लहकहिं, मह मह महकहिं, मधुर सुगन्धहिं रेली।
प्रकृति नवोढ़ा सजे खरी मनु भूषन बसन बनाई।
आंचल उड़त बात-बस फहरत प्रेम धुजा लहराई
गूँजहि भंवर, विहंगम डोलहिं बोलहिं प्रकृति बधाई...[२]

प्रस्तुत अवतरण की द्वितीय पंक्ति में ऐन्द्रिय संवेदनाओं के द्वारा चित्र को प्रभावजनक बनाया गया है। आगे की पंक्तियों में प्रकृति का नवोढ़ा-रूप कल्पित किया गया है। हवा में उड़ते आंचल को देखकर प्रेम-ध्वजा की कल्पना की गयी है और इसीसे मिलती-जुलती कल्पना एक अन्य स्थान पर भी की गयी है, जहाँ वे कहते हैं कि शिरीष-गंध को लेकर पवन चलता है और कामिनी जन्न के वस्त्रों को उड़ा ले जाता है मानो काम-ध्वजा फहराता हो।[३] संध्याकालीन वातावरण का वर्णन करते हुए दिनमणि को 'मानिक-गोलक' का उपमान दिया गया है।[४] कबि ने एकाध स्थानों पर मौलिक उद्‌भावनाएँ भी प्रकट की हैं, जैसे प्रातः समीरण को 'सुन्दर कपोत' तथा 'स्नेही का परस' कहना नूतन कल्पना का परिचायक है।[५]

द्विवेदीकालीन कविता में बिम्ब

भारतेन्दु-युगीन काव्य-दृष्टि इने-गिने विषयों पर ही पड़ी थी, किन्तु महावीरप्रसाद द्विवेदी के सतत प्रयत्नों से अनेक विषय कविता में समाविष्ट हुए। इस काल में सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक एवं देशभक्ति-परक कविताएँ लिखी गयीं। कवियों का ध्यान प्रकृति-सौन्दर्य पर गया और श्रीधर पाठक, रामचन्द्र शुक्ल, रामनरेश त्रिपाठी, मैथिलीशरण गुप्त, आदि की रचनाओं में स्वतन्त्र प्रकृति के अनुपम चित्र अंकित्त हुए। कवियों ने भारतीय संस्कृति एवं पौराणिक आख्यानों के प्रति विशेष आग्रह दिखाया और पौराणिक पात्रों पर आख्यानात्मक कविताएँ बड़ी मात्रा में लिखी गईं।

इस काल में ब्रजभाषा के स्थान पर राष्ट्र की लोकभाषा खड़ी बोली विकसित हुई;और उसके विकास में नागरी प्रचारिणी सभा तथा सरस्वती ने

१. भारतेन्दु ग्रंथावली, पृ. ७५१
२. भारतेन्दु नाटकावली, प्रथम भाग, पृ. ५७४
३. वही, द्वितीय भाग, पृ. १३१
४. वही, पृ. १४३
५. भारतेन्दु ग्रंथावली, पृ. ६८७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अपूर्व योगदान दिया। कवियों ने नये छंद और नयी शैली अपनाई और खड़ी बोली को अभिव्यंजना की दृष्टि से अधिक सक्षम बनाने का प्रयत्न किया। इन प्रयत्नों के परिणामस्वरूप द्विवेदीकालीन कविता प्रारम्भ में इतिवृत्तात्मक, शुष्क एवं नीरस होते हुए भी अंतिम दिनों में भाव-प्रधान बन गई। कला भी धीरे-धीरे प्रतीकात्मक एवं लाक्षणिक भंगिमा को अपनाती गई। इस काल की कविता में अनुप्रास और स्वरमैत्री पर आधारित संगीतात्मकता पर भी बल दिया गया। अभिव्यंजना की नयी प्रणाली अंतिम दिनों में गुप्तजी, मुकुटधर पांडेय, रामनरेश त्रिपाठी जैसे कुछ कवियों में प्रकट हुई।

छायावाद-काल में बिम्ब-निर्माण का जो विकसित रूप देखा जाता है, उसका बीज इसी काल में पड़ा था। "छायावादी काव्य में शिल्प-विधि के जो तत्व मिलते हैं उनकी पृष्ठभूमि वस्तुतः द्विवेदी-युग ही है। प्रतीक-शैली, बिम्ब और अलंकरण का जो रूप छायावाद के आगमन के ही साथ कविता में स्पष्ट हुआ उसके बीज द्विवेदी-युगीन रचनाओं में ही पड़ने आरम्भ हो गये हैं।..."[1] फिर भी सामान्य रूप से द्विवेदी-कालीन बिम्बों के मूलस्रोत अधिकतर वही पौराणिक आख्यान, सामाजिक-सांस्कृतिक वातावरण और प्राकृतिक परिवेश रहा, जो भारतेन्दु-युग में था। इस काल में भी ऐन्द्रिय बिम्ब कम, अप्रस्तुत-विधान पर आधारित बिम्ब अधिक हैं। आगे द्विवेदीकालीन कुछ बिम्बों के रूप प्रस्तुत किये जाएँगे।

द्विवेदी कालीन बिम्ब अधिकतर दृश्यात्मक हैं, किन्तु उनमें अन्य ऐन्द्रिय बिम्बों का भी अभाव नहीं है। चाक्षुष बिम्बों की अवतारणा में गुप्तजी सबसे आगे हैं। 'साकेत' के द्वादश सर्ग में आया साकेत-नगरी का चित्र दृश्य बिम्ब का सुन्दर उदाहरण है—

नगरी थी निस्तब्ध पड़ी क्षणदा छाया में,
भुला रहे थे स्वप्न हमें अपनी माया में।
जीवन-मरण समान भाव से जूझ-जूझकर,
ठहरे पिछले पहर स्वयं थे समझ बूझकर।
पुरी पार्श्व में पड़ी हुई थी सरयू ऐसी,
स्वयं उसी के तीर हंस-माला थी जैसी।[2]

गुप्तजी गन्ध एवं ध्वनि संवेदनाओं के द्वारा बिम्ब-निर्माण में प्रयत्नशील हुए—

मम रहा था केतकी का गन्ध चारों ओर
झिल्ली झंकार यही मेरे मन भाई थी।[3]

---

१. डॉ. कैलास वाजपेयी—आधुनिक हिन्दी कविता में शिल्प, पृ. १२६
२. मैथिलीशरण गुप्त—साकेत, द्वादश सर्ग, ४६१
३. वही, पृ. २९६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कवि ने माण्डवी के गुंजार-गन्ध का भी अनुभव किया है।[1] 'प्रियप्रवास' में रंगों के चित्रण की ओर ध्यान गया है, किन्तु कवि केवल रंगों की नामावली ही प्रस्तुत कर सके हैं।

अश्वेत ऊदे अरुणाभ बैंगनी
हरे अधीरी सित पीत सन्दली
विचित्र वेशी बहु अन्य वर्ण के
विहंग से थी लसिता वनस्थली।[2]

ध्वनि सम्बन्धी चित्रण प्रियप्रवास एवं साकेत में भी देखे जा सकते हैं।[3]

द्विवेदी-काल में मानव सम्बन्धी अनेक चित्रण प्राप्त होते हैं। प्रियप्रवास में ककुभ शोभित गोरज बीच से निकलते श्रीकृष्ण का रूप अत्यन्त प्रभावकारी है।[4] कवि ने उनके अंग-प्रत्यंग को रूपायित किया है। किन्तु राधा के रूप-चित्रण में केवल परम्परागत अप्रस्तुत अपनाये गये,[5] जिससे कोई विशेष मौलिकता का आभास नहीं मिलता। उसकी तुलना में अरुण पट पहने आह्लाद में खड़ी उर्मिला का चित्रण गुप्तजी की कल्पना एवं कला की झलक देता है।[6] छायावादी कवियों ने मूर्त के लिए अमूर्त तथा अमूर्त के लिए मूर्त बिम्ब प्रस्तुत करने का जो सफल प्रयोग किया, उसका बीज रामनरेश त्रिपाठी के उस चित्रण में मिलता है, जहाँ पथिक की पत्नी के लिए मूर्त एवं अमूर्त दोनों प्रकार के उपमानों का उपयोग किया है—

उसी समय कमनीय एक स्वर्गीय किरन-सी वामा
कवि के स्वप्न समान, विश्व के विस्मय-सी अभिरामा॥
सिन्धु गोद में लय से पहिले तरंगिता सरिता-सी
आकर चकित हुई तट पर प्रियतम दर्शन की प्यासी॥[7]

इस चित्रण में द्विवेदी कालीन दृश्य बिम्ब की सूक्ष्म परिणति देखी जा सकती है। कवि ने केवल बाह्य सौन्दर्य का ही वर्णन नहीं किया, उसकी व्यग्रता, चंचलता एवं विस्मय का भी द्योतन किया है।

द्विवेदीकालीन मानवीय बिम्बों में पौराणिक कल्पना का सबसे बड़ा हाथ है। प्रियप्रवास, साकेत, पंचवटी, जयद्रथवध आदि काव्यों की घटनाएँ एवं पात्र

---

१. मैथिलीशरण गुप्त— साकेत, पृ. ४५३
२. अयोध्यासिंह उपाध्याय—प्रियप्रवास, पृ. १११
३. वही, पृ. २ और साकेत, पृ. ३०२
४. अयोध्यासिंह उपाध्याय—प्रियप्रवास, पृ. ३–५
५. अयोध्यासिंह उपाध्याय—प्रियप्रवास, चतुर्थ सर्ग, पृ. ३६
६. मैथिलीशरण गुप्त—साकेत, प्रथम सर्ग, पृ. २६
७. रामनरेश त्रिपाठी—पथिक, पृ. १५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सब कुछ पौराणिक हैं। किन्तु कवियों ने मानव के सामाजिक परिवेश पर भी ध्यान दिया है। गुप्तजी का 'किसान' खण्डकाव्य दलित, मर्दित एवं पीड़ित भारतीय किसानों की दुर्दशा का जीता-जागता चित्र है। विदेशियों से आक्रान्त किसान की दुर्गति का कितना करुणापूर्ण चित्र है—

वह देखो किसकी ठोकर से किसकी तिल्ली टूटी,
धरती लाल हुई शोणित से हाय खोपड़ी फूटी।[1]

यहाँ 'किसकी ठोकर' और 'किसकी तिल्ली' कितना भावपूर्ण है! फिजी में यह घटना नित्य होती है।

द्विवेदी कालीन कवियों ने रूप-चित्र को भाव-व्यंजक बनाने का प्रयास किया है। इस बात में गुप्तजी अन्य कवियों से आगे हैं। 'विमाता बन गयी आँधी भयावह'[2] में राजा दशरथ के शान्तिपूर्ण जीवन में भयंकर उत्पात एवं हलचल मचानेवाली कैकेई के भयंकर रूप के साथ उसके ईर्ष्या-क्रोध आदि भावों की भी सफल व्यंजना हुई है। वास्तव में गुप्तजी ने 'आँधी' शब्द के द्वारा पूरे बिम्ब की अवतारणा की है। ऐसे ही वैधव्य से पीड़ित, मलिन एवं कृश हुई कैकेई के लिए 'वैधव्य तुषारावृत्ता यथा विधुलेखा'[3] का अप्रस्तुत रूप-साम्य पर आधारित है और कैकेई की मानसिक व्यथा एवं ग्लानि को भी प्रकट करता है। निम्न पंक्तियों में कवि का सगुणोपासक रूप और उर्मिला की धार्मिकता एवं पवित्र भावना प्रकट होती है। दुखविधुरा उर्मिला के लिए 'आरती' का उपमान सादृश्य पर आधारित है—

मानस-मन्दिर में सती, पति की प्रतिमा थाप,
जलती सी उस विरह में, बनी आरती आप।[4]

द्विवेदी कालीन कवियों में भाव-चित्रण में रत्नाकर का स्थान सर्वोपरि है। वे भावों में तन्मय हो जाते हैं। 'उद्धव-शतक' में भाव-चित्रण अपनी पराकाष्ठा पर है। उनके भाव-चित्र सजीव हैं। विरह सम्बन्धी व्यथा को अपने सभी अनुभावों के साथ यहाँ निम्न पंक्तियों में दिखाया गया है—

बिरह-बिथा की कथा अकथ अथाह महा
कहत बनै न जो प्रवीन सुकबीनि सौं।
कहै रतनाकर बुझावन लागे ज्यों कान्ह
ऊधौ कौं कहन हेत ब्रज़ जुवतीनि सौं।।

१. मैथिलीशरण गुप्त—किसान, पृ. ३७
२. वही, साकेत, पृ. ७४
३. वही, पृ. २४७
४. वही, पृ. २६८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गहबरि आयौ गरौ भभरि अचानक त्यों
प्रेम परयो चपल चुचाइ पुतरीनि सौं ।।
नैंकु कहीं बैननि, अनेक कही नैननि सौं,
रही सही सोऊ कहि दीनी हिचिकीनि सौं ।।[1]

द्विवेदीकालीन कवियों ने आलम्बन रूप में प्रकृति-चित्रण किया है। विशेष कलात्मकता के अभाव में भी ये चित्र प्रस्तुत का यथातथ्य चित्र उपस्थित करते हैं। ये चित्र अधिकतर वर्णनात्मक एवं वस्तुगत हैं। प्राचीन उपमानों का सहारा लिया गया है। इनके प्रकृति-चित्रण की एक विशेषता सामान्य से हटकर विशेष की ओर जाने का उपक्रम है। प्रकृति-चित्रण में यह विशेषीकरण श्रीधर पाठक की 'काश्मीर सुषमा' तथा रामनरेश त्रिपाठी जी की कविताओं में पाया जाता है। 'काश्मीर सुषमा' में काश्मीर का प्राकृतिक चित्रण है तो 'पथिक' में केरल के सामुद्रिक तट तथा नारियल वृक्षों के चित्र।

'पंचवटी' में प्रकृति के कमनीय चित्र हैं। चाँदनी रात,[2] गोदावरी तट[3] आदि का वर्णन पर्याप्त सुन्दर है। 'साकेत' में सूर्य का एक गत्यात्मक चित्र अंकित है। प्रातः काल होते ही तारे बुझ जाते हैं और सूर्योदय होता है। किन्तु कवि ने नीलाकाश को सरोवर, सूर्य को हंस और नक्षत्रों को मोती के अप्रस्तुत देकर यह कल्पना की है कि सूर्य रूपी हंस नीलाकाश रूपी सरोवर में उतर कर तारक-मौक्तिक चुग गया—

सखि, नील नभस्सर में उतरा
यह हंस अहा! तरता तरता,
अब तारक मौक्तिक शेष नहीं,
निकला जिनको चरता चरता।[4]

साँगरूपक के द्वारा कवि ने यह बिम्ब अवतरित किया है, किन्तु यहाँ 'चरना' क्रिया हंस के प्रसंग में अनुपयुक्त है क्योंकि 'चरना' क्रिया बैल आदि के सम्बन्ध में ठीक है, किन्तु हंस मोती चुगता है।

गुप्तजी ने सामाजिक जीवन को आधार बनाकर भी प्राकृतिक चित्रण किया है। मृत्यु सम्बन्धी घटना का आधार लेकर रात के अंत का एक बिम्ब इस प्रकार प्रस्तुत है—

---

१. रत्नाकर, पहला भाग, 'उद्धव शतक', पृ. १२०
२. मैथिलीशरण गुप्त—पंचवटी, पृ. ५
३. वही, पृ. १३
४. मैथिलीशरण गुप्त—साकेत, नवम सर्ग, पृ. २८६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सूर्य का यद्यपि नहीं आना हुआ, परन्तु समझो रात का जाना हुआ।
क्योंकि उसके अंग पीले पड़ चले, रम्य रत्नाभरण ढीले पड़ चले।[१]

मृत्यु के साथ ही मनुष्य-शरीर पीला पड़ जाता है और शरीर के रत्नाभरण ढीले पड़ जाते हैं। प्रातः काल के होते ही रात समाप्त होती है और चारों ओर अंधकार-मिश्रित सुनहला रंग छा जाता है। साथ ही आकाश के तारे बुझने लगते हैं। अतः सादृश्य को लेकर रात के अन्त का मृत्यु के रूप में वर्णन हुआ है। कल्पना सुन्दर है, किन्तु उस सुन्दर कल्पना को रूपायित करने के लिए आवश्यक कलात्मकता का अभाव है। सूर्योदय का एक भव्य चित्रण रामनरेश त्रिपाठी के पथिक काव्य में अंकित हुआ है, जहाँ जलनिधि-तल पर उठते दिनकर-बिम्ब की कल्पना कमला के कंचन-मंदिर के कान्त कँगूरे के रूप में की गयी है—

निकल रहा है जलनिधि-तल पर दिनकर-बिम्ब अधूरा
कमला के कंचन मंदिर का मानो कान्त कँगूरा[२]।

यहाँ बिम्ब उत्प्रेक्षाश्रित होता हुआ भी रंग एवं रूप-संवेदना के कारण काफी आकर्षक है।

इस काल के कवियों ने मानवेतर कई प्रकार के पशु-पक्षियों, कीट-पतंगों के रूप एवं व्याणर का वर्णन किया है। फिर भी मुख्य रूप से इनका उपयोग अप्रस्तुत के रूप में ही हुआ है। इसलिए इनसे सम्बन्धित जितने उपलक्षित बिम्ब प्राप्त होते हैं उतने लक्षित बिम्ब नहीं। 'साकेत' में राम के राज्याभिषेक की बात सुनकर क्रुद्ध हो अपने रत्नाभरणों, श्रृंगारों को तोड़कर छिन्न-भिन्न करती कैकेई के लिए फूल दलकर अपने को भूल घूमती मत्तकरिणी का अप्रस्तुत'[३] भूमि में लेट जब-तब हुंकार छोड़ती कैकेई के लिए फूत्कार करती चुटीली फणिनी का उपमान[४] तथा कोपगृह में पड़ी हुई कैकेई के लिए 'सोती सिंहनी' का उपमान[५] इस प्रसंग में उदाहरणस्वरूप प्रस्तुत किये जा सकते हैं। इसी प्रकार किरणजाल को फैलाते रवि के लिए तन्तुवाय तथा उसके पद-प्रहार से पीड़ित मही के लिए 'भिन्ना रही मक्खी'[६] का उपलक्षित बिम्ब द्रष्टव्य है।

प्रकृति पर मानवीय भावनाओं और क्रियाओं का आरोप करके भी कई

१. मैथिलीशरण गुप्त—साकेत, प्रथम सर्ग, पृ. २४
२. रामनरेश त्रिपाठी—पथिक, पृ. १३
३. मैथिलीशरण गुप्त—साकेत, द्वितीय सर्ग, पृ. ५३
४. वही, पृ. ५५
५. वही, पृ. ६०
६. वही, नवम सर्ग, पृ. २८७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

चित्र इस काल में प्रस्तुत हुए हैं। श्रीधर पाठक ने अपनी 'काश्मीर सुषमा' में प्रकृति पर मानवीय चेतना का आरोप किया है—

प्रकृति यहाँ एकांत बैठि निज रूप सँवारति,
पल-पल पलटति वेश छनिक छवि छिन-छिन धारति।
विमल अम्बु-सर-मुकुरन महँ मुख बिम्ब निहारति,
अपनी छवि पै मौरि आप ही तन-मन वारति।[१]

यहाँ प्रकृति-सुन्दरी के एकांत में अपना रूप संवारने, पल-पल में अपना वेश बदलकर विभिन्न प्रकार की साज-सज्जा से अलंकृत होने, निर्मल जलयुक्त सरोवर रूपी दर्पण में अपने प्रतिबिम्ब को देखने तथा रूप-गर्विता बनकर अपने सौन्दर्य पर तन-मन वारने का चित्र है। 'पंचवटी' में उषा का मानवीकरण सुन्दर है—

इसी समय पौ फटी पूर्व में, पलटा प्रकृति पटी का रंग,
किरण-कण्टकों से श्यामाम्बर फटा, दिवा के दमके अंग।
कुछ कुछ अरुण, सुनहली कुछ कुछ, प्राची की अब भूषा थी,
पंचवटी की कुटी खोलकर खड़ी स्वयं क्या ऊषा थी![२]

अरुण सध्या को आगे ठेल, विधु की बेंदी से भाल सजा कुछ नये खेल देखने के लिए उपस्थित होती यामिनी का चित्रण भी मोहक है—

अरुण संध्या को आगे ठेल, देखने को कुछ नूतन खेल,
सजे बिधु की बेंदी से भाल, यामिनी आ पहुँची तत्काल।[३]

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि द्विवेदीकाल में बिम्ब की दृष्टि से पर्याप्त विकास हुआ। मानव तथा प्रकृति के नाना बिम्ब इस काल की विशेषता है। रूप-चित्रों के साथ ही भाव-चित्रों में भी कवि-लोग अपनी कुशलता दिखाने लग गये थे। प्रकृति के मानवीकरण की ओर इस युग में ध्यान दिया गया। मूर्त के लिए अमूर्त एवं अमूर्त के लिए मूर्त अप्रस्तुतों को चुनने की ओर भी कवि-रुचि सजग रही है। विशेषण-विपर्यय, शब्द-ध्वनन आदि सौन्दर्य-विधान के नये उपकरणों का प्रयोग इस काल में हुआ। बिम्ब-विधान के विकसित रूप गुप्तजी, रामनरेश त्रिपाठीजी, रत्नाकरजी आदि के काव्यों में देखने को मिलते हैं। 'साकेत' में आकर गुप्तजी की कला ने प्रौढ़ रूप ग्रहण किया और वे नये-नये बिम्ब प्रस्तुत कर सके। इतना मानना ही पड़ेगा कि "जहाँ कहीं तुकबन्दी या चमत्कार-प्रियता के कारण कला के सहज

१. श्रीधर पाठक—काश्मीर सुषमा, पृ. १
२. मैथिलीशरण गुप्त—पंचवटी, पृ. ३७
३. वही, साकेत, द्वितीय सर्ग, पृ. ६०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

रूप में विकृति आ गई है, वहाँ कवि की असामर्थ्य एवं असावधानता स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है।"[१]

छायावादी काव्य में बिम्ब-योजना

छायावाद हिन्दी का स्वर्णयुग है, जिसने साहित्य में रोमानी प्रेम तथा सौन्दर्य-चेतना एवं नवीन अभिव्यजना-कौशल से एक नवयुग का समारम्भ किया। छायावादी सौन्दर्य-चेतना नारी-चित्रण एवं प्रकृति-चित्रण में देखी जा सकती है। दोनों में कवि ऊँची से ऊँची सुन्दरता देखने के अभिलाषी हैं। छायावादी नारी सामन्ती संस्कृति की भोग्या न होकर अतीन्द्रिय सौन्दर्य की मूर्ति है, उसके रोम-रोम से कवियों का विशेष प्रेम है। इस कारण छायावादी कविता में नारी के स्थूल वासनात्मक सौन्दर्य का प्रायः अभाव-सा है। उसके स्थान पर भाव-सौन्दर्य का उद्‌घाटन इस काल में किया गया। छायावादी प्रेम लौकिक एवं अलौकिक दोनों धरातल पर बहा है, दोनों को कुछ स्थलों पर पृथक् करना कठिन है। उनका लौकिक प्रेम मानव तथा प्रकृति की ओर अधिक उन्मुख हुआ। "छायावाद में कवि प्रकृति को इतना महत्व देता है कि 'प्रकृति-प्रेम-रस' एक स्वतन्त्र रस बनता हुआ दिखाई देता है।"[२] छायावाद में प्रकृति के तीन रूप गृहीत हुए—१) भावाश्रित प्रस्तुत रूप, २) प्रतीकात्मक अप्रस्तुत रूप और ३) रहस्यात्मक रूप। इस काल में प्रकृति को अपने कोमल एवं प्रांजल रूप में प्रस्तुत कर तथा उसमें मानवीय व्यापारों का दिग्दर्शन कराकर उसके प्रति हमारे मन में रागात्मक सम्बन्ध स्थापित किया गया। "अब कवियों के लिए प्रकृति जड़ या मृतक वस्तु नहीं रह गई, उसके अन्दर भावुकता ने एक संवेदनशील हृदय टटोल दिया, जिसका प्रत्येक स्पंदन मानव-हृदय की धड़कन का प्रत्युत्तर देने लगा।"[३] इस प्रकार प्रकृति के असंख्य मानवी चित्र इस काल में बने। छायावादी कवियों ने प्रकृति के नाना अप्रस्तुत ग्रहण कर अपने भावों को सजाया है। ये अप्रस्तुत कल्पनाश्रित होकर भी सरसता लाते हैं। उनके ये अप्रस्तुत नवीन, रंगीन एवं विचित्र हैं। इस युग के कवियों ने प्रकृति के सूक्ष्म सौन्दर्य में व्यक्त एक परोक्ष सत्ता का आभास भी पाया है।[४] वह सत्ता न सगुण है, न निर्गुण ही, वह एक आभास मात्र है। कवि विश्वात्मा और विश्व-जीवन की खोज में हैं और उनमें सृष्टि के रहस्यों को समझने की जिज्ञासा भी है। उन्होंने दार्शनिक दृष्टि से अद्वैतवाद एवं सर्वात्मवाद का मोहक संदेश सुनाया है।

---

१. डॉ. द्वारिकाप्रसाद सक्सेना—साकेत में काव्य, संस्कृति और दर्शन, पृ. २७६
२. डॉ. विश्वंभरनाथ उपाध्याय–हिन्दी कविता : सिद्धांत और समीक्षा, पृ. २५५
३. डॉ. नगेन्द्र—सुमित्रानन्दन पन्त, पृ. ४६
४. महादेवी वर्मा—आधुनिक कवि-१, अपने दृष्टिकोण से, पृ. १०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

छायावाद जहाँ एक भावगत आन्दोलन है, वहाँ वह एक कलात्मक आन्दोलन भी है। उसने लाक्षणिकता, चित्रात्मकता, प्रतीक-योजना एवं कोमल पदावली को लेकर कलात्मक सौन्दर्य भर दिया। छायावादी कवि किसी वस्तु का वर्णन-मात्र नहीं करते, उसको अनुभूति से संवलित कर मूर्त चित्रों में प्रस्तुत करते हैं। वे स्थूल वस्तुओं से हटकर मन की सूक्ष्म अनुभूतियों के चितेरे थे और इन अनुभूतियों की अभिव्यक्ति की प्रेषणीयता के लिए सम्मूर्तन एवं चित्रात्मकता लाने की आवश्यकता थी। छायावादी चित्रों को रसमय एवं प्रभावपूर्ण बनाने में कल्पना का सबसे बड़ा हाथ रहा है। कल्पना का अविरल प्रवाह एवं सघन आवेग इस काव्य की विशेषता है और कवियों की अतिवैयक्तिकता ने चित्र-निर्माण में योग दिया है, क्योंकि चित्र विशेष का बनता है, सामान्य का नहीं। वैयक्तिकता एवं कल्पना के अतिरिक्त नूतन अप्रस्तुत-विधान, प्रतीक-योजना, भाव-व्यंजक अलंकार-योजना तथा सक्षम भाषा ने उनके बिम्बों को प्रेषणीय एवं हृद्य बनाया है। उनके अप्रस्तुत आलंकारिक न होकर संवेदनात्मक अधिक हैं, जो वस्तुओं को मूर्त ही नहीं करते, इन्द्रियों को झंकृत भी करते हैं। फलतः सूक्ष्म भाव भी मन के विषय न रहकर नेत्र के विषय बनते हैं। उनके अलंकार भावोत्कर्ष में सहायक, कल्पना के पोषक एवं उसे सजीव बनाने के लिए होते हैं। उनके पास संमूर्तन के लिए उपयुक्त शब्द-भण्डार की कमी नहीं है।

ऐन्द्रिय बिम्ब

ऐन्द्रिय संवेद्यता की दृष्टि से छायावादी चित्रण-कला सम्पन्न है। कवियों ने अपने चित्रों को किसी न किसी संवेदना से संयुक्त करके अवतरित किया है। चाक्षुष बिम्बों में रंगों के प्रति कवि की सूक्ष्म चेतना का दर्शन होता है। छायावादी कवि रंगों के नाम-निर्देश मात्र से संतुष्ट नहीं होते, किन्तु उन रंगों के घोल से एक सजीव मूर्ति स्थापित करते हैं। प्रसाद, निराला, महादेवी तथा रामकुमार वर्मा में से प्रसाद की रंग-संवेदना अधिक सूक्ष्म है। प्रसाद का प्रिय रंग नील है, जिसका प्रयोग वे बार-बार करते हैं। जैसे—

(१) फटा हुआ था नील वसन क्या
ओ यौवन की मतवाली।[१]

(२) मसृण गांधार देश के, नील
रोमबाले मेषों के चर्म[२]

इसके अतिरिक्त नीलोज्वल, अरुण नील, हेमाभ, अरुण, सुरधनुरंजित, मरकत, रजताभ, सुनहला, गौरहरा आदि अनेक रंगों का प्रयोग उनके काव्य में मिल सकता है, किन्तु निराला में रंगों की विविधता नहीं मिलती। महादेवीजी गुलाबी

१. जयशंकर प्रसाद—कामायनी, पृ. ४०
२. वही, पृ. ४६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मरकत, कनक, सुनहले, रजत, नीलम, अरुण आदि रंगों के प्रति विशेष मोह दिखाती हैं। उनकी निम्न पंक्तियों में रंगों का मिश्रग देखने योग्य है—

कनक से दिन मोती-सी रात,
सुनहली साँझ गुलाबी प्रात,
मिटाता रंगता बारम्बार
कौन जग का वह चित्राधार।[१]

प्रसादजी इंदीवर की गंध (का. ६५), अंचल की सुरभि (का. ८), काया की मृदु गंध (लहर, ५९) आदि की संवेदना से चिरपरिचित हैं। महादेवी जी को वेदना की ज्वाला में भी घनसार की सुरभि का अनुभव होता है—

आज ज्वाला से बरसता
क्यों मधुर घनसार सुरभित ?[२]

यह गंध-संवेदना निराला में अत्यन्त सूक्ष्म है। बनबेला की सुगन्धि उनके मन में प्रेयसी के अलक की गंध-स्मृति जगाती है।[३] प्रसाद जी ने चातक, मयूर, मेघ, लहर, भृंग, झींगुर, वर्षा आदि के ध्वनि-चित्र अंकित किये हैं। निराला ध्वनिचित्र में किसी भी अन्य कवि से कम नहीं हैं।

गरजो, हे मन्द्र, वज्र स्वर,
भर्राते भूधर – भूधर
झरझर झरझर धारा झर
पल्लव-पल्लव पर जीवन।[४]

उनका 'बादल-राग' ध्वनि-चित्र का विशेष उदाहरण प्रस्तुत करता है।[५]

छायावादी कविता में स्पृश्य एवं आस्वाद्य बिम्ब भी अधिक मात्रा में मिलते हैं। प्रसादजी ने मृत्यु को हिमानी-सा शीतल बताकर उसको स्पृश्य बनाया है—

मृत्यु, अरी चिर निद्रे ! तेरा
अंक हिमानी – सा शीतल।[६]

महादेवी के तितली के नवकुमार गीली केसर झूम झूम पीते हैं[७] तो संसार रजत

१. महादेवी वर्मा—आधुनिक कवि–१, पृ. २५
२. वही, पृ. ५२
३. सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'—अनामिका, पृ. ८७
४. वही, अपरा, पृ. ३७
५. वही, परिमल, पृ. १४९–१५०
६. जयशंकर प्रसाद—कामायनी, पृ. १८
७. महादेवी वर्मा—आधुनिक कवि–१, पृ. २४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

करों की मृदुल तूलिका से सुकुमार तुहिन बिन्दु लेकर कलियों पर करुण कथा लिखता है ।[१] निराला के काव्य में सूक्ष्म स्पर्श-संवेदना के अनेक उदाहरण मिल सकते हैं । यही क्यों निम्न पंक्तियाँ स्पर्श, गन्ध तथा आस्वाद्य संवेदनाओं की मिश्रित अनुभूति मानसिक धरातल तक ले जाकर प्रतिष्ठित कर देती हैं—

विश्व के प्रणयि-प्रणयिनियों का
हार-उर गेह ? —
गति सहज मन्द
यह कहाँ—कहाँ वामालक-चुम्बित पुलक-गन्ध ![२]

प्रसादजी का मनु समस्त जगत् के रूप, रस, गन्ध, स्पर्श आदि का स्वाद के स्तर पर अनुभव करता है—

पीता हूँ, हाँ मैं पीता हूँ
यह स्पर्श, रूप, रस गन्ध भरा ।[३]

इस प्रसंग में छायावादी गत्यात्मक दृश्य बिम्बों का भी उल्लेख करना आवश्यक है । इन कवियों ने गत्यात्मक स्थितियों, व्यापारों के चित्रण में अपनी कला-कुशलता का परिचय दिया है । प्रातःकालीन वायु पागल है, जो अपनी चंचलता के कारण लताओं-पौधों की नोकों पर ढुलकते तुहिन कणों को नीचे गिराता हुआ अनजान बनकर चला जाता है—

झटक जाता था पागल वात
धूलि में तुहिन कणों के हार ।[४]

महादेवी लहरों के बिछलन पर मचल पड़ती भोली किरणों का गत्यात्मक बिम्ब अंकित करती हैं

लहरों की बिछलन पर जब
मचल पड़ती किरणें भोली ।[५]

किरणें भोली हैं और संभलकर नहीं चलतीं, किन्तु उन्हें चलना है, लहरों की बिछलन पर । फिसलती राहों पर मचलती जाती नादान बालिकाओं के रूप में किरणें हमारे नेत्र के सम्मुख अनायास घूमने लगती हैं । इस प्रकार महादेवी की कविताओं में गत्यात्मक बिम्बों की प्रधानता है । इन गत्यात्मक बिम्बों की विशेषता की ओर संकेत करते हुए डा. शम्भुनाथ सिंह ने ठीक ही कहा है—

---

१. महादेवी वर्मा—आधुनिक कवि-१, पृ. २
२. सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'—अपरा, पृ. ५५
३. जयशंकर प्रसाद—कामायनी, पृ. ६९
४. महादेवी वर्मा—आधुनिक कवि – १, पृ. १
५. वही, पृ. ४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

"महादेवी वर्मा की कविताओं में संश्लिष्ट चित्रण से अधिक फिल्म जैसी गत्यात्मक चित्रमाला दिखलायी पड़ती है, जिनमें चटकीले रंगों के साथ विषाद का रंग मिल जाने से धूप-छाँही चित्रों की योजना हो जाती है। ये इतने जल्दी-जल्दी बदलते हैं कि ठहर कर किसी एक को देखने का अवकाश पाठक को नहीं मिलता। इसी कारण महादेवी के चित्र अस्पष्ट और अपरिस्फुट प्रतीत होते हैं।"[1]

निरालाजी भीकर एवं वेगोद्बोधक गति-बिम्ब के निर्माण में किसी भी छायावादी कवि से आगे हैं। बात यह है कि निराला पौरुष एवं ओज के कवि हैं। 'राम की शक्ति-पूजा' में पराजय भाव से राम के नयनों से चू पड़ते अश्रु को देखकर क्रोध में अट्टहास भरते आकाश की ओर लपकते हनुमान की गति एवं वेग को मूर्तित करनेवाला चित्र सशक्त एवं प्रभावकारी है—

शत घूर्णावर्त, तरंग-भंग, उठते पहाड़,
जल-राशि राशि जल पर चढ़ता खाता पछाड़,
तोड़ता बंध-प्रतिबन्ध धरा, हो स्फीत वक्ष
दिग्विजय-अर्थ प्रतिपल समर्थ बढ़ता समक्ष,
शत-वायु-वेग-बल, डुबा अतल में देश-भाव,
जल-राशि, विपुल मथ अनिल में महारव
वज्रांग तेजघन बना पवन को, महाकाश,
पहुँचा, एकादश रुद्र क्षुब्ध कर अट्टहास।[2]

मानव-बिम्ब

छायावादी कवियों ने मानव सम्बन्धी विविध बिम्ब अंकित किये हैं। बात यह है कि छायावादी काव्य का मूल स्वर मानवतावाद है और वह मानव को विश्वमानवतावाद को सुदृढ पकड़कर परस्पर विरोधी तत्वों के एकत्व में परमशान्ति खोजने का सन्देश देता है। इसलिए मानव और उसकी परिस्थितियों, समस्याओं के प्रति यह काव्य सजग रहा। उसी को लेकर छायावादी कवि कभी दार्शनिक बनता है, कभी प्रेमी, कभी सौन्दर्य-द्रष्टा, कभी विध्वंसक और कभी क्रान्तिकारी। अतः छायावादी काव्य का केन्द्र बिन्दु मानव है।

इस काव्य में नर-नारी के रूप-सौन्दर्य के एक से एक सुन्दर चित्र मिलते हैं, भले ही अधिकता नारी-सौन्दर्य चित्र की है। प्रसादजी ने मनु के रूप-सौन्दर्य का चित्रण करते हुए लिखा है कि उसके शरीर का प्रत्येक अंग दृढ़ मांस-पेशियों से बना हुआ था, जिनमें से अपरिमेय वीर्य ऊर्ज्वस्वित हो उठता था। उसकी

---

१. डॉ. शंभुनाथसिंह–छायावाद-युग, पृ. २५६
२. सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'–अपरा, पृ. ४७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शिराएँ स्फीत थीं और उनमें स्वस्थ रक्त का संचार हो रहा था। उसका वदन चिंता-कातर था, किन्तु उसमें अपार पौरुष भी झलकता था और हृदय में उपेक्षामय यौवन का मधुमय स्रोत प्रवाहित हो रहा था।[1] प्रसादजी की अद्भुत कला-कुशलता नारी-सौन्दर्य के चित्रण में मिलती है। उनकी श्रद्धा रूप-सौन्दर्य की कमनीय मूर्ति है। हृदय की बाह्य उदार अनुकृति जैसी उसकी लंबी काया थी, जो मधु-पवन-क्रीड़ित छोटे से सालवृक्ष के समान थी। वह सौरभ संयुक्त थी। उसके शरीर पर गांधार देश के नील रोमवाले मेषों के मसृण चर्म पड़े हुए थे और उस नील परिधान के बीच से उसका मृदुल अधखुला अंग दिखाई देता था मानो नील मेघ-वन के बीच में बिजली के गुलाबी फूल खिले हुए हों—

नील परिधान बीच सुकुमार
खुल रहा मृदुल अधखुला अंग
खिला हो ज्यों बिजली का फूल
मेघ-वन बीच गुलाबी रंग।[2]

प्रस्तुत अवतरण में प्रसादजी की मिश्रित रंग-संवेदना तथा कलात्मकता का स्पष्ट आभास मिलता है। श्रद्धा के मुख को देखकर यह शंका प्रकट की गयी है कि इन्द्रनील पर्वत को फोड़कर ज्वालामुखी धधक रही है

या कि, नव इन्द्रनील लघु श्रृंग
फोडकर धधक रही हो कांत,
एक लघु ज्वालामुखी अचेत
माधवी रजनी में अश्रांत।[3]

इस बिम्ब की प्रशंसा में दिनकरजी का कथन है—"इस उत्प्रेक्षा में श्रृंग को नव एवं लघु कहकर तथा ज्वालामुखी को कान्त, नवीन और अचेत बताकर उसने वह्निशिखा की कर्कशता हर ली और उसे युवती नारी की उपमा के योग्य बना दिया है।"[4] कुल-मिलाकर श्रद्धा का उदात्त बिम्ब अंकित हुआ है।

निराला ने बिना अप्रस्तुत के भिक्षुक का स्पष्ट एवं यथार्थ रूप-चित्रण किया है। भिक्षुक दो टूक कलेजे के करता पछताता पथ पर आता है। उसके पेट-पीठ दोनों मिलकर एक हैं और वह लाठी टेक कर चल रहा है। उसकी झोली फटी-पुरानी है। उसके साथ दो बच्चे भी हैं। वे बाएँ हाथ से अपने पेट को मलते हैं और दाहिना हाथ दया-दृष्टि पाने के लिए आगे बढ़ाये हुए हैं। भूख-प्यास के कारण उनके ओंठ सूखे हुए हैं। वे कभी सड़क के किनारे खड़े

१. जयशंकर प्रसाद—कामायनी, पृ. ४
२. वही, कामायनी, श्रद्धा सर्ग, पृ. ४६
३. वही, कामायनी, श्रद्धा सर्ग, पृ. ४७
४. रामधारीसिंह दिनकर—पंत, प्रसाद और मैथिलीशरण, पृ. ६६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

होकर जूठी पत्तल चाटते हैं, उनसे पत्तल झपट लेने को कुत्ते अड़े हुए हैं। कवि ने भिक्षुक की दीनता, असहायता एवं करुणामय स्थिति को मूर्त कर दिया है।[1] निराला के नारी-चित्रण भी बहुधा स्थूल एवं मांसल हैं। शूर्पणखा के नख-शिख वर्णन में मूर्ति-विधान की अपूर्व क्षमता है, क्योंकि कवि ने अधिकतर उपमान मूर्त ही रखे हैं, जिससे मांसलता आ गयी है—

हारे हैं सारे नेत्र नेत्रों को हेर-हेर,—
विश्व भर को मदोन्मत्त करने की मादकता
भरी है विधाता ने इन्हीं दोनों नेत्रों में।
मीन-मदन फाँसने की वंशी-सी विचित्र नासा,—
फूल दल-तुल्य कोमल लाल ये कपोल गोल, —
चिबुक चारु और हँसी बिजली सी,—
योजन-गंध-पुष्प जैसा प्यारा यह मुख मण्डल,—
फैलते पराग दिङ्मण्डल आमोदित कर, —
खिंच आते भौंरे प्यारे।
देख यह कपोत कंठ
बाहु-वल्ली कर-सरोज
उन्नत उरोज पीन क्षीण कटि
नितंब भार—चरण सुकुमार—
गति मंद-मंद,
छूट जाता धैर्य ऋषि-मुनियों का,
देवों—भोगियों की तो बात ही निराली है।[2]

निराला का यह नारी-चित्र अपनी रूप-रेखा में स्पष्ट है और सौंदर्य बहुत ही आकर्षक है। पर यह हमें रीतिकालीन नख-शिख का स्मरण दिलाता है।

छायावादी कवि सम्पूर्ण शारीरिक वर्णनों की एकरसता में रुचि नहीं रखते हैं। वास्तव में उन्हें शारीरिक वर्णनों में भी विशेष अंगों का चित्र उतारना अधिक प्रिय लगता है। 'बिखरी अलकें ज्यों तर्क जाल', 'विश्व-मुकुट-सा उज्ज्वलतम शशिखंड सदृश था स्पष्ट भाल, 'दो पद्म पलाश चषक से दृग',[3] काली जंजीर, नीलम की प्याली,[4] नीलम की नाव, काला पानी बेला सी है अंजन-रेखा काली,[5] आदि इसके प्रमाण हैं। महादेवी ने प्रिय के विरह में आँसू-भरे नेत्र का बिम्ब इस प्रकार अंकित किया है—

१. सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'—अपरा, पृ. ६७
२. निराला – परिमल, पंचवटी प्रसंग, पृ. २२८
३. जयशंकर प्रसाद – कामायनी, इडा सर्ग, पृ. १६८
४. वही, आँसू, पृ. २१
५. वही, पृ. २२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

नयन की नीलम तुला पर मोतियों से प्यार तोला,
कर रहा व्यापार कब से मृत्यु से यह प्राण भोला ।[१]

छायावादी कवियों ने सामाजिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, पौराणिक, आर्थिक आदि परिवेश में मानव-चित्रों की अवतारणा की है। महाकवि निराला भारतीय सामाजिक रूढ़ियों, अंधविश्वासों तथा परंपराओं के कटु आलोचक रहे और उनके प्रति उनका आक्रोश अत्यन्त प्रबल रहा। 'विधवा' कविता में भारतीय समाज में विधवा नारी की जो दुर्गति होती जा रही है, उसका चित्रण किया है। भारतीय समाज ने विधवा को लांछित एवं अपमानित किया है, यहाँ तक कि उसका दर्शन तक निषिद्ध है। उसकी दीनता एवं हीनता, निराश्रितता एवं असंबलता का चित्र इन पंक्तियों में प्रस्तुत है—

वह इष्ट देव के मंदिर की पूजा-सी
वह दीप-शिखा-सी शान्त, भाव में लीन
वह क्रूर-काल ताण्डव की स्मृति-रेखा-सी,
वह टूटे तरु की छटी-लता-सी दीन
दलित भारत की ही विधवा है।[२]

कवि ने 'टूटे तरु की छटी-लता' उपमान के द्वारा विधवा की हीनता एवं कारुणिकता की ओर संकेत किया है तो उसकी पवित्रता को दर्शाने के लिए 'मंदिर की पूजा' तथा 'दीप-शिखा' के उपमान दिये हैं। वैसे ही मूर्त विधवा को मूर्त एवं अमूर्त उपमानों के द्वारा बिम्बात्मक भी बनाया है।

प्रसादजी की अशोक की चिन्ता,[३] शेरसिंह का शस्त्र समर्पण,[४] निराला की 'छत्रपति शिवाजी का पत्र,'[५] रामकुमार वर्मा की 'चित्तौड की चिता' (काव्य) आदि ऐतिहासिक पात्रों और घटनाओं का स्मरण दिलाती हैं। इनमें ऐतिहासिक बिम्बों के प्रति कवि का आग्रह स्पष्ट है।

प्रसाद और निराला भारतीय संस्कृति के उपासक एवं पुजारी हैं। उसकी गरिमा के प्रशंसक एवं गायक हैं। भारतीय संस्कृति के प्रति इस गाढ अनुराग ने उनके काव्यों में कई सांस्कृतिक बिम्बों को जन्म दिया है। देखा जाए तो प्रसादजी के सर्वश्रेष्ठ बिम्ब सांस्कृतिक कोटि के हैं। प्रसाद जी की 'आँसू' की नायिका भारतीय संस्कृति की उपज है और कवि ने उसका जो रूप-विधान किया है वह भारतीय सांस्कृतिक उपादानों को लेकर हुआ है—

---

१. महादेवी वर्मा–आधुनिक कवि-१, पृ. ८५
२. निराला–अपरा, पृ. ५७
३. प्रसाद–लहर, पृ. ४६
४. वही, पृ. ५१
५. निराला–अपरा, पृ. ७५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शशिमुख पर घूँघट डाले
अंचल में दीप छिपाये
जीवन की गोधूलि में
कौतूहल से तुम आये ।[१]

घूँघट भारतीय नारी के पातिव्रत्य एवं कुलीनता का प्रतीक है । नायिका अपने मुख-चन्द्र को घूँघट में छिपाये आई थी । संध्याकाल में दीप जलाना भारतीय संस्कृति में पली नारी की धार्मिकता का अंग है । फिर स्त्रियाँ दीप को अंचल की ओट किये हवा से बुझने से बचाती हैं । नायिका अंचल में दीप छिपाये आयी थी । इस प्रकार नारी का एक सांस्कृतिक चित्रण हमें मुग्ध करता है । वैसे ही निराला, महादेवी तथा रामकुमार वर्मा भी सांस्कृतिक बिम्बों के समर्थ कलाकार हैं ।

सभी छायावादी कवियों ने पौराणिक कल्पनाओं, घटनाओं और पात्रों को काव्य का आधार बनाया है । इस काल के मुख्य चित्रों में पौराणिक तत्वों का विशेष हाथ है । प्रसाद जी की 'कामायनी' की कथा पौराणिक प्रबन्धात्मक बिम्ब है । निराला जी ने अवतार पुरुषों, देवी-देवताओं को लेकर पौराणिक चित्रों की भव्य योजना की है । 'राम की शक्ति पूजा' अपने-आप में एक सफल पौराणिक बिम्ब है । रामकुमार वर्मा के 'एकलव्य' के पात्र और घटनाएँ महाभारत-कालीन हैं और महाभारतीय पौराणिक कथा की स्मृति दिलाते हैं । इस प्रकार पौराणिक लक्षित बिम्ब इन काव्यों में सहज ही प्राप्त होते हैं । यही नहीं कई पौराणिक घटनाओं को लेकर इन कवियों ने उपलक्षित बिम्ब-योजना भी की है । एक उदाहरण प्रस्तुत किया जा रहा है, जहाँ ग्लानिग्रस्त इडा को राहुग्रसित शशि-लेखा के रूप में चित्रित किया गया है—

पीछे मुड़ श्रद्धा ने देखा,
वह इड़ा मलिन छवि की रेखा,
ज्यों राहु-ग्रस्त-सी शशि लेखा
जिस पर विषाद की विष रेखा ।[२]

निराला के काव्य में आर्थिक बिम्ब बड़ी मात्रा में पाये जाते हैं । स्वयं ही अभावग्रस्त जीवन की चक्की में पिसने के कारण, निराला की सहानुभूति अभाव-पीड़ित मानवता के प्रति उमड़ती रही । उनकी 'भिक्षुक'[३] कविता में आँसुओं की घूँट पीकर रह जाते भिक्षुक का मर्मभेदी चित्रण है तो 'वह तोड़ती पत्थर' कविता में इलाहाबाद के पथ पर झुलसाती हुई लू में गुरु हथौड़ा हाथ में लिये पत्थर तोड़ती मजदूरनी का कारुणिक चित्र है ।[४]

१. जयशंकर प्रसाद—आँसू, पृ. १९
२. जयशंकर प्रसाद—कामायनी, दर्शन सर्ग, पृ. २३६
३. सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला—अपरा, पृ. ६७ ४. वही, पृ. २९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सम-सामयिक परिस्थितियों की ओर संकेत कामायनी में मिलता है। यंत्र-युग, वैज्ञानिक प्रगति एवं उससे बुद्धिवाद की अति से उत्पन्न मानव-असंतोष एव अशान्ति का वर्णन कामायनी की विशेषता है।

प्रकृति-बिम्ब

प्रकृति के प्रति छायावादी कवियों की तन्मयता का उल्लेख पहले हो चुका है। यहाँ कवियों के कुछ प्रकृति-चित्रों का उल्लेख किया जाएगा। प्रसाद जी ने सूर्योदय, संध्या, निशीथ, वसन्त की संध्या, वसन्त का पवन, पतझड़, तमाल, देवदारु, माधवी, जवाकुसुम, कमल, मालती-मुकुल, कदम्ब, सिरिस सुमन, बुलबुल, राजहंस, खंजन, चातक, समुद्र, आकाश, पहाड़ सब प्रकार की जड़-चेतन वस्तुओं के कोमल एवं उग्र रूपों के चित्र अंकित किये हैं। निराला जी के प्रकृति-चित्रण सीमित क्षेत्र को अपने भीतर समेटते हैं। वे मुख्यत: वस्तुओं और ऋतुओं के कवि हैं। महादेवी में प्रकृति के स्वतन्त्र चित्रण कम हैं। उनकी प्रकृति बहुधा दुखात्मक स्थितियों, व्यापारों के उपमानस्वरूप आती है। रामकुमार वर्मा ने प्रकृति के स्वतन्त्र चित्रण कम किये हैं। प्रकृति के चेतन रूप ने ही उन्हें अधिक आकृष्ट किया है। प्रसाद जी ने कामायनी के 'चिन्ता' नामक सर्ग में प्रलय-काल का जो चित्र अंकित किया है, वह प्रकृति के भयानक रूप का उत्कृष्ट उदाहरण है। उसमें "प्राकृतिक शक्तियों के आकुंचन-विकुंचन, प्राकृतिक पदार्थों के आलोड़न-विलोड़न, भयंकर मेघों के गर्जन-तर्जन, करका-क्रन्दन, पंचभूत के भैरव मिश्रण, जलधि-लहरियों के आरोहण-अवरोहण आदि का ऐसा चित्र अंकित किया गया है, जिसमें भयानक रूपों के दर्शन के साथ-साथ उनकी हृदय को कंपा देनेवाली ध्वनियों को भी स्पष्ट सुना जा सकता है।"[1] 'आनन्द' सर्ग में पर्वतघाटी का रमणीय दृश्य मन को हठात् मोहित करता है। मानसरोवर सुखदायक एवं निराला है, जिसका चित्र देखते ही बनता है—

मरकत की वेदी पर ज्यों
रक्खा हीरे का पानी;
छोटा-सा मुकुर प्रकृति का
या सोयी राका रजनी।[2]

कवि की सूक्ष्म रंग-संवेदना, सुनियंत्रित शब्द-योजना तथा औचित्यपूर्ण अलंकार-योजना चित्र को आकर्षक बना देती है। ऐसे ही उल्टे लटके सोमरहित इन्द्रनील मणि निर्मित महाचषक के रूप में तारामण्डित नीलाकाश की कल्पना केवल

---

१. डॉ. द्वारिकाप्रसाद सक्सेना—कामायनी में काव्य, संस्कृति और दर्शन, पृ. १५१

२. जयशंकर प्रसाद—कामायनी, आनन्द सर्ग, पृ. २८४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रसादजी ही कर सकते हैं ।[१]

कवि प्रकृति का मानवीकरण कर तथा उसमें अपने ही भावों का सन्निवेश कर प्रकृति के प्रति अपना प्रगाढ़ भाव दिखाते हैं । सभी छायावादी कवियों ने न्यूनाधिक मानवीकरण के सफल प्रयोग किये हैं और प्रकृति के सजीव रूप प्रस्तुत किये हैं । निराला ने सूर्योदय का वर्णन करते हुए सूर्य को एक चतुर चितेरे का रूप दिया है, जो अपनी किरण रूपी तूलिका लेकर पृथ्वी रूपी पट पर बहुरंगी चित्र खींचता है ।

तरुण-चितेरा अरुण बढ़ाकर
स्वर्ण-तूलिका कर सुकुमार
पट-पृथ्वी पर रखता है जब
कितने वर्णों का आभार ।[२]

उनकी संध्या-सुन्दरी दिवसावसान के समय मेघमय आसमान से नीचे उतर रही है । वह परी-सी सुन्दर है । उसके तिमिरांचल में चंचलता का कहीं आभास तक नहीं है । उसके काले-काले बालों में तारा रूपी पुष्प गुंथा हुआ है । वह सखी नीरवता के कंधों पर बाँह डाल अम्बर पथ से चली आ रही है । 'उतर रही है', 'चली आ रही है' आदि क्रियाओं में मानवीय बिम्ब उभरता है । फिर 'धीरे-धीरे-धीरे' में शब्द के इकहरे, दुहरे, तिहरे प्रयोग से विम्ब स्पष्ट से स्पष्टतर होता जाता है । उसमें लय और गति है । पाठक का ध्यान प्रत्येक शब्द पर न जाकर समन्वित प्रभाव को अपनाता है ।[३] निराला के कुछ मानवीकृत प्रकृति-बिम्ब यौन-भावनाओं से शून्य नहीं हैं । जुही की कली, शेफालिका, वन-बेला, नर्गिस, आदि में प्रकृति के माध्यम से यौन-भावनाएँ उभरी हैं । उभरी प्रकृति के माध्यम से संभोग की विविध चेष्टाओं का मांसल वर्णन 'जुही की कली' में हुआ है ।[४] संभवतः इसी कारण छायावादी प्रकृति-चित्रण पर विचार करते हुए आलोचक को कहना पड़ा—"प्रकृति की ओट में मानव-जीवन का यह मधुरतम प्रसंग है । रीतिकाल की प्रतिक्रिया में द्विवेदी युग ने संभोग के वर्णनों का विरोध किया था । इससे सदाचारमूलक एवं उपदेशात्मक रचनाओं की वृद्धि तो हुई । पर काव्य में शुष्कता भी बढ़ चली । संभवतः इसी से छायावादी कवियों ने अपने मन की वासना को व्यक्त करने के लिए प्रकृति का आवरण चुना ।"[५]

---

१. जयशंकर प्रसाद—कामायनी, आशा सर्ग, पृ. २४
२. सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'—अनामिका, पृ. १०४
३. वही, अपरा, पृ. २२
४. वही, पृ. १४
५. विश्वंभर मानव—काव्य का देवता: निराला, पृ. ४९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रसादजी ने उषा-सुन्दरी को अम्बर-पनघट में तारा-घट भरते हुए दिखाकर उसका सांस्कृतिक रूप व्यक्त किया।[1] कामायनी में वही उषा काल-रात्रि रूपी अपनी प्रतिद्वंद्विनी को सुनहले तीरों से पराभूत कर जयलक्ष्मी-सी उदित हो सात्विक प्रकाश फैलाती है।[2] प्रलय-कालीन जलौघ से बाहर उभर आती धरा को सिंधु-सेज पर मान किये बैठी नवोढ़ा के रूप में कल्पित किया गया है।[3] रजनी को वासक सज्जा नारी के रूप में कल्पित करना प्रसाद जी की मौलिक देन है। वह विश्व-कमल की मृदुल मधुकरी है। 'मधुकरी' शब्द उसकी चंचल वृत्ति को प्रकट करता है। वह जादू-टोना करके विश्व को मंत्राभिभूत करती चली जा रही है। वह अपना घूँघट उठाकर कभी मुस्काती है तो कभी किसी के देखे जाने की आशंका से ठिठकती है, तो कभी रुककर अपनी किसी पूर्वकालिक भूल को स्मृति-पथ में लाती है। आगे की पंक्तियाँ अत्यन्त प्रभावकारी हैं। कवि उस अल्हड़ यौवना को समझाता है कि तुम अपने शरीर पर से खिसक गये अंचल को संभाल लो, उसमें जड़ी हुई मणियाँ सब इधर-उधर बिखरी जा रही हैं। पूरे छन्द में अंधाधुंध भागती हुई युवती, उसके खिसकते अंचल तथा उससे बिखरती हुई मणियों का कमनीय बिम्ब अंकित होता है—

पगली हाँ संभाल ले कैसे
छूट पड़ा तेरा अंचल,
देख, बिखरती है मणिराजी
अरी उठा बेसुध चंचल।[4]

कुल-मिलाकर प्रसादजी ने रजनी का मानवीकरण के सहारे एक संश्लिष्ट चित्र प्रस्तुत किया है, जिसमें कवि का कल्पना-वैभव प्रखर है।

महादेवीजी की रजनी झिलमिल तारों की जाली ओढ़ती है,[5] राकेश निशा की अलकों को चाँदनी में धो देता है,[6] कलियाँ पल्लव के घूँघट उठाकर अपनी छलकी पलकों से संसार की मादकता की बात कहती हैं।[7] महादेवी ने संध्या का नारी रूप में मानवीकरण कर उसका सुन्दर एवं कमनीय सांस्कृतिक बिम्ब इस प्रकार प्रस्तुत किया है—

---

१. जयशंकर प्रसाद—लहर, पृ. १९
२. वही, कामायनी, आशा सर्ग, पृ. २३
३. वही, पृ. २४
४. वही, पृ. ४०
५. महादेवी वर्मा—आधुनिक कवि-१, पृ. ६
६. वही, पृ. १
७. वही, पृ. ४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गुलालों से रवि का पथ लीप
जला पश्चिम में पहला दीप
विहँसती संध्या भरी सुहाग,
दृगों से झरता स्वर्ण-पराग,[१]

रामकुमार वर्मा ने प्रातः शशि को पागलों के मुख सदृश विकृत देखा है।[२] उनकी जुही लता-कुंज के द्वार-द्वार झाँक-झाँक कर समीर को देखती है।[३] उषा-सुन्दरी तारों के फूलों को तोड़कर बादलों में खेल रही है[४] तो कवि ने रजनी-बाला को सोते संसार बीच जगकर तारों वाले गजरे को बेचने जाते देखा है—

इस सोते संसार बीच,
जगकर सजकर रजनी बाले !
कहाँ बेचने ले जाती हो
ये गजरे तारों वाले ?[५]

छायावादी कवियों ने अपने भावों की सफल एवं प्रभावकारी अभिव्यंजना के लिए प्रतीक स्वरूप उपमान प्रकृति के विशाल क्षेत्र से ग्रहण किये हैं और इस प्रकार प्रतीकात्मक बिम्बों की सृष्टि की है। 'आँसू' का नख-शिख वर्णन लगभग इसी प्रणाली में हुआ है। प्रसादजी का निम्नलिखित प्रतीकात्मक बिम्ब द्रष्टव्य है—

दो काठों की संधि बीच उस
निभृत गुफा में अपने ।
अग्नि शिखा बुझ गयी, जागने
पर जैसे सुख सपने ।[६]

प्रसादजी ने अत्यन्त संयत एवं सांकेतिक भाषा में मनु और श्रद्धा के संयोग शृंगार का अत्यन्त सुन्दर चित्र प्रस्तुत किया है। 'दो काठ' मनु और श्रद्धा का, तथा 'अग्नि-शिखा' उनकी वासना का प्रतीक है। इन प्रतीकों के अभाव में यह चित्र मांसल हो जाता, किन्तु कवि ने प्रतीकों के सहारे उस दोष से उसको मुक्त किया तथा इस छन्द को ध्वनि-काव्य का रूप दे दिया।

निराला के अधिकतर प्रतीक दार्शनिक शब्दावली एवं योग-साधना के पारिभाषिक शब्दों से गृहीत हैं। उन्होंने प्रकृति से भी कुछ प्रतीक अपनाये किन्तु इस क्षेत्र में महादेवी आगे हैं। उन्होंने भाव-व्यंजना के लिए अनेक प्राकृतिक

१. महादेवी वर्मा—आधुनिक कवि-१ पृ. २६
२. डा. रामकुमार वर्मा, आधुनिक कवि-३, पृ. ७
३. वही, पृ. ५५
४. वही, पृ. ९२
५. वही, पृ. १२७
६. जयशंकर प्रसाद - कामायनी, कर्म सर्ग, पृ. १३६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

बिम्ब अपनाये जैसे दीपक (साधना, आत्मा), दर्पण (माया), पिंजर (शरीर), नौका (जीवन), काला सिंधु (संसार), तम (अज्ञान), प्रकाश (ज्ञान-ज्योति), आँखों का फूल (अश्रु), वीणा (हृदय) आदि। कहीं-कहीं उनके प्रतीक दुरूह एवं अस्पष्ट हैं। उनके प्रतीकात्मक बिम्ब का एक उदाहरण द्रष्टव्य है, जहाँ प्रतीक भी रूपक के रूप में प्रयुक्त हुआ है—

मैं नीर-भरी दुःख की बदली !
स्पन्दन में चिर निस्पन्द बसा,
क्रन्दन में आहत विश्व हँसा,
नयनों में दीपक से जलते
पलकों में निर्झरिणी मचली ![1]

रामकुमार वर्मा जी ने किरण-कण को आत्मा तथा धूम्र को माया का प्रतीक मानते हुए एक चित्र प्रस्तुत किया है। यह चित्र उनकी रहस्यानुभूति का दिग्दर्शक है—

एक दीपक किरण-कण हूँ।
धूम्र जिसके क्रोड़ में है
उस अनल का हाथ हूँ मैं ![2]

अपार्थिव बिम्बों के सृजन में प्रसाद एवं महादेवी ने आग्रह व्यक्त किया है। ये बिम्ब निजंधरी कथाओं पर आश्रित हैं। 'वन-बालाओं के निकुंज सब भरे वेणु के मधु स्वर से',[3] स्वप्नलोक की परियाँ उसमें भूल गयीं मुस्कान,[4] आदि अनेक कल्पनाएँ इस कोटि में आती है। वैसे ही इन्द्रजाल, कुहुक, जादू-टोना, इन्द्रजाल के फूल आदि कल्पनाओं पर आधारित चित्र भी छायावादी काव्य में पाये जाते हैं। कहीं-कहीं ये कल्पनाएँ प्रतीकात्मक अर्थ-सौन्दर्य की भी सृष्टि करती-सी जान पड़ती हैं।

भाव-बिम्ब

छायावादी कवियों ने रूप-सौन्दर्य के समान भाव-सौन्दर्य एवं भावों के रूपात्मक चित्रण में भी अपनी कला-कुशलता का परिचय दिया है। प्रसाद जी ने संयोगकालीन लजीली नारी के अनुभावों का प्रत्यक्ष रूप प्रस्तुत किया है, लगता है कि पाठक अपने नेत्र सम्मुख उसको सजीव देख रहे हैं—

गिर रहीं पलकें, झुकी थी नासिका की नोक
भ्रू-लता थी कान तक चढ़ती रही बेरोक।

---

१. महादेवी वर्मा—आधुनिक कवि-१, पृ. ८९
२. डॉ. रामकुमार वर्मा—आधुनिक कवि-३, पृ. ६१
३. जयशंकर प्रसाद—कामायनी, स्वप्न सर्ग, पृ. १७८
४. महादेवी वर्मा—आधुनिक कवि-१, पृ. ३९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्पर्श करने लगी लज्जा ललित कर्ण कपोल,
खिला पुलक कदंब-सा था भरा गदगद बोल ।[१]

प्रसादजी भाव-बिम्बों के निर्माण में अधिक सफल हैं, क्योंकि वे रसवादी कवि हैं। उनकी कामायनी आद्यन्त भाव-बिम्बों से परिपूर्ण है। चिन्ता को विश्व-वन की व्याली, ज्वालामुखी के भीषण स्फोट के प्रथम कंप-सी मतवाली, अभाव की चपल बालिका, ललाट की खललेखा, हरी-भरी सी दौड-धूप, समस्त ग्रहों की हलचल, तरल गरल की लघु लहरी, हृदय-गगन की धूमकेतु आदि नाना अप्रस्तुतों के द्वारा व्यक्त कर दिया है।[२] प्रसादजी ने लज्जा का संश्लिट बिम्ब प्रस्तुत किया है, जिसमें यह बताया गया है कि कोमल किसलय के अंचल में नन्हीं कलिका जैसे वह आकर्षक दीखती है, उसी तरह गोधूलि के धूमिल पट में दीपक की लौ के समान प्रकाशमती दिखती है। वह माया में लिप्टी, अधरों पर उँगली धरे हुए तथा आँखों में सरसता लिये नीरव निशीथ में आलिंगन का जादू लिये तथा अपनी कोमल भुजाएँ फैलाये आ रही है।[३] आगे उसे रति की प्रतिमूर्ति, शालीनता की शिक्षिका, मतवाले सुन्दर पग में नूपुर के समान लिपटनेवाली, सरल कपोलों में लाली बनकर रहनेवाली तथा चंचल किशोर सौन्दर्य की रखवाली करने वाली बताया गया है।[४] वैसे ही वेदना, स्मृति, अभिलाषा, मृत्यु आदि कितने ही अमूर्त भाव और स्थितियों का सम्मूर्तन प्रसाद जी ने किया है।

भाव-चित्रों की सृष्टि में महादेवी का योगदान अविस्मरणीय है। उन्होंने प्रेम, माधुर्य, विरह जनित अवस्थाओं, संचारी भावों, दुःख, निराशा आदि के अनेक बिम्ब प्रस्तुत किये हैं। आशाओं के लिए उपवन, मोह के लिए मदिरा[५], दुःख के लिए जलधि[६] आदि अप्रस्तुतों के द्वारा रूपात्मकता दी है। तो कहीं अमूर्त वस्तुओं को चेतन रूप में प्रस्तुत कर बिम्बात्मक बनाया है। मेरी आहें सोती हैं, इन ओठों की ओटों में[७], मूक फूलों की सोती प्यास[८], नीरव रोदन था पहरेदार[९] आदि मानवीकृत रूप में प्रस्तुत हैं।

रामकुमार वर्मा ने भी आशा, निराशा, स्मृति, उच्छ्वास, इच्छा आदि भावों को चित्रात्मक रूप प्रदान किया है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

१. जयशंकर प्रसाद—कामायनी, पृ. ९४
२. वही, चिन्ता सर्ग, पृ. ५
३. वही, लज्जा सर्ग, पृ. ९७
४. वही, पृ. १०३
५. महादेवी वर्मा—आधुनिक कवि–१, पृ. १७
६. वही, पृ. ३४
७. वही, पृ. ७
८. वही, पृ. १४
९. वही, पृ. ३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(१) प्रेम की इस अग्नि से क्यों धूलि सी उठती निराशा ?[1]
(२) शतदल मधुर स्मृति के खिले हैं।[2]
(३) उच्छ्वासों के लघु-लघु पथ पर इच्छाएँ चलकर थक जातीं।[3]

दार्शनिक बिम्ब

छायावादी काव्य में ईश्वर, जीव, जगत्, माया, नश्वरता आदि से संबंधित चित्र प्राप्त होते हैं। छायावादी कवि अनेक रूपकों द्वारा अपने प्रियतम का चित्र खींचता है। प्रसादजी शैवागमों के दार्शनिक सिद्धान्तों से प्रभावित हैं। तांडव नृत्य निरत भगवान् शंकर का वर्णन प्रसाद की विराट् कल्पना का द्योतक है। शिव विराट्-चेतना-शक्तिस्वरूप हैं। तांडव निरत उनका शरीर निस्सीम ज्योति से भरा हुआ था। ऊपर जो अंधकार भरा था, वही उस विराट् पुरुष का अलक-जाल था। उस समय संपूर्ण ब्रह्माण्ड अनाहत नाद से ध्वनित हो उठा था। शिव के तांडव नृत्य के कारण सारा अंतरिक्ष प्रकाश एवं ध्वनि से परिपूर्ण था। उस समय जो भी ध्वनियाँ उत्पन्न हो रही थीं, वे सब तांडव में तन्मय हो ताल दे रही थीं। तांडव निरत शिव के शरीर से जो श्रम-कण निकलते थे, वे ही तारे, चन्द्र एवं सूर्य बन रहे थे। उनके चरणों के आघात से पर्वत धूलि समान उड़ते हुए जान पड़ते थे। उनके दोनों पाद संहार एवं सृजन के प्रतीक थे।[4] वैसे ही आनन्द स्वरूप भगवान् को घेरे पर्दे के समान नीलाकाश के हट जाने पर भगवान् का जो संभावित रूप दिखाई दे सकता है, उसको इस प्रकार व्यक्त किया गया है —

चाँदनी सदृश खुल जाय कहीं अवगुंठन आज संवरता-सा
जिसमें अनंत कल्लोल भरा लहरों में मस्त विचरता-सा—
अपना फेनिल फन पटक रहा मणियों का जाल लुटाता-सा,
उन्निद्र दिखाई देता हो उन्मत्त हुआ कुछ गाता-सा।[5]

निराला और महादेवी ने प्रकृति में व्याप्त परम सत्ता को नारी-रूप में चित्रित किया है। निराला ने उस सत्ता को नील वसना शारदा के रूप में अंकित किया, जिसकी रसना यह सृष्टि है, जिसकी निश्वास वायु ही प्राणियों की प्राण-वायु है। वह वरदात्री है, वीणावादिनी है और उसके वीणावादन का

---

१. डॉ. रामकुमार वर्मा—आधुनिक कवि-३, पृ. ४
२. वही, पृ. २०
३. वही, पृ. ४७
४. जयशंकर प्रसाद—कामायनी, दर्शन सर्ग, पृ. २५२-२५३
५. जयशंकर प्रसाद—कामायनी, काम सर्ग, पृ. ६८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्वर ही अमृताक्षर रूपी निर्झर से स्निग्ध हो फूट पड़ता है। वह इस विश्व-रूपी हंस पर अपने श्रीचरण रखे हुई है—

देखा, शारदा नील-वसना,
हैं सम्मुख स्वयं सृष्टि-रशना,
जीवन-समीर-शुचि निःश्वसना, वरदात्री,
वीणा वह स्वयं सुवादित स्वर,
फूटीं तर अमृताक्षर-निर्झर
वह विश्व-हंस, हैं चरण सुघर जिस पर श्री।[1]

महादेवी का प्रियतम परमात्मा 'रजत-रश्मियों की छाया में धूमिल घन सा' आता है[2] क्योंकि उसको तम के पर्दे में आना प्रिय लगता है। जो तम के पर्दे में आता है, उसके लिए धूमिल घन का उपमान उपयुक्त ही है। महादेवी की रहस्यवादी भावना माधुर्य भाव की है, जिसके अनुसार उन्होंने परमात्मा को प्रिय और अपनी आत्मा को प्रिया स्वीकार किया है और दोनों के सम्बन्ध को 'काया-छाया' का सम्बन्ध बताया है। 'काया-छाया' का प्रतीक परमात्मा तथा आत्मा को व्यंजित करने में अतीव समर्थ है—

काया छाया में रहस्यमय !
प्रेयसि प्रियतम का अभिनय क्या ![3]

वेदान्त के प्रतिबिम्बवाद को भी महादेवी ने चित्रात्मक बनाया है। माया रूपी दर्पण में ब्रह्म का प्रतिबिंब पड़ता है तो सृष्टि होती है। जीव माया रूपी दर्पण में दिखाई पड़नेवाला ब्रह्म का प्रतिबिंब है। जब दर्पण टूट जाता है तब माया का पर्दा हट जाता है और जीव ईश्वर में मिल जाता है—

टूट गया वह दर्पण निर्मम !
उसमें हँस दी मेरी छाया,
मुझमें रो दी ममता माया,
अश्रुहास ने विश्व सजाया,
रहे खेलते आँख मिचौनी
प्रिय ! जिसके परदे में 'मैं', 'तुम'।[4]

निराला पर दार्शनिक अद्वैतवाद का प्रभाव पड़ा है। उन्होंने आत्मा-परमात्मा के अविछिन्न सम्बन्ध को रूपक की भाषा में स्पष्ट किया है—

१. सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'—अपरा, पृ. १७४
२. महादेवी वर्मा—आधुनिक कवि—१, पृ. २७
३. वही, पृ. ५७
४. वही, पृ. ६३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तुम तुंग हिमालय शृंग और मैं चंचल-गति-सुर-सरिता ।[1]

महादेवी दुःखवादी कवयित्री रही हैं और उनके अनुसार जीवन का अर्थ है दुःख, क्षणिकता एवं नश्वरता। इस दार्शनिक सिद्धान्त को अनेक प्राकृतिक चित्रों को उपस्थित कर व्यक्त किया गया है। फूल मुरझाने को विकसित होता है, चाँद इसलिए उदित होता है कि दूसरे क्षण छिप जाए, मेघ स्वयं बरसकर शून्य होता है और दीप जलकर स्वयं मंद पड़ जाता है। अन्योक्ति पर आश्रित नश्वरता का चित्र बिलकुल स्पष्ट है—

विकसते मुरझाने को फूल
उदय होता छिपने को चन्द,
शून्य होने को भरते मेघ
दीप जलता होने को मंद ।[2]

प्रसाद जी की मान्यता के अनुसार मानव-जीवन में सुख-दुःख दोनों अवश्यंभावी हैं और वे एक दूसरे से इतने गुंथे हुए हैं कि किसी को भी हेय नहीं माना जा सकता। 'दुख की पिछली रजनी बीच विकसता सुख का नवल प्रभात,'[3] कहकर सुख-दुःख के संबंध की सुन्दर अभिव्यंजना की गयी है। यही क्यों मानव जीवन की वेदी तथा उसपर विरह-मिलन के परिणय तथा सुख-दुःख के नाच को दिखाते हुए जीवन की सुन्दर व्याख्या की गयी है और उसके लिए वैवाहिक वातावरण का सुन्दर रूप प्रस्तुत किया गया है—

मानव जीवन वेदी पर
परिणय हो विरह मिलन का
दुःख सुख दोनों नाचेंगे
है खेल आँख का मन का[4]

पन्त और इतर छायावादी कवियों के बिम्बों की तुलना

उपर्युक्त उदाहरणों के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि छायावादी कवि बिम्ब-योजना में विशेष सफल रहे। प्रसाद, पन्त और निराला के काव्य में ऐन्द्रिय बिम्बों ने विशेष स्थान ग्रहण किया है, जबकि महादेवी तथा रामकुमार वर्मा में ऐन्द्रिय बिम्ब न्यून मात्रा में प्राप्त होते हैं। महादेवी और रामकुमार वर्मा में रूप एवं रंग वैविध्य नहीं है। वर्ण, गंध तथा ध्वनि संवेदना की दृष्टि से पन्त किसी भी अन्य कवि से आगे हैं। पन्त में इन संवेदनाओं की सूक्ष्म अनु-

१. सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'—अपरा, पृ. ६८
२. महादेवी वर्मा—आधुनिक कवि-१, पृ. १८
३. जयशंकर प्रसाद—कामायनी, श्रद्धा सर्ग, पृ. ५३
४. वही, आँसू, पृ. ४६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भूति है। दो-चार हलके स्पर्शों से किसी वस्तु के चाक्षुष सौन्दर्य को मूर्तिमान करने की पन्त की क्षमता आश्चर्यकारी है। मानवबिम्बों की दृष्टि से देखा जाए तो प्रसाद के बिम्ब अधिकतर सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक परिवेश से गृहीत हैं या फिर स्वच्छन्द कल्पना की उपज हैं। निराला भारतीय संस्कृति एवं अध्यात्म पर आधारित सफल बिम्बों के चित्रकार हैं। किन्तु, राजनैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक मानव-बिम्ब जितनी मात्रा में पन्त दे सके, उतनी मात्रा में दूसरे कवि नहीं दे सके। प्रसाद और पन्त के रूप-बिम्ब सूक्ष्म-सौन्दर्य एवं सात्विकता एवं शालीनता से युक्त हैं, पर निराला में मांसलता की मात्रा अधिक है। इससे निराला के बिम्बों को एक लाभ यह मिला है कि उनके रूप-बिम्ब जितने स्पष्ट एवं प्रभावकारी हैं, उतने पन्त या प्रसाद के नहीं। पन्त और प्रसाद के रूप-बिम्ब का आस्वादन करने के लिए यह आवश्यक है कि पाठक भी बहुत-कुछ कल्पना-प्रवण एवं अनुभूतिशील हो। छायावादी कवियों ने प्रस्तुत और अप्रस्तुत दोनों रूपों में पौराणिक बिम्बों की अवतारणा की है। पौराणिक कल्पना का जो निखरा रूप 'कामायनी' और 'राम की शक्तिपूजा' में पाठक को वशीभूत करता है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। ये स्वतन्त्र पौराणिक चित्र हैं, जबकि पन्त की पौराणिक कल्पना उपमा या उत्प्रेक्षा की योजना करती है। पौराणिक कल्पना पर आश्रित अलंकार योजना की दृष्टि से पन्त अग्रणी हैं। दूसरे पौराणिक चित्रों का जो वैविध्य पन्त-काव्य में उपलब्ध है न वह प्रसाद में देखा जा सकता है, न निराला में। महादेवी में पौराणिक कल्पना का अभाव-सा है।

प्रकृति की मनोरम एवं हृदयाकर्षक बिम्ब-कल्पना पन्तजी की अपूर्व देन है। चाहे प्रकृति के स्वतंत्र रूप हों, चाहे प्रतीकात्मक, चाहे मानवीकृत, पन्त सर्वोपरि हैं। वे प्रकृति के प्रत्येक कंपन को चाक्षुष बना देते हैं और चैतन्य भर-कर उसे सजीवता प्रदान करते हैं। लेकिन प्रकृति के गुरु-गंभीर एवं प्रचण्ड रूप के प्रति उनका लगाव कम है। उस क्षेत्र में प्रसाद और निराला आगे हैं। पन्त के प्रकृति-चित्रों में अनुभूति की गहराई है। महादेवी में स्वतन्त्र प्रकृति कहीं नहीं आती, वह प्रतीकात्मक या मानवीकृत है। महादेवी की प्रकृति एक विर-हिणी के समान आँसू बहाती है। प्रकृति का उल्लास जो पन्त में है, वह महादेवी में नहीं। रामकुमार वर्मा मुख्य रूप से प्रकृति में रहस्य का संधान करते रहे।

प्रसाद की सर्वतोमुखी प्रतिभा भाव-बिम्बों के चित्रण में परिलक्षित होती है। उनका-सा संश्लिष्ट भावचित्र अन्यत्र दुर्लभ है। पन्त अधिकतर खण्डित भाव-बिम्ब प्रस्तुत करते हैं। निराला भाव-चित्रों की अपेक्षा रूप-सौन्दर्य के चित्रांकन में संलग्न रहे। सीमित कल्पना-प्रसार के कारण महादेवी तथा राम-कुमार वर्मा के भाव-निरूपण में एकांगिता है, किन्तु विरहानुभूति का तीव्र संवेद्य बिम्ब जो उनमें है, पन्त में नहीं।

प्रसाद के दार्शनिक विचार सुस्पष्ट एवं सुचिन्तित हैं। उनमें बुद्धि का

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विलास है। उनके दार्शनिक चिन्तन कवित्वमय हैं, किन्तु बहुधा चित्रात्मक नहीं। निराला जीव-ब्रह्म की आध्यात्मिक व्यंजना में अतीव सफल हैं। उन्होंने प्रकृति के माध्यम से आत्मा-परमात्मा की व्यंजना की है। शेफालिका को आत्मा तथा गगन को परमात्मा का प्रतीक माना जाए तो उनकी विराट् कल्पना का अनुमान लगाया जा सकता है। किन्तु अपनी संकेतमयी भाषा के कारण ये बिम्ब कहीं-कहीं दुरूह बन गये हैं। महादेवी और वर्माजी ने प्रतीकात्मक दार्शनिक बिम्बों में अपनी भावुकता दर्शायी है। पन्त ने अनेक दार्शनिक बिम्ब दिये हैं, जो कभी रूपक के आवरण में व्यक्त हुए हैं तो कहीं प्रतीकों में। प्रतीकात्मक बिम्बों में दुरूहता के होते हुए भी उनका भाव-तत्व पाठक को मुग्ध कर देता है।

उपादान तत्वों से हटकर बिम्ब-निर्माण की कला को दृष्टि में रखकर देखा जाए तो प्रसाद, निराला आदि के बिम्ब अनुभूति की उपज हैं। प्रसाद के बिम्ब उनके अन्तर्मन की झलक, एक झाँकी दिखाते हैं। प्रसाद को अपने भीतर उठते आवेगों-विचारों में दिलचस्पी है, फलतः विशुद्ध अनुभूति को बौद्धिक कल्पना के सहारे रूपित करते हैं। उनकी शब्द-भंगिमाएँ मार्मिक एवं सांकेतिक अर्थ-संपन्न होती हैं। "निराला के काव्य में कल्पना-सृष्टि के संवेदनात्मक पक्षों की प्रमुखता है। उनकी कल्पनाएँ भाव-संवेदनाओं की सहचरी हैं।"[1] उनके शब्द भी स्वतः स्फूर्त एवं अयत्नज हैं, किन्तु उन शब्दों को संवारने की ओर उनका ध्यान कभी नहीं गया। फलतः अप्रचलित दुरूह शब्दों के कारण उनके बिम्ब हमारे राग-तन्तुओं को झंकृत करने की क्षमता नहीं रखते। दूसरे उनके अधिकतर बिम्ब क्रियाश्रित हैं, विशेषणाश्रित कम। महादेवी तथा वर्माजी के शब्द सुगठित एवं स्पष्ट हैं। महादेवी के शब्द सीमित हैं। वे मानवीकरण, विशेषण विपर्यय आदि द्वारा मूर्ति-योजना करती हैं। सुरुचिपूर्ण शब्द-चयन तथा उनका मित व्यय भी आकर्षक है। उच्च कल्पना तथा मूर्तिमयी शब्द योजना जो बिम्ब विधान के अत्यन्त सहायक तत्व हैं, पन्तजी की विशेषता है। कविता के संगीत और चित्रांकन में अभिव्यक्त होनेवाली कल्पना आधुनिक कवि की काव्य-कला की कसौटी है।[2] तो पन्त इस कसौटी पर पूरे उतरते हैं। पन्तजी अनुभूति की अपेक्षा आरोपित कल्पना के कवि हैं। वे शब्द के नाद और चित्र और उसकी आत्मा से परिचित हैं। इसीलिए नये भावों के लिए वे नये शब्दों का सृजन करते हैं। फिर उन शब्दों को लेकर कल्पना-वैभव के द्वारा एक वस्तु के समानांतर अनेक बिम्बों का निर्माण करते हैं।

प्रसादजी बिम्बों की एक लड़ी बनाते हैं, जिससे उनके बिम्बों में उदात्तता एवं विराटता का आभास मिलता है। निराला अपने विराट् बिम्बों के लिए

१. डॉ. प्रेमलता बाफना—पंत का काव्य, पृ. ४८८
२. डॉ. श्रीकृष्णलाल—आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास, पृ. ४०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रसिद्ध हैं, जिनमें उद्दाम भावावेश की स्थिति का बोध होती है, किन्तु पन्त प्रकृति के सुकुमार कवि हैं और उनके बिम्ब भी अपनी सुकुमारता के कारण पाठक को मुग्ध करते हैं। व्यापक और विराट् बिम्बों की दृष्टि से चाहे प्रसाद और निराला आगे हों, किन्तु समृद्धि एवं वैभव की दृष्टि से पन्त उल्लेखनीय हैं और उनके बिम्ब पाठक को आनंदमग्न कर देते हैं। उनके बिम्ब नादमय एवं संगीतमय हैं। एक से अधिक ऐन्द्रिय संवेदनाओं से संवलित मिश्र बिम्बों की योजना में पन्त कोई सानी नहीं रखते। पन्त की इस मौलिक विशेषता की और संकेत करते हुए रमेशचन्द्र शाह ने उनका सही मूल्यांकन किया है—"वे ऐन्द्रिय संवेदन के—खासकर चाक्षुष सवेदन के कवि हैं। ऐन्द्रिक को अतीन्द्रिय से जोड़नेवाली प्राणशक्ति और वेदनतंत्र उनके पास नहीं है, किन्तु जहाँ आँख से वस्तु की वस्तुमत्ता को, वस्तुओं के सौन्दर्य को पकड़ा जाता है, वहाँ वे समस्त छायावादी कवियों के बीच अकेले और अप्रतिम हैं।"[1]

छायावादोत्तर कविता में बिम्ब

छायावादोत्तर कविता प्रगतिवाद, प्रयोगवाद की मंजिलें पार कर अब नयी कविता का रूप ग्रहण कर चुकी है। इस बीच स्वतंत्र व्यक्तिवादी कविताओं का भी सृजन हुआ है। छायावादोत्तर कविता में छायावादी भावपरक कल्पना एवं अतीन्द्रिय सौन्दर्य की प्रतिक्रिया हुई। प्रगतिवाद साम्यवाद की अभिव्यक्ति है और उसमें सामाजिक स्वर मुखरित हुआ। फ्रायड़ के काम सम्बन्धी विचारों से प्रेरणा पाकर कवियों ने क्षुधा और काम को प्रकृत रूप में व्यक्त करना आरम्भ किया। उनका दृष्टिकोण बाह्योन्मुखी रहा। यह एक सैद्धान्तिक काव्य रहा जिसमें वर्णनात्मकता की प्रधानता है, किन्तु चित्रों को ऐन्द्रिय स्तर पर प्रस्तुत करने का प्रयास नहीं है। छायावादियों के समान कल्पना का अभाव रहने से उनके बिम्ब भी यथार्थानुभूति पर आधारित हैं।

प्रयोगवादी वस्तु और शैली में चिर प्रयोगशील हैं। यहाँ भी छायावादी अमूर्तता एवं सूक्ष्मता की प्रतिक्रिया हुई और वस्तुगत मूर्त और ऐन्द्रिय चेतना को प्रश्रय मिला। इसमें कवि का 'अहं' बोलता-सा जान पड़ता है। अधिकांश कवियों की दृष्टि अन्तुर्मुखी है और अवचेतन मन का अध्ययन कविता का मुख्य विषय है। भाषा में अनगढ़पन, प्रतीकों में अस्पष्टता, शब्दों में नये अर्थों का संधान—इस काव्य-शैली की विशेषताएँ हैं। इनके बिम्ब का मूलस्रोत आधुनिक जीवन और मानव का उपचेतन मन है।

नई कविता में नये मानों और मूल्यों को प्रतिष्ठित करने की व्यग्रता है। ये कवि पूर्ण जीवन को न पकड़कर एक क्षग को पकड़ते हैं। अतः क्षणों की अनुभूति तथा लघु मानव का बोध उनकी दृष्टि में आधुनिकता-बोध है। "नई

१. कल्पना, अंक. २२६, पृ. ४१

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कविता के बिम्ब प्रायः प्रतीकात्मक हैं, जो वस्तुओं की ओर केवल संकेत करते हैं। इस सांकेतिकता अथवा प्रतीकात्मकता का कारण यह है कि नयी कविता प्राचीन कविता की तरह वस्तु वर्णनात्मक, छायावादी कविता की तरह भावाभिव्यंजक और प्रयोगवादी प्रगतिवादी कविता की तरह विवेचनात्मक नहीं है। इसके विपरीत वह रागबोधात्मक है।"[१] नयी कविता के बिम्ब खण्डित होते हैं, जिससे कविता दुरूह लगती है।

छायावादोत्तर कवियों में बिम्ब-विधान की दृष्टि से नरेन्द्र शर्मा, दिनकर, बच्चन, भगवतीचरण वर्मा, रामेश्वरशुक्ल अंचल, अज्ञेय आदि के नाम लिये जा सकते हैं। नरेन्द्र शर्मा और बच्चन में सहजता एवं स्वाभाविकता है। वे दूरगामी कल्पनाओं से हटकर यथार्थानुभूति पर आधारित बिम्ब प्रस्तुत करते हैं। दिनकर जी बिम्ब-निर्माण की दृष्टि से छायावादोत्तर कविता के कीर्तिस्तंभ हैं। उनकी 'उर्वशी' ऐन्द्रिय बिम्बों का कोष ही है। भगवतीचरण में स्थूल सौन्दर्य एवं वासनात्मक प्रेम के चित्र तथा सामाजिक वैषम्य स्पष्ट हैं। किन्तु वे वस्तु को बिम्बों में बाँधने के लिए आवश्यक ऐन्द्रिय गुण से वंचित हैं। अंचल कल्पनातिरेक से बच जाते हैं, फलतः उनके चित्र हृदय-स्पर्शी एवं प्रभावकारी हैं।

बच्चन मानव-भावना, अनुभूति, प्राणों की ज्वाला के आत्मनिष्ठ कवि हैं। उनके काव्य में संयोग एवं वियोग के मादक क्षणों का वर्णन है। उसके कला-शिल्प में सादगी, स्वच्छता, संयम तथा अतुल शक्ति है।"[२] उनके नारी-चित्रों में श्रृंगारिकता देखी जा सकती है—

चितवन जिस ओर गई उसने
मृदु फूलों की वर्षा कर दी,
मादक मुस्कानों ने मेरी
गोदी पंखुरियों से भर दी,
    हाथों में हाथ लिए, आए
    अंजलि में पुष्पों के गुच्छे,
जब तुमने मेरे अधरों पर
अधरों की कोमलता धर दी,
    कुसुमायुध का शर ही मानो
    मेरे अन्तर में पैठ गया।[३]

---

१. डॉ. शंभुनाथसिंह—प्रयोगवाद और नयी कविता, पृ. २१७
२. अभिनव सोपान, 'सोपान पर से', पृ. ४०
३. अभिनव सोपान, पृ, २४०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रेयसी की चितवन के लिए फूलों का उपमान परम्परागत है। मुस्कान के लिए पंखुरियों का उपमान सादृश्य पर आधारित है, किन्तु वह भी परंपरागत है। उसके बाद चुंबन और उसके प्रभाव का वर्णन है। बच्चन की भाषा में जो सरलता एवं गेयता है, वही उनके बिम्ब को आकर्षक बनाने का प्रधान तत्व है।

अंचल ने जीवन और उसकी मानसिक स्थितियों को भौतिक वास्तविकता में ग्रहण किया। उनकी कविता के मुख्य स्वर युवक-युवतियों के क्षणिक मिलन और उसके पश्चात् की पीड़ा ही है। किन्तु वे सामाजिक कुंठा एवं विषमता के प्रति भी सजग हैं। उनकी दृष्टि में नारी शोषिता है। समाज ने उसके मूल्य को आंकने में भूल की। शोषित नारी का निम्न चित्र उसकी पूरी परवशता एवं निस्सहाय स्थिति का द्योतक है।

पशुता की कीड़े-सी वह, चीत्कार भरी दोहित नारी,
पंख कटे जिसके प्राणों के मूक रुदन सदियों से जारी।[१]

अंचल का यह चित्र नारी के शोषित रूप को मूर्त करता है। 'पशुता की कीड़ा' और 'पंख कटे पक्षी' का उपमान नारी की स्थिति को स्पष्ट करने में पर्याप्त सक्षम है। वे नये विशेषण एवं नयी कल्पना से अपने बिम्बों में ताज़गी भरते हैं और उनके नये उपमान भी चिर परिचित हैं।

भगवतीचरण वर्मा के मन में शोषित वर्ग के प्रति सहानुभूति तथा शोषक के प्रति कटु आक्रोश है। उनकी 'भैंसा-गाड़ी'[२] शोषित पीड़ित मानवता का प्रतीक है, जो चरमर चरमर की कठोर ध्वनि मुखरित करती हुई तथा धूल उड़ाती हुई चली जा रही है। उसी कविता में किसानों के कच्चे घरों को 'भू की छाती पर फोड़े' के रूप में कल्पित कर उसमें रहनेवाले जीवों की दयनीय दशा का चित्रण करते हुए लिखते हैं कि यहाँ किसान नंगे-भूखे हैं। पेट की ज्वाला में तप्त उनकी शून्य आहों से वातावरण भरा हुआ है। यह प्रदेश विवशता की रंग-स्थली है।

दिनकर के काव्य में पौराणिक बिम्ब एवं ऐतिहासिक बिम्ब बड़ी मात्रा में पाये जाते हैं। प्राचीन भारत की गरिमा के प्रति आस्था उनके कवि-व्यक्तित्व की विशेषता है—

कितनी द्रुपदाओं के बाल खुले
कितनी कलियों का अन्त हुआ
कह हृदय खोल चित्तौड़ यहाँ
कितने दिन ज्वाला वसन्त हुआ।[३]

---

१. अंचल—किरण-बेला, पृ. १२५
२. भगवतीचरण वर्मा—मानव, पृ. ५०
३. रामधारीसिंह दिनकर—हुंकार, 'हिमालय के प्रति' कविता।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

दिनकर ने यहाँ पौराणिक, प्राकृतिक एवं ऐतिहासिक प्रतीकों का सहारा लेकर बिम्ब खड़ा किया है। 'द्रुपदा' दुःशासन के द्वारा द्रौपदी के चीर-हरण तथा बाल खींचने का महाभारतकालीन दृश्य प्रस्तुत करता है। प्रतीकात्मक वर्णन करके दृश्य को और भी प्रोज्ज्वल बनाया है। 'कलियों' का प्रयोग प्राकृतिक प्रतीक का सुन्दर उदाहरण है, जिसके द्वारा अनेक युवतियों, तरुणियों की ओर संकेत किया गया है। 'चित्तौड़' भारतीय इतिहास में अमर है। उसने अनेक युद्ध देखे और अनेक पद्मिनियों के जौहर का कारुणिक दृश्य देखा। इस प्रकार विविध प्रकार के बिम्बों के मिश्रित प्रयोग से पाठक पर गहरा प्रभाव पड़ता है।

इस काल के प्राकृतिक बिम्ब यथार्थवादी हैं, उनमें छायावादी सर्वात्मवादी चेतना का आरोप बहुत कम देखा जा सकता है। यहाँ प्रकृति मानवीय परिवेश का एक अंग है, उसकी स्वतन्त्र सत्ता लगभग समाप्त-सी हो जाती है। फिर भी नरेन्द्र शर्मा ने आनेवाले वसन्त की रूप-ज्वाला का जो भव्य चित्रण अंकित किया है, यह विशेष महत्व का है—

लो, डाल-डाल से उठी लपट, लो डाल-डाल फूले पलाश,
यह है वसन्त की आग, लगा दे आग जिसे छू ले पलाश।
लग गयी आग, वन में पलाश, नभ में पलाश, भू पर पलाश,
लो, चली फाग, हो गयी हवा भी रंग-भरी छू कर पलाश।[1]

पलाश के फूलने से वातावरण में जो लालिमा छा जाती है, उसको फाग का उपमान दिया गया है। जहाँ भी देखा जाए, वहाँ लालिमा ही लालिमा है, मानो सब कहीं पलाश ही हो। इस चित्र में नाटकीय प्रभाव पाठक को तन्मय कर देता है, अन्यथा यह कोरा वर्णन मात्र रह जाता।

दिनकर जी की भाषा में लाक्षणिक समृद्धि तथा व्यावहारिक भाषा का समावेश है। उनकी 'उर्वशी' के सम्बन्ध में डॉ. नगेन्द्र जी का साधुवाद है "सम्पूर्ण काव्य ही एक रंगीन चित्रशाला है, जिसमें शब्द और अर्थ की व्यंजनाओं से अंकित नख-चित्र, रेखा-चित्र, रंग-चित्र, तैलचित्र और विराट् भित्ति-चित्र जगमग कर रहे हैं।"[2] रात्रि की सम्राज्ञी रूप में विराट् कल्पना इस प्रकार की गयी है—

सम्राज्ञी विभ्राट, कभी जाते इसको देखा है
समारोह प्रांगण में पहने हुए दुकूल तिमिर का
नक्षत्रों से खचित, कूल-कीलित झालरें विभा की,
गूँथे हुए चिकुर में सुरभित दाम श्वेत फूलों के?
और सुना है वह अस्फुट मर्मर कौशेय वसन का,
जो उठता मणिमय अलिन्द या नभ के प्राचीरों पर

१. नरेन्द्र शर्मा—पलाश-वन, पृ. ३
२. डॉ. नगेन्द्र—आलोचक की आस्था, पृ. ११७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मुक्ता-भार, लम्बित दुकूल के मन्द-मन्द घर्षण से,
राज्ञी जब गर्वित गति से ज्योतिर्विहार करती है ?[१]

साँगरूपक तथा मानवीकरण पर आश्रित यह रात्रि-बिम्ब अपनी ऐन्द्रिय संवेदना, नव्य कल्पना, गरिमायुक्त कला-कुशलता के कारण मोहक है। रात्रि रूपी सम्राज्ञी तिमिर का दुकूल पहने समारोह-प्रांगण में जा रही है। उसका तिमिर रूपी दुकूल चमकते हुए तारों रूपी सलमे-सितारों से शोभित है। उसकी झालर चन्द्रमा की द्युतिमयी किरणें हैं। राज्ञी का चिकुर-भार श्वेत नक्षत्र-मालिका से गुँथा हुआ है। निशा रूपी रानी तीव्र गति से चाँदनी में विहार करने जब निकलती है, तब रेशमी दुपट्टे के मणिमय छज्जे या मोतियों से खचित आकाश रूपी भित्ति के साथ घर्षण से संगीतमय ध्वनि निकलती है। रात्रि का उदात्त रूप हमें विस्मित कर देता है। काले बाल में श्वेत फूल अत्यन्त भव्य है। कवि की मिश्रित रंग-संवेदना का सुन्दर उदाहरण है। नक्षत्रों के लिए फूलों की माला का अप्रस्तुत सूक्ष्म पर्यवेक्षणशक्ति का द्योतक है। साथ ही गन्ध एवं ध्वनि-संवेदना से युक्त यह चित्र उदात्त, विराट् एवं ऐन्द्रियता की सघनता के कारण अत्यन्त सफल है।

बच्चनजी को यामिनी वासनामयी लगती है—

दुग्ध-उज्ज्वल मोतियों से युक्त चादर
जो बिछी नभ के पलंग पर आज उस पर
चाँद से लिपटी लजाती चाँदनी है,
आज कितनी वासनामय यामिनी है ![२]

यहाँ प्रकृति का मानवीकरण कर उद्दीपनकारी स्वरूप का चित्रण है। मोती और चादर अप्रस्तुत हैं जो नक्षत्र तथा प्रकाश के लिए प्रयुक्त हैं। नभ के पलंग पर चाँद से लिपटी चाँदनी को लज्जासमन्वित देखा गया है। 'दुग्ध उज्ज्वल' में रंग-संवेदना प्रखर है। मानवीकरण के अतिरिक्त, चाँदनी का अनुभाव, अधिक सधा संगीत और शब्दों का मुधुर चयन तथा कला-शिल्प में संयम एवं सूक्ष्मता इस बिम्ब की मौलिकता है। वैसे ही निम्न पंक्तियों में संध्या के छा जाने और क्षितिज के ऊपर सिंदूरी चाँद के उदित होने का चित्र मानवीकरण का उदाहरण है। 'सिंदूरी चाँद' ऐन्द्रिय संवेदना को उद्‌बुद्ध करता है तो सांस्कृतिक परिवेश का भी विधान करता है—

प्राण, संध्या झुक गयी गिरि, ग्राम, तरु पर
उठ रहा है क्षितिज के ऊपर सिन्दूरी चाँद ।[३]

अमूर्त भावों, वस्तुओं के मूर्तीकरण की प्रवृत्ति भी कवियों में देखी जा सकती है। अंचल, बच्चन आदि में वियोगजन्य अन्तर्वृत्तियों, मनोदशाओं की

१. रामधारीसिंह दिनकर—उर्वशी, तृतीय अंक, पृ. ६४
२. बच्चन—अभिनव सोपान, पृ. २३४ ३. वही, पृ. २ ६

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रचुरता है। अंचल वियोग जन्य उन्मादिनी अनुभूतियों के प्रकाशन में पर्याप्त सफल हैं। विरह की पीड़ा का शब्द-चित्र देखिए —

एक स्वप्न-सी आकर चली गयी जो मौन, ललित, कातर
जो सुदूर के सांध्य गीत-सी बह जाती जीवन छूकर
आज अतृप्त महासागर-सा विह्वल उसे पुकार सकूँ
आज उदित हो अन्तर पूनो – जी भर उसे निहार सकूँ।[1]

बच्चनजी आशा और स्वप्न को लतिका और कलिका के रूपक द्वारा स्पष्ट करते हैं—

यह आशा की लतिकाएँ थीं, जो बिखरीं आकुल-व्याकुल-सी
यह स्वप्नों की कलिकाएँ थीं, जो खिलते से पहले झुलसीं।[2]

बच्चनजी ने केवल रूपक से संतृप्त न होकर लतिकाओं के बिखरने तथा आकुल-व्याकुल होने और कलिकाओं के खिलने से पहले झुलसने के क्रिया-व्यापारों द्वारा भावों को सजीवता प्रदान की है।

भाव को चित्रित करने में दिनकर की क्षमता प्रशंसात्मक है। उन्होंने भाव-निर्भर प्रतीकों द्वारा प्रेमजन्य अनुभूतियों को रूपायित किया है और शब्दों के सार्थक प्रयोगों से गरिमा भर दी है। प्रखर वासना की प्रतीकात्मक अभि-व्यंजना देखते ही बनती है—

फिर क्षुधित कोई अतिथि आवाज़ देता,
फिर अधर-पुट खोजने लगते अधर को,
कामना – छूकर त्वचा को फिर जगाती है,
रेंगने लगते सहस्रों साँप सोने के रुधिर में
चेतना रस की लहर में डूब जाती है।[3]

वासना के उद्‌गम के लिए 'क्षुधित कोई अतिथि' का प्रयोग सटीक एवं सार्थक है। अतिथि के आगमन की कोई तिथि नहीं बतायी जा सकती। वैसे ही वासना के आगमन की भी कोई निर्धारित तिथि या समय नहीं है। फिर वासना रूपी अतिथि के लिए अनिश्चयवाचक 'कोई' विशेषण उसे और अधिक प्रभावशाली बना देता है। घरवालों को क्या पता कि कब कौन अतिथि आता है। वासना का रूप ही अस्पष्ट है। जब कोई क्षुधित अतिथि आवाज देता है तभी पता चलता है कि कोई तो आया है। वासना के प्रभाव को समझाने के लिए सहस्रों साँपों के रेंगने का बिम्ब कितना दृश्यात्मक है। आगे काम-सुख में निर्वृत उर्वशी की सुखजन्य अनुभूतियों का बिम्ब देखिए—

१. अंचल—अपराजिता, पृ ३२
२. बच्चन – अभिनव सोपान, पृ. २४१
३. दिनकर—उर्वशी, तृतीय अंक, पृ. ४९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

रोम रोम में वृक्ष, तरंगित, फेनिल हरियाली पर,
चढ़ी हुई आकाश ओर मैं कहाँ उड़ी जाती हूँ ?[१]

उर्वशी के हृदय में प्रथम दर्शन से जिस प्रेम का बीजारोपण हुआ था, वह अब पुष्पित एवं पल्लवित होकर वृक्ष का रूप धारण कर चुका है। अब पुरूरवा के आलिंगन में आबद्ध होकर उसके रोम-रोम में प्रेम का तरंगित एवं फेनिल वृक्ष उत्पन्न हो गया है, जिसकी हरीतिमा पर चढ़कर वह आकाश की ओर न जाने कहाँ उड़ी जा रही है। वृक्ष, हरियाली, आकाश आदि प्रतीक हैं जो प्रेम, उसके सुख एवं उच्च निर्वृति के लिए आये हैं। 'फेनिल हरियाली' में रंग-सवेदना की सूक्ष्मता है तो उससे सुख की अनिर्वचनीयता का भी भाव स्पष्ट हो जाता है। 'उर्वशी' में भूख और प्यास के बिम्बों की अधिकता है। 'शुभ्र पावक शिखा', अनिल ज्वार, मृत्ति का अनल,[२] आसुरी शक्ति, वह्नि लहर, घूर्णिचक्र, झंझा,[३] कामनाओं की वर्तिका[४] ये सब उन्हीं के अप्रस्तुत हैं।

छायावादोत्तर बिम्ब और पन्त

छायावादोत्तर कवियों के बिम्बों को देख लेने के उपरांत यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि उनके बिम्बों के विषय सीमित हैं। हाँ, दिनकरजी के सम्बन्ध में यह बात नहीं कही जा सकती। इन कवियों में एक प्रकार की वस्तुगत मूर्तता अवश्य है, किन्तु श्रेष्ठ बिम्ब व्यंजित होकर प्रकट होता है, जो इन कवियों में बहुधा प्राप्त नहीं होता। पंत के बिम्बों में ऐन्द्रिय निबिड़ता एवं सघनता, सूक्ष्मता एवं व्यंजकता है यह इधर के किसी भी कवि में प्राप्त नहीं होती। दिनकरजी के बिम्ब में जो गरिमा है, वह कहीं-कहीं उनकी वर्णनात्मक एवं विवरणात्मक शैली में ओझल हो जाती है। दिनकरजी में अनुभूति की प्रखरता है, पर उस अनुभूति को उसी निबिडता के साथ अभिव्यक्त करने के लिए भाषा की जिस सूक्ष्मता एवं बारीकी की अपेक्षा है, वह उनमें नहीं है। पन्तजी के बिम्ब कोमल एवं सुकुमार अनुभूति एवं कल्पना की उपज हैं, किन्तु प्रकृत्या गंभीर होने से दिनकर में स्निग्ध एवं मसृण कोमलानुभूति तथा कल्पना का वैभव, समृद्धि एवं वैचित्र्य नहीं आ सका है। पन्त सौन्दर्य-द्रष्टा एवं स्रष्टा हैं और सौन्दर्य-सृजन के लिए जिस सूक्ष्म कलात्मकता की आवश्यकता है वह पन्त में है। स्वयं डॉ. नगेन्द्रजी ने यह स्वीकार किया है कि दिनकर के बिम्ब पन्त के बिम्बों से आयाम में बढ़कर होते हुए भी समृद्धि एवं वैचित्र्य में हीनतर हैं।[५] यहां तक कहा जा सकता है कि बिम्बों की समृद्धि, वैचित्र्य, सुकुमारता तथा ऐन्द्रिय सघनता में वे किसी भी हिन्दी कवि के अग्रणी हैं।

१. दिनकर—उर्वशी, तृतीय अंक, पृ. ६९ २. वही, पृ. ५३
३. वही, पृ. ५५ ४. वही, पृ. ४८
५. डॉ. नगेन्द्र—आलोचक की आस्था, पृ. ११७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पन्त की कालक्रमानुसार काव्य-कृतियां

काव्य-कृतियाँ	रचना-काल (ईसवी सन् में)	प्रथम प्रकाशन	
वीणा	१९१८-१९१९	इंडियन प्रेस, इलाहाबाद,	१९२७
ग्रन्थि	जनवरी, १९२०	इंडियन प्रेस, इलाहाबाद,	१९२९
पल्लव[1]	१९१८-१९२५	इंडियन प्रेस, इलाहाबाद,	१९२६
गुँजन	१९१९-१९३२	भारती भंडार, बनारस,	१९३२
ज्योत्स्ना (रूपक)	१९३४	गंगा ग्रंथागार, लखनऊ,	१९३४
युगांत	१९३४-१९३६	इंद्रा प्रिंटिंग वर्क्स, अल्मोडा,	१९३६
युगवाणी	१९३६-१९३९	भारती भंड र, इलाहाबाद,	१९३९
ग्राम्या	१९३९-१९४०	भारती भंडार, इलाहाबाद,	१९४०
स्वर्ग-किरण	१९४७	भारती भंडार, इलाहाबाद,	१९४७
स्वर्ण-धूलि	१९४७	भारती भंडार, इलाहाबाद,	१९४७
युगपथ[2]	१९४८	भारती भंडार, इलाहाबाद,	१९४९
उत्तरा	१९४९	भारती भंडार, इलाहाबाद,	१९४९
रजत-शिखर (काव्य-रूपक)	१९५०-१९५१	भारती भंडार, इलाहाबाद,	१९५१
शिल्पी (काव्य-रूपक)	१९५१-१९५२	सेंट्रल बुक डिपो, इलाहाबाद,	१९५२
सौवर्ण (काव्य-रूपक)	१९५२-१९५४	भारतीय ज्ञानपीठ, काशी,	१९५७
अतिमा	१९५४-१९५५	भारती भंडार, इलाहाबाद,	१९५५
वाणी	१९५७	भारतीय ज्ञानपीठ, काशी,	१९५८
कला और बूढ़ा चाँद	१९५८	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली,	१९५९
लोकायतन	१९५९-१९६३	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली,	१९६४
किरणवीणा	१९६६	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली,	१९६७
पुरुषोत्तम राम[3]	१९६६	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली,	१९६७

१. 'पल्लव' में संकलित 'उच्छ्वास' कविता सन् १९२२ में पृथक् से पुस्तकाकार प्रकाशित हुई।

२. युगांत और युगांतर (खादी के फूल में संगृहीत रचनाएँ) दोनों सम्मिलित हैं।

३. 'किरण-वीणा' में सम्मिलित है।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पौ फटने से पहिले	१९६७	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६७
पतझर	१९६८	राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, १९६९
शंखध्वनि	१९६९-१९७०	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९७१
शशि की तरी	१९७०-१९७१	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९७१
समाधिता	१९७२	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९७३
आस्था	१९७२	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९७३

अनुवाद

मधु-ज्वाल	१९३८	भारती भंडार, इलाहाबाद, १९४८

काव्य-संचयन

पल्लविनी	भारती भंडार, इलाहाबाद, १९४०
आधुनिक कवि-२	हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, १९४१
रश्मिबंध	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९५८
चिदंबरा	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९५९
स्वर्णिम रथचक्र	लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, १९६८
चित्रांगदा	राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, १९६९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

परिशिष्ट–२

संदर्भ एवं सहायक ग्रन्थों की सूची

अंचल, रामेश्वर शुक्ल — अपराजिता, इण्डियन प्रेस लिमिटेड, प्रयाग, सन् १९४६
किरण-बेला, सुखी जीवन ग्रन्थमाला, प्रयाग, प्रथम संस्करण, सन् १९६७

अण्डरहिल, ईवलिन — मिस्टिसिज्म, ग्यारहवाँ संस्करण।

अभिनव गुप्त — ध्वन्यालोक-लोचन, काव्यमाला संस्करण, निर्णय सागर प्रेस, बम्बई।

आनन्दवर्धन — हिन्दी ध्वन्यालोक, व्याख्याकार-आचार्य विश्वेश्वर, गौतम बुक डिपो, दिल्ली, प्रथम संस्करण, सन् १९५२

ईश्वर कृष्ण — सांख्यकारिका, संपादक–, हरिराम शुक्ल, चौखंबा संस्कृत सीरीज़, बनारस, संवत् १९८९

उपाध्याय, बलदेव — भारतीय साहित्यशास्त्र, नन्दकिशोर एण्ड सन्स, वाराणसी, द्वितीय संस्करण, सन् १९६३
संस्कृत साहित्य का इतिहास, शारदा मंदिर, वाराणसी, सप्तम संस्करण, सन् १९६५

उपाध्याय, विश्वंभरनाथ, डॉ. — आधुनिक हिन्दी कविता : सिद्धांत और समीक्षा, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, सन् १९६२

कबीर — कबीर-ग्रन्थावली, संपादक–डॉ. श्यामसुन्दरदास, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, आठवाँ संस्करण, संवत् २०१८

कर्मोड, फ्रांक — रोमान्टिक इमेज, रूटलेड्ज एण्ड केगन पाल, लन्दन, प्रथम प्रकाशन, सन् १९५७

कॉलरिज, सेमुअल टेलर — बयोग्रफिया लिटरेरिया, ऑक्सफॉर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, लन्दन, सन् १९३९

कालिदास — अभिज्ञान शाकुन्तल (व्याख्या सहित), कल्याण, बम्बई, संवत् १९७३

कुमार विमल, डॉ. — छायावाद का सौन्दर्यशास्त्रीय अध्ययन, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, सन् १९७०

कुरुप, शंकर, जी. — गद्योपहारम् (मलयालम), साहित्य-प्रवर्तक सहकरण संघम्, कोट्टयम, केरल, चतुर्थ संस्करण, सन् १९६४

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

	लेखमाला (मलयालम), साहित्य प्रवर्तक सहकरण संघम्, कोट्टयम, केरल, द्वितीय आवृत्ति, सन् १९५८
केदारनाथसिंह, डॉ.	आधुनिक हिन्दी कविता में बिम्ब-विधान, भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली-६, प्रथम संस्करण, जुलाई १९७१
खण्डेलवाल, रामेश्वर-लाल, डॉ.	जयशंकर प्रसाद : वस्तु और कला, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्रथम संस्करण, सन् १९६८
गुप्त, गणपतिचन्द्र, डॉ.	साहित्य विज्ञान, भारतेन्दु भवन, चण्डीगढ़, प्रथम संस्करण, दिसंबर १९६३, जनवरी १९६४
गुप्त, मैथिलीशरण	किसान, साहित्य सदन, चिरगाँव, सं. २००९
	पंचवटी, साहित्य सदन, चिरगाँव, पैंसठवाँ संस्करण, संवत् २०२९
	साकेत, साहित्य-सदन, चिरगाँव, सं. २०१२
गुप्त, शांतिस्वरूप, डॉ.	पाश्चात्य काव्य-शास्त्र के सिद्धांत, अशोक प्रकाशन, दिल्ली-६, द्वितीय संशोधित संस्करण, सन् १९६७
गैरोला, वाचस्पति	भारतीय दर्शन, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण, सन् १९६६
घोष, अरविन्द	दि लाइफ डिवाइन, भाग-२, श्री अरविन्द आश्रम, पांडिचेरी।
	दि सूपरमैन, श्री अरविन्द आश्रम, पांडिचेरी, फरवरी, १९६८
चौहान, प्रतापसिंह, डॉ.	हिन्दी काव्य और अरविन्द-दर्शन, युगवाणी प्रकाशन, कानपुर, प्रथम संस्करण, सन् १९६२
जगन्नाथ, पंडितराज	रस-गंगाधर, संपादक-मथुराप्रसाद शास्त्री, निर्णय-सागर प्रेस, बम्बई, चतुर्थ संस्करण, सन् १९४७
जयदेव	चन्द्रालोक, चौखम्बा संस्कृत सीरीज़, बनारस, संवत् १९९५
जायसी, मलिक मुहम्मद	जायसी ग्रन्थावली, संपादक-आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, पंचम संस्करण, संवत् २००८
जैन, निर्मला, डॉ.	रस-सिद्धांत और सौन्दर्यशास्त्र, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली-७, प्रथम संस्करण, मार्च १९६७
जोशी, शांति	सुमित्रानन्दन पन्त : जीवन और साहित्य, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, सन् १९७०
टिन्डल, विलयम, वाई	दि लिटेररी सिम्बल, कोलंबिया यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयार्क, सन् १९५५

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

डॉउनी, जे ई. क्रियेटीव इमाजिनेशन, सन् १९२९

डान्वी, जॉन, एफ. एप्रोच टु प्रोयट्री, बिलियम हीनिमाम् लिमिटेड, लंदन, मई १९५९

तुलसीदास रामचरितमानस, गीता प्रेस, गोरखपुर, अष्टम बार, संवत् २०१२

विनय पत्रिका, गीता प्रेस, गोरखपुर, चतुर्दश संस्करण, संवत् २०११

तुव, रोजमांड एलिजबेथन एण्ड मेटाफिसिकल इमेजरी, सातवाँ संस्करण, सन् १९६५

त्रिपाठी, जगदीशनारायण डा. आधुनिक हिन्दी कविता में अलंकार-विधान, अनुसंधान प्रकाशन, कानपुर, सन् १९६२

त्रिपाठी, रामनरेश पथिक, हिन्दी मंदिर, प्रयाग, पन्द्रहवाँ संस्करण, संवत् २०१४

थिल्ली एण्ड लेड्जरवुड ए हिस्ट्री ऑफ फिलोसफी, सेण्ट्रल बुक डिपो, इलाहाबाद, सन् १९५५

दण्डी, आचार्य काव्यादर्श, ओरियंटल बुक सप्लाइंग एजेंसी, पूना, सन् १९२८

दीक्षित, अप्पय कुवलयानंद, निर्णयसागर प्रेस, बंबई, सन् १९४७

दिनकर, रामधारीसिंह उर्वशी, चक्रवाल प्रकाशन, पटना-४, द्वितीय संस्करण, सन् १९६४

काव्य की भूमिका, उदयाचल, पटना-४, प्रथम संस्करण, जून १९५८

चक्रवाल, उदयाचल, पटना-४, प्रथम संस्करण, सन् १९५६

पंत, प्रसाद और मैथिलीशरण, उदयाचल, पटना-४, प्रथम संस्करण, सन् १९५८

हुंकार, उदयाचल, पटना-४, नवम संस्करण, सन् १९५२

द्विवेदी, हजारी प्रसाद, डा. साहित्य-सहचर, नैवेद्य निकेतन, वाराणसी-१, प्रथम संस्करण, सन् १९६५

नगेन्द्र, डा. आलोचक की आस्था, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली-७, प्रथम संस्करण, जुलाई, १९६६

काव्य-बिम्ब, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली-७, प्रथम संस्करण, अप्रेल, १९६७

देव और उनकी कविता, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली-७, तृतीय संस्करण, सन् १९६०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सुमित्रानंदन पंत, साहित्य-रत्न भंडार, आगरा, अष्टम संस्करण, संवत् २०१४

हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली-७, तृतीय संस्करण, सन् १९६६

नामवरसिंह, डा. कविता के नये प्रतिमान, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली प्रथम संस्करण, सन् १९६८

निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी अनामिका, भारती भंडार, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण, संवत् २००५

अपरा, भारती भंडार, इलाहाबाद, आठवाँ संस्करण, संवत् २०२६

परिमल, गंगा ग्रंथागार, लखनऊ, पंचम संस्करण, संवत् २००७

पन्त, सुमित्रानन्दन अतिमा, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, तृतीय संस्करण, संवत् २०२०

आधुनिक कवि–२, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, छठा संस्करण, संवत् २०१२

उत्तरा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, तृतीय संस्करण, सन् १९६८

कला और बूढ़ा चाँद, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, दूसरा संस्करण, सन् १९६४

किरण-वीणा, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, सन् १९६७

गुँजन, भारती भंडार, इलाहाबाद, एकादश आवृत्ति, संवत् २०२१

ग्राम्या, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, सातवाँ संस्करण, सन् १९६७

चिदंबरा, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, तृतीय संस्करण, सन् १९७०

छायावाद : पुनर्मूल्यांकन, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, तृतीय संस्करण, सन् १९६५

ज्योत्स्ना, भारती भंडार, इलाहाबाद, तृ.सं,सं. २०१७

पतझर, राजपाल एण्ड संस,दिल्ली-६, प्रथम संस्करण, सन् १९६९

पल्लव, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, आठवाँ संस्करण, सन् १९६७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पल्लविनी, भारती भंडार, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण, संवत् २००४

पौ फटने से पहिले, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, सन् १९६७

युगपथ, भारती भंडार, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण, सन् १९६४

युगवाणी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पंचम संस्करण, सन् १९६४

रजतशिखर, भारती भंडार, प्रयाग, प्रथम संस्करण, संवत् २००८

लोकायतन, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, सन् १९६४

वाणी, भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी, द्वितीय परिवर्द्धित संस्करण, सन् १९६३

वीणा-ग्रंथि, भारती भंडार, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण, संवत् २००७

शंखध्वनि, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, सन् १९७१

शशि की तरी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, सन् १९७१

शिल्पी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।

साठ वर्ष : एक रेखांकन, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, सन् १९६०

सौवर्ण, भारतीयज्ञानपीठ, काशी, द्वितीय संस्करण, १९६३

स्वर्ण-किरण, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, चतुर्थ संस्करण, सन् १९७१

स्वर्णधूलि, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, तृतीय संस्करण, सन् १९६५

पाठक, श्रीधर — काश्मीर सुषमा, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण, सन् १९१५

पिल्लै, कुट्टन, डा. — पंत : छायावादी व्यक्तित्व और कृतित्व, जय प्रकाशन, हैदराबाद, प्रथम संस्करण, जून, १९७०

पीकॉक, रोनाल्ड — दि आर्ट ऑफ ड्रामा, लंदन, सन् १९५७

प्रसाद, जयशंकर — आँसू, भारती भंडार, इलाहाबाद, दशम संस्करण, संवत् २०१३

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

	कामायनी, भारती भंडार, इलाहाबाद, नवम संस्करण, संवत् २०१३
	लहर, भारती भंडार, इलाहाबाद, नवीं आवृत्ति, संवत् २०२६
	स्कंदगुप्त, भारती भंडार, इलाहाबाद, सोलहवीं आवृत्ति, संवत् २०२४
फिथियन, बी. ए.	कनसिडेरिंग पोयट्री, लंदन, सन् १९७०
फोगल, आर. एच	इमेजरी ऑफ कीट्स एण्ड शैली, दि युनिवर्सिटी ऑफ नार्थ कारोलिना प्रेस, चापल हिल, सन् १९४९
बच्चन, हरिवंशराय, डा.	अभिनव सोपान, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, पहला संस्करण, सन् १९६४
	कवियों में सौम्य संत, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, द्वितीय संस्करण, सन् १९६२
बच्चनसिंह, डा.	बिहारी का नया मूल्यांकन, प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी–१, प्रथम संस्करण, सन् १९६०
बाफना, प्रेमलता, डा.	पंत का काव्य, साहित्य सदन, देहरादून, प्रथम संस्करण, सितम्बर, १९६९
बिहारी	बिहारी बोधिनी, सम्पादक—लाला भगवानदीन, साहित्य-सेवा सदन, बनारस, सप्तमावृत्ति, संवत् २०१०
ब्राउन, स्टीफन जे.	दि वर्ल्ड ऑफ इमेजरी, सन् १९२७
ब्रूक, क्लेनेथ एण्ड वारेन, रार्बर्ट पेन	अन्डेरस्टेंडिंग पोयट्री, तृतीय संस्करण, सितम्बर, १९६६
भरत (आचार्य)	नाट्यशास्त्र, काशी संस्कृत सीरीज, सन् १९२९
भामह	काव्यालंकार, चौखम्बा संस्कृत सीरीज, बनारस, सन् १९२८
भ्रमर, रामयतनसिंह, डा.	आधुनिक हिन्दी कविता में चित्रविधान, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली–७, प्रथम संस्करण, मई, १९६५
मधुमालतीसिंह, डा.	आधुनिक हिन्दी काव्य में विरह भावना, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली–६, सन् १९६३
मम्मट (आचार्य)	काव्य-प्रकाश, व्याख्याकार–डॉ० सत्यव्रतसिंह, चौखम्ब विद्या-भवन, बनारस, सन् १९५५
माकडुगल, डब्ल्यू	एन आउटलाइन ऑफ साइकोलजी, मेथुअन एण्ड कम्पनी, लंदन, सन् १९४९
माथुर, सुरेन्द्र, डा.	काव्य-बिम्ब और छायावाद, ज्ञान भारती प्रकाशन, दिल्ली-९, प्रथम संस्करण, सन् १९६९

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मानव, विश्वंभर — काव्य का देवता : निराला, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण, सन् १९६४

मारार, कुट्टिकृष्ण — साहित्य विद्या (मलयालम), पी. के. ब्रदर्स, कोजीकोड, केरल, तृतीय संस्करण, सन् १९५८

मिश्र, उमेश, डा. — भारतीय दर्शन, सूचना–विभाग, उत्तर प्रदेश सरकार, प्रथम संस्करण, सन् १९५७

मिश्र, भगीरथ, डा. — काव्य-शास्त्र, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, तृतीय संस्करण, सन् १९६६

मिश्र, रामदहिन — काव्य-दर्पण, ग्रंथमाला प्रकाशन, पटना–४, चतुर्थ संस्करण, सन् १९६०

काव्य में अप्रस्तुत-योजना, ग्रंथमाला प्रकाशन, पटना–४, प्रथम संस्करण, संवत् २००५

मुरे, मिडिल्टन, जे. — दि प्रॉब्लम ऑफ स्टाइल, ऑक्सफॉर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, लंदन, सन् १९५५

मोरगन, टी. — इन्ट्रोडक्शन टु साइकोलजी, माक ग्रॉ हिल बुक कंपनी, आई. एन. सी. न्यूयार्क

यशदेव — पंत का काव्य और युग, किताब महल, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, सन् १९६८

रघुवंश, डा. — प्रकृति और काव्य (संस्कृत साहित्य), नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, द्वितीय संस्करण, सन् १९६३

रत्न, बलवीरसिंह, डा. — हिन्दी की छायावादी कविता का कला-विधान, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्रथम संस्करण, सन् १९६४

रत्नाकर, जगन्नाथदास — रत्नाकर पहला भाग, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, प्रथम संस्करण, संवत् २०१३

रांगेय राघव, डा. — आधुनिक हिन्दी कविता में विषय और शैली, राजपाल एण्ड संस, दिल्ली, प्रथम प्रकाशन, मई १९६२

रॉकट, मिस एडिथ — न्यू मेथेर्ड्स फॉर दि स्टडी ऑफ लिटरेचर, चिकागो, सन् १९२७

रिचार्डस, आई. ए. — कॉलरिज ऑन इमाजिनेशन, रूटलेड्ज एण्ड केगनपाल लिमिटेड, लन्दन।

प्रिन्सिपिल्स ऑफ लिटरेरी क्रिटिसिज्म, रूटलेड्ज एण्ड केगनपाल, लन्दन, सन् १९२७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

लांजर, सूसेन — प्रॉब्लम ऑफ आर्ट, श्रिबनेर्स, न्यूयार्क, सन् १९५७

लास, जॉन लिविंगटन — दि रोड़ टु क्सानडु, हग्टोन मिफिन कम्पनी, बोस्टन, प्रथम प्रकाशन।

लुवीस, सिसिल डे. — दि पोयटिक इमेज, जोनथन केप, थेरटी बेडफोर्ड स्क्वायर, लन्दन, दसवाँ संस्करण, सन् १९६१

वर्ड्स्वर्थ, विलियम — इंग्लिश क्रिटिकल एसेस, नायन्टीन्थ सेंचुरी, संपादक : एडमण्ड डी. जॉनस, ऑक्सफॉर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, लन्दन, सन् १९४७

वर्मा, कृष्णचन्द्र, डा. — घनानन्द, रवीन्द्र प्रकाशन, ग्वालियर-आगरा, प्रथम संस्करण, अक्तूबर १९६६

वर्मा, भगवतीचरण — मानव, विशाल बुक डिपो, कलकत्ता, द्वितीय संस्करण, सन् १९४८

वर्मा, महादेवी — आधुनिक कवि-१, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, दसवीं आवृत्ति, सन् १९६७

दीपशिखा, भारती भंडार, इलाहाबाद, चतुर्थ संस्करण, संवत् २०११

वर्मा, रवीन्द्रसहाय, डा. — हिन्दी काव्य पर आंग्ल प्रभाव, पद्मजा प्रकाशन, कानपुर, प्रथम संस्करण, संवत् २०११

वर्मा, रामकुमार, डा. — आधुनिक कवि-३, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, चतुर्थ संस्करण, शक् १८८४

वाजपेयी, कैलास, डा. — आधुनिक हिन्दी कविता में शिल्प, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली, प्रथम प्रकाशन, सन् १९६३

वाजपेयी, नन्ददुलारे — आधुनिक साहित्य, भारती भंडार, इलाहाबाद, तृतीय संस्करण, संवत् २०१८

नया साहित्य : नये प्रश्न, विद्या-मन्दिर, वाराणसी, तृतीय संस्करण, सन् १९६३

वामन — काव्यालंकार सूत्र (हिन्दी अनुवाद सहित), संपादक-डॉ. नगेन्द्र, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली-७, सन् १९५४

विद्यापति — विद्यापति पदावली, संपादक-कृष्णचन्द्र वर्मा, अशोक प्रकाशन, दिल्ली, द्वितीय संस्करण, सन् १९६५

विश्वनाथ — साहित्य-दर्पण, निर्णयसागर प्रेस, बम्बई, सन् १९३१

वुड्वर्थ, आर. एस. — साइकोलजी, मेथुअन एण्ड कम्पनी, लन्दन, सन् १९५८

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वेद-व्यास — अग्निपुराण, आनंद आश्रम, संस्कृत सीरीज, पूना, सन् १९००

वेलरी, पॉल — दि आर्ट ऑफ पोयट्री, अनुवादक-डेन्नीस फोलियट, रूटलेड्ज एण्ड केगन पाल, लंदन, सन् १९५८

शंभुनाथसिंह, डा. — छायावाद-युग, सरस्वती प्रकाशन, वाराणसी, द्वितीय संस्करण, सन् १९६२

प्रयोगवाद और नई कविता, समकालीन प्रकाशन, वाराणसी-२, प्रथम संस्करण, सन् १९६६

शर्मा, कृष्णलाल, डा. — आधुनिक हिन्दी कविता में ध्वनि, ग्रंथम प्रकाशन, कानपुर, नवंबर १९६४

शर्मा, नरेन्द्र — पलाश-वन, भारती भंडार, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण, सन् १९४६

शर्मा, रामविलास, डा. — निराला, शिवलाल अग्रवाल एण्ड कंपनी लिमिटेड, आगरा, द्वितीय संस्करण, सन् १९५५

निराला की साहित्य-साधना, प्रथय खंड, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम सस्करण, सन् १९६९

शास्त्री, कापाली, टी. पी. — श्री अरविन्दो : लाइट्स ऑन दि टीचिंगस, श्री अरविन्दो लाइब्रेरी, मद्रास, प्रथम संस्करण, सन् १९४८

शिप्ली, जे. टी. — ट्रेंड्स इन वर्ल्ड लिटरेचर, जॉर्ज आलेन एण्ड अनविन लिमिटेड, लंदन।

शुक्ल, केसरी-नारायण, डॉ० — आधुनिक हिन्दी काव्यधारा, नंदकिशोर एण्ड संस, वाराणसी, चतुर्थ आवृत्ति, सन् १९६१

शुक्ल, रामचंद्र — चित्रकला का आस्वादन, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी-१, प्रथम संस्करण, अक्तूबर १९६२

शुक्ल, रामचंद्र (आचार्य) — चिन्तामणि, भाग-१, इंडियन प्रेस लिमिटेड, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, सन् १९५६

रस-मीमाँसा, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, प्रथम संस्करण, संवत् २००६

हिन्दी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, ग्यारहवाँ संस्करण, संवत् २०१४

शैली, पीं. बी. — डिफेंस ऑफ पोयट्री, संपादक - एच. ए. नोधाम, जिन एण्ड कंपनी लिमिटेड, लंदन, सन् १९४८

श्री कृष्णलाल, डॉ० — आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास, हिन्दी परिषद्, विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, तृतीय संस्करण, सन् १९४२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

श्री वास्तव, कुमारी-शांति, डॉ. — छायावादी काव्य और निराला, ग्रंथम प्रकाशन, कानपुर, प्रथम संस्करण, अक्तूबर, १९६६

संसारचंद्र, डॉ० — हिन्दी काव्य में अन्योक्ति, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, सन् १९६०

सक्सेना, द्वारिकाप्रसाद, डा० — कामायनी में काव्य, संस्कृति और दर्शन, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, द्वितीय संशोधित संस्करण, सन् १९६३

साकेत में काव्य, संस्कृति और दर्शन, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, प्रथम संस्करण, सन् १९६१

सक्सेना, लालताप्रसाद, डा. — हिन्दी काव्य में मानव तथा प्रकृति, हिन्दी साहित्य भंडार, लखनऊ, प्रथम संस्करण, सन् १९६२

सक्सेना, सुधा, डा. — जायसी की बिम्ब-योजना, अशोक प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, सन् १९६६

सत्येन्द्र, डा. — कला, कल्पना और साहित्य, साहित्यरत्न भंडार, आगरा, द्वितीय संस्करण, संवत् २०१३

सर्वेपल्लि, राधाकृष्णन्, डा. — उपनिषदों की भूमिका, (हिन्दी अनुवाद) राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, प्रथम संस्करण, सन् १९६८

स्पर्जियन, करोलिन, एफ. ई. — शेक्सपीयर्स इमेजरी एण्ड ह्वाट इट टेल्स अस, केंब्रिड्ज यूनिवर्सिटी प्रेस, लन्दन, तृतीय संस्करण, सन् १९५१

साधक, रघुनाथसहाय — समालोचना शास्त्र, नवसाहित्य प्रकाशन, दिल्ली-१, प्रथम आवृत्ति, सन् १९५६

सुधीन्द्र, डा. — हिन्दी कविता में युगान्तर, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली, द्वितीय संस्करण, सन् १९५७

सूरदास — सूरसागर-सार, संपादक—डा. धीरेन्द्र वर्मा, साहित्य भवन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद, तृतीय आवृत्ति, सन् १९६६

स्केल्टन, रॉबिन — दि पोयटिक पाटेर्न, लन्दन, सन् १९५६

हड्सन, डब्ल्यू. एच. — एन इंट्रोडक्शन टु दि स्टडी ऑफ लिटरेचर, हारोप एण्ड कम्पनी, लन्दन, मई १९४७

हरिऔध, अयोध्यासिंह उपाध्याय — प्रियप्रवास, हिन्दी साहित्य कुटीर, वाराणसी—१, द्वादश संस्करण, संवत् २०२१

हरिश्चन्द्र, भारतेन्दु — भारतेन्दु ग्रंथावली, भाग-१, संपादक—ब्रजरत्नदास, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, प्रथम संस्करण, संवत् २००७

भारतेन्दु ग्रन्थावली, भाग—२, संपादक-ब्रजरत्नदास, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, प्रथम संस्करण, संवत् २०१०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

	भारतेन्दु नाटकावली, भाग-१ व २, संपादक-ब्रजरत्नदास, नारायणलाल, पब्लिशर और बुक सेलर, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण, २०१३
हेमचन्द्र	काव्यानुशासन, निर्णयसागर प्रेस, बम्बई, द्वितीय संस्करण, सन् १९३४
ह्यूम, टी. ई.	स्पेकुलेशन, रूटलेड्ज एण्ड केगन पाल, लन्दन, सन् १९६०
ह्वाली, जार्ज	पोयटिक प्रोसस, लन्दन, सन् १९५३
—	ईशावास्योपनिषद् (शंकरभाष्यसहित), गीताप्रेस, गोरखपुर, बारहवाँ संस्करण, संवत् २०२४
—	ऋग्वेद संहिता, वैदिक यंत्रालय, अजमेर, द्वितीय आवृत्ति, संवत् १९६७
—	कठोपनिषद् (सानुवाद) गीता-प्रेस, गोरखपुर, संवत् २०१९
—	गीता, गीताप्रेस, गोरखपुर, अठारहवीं बार, संवत् २०१०
—	छांदोग्योपनिषद् (सानुवाद शंकरभाष्यसहित), गीता प्रेस, गोरखपुर, पंचम संस्करण, संवत् २०२३
—	तारसप्तक, संपादक - अज्ञेय, प्रतीक प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, सन् १९४३
—	बृहदारण्यकोपनिषद् (सानुवाद शंकरभाष्यसहित), गीता प्रेस, गोरखपुर, पंचम संस्करण, संवत् २०२३
—	मुण्डकोपनिषद् (सानुवाद शंकरभाष्य सहित), गीता प्रेस, गोरखपुर, दशम संस्करण, संवत् २०२६
—	रसखान और घनानंद, संपादक - बाबू अमीरसिंह, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, प्रथम संस्करण, संवत् २०१३
—	रूपाम्बरा, संपादक - अज्ञेय, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी, प्रथम संस्करण, सन् १९६०

कोष-ग्रंथ

ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी, ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, लंदन।

एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका, भाग १२, १४, १८, २१-एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका लिमिटेड, लंदन।

चेम्बेर्स इंग्लीश डिक्शनरी, डब्ल्यू. आर. चेम्बेर्स लिमिटेड, लंदन।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

चेम्बेर्स ट्वेन्टियथ् सेंचुरी डिक्शनरी, डब्ल्यु. आर. चेम्बेर्स लिमिटेड, लंदन।

डिक्शनरी ऑफ वर्ल्ड लिटरेचर, जे. टी. शिप्ली, जॉर्ज आलेन एण्ड अनविन लिमिटेड, लंदन, सन् १९५५

दि मार्डेन लाइब्ररी डिक्शनरी ऑफ दि इंग्लीश लैंगुवेज।

शोर्टर ऑक्सफॉर्ड डिक्शनरी, ऑक्सफॉर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, लंदन।

विश्वकोष, भाग-१५, विश्वकोष लेन, बाग बाजार, कलकत्ता।

वेब्स्टेर्स न्यू इन्टरनेशनल डिक्शनरी, भाग-१, वेब्स्टेर्स, जी. वी. मैरिन कंपनी पब्लिशर्स, यू. एस. ए, १९३४

हिन्दी कथा-कोष, हिन्दुस्तानी एकाडेमी, उत्तर प्रदेश, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, सन् १९५४

हिन्दी शब्द-सागर, संपादक : डा. श्यामसुन्दर दास, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

हिन्दी साहित्य कोष, भाग-१, प्रधान संपादक—डा. धीरेन्द्र वर्मा, ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी, द्वितीय संस्करण, संवत् २०२०

हिन्दी साहित्य कोष, भाग-२, प्रधान संपादक : डा. धीरेन्द्र वर्मा, ज्ञान मंडल लिमिटेड, वाराणसी, प्रथम संस्करण, संवत् २०२०

पत्र-पत्रिकाएँ

कल्पना, अंक १६३, मई १९६५, हैदराबाद।

कल्पना, अंक २२६, मार्च १९७१, हैदराबाद।

कल्पना, अंक २३१, अगस्त १९७१, हैदराबाद।

तुलसीदल (अरविन्द विशेषांक), वर्ष-११, अंक-३, अगस्त १९७०, भोपाल।

समालोचक (सौन्दर्यशास्त्र विशेषांक), वर्ष-१, अंक-१, फरवरी १९५८, आगरा।

समालोचक, वर्ष-१, अंक-६, जुलाई १९५८, आगरा।

समीक्षालोक (रस-सिद्धांत विशेषांक) वर्ष-२ अंक-१, जुलाई-अगस्त, १९७०, आगरा।

समीक्षालोक (समकालीन साहित्य विशेषांक) वर्ष-२, अंक ४-५, जनवरी-अप्रैल, १९७१, आगरा।

हिन्दी प्रचार समाचार, दिसम्बर १९६९, अक्तूबर १९७०, अक्तूबर १९७१ के अंक, मद्रास।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विषय-क्रम

अचेतन मन २०, २४
अर्धचेतन मन २०
अनुभूति १३, २३
अपरा प्रकृति, २१६
अपार्थिव बिम्ब २६९-२७२
अप्रस्तुत विधान ५, १५
अरविन्द ५८
अरविन्द-दर्शन ३०७-३०९
अरविन्द दर्शन से संबंधित बिम्ब ३२८-३४०
अलंकार ३७-४१
अलंकरणात्मक बिम्ब ४५
आर्थिक बिम्ब १९९-२०३
आध्यात्मिक बिम्ब ५
आस्वाद्य बिम्ब ४८, ११९-१२२
इमेज ९, १०
उपकरणमूलक बिम्ब-विधान ७८
उपनिषद् ५४-५५
उपमान ५, ३८
उपलक्षित बिम्ब ४७, २२५, २३९–२४०
ऐतिहासिक बिम्ब १६७-१७१
ऐन्द्रिय बिम्ब ४५, ४६, ४८, ७५–१२४
कल्पना १४, २२, २३, २४, २८, ३०-३३
कल्पना-बिम्ब २०
कल्पित रूप-बिम्ब २३
कारयित्री प्रतिभा २
काव्य १-३
खण्डित बिम्ब २१, ४५, ४७
गत्यात्मक बिम्ब ४८, ९३-१०३
गीता ५५
घ्रातव्य बिम्ब ४७, ४८, ११५-११९
चाक्षुष बिम्ब ९, ७७-१००
चित्र २२
चित्रराग ४२
चित्रधर्म १, ३, ४२
चेतन मन २०
छंद २
छायावादी काव्य ४
छायावादी बिम्ब ४
जड़ प्रकृति बिम्ब २२५-२४०
तन्मयीभावन २५
दर्शन ३०५
दार्शनिक बिम्ब ४९, ३०५-३४२
दिवास्वप्न बिम्ब २०
दृश्य बिम्ब ४६, ४७, ४८
नृत्यकला २२
निर्जीव बिम्ब ४५
परा प्रकृति २१६
पार्थिव चेतन प्रकृति बिम्ब २६३-२६९
पौराणिक बिम्ब १७१-१८६
प्रकृति २१५-२२२
प्रकृति-बिम्ब ४८, २२४-२७९
प्रतिबिम्ब ५
प्रतिभा २१, २८–२९, ३०
प्रतीक १६, ३३-३७
प्रतीकात्मक बिम्ब ५, २७२-२७९
प्रत्यक्षबोध २२

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रत्यक्ष रूप-विधान २२
प्रत्यक्षीकरण १३, २३
प्रत्यभिज्ञान २०
बिम्ब-ग्रहण १, ६
बिम्बवाद ३, ७-९
भावकत्व व्यापार ६
भावगत बिम्ब २०, ४६, ४९, २८१-३०४
भाव पक्ष २५
भाव सौन्दर्य-बिम्ब २८१-२८९
भाषा ४१-४४
मनुष्येतर चेतन प्रकृति-बिम्ब २६३-२७२
मनोवैज्ञानिक बिम्ब १९, २१
मानवतावाद १२५-१२९
मानव-बिम्ब ४८, १२५-२१४
मानवीकरण १६
मानवीकृत बिम्ब २४१-२६३
मानस बिम्ब २०, ४६
मिथ्याप्रत्यक्ष बिम्ब २०
मिश्रित बिम्ब १२२-१२४
मूर्ति-विधान (मूर्तीकरण) २, ६
यौन बिम्ब २०७-२०९
रस्य बिम्ब ४७
राजनैतिक बिम्ब १६१-१६७
रूढ़ बिम्ब १९
रूपपक्ष ९
रूप सौन्दर्य बिम्ब १३०-१५०
रोमान्टिक काव्य ७, ९, ५६
लक्षणाशक्ति १७, ४३
लक्षित बिम्ब ४७, २२५
वर्ण परिवर्तन पर आधारित बिम्ब ९१-९२
वर्ण मिश्रित बिम्ब ८८-९१
वर्णाश्रित बिम्ब ८५-८८
वस्तुगत बिम्ब २०, ४६, ४८
विचार बिम्ब ४६
विभावन ५
विभाव पक्ष २५
विशृंखलित बिम्ब ४६
वैज्ञानिक बिम्ब २०९-२१३
वैदिक दर्शन ३०६-३०७
वैदिक दर्शन से संबंधित बिम्ब ३०९-३२८
व्यापार बिम्ब ४६
व्यावसायिक बिम्ब २०३-२०६
शुद्ध भाव बिम्ब २८९-३०४
श्रव्य बिम्ब ४७, ४८, १०१-११२
संकेतग्राही बिम्ब-विधान ७८
संवेदना १३
संश्लिष्ट बिम्ब २१, ४७
सजीव बिम्ब ४५
सरल बिम्ब ४७
सहजानुभूति २३
साँगरूपक १७
सांस्कृतिक बिम्ब १८६-१९६
साधारणीकरण २, २३
सामाजिक बिम्ब १ ०-१६०
साहित्यिक बिम्ब १९६-१९८
सिम्बल ३३
स्थिर बिम्ब ४८, ७७-९२
स्पृश्य बिम्ब ४७, ४८, ११२-११५
स्मृति २२, २३
स्मृति रूप-विधान २२
स्वर संगीत ४२
स्वप्न बिम्ब २०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अभिमत

डॉ० कुट्टन पिल्लै द्वारा लिखित शोध-प्रबंध 'पंत-काव्य में बिम्ब-योजना' को मैं ने आद्यन्त पढ़ा है। डॉ० पिल्लै ने सर्वांगीण रूप में अपने प्रबंधगत विषय का विवेचन किया है और पंतजी की विशाल काव्य-राशि के गंभीर अध्ययन के उपरांत आपने जो निष्कर्ष उपस्थित किये हैं वे विद्वत्तापूर्ण और प्रामाणिक हैं। इस दिशा में पंत-काव्य का अध्ययन प्रस्तुत करनेवाला यह अकेला प्रबंध है।

डॉ० पिल्लै ने अपने प्रबंध में पाश्चात्य एवं भारतीय मतों के बीच संतुलन बनाये रखकर कवि-व्यक्तित्व के निर्माण के उपकारक स्रोतों और अनेक-मुखी बिंबों का बड़ा ही विशद अध्ययन प्रस्तुत किया है और उसके माध्यम से कविवर पन्त की मनोभूमि और उनके विचार-दर्शन, संवेदना और सौन्दर्य आदि को उद्घाटित करते हुए अपने समकालिक काव्य-सृजन से उनकी भिन्नता एवं मौलिकता का उद्घाटन किया है।

सुविशद एवं सुविचारित प्रबंध-लेखन के लिए डॉ० पिल्लै बधाई के पात्र हैं। मुझे विश्वास है कि उनके इस ग्रथ का विद्वानों और रुचिवान पाठकों के द्वारा आदर होगा।

डॉ० आनंदप्रकाश दीक्षित
प्रोफेसर तथा अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग
पुणे विद्यापीठ, पूना-४११००७

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh